बयानुल क़ुरान

हिस्सा दौम (दूसरा)
तर्जुमा व मुख़्तसर तफ़सीर
सूरह आले इमरान
से
सूरतुल मायदा तक

अज़
डॉक्टर इसरार अहमद

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

अर्ज़े मुरत्तब

"बयानुल क़ुरान" के क़ारईन (पाठक) इस अम्र से वाक़िफ हैं कि यह तफ़सीरी काविश (प्रयास) मोहतरम डॉक्टर इसरार अहमद की तसनीफ़ या तालीफ़ नहीं है, बल्कि आँजनाब के शहरह-ए-आफाक़ (विश्व प्रसिद्ध) दौरा-ए-तर्जुमा क़ुरान को तरतीब व तस्वीद के मराहिल से गुज़ार कर जुज़अन-जुज़अन किताबी सूरत में पेश किया जा रहा है। नवम्बर 2008 ई० में बयानुल क़ुरान (हिस्सा अव्वल) तबअ (प्रिन्ट) होकर आयी तो उसे इल्मी हल्क़ों में बहुत पज़ीराई (सराहना) हासिल हुई और उसके तीन एडिशन हाथों-हाथ फ़रोख्त हो गये। हिस्सा अव्वल के मंज़रे आम पर आने के साथ ही हिस्सा दौम की इशाअत (प्रकाशन) का तक़ाज़ा और मुतालबा ज़ोर पकड़ने लगा। उन्हीं दिनों डिस्ट्रिक्ट जिन्नाह पब्लिक स्कूल मंडी बहाउद्दीन के प्रिंसिपल लेफ्टिनेंट कर्नल (रिटायर्ड) आशिक़ हुसैन साहब (एजुकेशन कोर) ने मोहतरम डॉक्टर साहब (रहि०) से मुलाक़ात करके "बयानुल क़ुरान" की तरतीब व तस्वीद के काम में मुआवनत (मदद) की पेशकश की। इस पेशकश की हैसियत बिलाशुबा ताईद गैबी की थी। मोहतरम कर्नल साहब ने खालिसतन रज़ा-ए-इलाही के हुसूल की खातिर दावते क़ुरानी की नशरो इशाअत के इस काम में कमाहक़ मुआवनत फ़रमायी। अल्लाह तआला उन्हें दुनिया व आख़िरत में इसकी भरपूर जज़ा अता फ़रमाये।

मोहतरम डॉक्टर इसरार अहमद की शदीद ख्वाहिश थी कि यह किताब जल्द ज़ेवरे तबअ से आरास्ता हो, चुनाँचे राक़िमुल हुरूफ़ से गाहे-ब-गाहे इसकी पेशरफ्त (प्रगति) के बारे में इस्तफ़सार (जाँच) फ़रमाते रहते। इन्तेक़ाल से एक रोज़ क़ब्ल भी इसके प्रेस भिजवाये जाने का दरयाफ्त फ़रमाया। मोहतरम डॉक्टर साहब (रहि०) आज हमारे दरमियान मौजूद नहीं हैं, लेकिन आप (रहि०) इन्तहाई खुशकिस्मत हैं कि अपनी हयाते मुस्तआर क़ुरान हकीम के उलूम व मआरुफ़ की नशरो इशाअत में गुज़ार गये। आप (रहि०) के हाथों दावत रुजूअ इलल क़ुरान का लगाया हुआ पौधा आप (रहि०) की ज़िन्दगी ही में एक तनावर दरख़्त बन चुका था, जो अब सदक़ा-ए-जारिया की सूरत इख़्तियार कर चुका है और उसके बरगो बार (फल-पत्ती) से एक आलम मुस्तफ़ीद व मुस्तफ़ीज़ (लाभान्वित) हो रहा है। मोहतरम डॉक्टर साहब (रहि०) यक़ीनन अपने हिस्से का काम मुकम्मल कर गये, लेकिन इस ज़िमन में हमें अपने हिस्से का काम करते रहना है। मोहतरम डॉक्टर साहब (रहि०) ने बयानुल क़ुरान (हिस्सा अव्वल) के तबअ सानी के मौक़े पर अपनी "तक़दीम" में तहरीफ़ फ़रमाया था:

"इस जिल्द में अभी सिर्फ़ सूरतुल फ़ातिहा और सूरतुल बक़रह की तर्जुमानी हुई है, गोया कि अभी पहाड़ जैसा भारी काम बाक़ी है। ताहम अल्लाह तआला के फ़ज़लो करम से तवक्क़ो है कि जैसे उसने, मेरे किसी इरादे या मंसूबाबंदी के बगैर और मेरी खालिस लाइल्मी में पेशे नज़र जिल्द शाया करा दी, वैसे ही बाक़ी भी शाया करा देगा। ख्वाह खुद मेरी इस दुनिया से दारे आख़िरत की जानिब रवानगी के बाद ही सही---"

बयानुल क़ुरान (हिस्सा दौम) सूरह आले इमरान, सूरतुन्निसा और सूरतुल मायदा की तर्जुमानी पर मुश्तमिल है। अल्लाह तआला इस खिदमते क़ुरानी को शर्फे क़ुबूल अता फ़रमा कर इसे हमारे लिये दुनयवी व उखरवी फौज़ो फलाह का बाइस बनाये और हमें वह हिम्मत व इस्तक़ामत अता फ़रमाये जो इस अज़ीम काम की तकमील के लिये दरकार है। आमीन!

18 मई, 2010

हाफिज़ खालिद महमूद खिज़र
मुदीर शौबा मतबुआत, क़ुरान अकेडमी लाहौर

सूरह आले इमरान

तम्हीदी कलिमात

क़ुरान हकीम के आगाज़ में वाक़ेअ मक्की और मदनी सूरतों के पहले ग्रुप में मदनी सूरतों के जो दो जोड़े आये हैं, उनमें से पहले जोड़े की पहली सूरत "सूरतुल बक़रह" के तर्जुमे और मुख़्तसर तशरीह की हम तकमील कर चुके हैं, और अब हमें इस जोड़े की दूसरी सूरत "आले इमरान" का मुताअला करना है। यह बात पहले बयान हो चुकी है कि दो चीज़ों के माबैन जोड़ा होने की निस्बत यह है कि उन दोनों चीज़ों में गहरी मुशाब्हत भी हो लेकिन कुछ फ़र्क़ भी हो, और यह फ़र्क़ ऐसा हो जो एक-दूसरे के लिये तक्मीली (complementary) नौइयत का हो, यानि एक-दूसरे से मिल कर किसी मक़सद की तकमील होती हो। यह निस्बते ज़ौजियत की हक़ीक़त है।

सूरतुल बक़रह और सूरह आले इमरान में मुशाब्हत के नुमाया पहलु यह हैं की दोनों हुरूफे मुक़त्तआत "الٓمٓ" से शुरू होती हैं। दोनों के आगाज़ में क़ुरान मजीद की अज़मत का बयान है, अगरचे सूरह आले इमरान में इसके साथ ही तौरात और इन्जील का बयान भी है। फिर यह कि दोनों के इख्तताम पर बड़ी अज़ीम आयात आयी हैं। सूरतुल बक़रह के इख्तताम पर वारिद आयात हम पढ़ चुके हैं। उसकी आखरी आयत को क़ुरान हकीम की अज़ीम तरीन दुआओं में से शुमार किया जा सकता है: {رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ اِنْ نَّسِيْنَآ اَوْ اَخْطَاْنَا.....} सूरह आले इमरान के आखरी रुकूअ में भी एक निहायत जामेअ दुआ आयी है जो तीन-चार आयतों में फैली हुई है। फिर जैसे मैंने आपको बताया, सूरतुल बक़रह भी सूरतुल उम्मातैन है, दो उम्मतों से ख़िताब और गुफ्तगू कर रही है, और यही मामला सूरह आले इमरान का भी है। फ़र्क़ यह है कि सूरतुल बक़रह में ज़्यादा गुफ्तगू यहूद के बारे में है और सूरह आले इमरान में नसारा के बारे में। तो गोया इस तरह अहले किताब से गुफ्तगू की तकमील हो रही है। अहले किताब में से "यहूद" अहमतर तबक़ा था और दीनी ऐतबार से उनकी अहमियत ज़्यादा थी, ख्वाह तादाद में वह कम थे और कम हैं। दूसरा तबक़ा ईसाईयों का है, जिनका तज़किरा सूरतुल बक़रह में बहुत कम आया है, लेकिन सूरह आले इमरान में ज़्यादा ख़िताब उनसे है। फिर जैसे सूरतुल बक़रह के दो तक़रीबन मसावी हिस्से हैं, पहला निस्फ़ 18 रुकूओं और 152 आयात पर मुश्तमिल है और निस्फ़े सानी 22 रुकूओं लेकिन 134 आयात पर मुश्तमिल है, वही कैफ़ियत सूरह आले इमरान में ब-तमामो-कमाल मिलती है। सूरह आले इमरान के भी दो हिस्से हैं, जो बहुत मसावी हैं। इसके कुल 20 रुकूअ हैं, 10 रुकूअ निस्फ़े अव्वल में हैं और 10 रुकूअ ही निस्फ़े सानी में। पहले 10 रुकूओं में 101 आयात और दूसरे 10 रुकूओं में 99 आयात हैं। यानि सिर्फ़ एक आयत का फ़र्क़ है। फिर जैसे सूरतुल बक़रह में निस्फ़े अव्वल के तीन हिस्से हैं वैसे ही यहाँ भी निस्फ़े अव्वल के तीन हिस्से हैं, लेकिन यहाँ तक़सीम रुकूओं के ऐतबार से नहीं बल्कि आयात के ऐतबार से है। इस सूरह मुबारका की इब्तदाई 32 आयात इसी तरह तम्हीदी कलाम पर मुश्तमिल हैं जैसे सूरतुल बक़रह के इब्तदाई चार रुकूअ हैं। सूरतुल बक़रह में रुए सुखन इब्तदा ही से यहूद की तरफ़ हो गया है, जबकि यहाँ रुए सुखन इब्तदा ही से नसारा की तरफ़ है।

इब्तदाई 32 आयात के बाद 31 आयात में ख़ास तौर पर नसारा से बराहे रास्त ख़िताब है। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की विलादत किन हालात में हुई, उनका मक़ाम और मरतबा क्या था, उनकी असल हैसियत क्या थी, और फिर यह कि उनके साथ क्या मामला हुआ, इस हिस्से में यह मज़ामीन शामिल हैं। इस सूरह मुबारका का अक्सरो बेशतर हिस्सा 3 हिजरी में ग़ज़वा-ए-ओहद के बाद नाज़िल हुआ है, लेकिन 31 आयात पर मुश्तमिल यह हिस्सा 9 हिजरी में नाज़िल हुआ। "नजरान" अरब के जुनूब में यमन की जानिब एक बस्ती थी और वहाँ ईसाई आबाद थे। वहाँ के ईसाईयों के सरदार और पादरी कोई सत्तर आदमियों का एक वफद लेकर रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में यह बात समझने-समझाने के लिये कि आप ﷺ किस बात की दावत दे रहे हैं, मदीना मुनव्वरा हाज़िर हुए और वह लोग कई दिन वहाँ मुक़ीम रहे। उन्होंने बात पूरी तरह समझ भी ली और ख़ामोश भी हो गये, लेकिन फिर भी बात नहीं मानी तो आँहुज़ूर ﷺ ने उन्हें मुबाहिले की दावत दी, लेकिन वह इस चैलेंज को क़ुबूल किये बगैर वहाँ से चले गये। उन्होंने रसूल अल्लाह ﷺ की दावत की शिद्दत के साथ तरदीद (इन्कार) नहीं की और उसे क़ुबूल भी नहीं किया। सूरह आले इमरान की यह 31 आयात नजरान के

ईसाईयों से ख़िताब के तौर पर नाज़िल हुईं। सूरतुल बक़रह के बारे में एक बात बयान होने से रह गयी थी कि उसके रुकूअ 38 की आयात जिनमें सूद से मुताल्लिक़ आखरी अहकाम हैं, यह भी तक़रीबन 9 हिजरी में नाज़िल हुई हैं। गोया मुशाबहत का यह पहलु भी दोनों सूरतों में मौजूद है। सूरतुल बक़रह का अक्सरो बेशतर हिस्सा अगरचे गज़वा-ए-बद्र से क़ब्ल नाज़िल हुआ, लेकिन उसकी कुछ आयात 9 हिजरी में नाज़िल हुईं। इसी तरह सूरह आले इमरान का अक्सरो बेशतर हिस्सा अगरचे गज़वा-ए-ओहद के बाद 3 हिजरी में नाज़िल हुआ, लेकिन नजरान के ईसाईयों से ख़िताब के ज़िमन में आयात 9 हिजरी में नाज़िल हुईं। फिर जैसे सूरतुल बक़रह के निस्फ़े अव्वल के आखरी हिस्से (रुकूअ 15, 16, 17, 18) में हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और खाना काबा का ज़िक्र था इस तरह से यह बात आपको यहाँ भी मिलेगी। यहाँ भी अहले किताब को उसी अंदाज़ में दावत दी गयी है जैसे सूरतुल बक़रह के सौलहवें रुकूअ में दी गयी है। सूरह आले इमरान के निस्फ़े अव्वल का यह तीसरा हिस्सा 38 आयात पर मुश्तमिल है, जो बहुत अहम और जामेअ आयात हैं।

सूरतुल बक़रह और सूरह आले इमरान दोनों के निस्फ़े सानी का आगाज़ "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" के अल्फ़ाज़ से होता है। जैसे सूरतुल बक़रह के उन्नीसवें रुकूअ से निस्फ़े सानी का आगाज़ होता है:

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَعِيْنُوْا بِالصَّبْرِ وَالصَّلٰوةِ ۚ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ۝١٥٣

इस तरह सूरह आले इमरान के ग्याहरवें रुकूअ से इसके निस्फ़े सानी का आगाज़ होता है:

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ حَقَّ تُقٰتِهٖ وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۝١٠٢

सूरह आले इमरान का निस्फ़े सानी दस रुकूओं पर मुश्तमिल है और इनकी तक़सीम उमूदी है, उफ़ुक़ी नहीं है। पहले दो रुकूओं में ख़िताब ज़्यादातर मुस्लमानों से है, फिर अगरचे रुए सुखन अहले किताब की तरफ़ भी है। इसके बाद मुसलसल छ: रुकूअ गज़वा-ए-ओहद के हालात पर मुश्तमिल हैं। यानि इस ज़िमन में जो मसाइल सामने आये उन पर तबसिरा, मुस्लमानों से जो गलतियाँ हुईं उन पर गिरफ्त और आइन्दा के लिये हिदायात। यह तक़रीबन 60 आयात हैं जो छ: रुकूओं पर फैली हुई हैं। यह गोया "गज़वा-ए-ओहद" के उन्वान से क़ुरान मजीद का एक मुस्तक़िल बाब (chapter) है। लेकिन क़ुरान में इस तरह से अबवाब नहीं बनाये गये हैं, बल्कि इसकी सूरतें हैं। जैसा कि इब्तदा में "तआरुफ़े क़ुरान" के ज़िमन में अर्ज़ किया जा चुका है, क़ुरान खुत्बाते इलाहिया का मजमुआ है। एक ख़ुत्बा नाज़िल हो रहा है और इसके अन्दर मुख्तलिफ़ मज़ामीन बयान हो रहे हैं, लेकिन इनमें एक रब्त और तरतीब है। अब तक इस रब्त और तरतीब पर तवज्जो कम हुई है, लेकिन इस दौर में क़ुरान हकीम के इल्म व मारफ़त का यह पहलु ज़्यादा नुमाया हुआ है कि इसमें बड़ा नज़्म है, इसके अन्दर तंज़ीम है, इसमें आयात का आपस में रब्त है, सूरतों का सूरतों से रब्त है। यह ऐसे ही बेरब्त और अलल टप कलाम नहीं है।

इस सूरह मुबारका के आख़री दो रुकूअ बहुत अहम हैं। उनमें से भी आखरी रुकूअ तो बहुत ही जामेअ है। इसमें वह अज़ीम दुआ भी आयी है जिसका ज़िक्र मैंने अभी किया, और फ़लसफ़ा-ए-ईमान के बारे में अहम तरीन बहस भी उस मक़ाम पर आयी है। और उससे पहले का रुकूअ यानि उन्नीसवा रुकूअ भी बड़े जामेअ मज़ामीन पर मुश्तमिल है और उसमें दर हक़ीक़त पूरी सूरह मुबारका के मज़ामीन को sum-up किया गया है।

इन दोनों सूरतों के माबैन निस्बते ज़ौजियत के हवाले से आप देखेंगे कि बाज़ मक़ामात पर तो अल्फ़ाज़ भी वही आ रहे हैं, वही अंदाज़ है। जैसे सूरतुल बक़रह की आयत 136 में फ़रमाया गया: "(ऐ मुस्लमानों!) तुम कहो हम ईमान रखते हैं अल्लाह पर और जो कुछ हम पर नाज़िल किया गया और जो कुछ इब्राहीम अलैहिस्सलाम और इस्माइल अलैहिस्सलाम और इसहाक़ अलैहिस्सलाम और याक़ूब अलैहिस्सलाम और औलादे याक़ूब पर नाज़िल किया गया.....।" बिल्कुल यही मज़मून सूरह आले इमरान की आयत 84 में आया है। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का ज़िक्र भी दोनों सूरतों में मिलता है। यहूद के बारे में {وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ....} वाली आयत सूरह आले इमरान में भी है, ज़रा तरतीब का फ़र्क़ है। [क़ुरान मजीद में ऐसे मक़ामात "मुतशाबाह" कहलाते हैं और यह हुफ्फ़ाज़ के लिये मुश्किल तरीन मक़ाम होते हैं कि तेज़ी और रवानी में वह इससे मुशाबेह दूसरे मक़ाम पर मुन्तक़िल हो जाते हैं।] इन दोनों सूरतों के मज़ामीन के अन्दर आपको इतनी गहरी मुनास्बत नज़र आयेगी जिसको मैंने ज़ौजियत से तशबीह दी है। ज़ाहिर बात है कि हर हैवान का जोड़ा जो होता है वह तक़रीबन नब्बे फ़ीसद तो एक-दूसरे से मुशाबेह होता है लेकिन उसमें कोई दस फ़ीसद का फ़र्क़ भी होता है, और वह फ़र्क़ भी ऐसा होता है कि दोनों के जमा होने से किसी मक़सद की तकमील हो रही होती है। जैसा कि आपको

मालूम है, मर्द और औरत एक-दूसरे से मुशाबेह हैं, लेकिन जिन्स के ऐतबार से मर्द और औरत के जिस्म में फ़र्क़ है। अलबत्ता दोनों के मिलाप से मक़सदे तनासुल यानि पैदाइशे औलाद और अफ़ज़ाइशे नस्ल (नस्ल में वृधि) हासिल हो रहा है, जो एक तरफ़ा तौर पर हासिल नहीं हो सकता। यह निस्बते ज़ौजियत क़ुरान मजीद की सूरतों में अक्सरो बेशतर ब-तमाम-ओ-कमाल मौजूद है। अलबत्ता इस ज़िमन में गहरे तदब्बुर की ज़रूरत है। क़ुरान में गौरो फ़िक्र किया जाये, सोच-विचार किया जाये तो फिर इस नज़म क़ुरान के हवाले से इज़ाफ़ी मायने, इज़ाफ़ी इल्म, इज़ाफ़ी मार्फ़त और इज़ाफ़ी हिकमत के खज़ाने खुलते हैं। मैं सूरतुल बक़रह की तम्हीद में यह बता चुका हूँ कि नबी अकरम ﷺ ने इन दोनों सूरतों को "अज़्ज़ाहरावैन" का नाम दिया है, यानि दो निहायत ताबनाक और रोशन सूरतें। जैसे क़ुरान मजीद की आखरी दो सूरतों सूरतुल फ़लक़ और सूरतुन्नास को "अल मुअव्वज़ातैन" का नाम दिया गया है इसी तरह क़ुरान हकीम के आगाज़ में वारिद इन दोनों सूरतों को "अज़्ज़ाहरावैन" का नाम दिया गया है।

اَعُوْذُ بِاللّٰہِ مِنَ الشَّیْطٰنِ الرَّجِیْمِ

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

आयात 1 से 9 तक

الٓمّٓ ① اللّٰہُ لَآ اِلٰہَ اِلَّا ھُوَ ۙ الْحَیُّ الْقَیُّوْمُ ② نَزَّلَ عَلَیْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَیْنَ یَدَیْهِ وَاَنْزَلَ التَّوْرٰىةَ
وَالْاِنْجِیْلَ ③ مِنْ قَبْلُ ھُدًى لِّلنَّاسِ وَاَنْزَلَ الْفُرْقَانَ ڛ اِنَّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا بِاٰیٰتِ اللّٰہِ لَھُمْ عَذَابٌ شَدِیْدٌ ۭ وَاللّٰہُ عَزِیْزٌ
ذُو انْتِقَامٍ ④ اِنَّ اللّٰہَ لَا یَخْفٰى عَلَیْهِ شَیْءٌ فِی الْاَرْضِ وَلَا فِی السَّمَاۗءِ ⑤ ھُوَ الَّذِیْ یُصَوِّرُكُمْ فِی الْاَرْحَامِ كَیْفَ یَشَاۗءُ ۭ
لَآ اِلٰہَ اِلَّا ھُوَ الْعَزِیْزُ الْحَكِیْمُ ⑥ ھُوَ الَّذِیْٓ اَنْزَلَ عَلَیْكَ الْكِتٰبَ مِنْهُ اٰیٰتٌ مُّحْكَمٰتٌ ھُنَّ اُمُّ الْكِتٰبِ وَاُخَرُ مُتَشٰبِهٰتٌ ۭ
فَاَمَّا الَّذِیْنَ فِیْ قُلُوْبِهِمْ زَیْغٌ فَیَتَّبِعُوْنَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَاۗءَ الْفِتْنَةِ وَابْتِغَاۗءَ تَاْوِیْلِهٖ ڤ وَمَا یَعْلَمُ تَاْوِیْلَهٗٓ اِلَّا اللّٰہُ ڤ
وَالرّٰسِخُوْنَ فِی الْعِلْمِ یَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِهٖ ۙ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ رَبِّنَا ۚ وَمَا یَذَّكَّرُ اِلَّآ اُولُوا الْاَلْبَابِ ⑦ رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوْبَنَا بَعْدَ
اِذْ ھَدَیْتَنَا وَھَبْ لَنَا مِنْ لَّدُنْكَ رَحْمَةً ۚ اِنَّكَ اَنْتَ الْوَھَّابُ ⑧ رَبَّنَآ اِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِیَوْمٍ لَّا رَیْبَ فِیْهِ ۭ اِنَّ اللّٰہَ
لَا یُخْلِفُ الْمِیْعَادَ ⑨

आयत 1

"अलिफ़। लाम। मीम।"

الٓمّٓ ①

यह हुरूफ़े मुक़त्तआत हैं जिनके बारे में इज्माली गुफ्तगू हम सूरतुल बक़रह के आगाज़ में कर चुके हैं।

आयत 2

"अल्लाह वह मअबूदे बरहक़ है जिसके सिवा कोई इलाह नहीं, वह ज़िन्दा है, सबका क़ायम रखने वाला है।"

اللّٰہُ لَآ اِلٰہَ اِلَّا ھُوَ ۙ الْحَیُّ الْقَیُّوْمُ ②

यह अल्फ़ाज़ सूरतुल बक़रह में आयतुल कुरसी के आगाज़ में आ चुके हैं। एक हदीस में आता है कि अल्लाह तआला का एक इस्मे आज़म है, जिसके हवाले से अगर अल्लाह से कोई दुआ माँगी जाये तो वह ज़रूर क़ुबूल होती है। यह तीन सूरतों अल बक़रह, आले इमरान और ताहा में है।(1)

आँहुज़ूर ﷺ ने तअय्युन के साथ नहीं बताया कि वह इस्मे आज़म कौन सा है, अलबत्ता कुछ इशारे किये हैं। जैसे रमज़ानुल मुबारक की एक शब "लय्लतुल क़द्र" जो हज़ार महीनों से अफ़ज़ल है, उसके बारे में तअय्युन के साथ नहीं बताया कि वह कौनसी है, बल्कि फ़रमाया:

فَالْتَمِسُوْھَا فِی الْعَشْرِ الْاَوَاخِرِ فِی الْوِتْرِ

"उसे आखरी अशरे की ताक़ रातों में तलाश करो।"(2)

ताकि ज़्यादा ज़ोक़ व शौक़ का मामला हो। इसी तरह इस्मे आज़म के बारे में आप ﷺ ने इशारात फ़रमाये हैं। आप ﷺ ने फ़रमाया कि यह तीन सूरतों सूरतुल बक़रह, सूरह आले इमरान और सूरह ताहा में है। इन तीन सूरतों में जो अल्फ़ाज़ मुश्तरक (common) हैं वह "अल हय्युल क़य्यूम" हैं। सूरतुल बक़रह में यह अल्फ़ाज़ आयतुल कुरसी में आये हैं, सूरह आले इमरान में यहाँ दूसरी आयत में और सूरह ताहा की आयत 111 में मौजूद हैं।

आयत 3

نَزَّلَ عَلَيۡكَ الۡكِتٰبَ بِالۡحَقِّ

"उसने नाज़िल फ़रमायी है आप पर (ऐ नबी ﷺ) यह किताब हक़ के साथ"

उस अल्लाह ने जिसके सिवा कोई मअबूद नहीं, जो अलहय्य है, अल क़य्यूम है। इसमें इस कलाम की अज़मत की तरफ़ इशारा हो रहा है कि जान लो यह कलाम किसका है, किसने उतारा है। और यहाँ नोट कीजिये, लफ्ज़ नज्ज़ला आया है, अन्ज़ला नहीं आया।

مُصَدِّقًا لِّمَا بَيۡنَ يَدَيۡهِ

"यह तसदीक़ करते हुए आयी है उसकी जो इसके सामने मौजूद है"

यानि तौरात और इन्जील की जो इससे पहले नाज़िल हो चुकी हैं। क़ुरान हकीम साबक़ा कुतबे समाविया की दो ऐतबार से तसदीक़ करता है। एक यह कि वह अल्लाह की किताबें थीं जिनमे तहरीफ़ हो गयी। दूसरे यह कि क़ुरान और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ उन पेशनगोइयों का मिस्दाक़ बन कर आये हैं जो उन किताबों में मौजूद थीं।

وَاَنۡزَلَ التَّوۡرٰىةَ وَالۡاِنۡجِيۡلَ ۝٣

"और उसने तौरात और इन्जील नाज़िल फ़रमायी थीं।"

आयत 4

مِنۡ قَبۡلُ هُدًى لِّلنَّاسِ

"इससे पहले लोगों की हिदायत के लिये"

وَاَنۡزَلَ الۡفُرۡقَانَ ؕ

"और अल्लाह ने फ़ुरक़ान उतारा।"

"फ़ुरक़ान" का मिस्दाक़ क़ुरान मजीद भी है, तौरात भी है और मौज्ज़ात भी हैं। सूरतुल अन्फ़ाल में "यौमुल फ़ुरक़ान" गज़वा-ए-बद्र के दिन को कहा गया है। हर वह शय जो हक़ को बिल्कुल मुबरहन कर दे और हक़ व बातिल के माबैन इम्तियाज़ पैदा कर दे वह फ़ुरक़ान है।

اِنَّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ لَهُمۡ عَذَابٌ شَدِيۡدٌ ؕ

"बेशक जिन लोगों ने अल्लाह की आयात का इन्कार किया उनके लिये सख्त अज़ाब है।"

यहाँ अब तहदीद और धमकी का अंदाज़ है कि इस क़ुरान का मामला दुनिया की दूसरी किताबों की तरह ना समझो कि मान लिया तब भी कोई हर्ज नहीं, ना माना तब भी कोई हर्ज नहीं। अगर पढ़ने पर तबीयत रागिब हुई तो भी कोई बात नहीं, तबियत रागिब नहीं है तो मत पढ़ो, कोई इल्ज़ाम नहीं। यह किताब वैसी नहीं है, बल्कि यह वह किताब है कि जो इस पर ईमान नहीं लायेंगे तो उनके लिये बहुत सख्त सज़ा होगी।

وَاللّٰهُ عَزِيۡزٌ ذُو انۡتِقَامٍ ۝٤

"और अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, इन्तेक़ाम लेने वाला है।"

यह लफ्ज़ इस ऐतबार से बहुत अहम है कि अल्लाह तआला बेशक रऊफ़ है, रहीम है, शफ़ीक़ है, गफ़ूर है, सत्तार है, लेकिन साथ ही "**عزیز ذوانتقام**" भी है, "**شدیدالعقاب**" भी है। अल्लाह तआला की यह दोनों शानें क़ल्ब व ज़हन में रहनी चाहिये।

आयत 5

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَخۡفٰى عَلَيۡهِ شَىۡءٌ فِى الۡاَرۡضِ وَلَا فِى السَّمَآءِ ؕ ۝٥

"यक़ीनन अल्लाह पर कोई शय भी मख्फ़ी नहीं है, ना आसमान में ना ज़मीन में।"

आयत 6

هُوَ الَّذِيْ يُصَوِّرُكُمْ فِي الْاَرْحَامِ كَيْفَ يَشَاۗءُ

"वही है जो तुम्हारी सूरतगरी करता है (तुम्हारी माँओ के) रहमों में जिस तरह चाहता है।"

पहली चीज़ अल्लाह के इल्म से मुताल्लिक़ थी और यह अल्लाह की क़ुदरत से मुताल्लिक़ है। वही है जो तुम्हारी नक़्शाकशी कर देता है, सूरत बना देता है तुम्हारी माँओ के रहमों में जैसे चाहता है। किसी के पास कोई इख़्तियार (choice) नहीं है कि वह अपना नक़्शा खुद बनाये।

لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝

"उसके सिवा कोई मअबूद नहीं, वह ग़ालिब और हकीम है।"

आयत 7

هُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ

"वही है जिसने आप ﷺ पर यह किताब नाज़िल फ़रमायी"

किसी-किसी जगह नज्ज़ला के बजाय अन्ज़ला का लफ़्ज़ भी आ जाता है, और यह आहंग (rhythm) के ऐतबार से होता है, क्योंकि क़ुरान मजीद का अपना एक मलाकूती गिना (Divine Music) है, इसमें अगर आहंग के हवाले से ज़रुरत हो तो यह अल्फ़ाज़ एक-दूसरे की जगह आ जाते हैं।

مِنْهُ اٰيٰتٌ مُّحْكَمٰتٌ هُنَّ اُمُّ الْكِتٰبِ

"इसमें मोहकम आयात हैं और वही असल किताब हैं"

"मोहकम" और पुख्ता आयात वह हैं जिनका मफ़हूम बिल्कुल वाज़ेह हो और जिन्हें इधर से उधर करने की कोई गुंजाइश ना हो। इस किताब की जड़, बुनियाद और असास वही हैं।

وَاُخَرُ مُتَشٰبِهٰتٌ ۭ

"और कुछ दूसरी आयतें ऐसी हैं जो मुतशाबेह हैं।"

जिनका हक़ीक़ी और सही-सही मफ़हूम मुअय्यन करना बहुत मुश्किल बल्कि आम हालात में नामुमकिन है। इसकी तफ़सील तआरुफ़े क़ुरान के ज़िमन में अर्ज़ की जा चुकी है। आयतुल अहकाम जितनी भी हैं वह सब मोहकम हैं, कि यह करो यह ना करो, यह हलाल है यह हराम! जैसा कि हमने सूरतुल बक़रह में देखा कि बार-बार "كُتِبَ عَلَيْكُمْ" के अल्फ़ाज़ आते रहे। मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि किताब दरहक़ीक़त है ही मजमुआ-ए-अहकाम। लेकिन जिन आयात में अल्लाह तआला की ज़ात व सिफ़ात की बहस है उनका फ़हम आसान नहीं है। अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात का हम क्या तसव्वुर कर सकते हैं? अल्लाह का हाथ, अल्लाह का चेहरा, अल्लाह की कुरसी, अल्लाह का अर्श, इनका हम क्या तसव्वुर करेंगे? इसी तरह फ़रिश्ते आलमे गैब की शय हैं। आलमे बरज़ख की क्या कैफ़ियत है? क़ब्र में क्या होता है? हम नही समझ सकते। आलमे आख़िरत, जन्नत और दोज़ख़ की असल हक़ीक़तें हम नही समझ सकते। चुनाँचे हमारी ज़हनी सतह के क़रीब लाकर कुछ बातें हमें बता दी गयी हैं कि مَا لَا يُدْرَكُ كُلُّهٗ لَا يُتْرَكُ كُلُّهٗ। चुनाँचे इनका एक इज्माली तसव्वुर क़ायम हो जाना चाहिये, इसके बगैर आदमी का रास्ता सीधा नहीं रहेगा। लेकिन इनकी तफ़ासील में नहीं जाना चाहिये। दूसरे दर्जे में मैंने आपको बताया था कि कुछ तबीअयाती मज़ाहिर (Physical Phenomena) भी एक वक़्त तक आयाते मुतशाबेहात में से रहे हैं, लेकिन जैसे-जैसे साइंस का इल्म बढ़ता चला जा रहा है, रफ्ता-रफ्ता इनकी हक़ीक़त से पर्दा उठता चला जा रहा है और अब बहुत सी चीज़ें मोहकम होकर हमारे सामने आ रही हैं। ताहम अब भी बाज़ चीज़ें ऐसी हैं जिनकी हक़ीक़त से हम बेखबर हैं। जैसे हम अभी तक नहीं जानते कि सात आसमान से मुराद क्या है? हमारा यक़ीन है कि इन्शा अल्लाह वह वक़्त आयेगा कि इन्सान समझ लेगा कि हाँ यही बात सही थी और यही ताबीर सही थी जो क़ुरान ने बयान की थी।

فَأَمَّا الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُونَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ

"तो वह लोग जिनके दिलों में कजी होती है वह पीछे लगते हैं उन आयात के जो उनमें से मुतशाबेह हैं"

ابْتِغَاءَ الْفِتْنَةِ

"फ़ितने की तलाश में"

वह चाहते हैं कि कोई ख़ास नयी बात निकाली जाये ताकि अपनी ज़हानत और फ़तानत का डंका बजाया जा सके या कोई फ़ितना उठाया जाये, कोई फ़साद पैदा किया जाये। जिनका अपना ज़हन टेढ़ा हो चुका है वह उस टेढ़े ज़हन के लिये क़ुरान से कोई दलील चाहते हैं। चुनाँचे अब वह मुतशाबेहात के पीछे पड़ते हैं कि इनमें से किसी के मफ़हूम को अपने मनपसंद मफ़हूम की तरफ मोड़ सकें। यह उससे फ़ितना उठाना चाहते हैं।

وَابْتِغَاءَ تَأْوِيلِهِ

"और उनकी हक़ीक़त व माहियत मालूम करने के लिये।"

वह तलाश करते हैं कि इन आयात की असल हक़ीक़त, असल मंशा और असल मुराद क्या है। यानि यह भी हो सकता है कि किसी का इल्मी ज़ोक़ ही ऐसा हो और यह भी हो सकता है कि एक शख्स की फ़ितरत में कजी हो।

وَمَا يَعْلَمُ تَأْوِيلَهُ إِلَّا اللَّهُ

"हालाँकि उनका हक़ीक़ी मफ़हूम अल्लाह अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता।"

وَالرَّاسِخُونَ فِي الْعِلْمِ يَقُولُونَ آمَنَّا بِهِ كُلٌّ مِنْ عِنْدِ رَبِّنَا

"और जो लोग इल्म में रासिख हैं वह यूँ कहते हैं कि हम ईमान लाये इस किताब पर, यह कुल का कुल हमारे रब की तरफ़ से है।"

जिन लोगों को रुसूख फ़िल इल्म हासिल हो गया है, जिनकी जड़ें इल्म में गहरी हो चुकी हैं उनका तर्ज़े अमल यह होता है कि जो बात साफ़ समझ में आ गयी है उस पर अमल करेंगे और जो बात पूरी तरह समझ में नहीं आ रही है उसके लिये इन्तेज़ार करेंगे, लेकिन यह इज्माली यक़ीन रखेंगे कि यह अल्लाह की किताब है।

وَمَا يَذَّكَّرُ إِلَّا أُولُو الْأَلْبَابِ ۝

"और यह नसीहत हासिल नहीं कर सकते मगर वही जो होशमन्द हैं।"

और सबसे बड़ी होशमन्दी यह है कि इन्सान अपनी अक़्ल की हुदूद (limitations) को जान ले कि मेरी अक़्ल कहाँ तक जा सकती है। अगर इन्सान यह नही जानता तो फिर वह ऊलुल अलबाब में से नहीं है। बिलाशुबा अक़्ल बड़ी शय है लेकिन उसकी अपनी हुदूद हैं। एक हद से आगे अक़्ल तजावुज़ नहीं कर सकती:

गुज़र जा अक़्ल से आगे कि यह नूर
चिरागे राह है मंज़िल नहीं है!

यानि मंज़िल तक पहुँचाने वाली शय अक़्ल नहीं, बल्कि क़ल्ब है। लेकिन अक़्ल बहरहाल एक रोशनी देती है, हक़ीक़त की तरफ़ इशारे करती है।

आयत 8

رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوبَنَا بَعْدَ إِذْ هَدَيْتَنَا

"(और उन ऊलुल अलबाब का यह क़ौल होता है) ऐ रब हमारे! हमारे दिलों को कज ना होने दीजियो इसके बाद कि तूने हमें हिदायत दे दी है"

وَهَبْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ رَحْمَةً

"और हमें तू ख़ास अपने खज़ाना-ए-फ़ज़ल से रहमत अता फरमा।"

إِنَّكَ أَنْتَ الْوَهَّابُ ﴿٨﴾

"यक़ीनन तू ही सब कुछ देने वाला है।"

हमें जो भी मिलेगा तेरी ही बारगाह से मिलेगा। तू ही फ़याज़े हक़ीक़ी है।

आयत 9

رَبَّنَا إِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِيَوْمٍ لَا رَيْبَ فِيهِ ۚ

"ऐ रब हमारे! यक़ीनन तू जमा करने वाला है लोगों को एक ऐसे दिन के लिये जिस (के आने) में कोई शक नहीं है।"

إِنَّ اللَّهَ لَا يُخْلِفُ الْمِيعَادَ ﴿٩﴾

"यक़ीनन अल्लाह तआला उस वादे के खिलाफ़ नहीं करेगा।"

अल्लाह तआला अपने वादे की खिलाफ़वर्ज़ी नहीं करता। लिहाज़ा जो उसने बताया है वह होकर रहेगा और क़यामत का दिन आकर रहेगा।

आयात 10 से 20 तक

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ أَمْوَالُهُمْ وَلَا أَوْلَادُهُمْ مِنَ اللَّهِ شَيْئًا ۖ وَأُولَٰئِكَ هُمْ وَقُودُ النَّارِ ﴿١٠﴾ كَدَأْبِ آلِ
فِرْعَوْنَ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۚ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا فَأَخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ ۗ وَاللَّهُ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿١١﴾ قُلْ لِلَّذِينَ كَفَرُوا
سَتُغْلَبُونَ وَتُحْشَرُونَ إِلَىٰ جَهَنَّمَ ۚ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٢﴾ قَدْ كَانَ لَكُمْ آيَةٌ فِي فِئَتَيْنِ الْتَقَتَا ۖ فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ
وَأُخْرَىٰ كَافِرَةٌ يَرَوْنَهُمْ مِثْلَيْهِمْ رَأْيَ الْعَيْنِ ۚ وَاللَّهُ يُؤَيِّدُ بِنَصْرِهِ مَنْ يَشَاءُ ۗ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَعِبْرَةً لِأُولِي الْأَبْصَارِ ﴿١٣﴾ زُيِّنَ
لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّهَوَاتِ مِنَ النِّسَاءِ وَالْبَنِينَ وَالْقَنَاطِيرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ الْمُسَوَّمَةِ
وَالْأَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ۗ ذَٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا ۖ وَاللَّهُ عِنْدَهُ حُسْنُ الْمَآبِ ﴿١٤﴾ قُلْ أَؤُنَبِّئُكُمْ بِخَيْرٍ مِنْ ذَٰلِكُمْ ۚ لِلَّذِينَ
اتَّقَوْا عِنْدَ رَبِّهِمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَأَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ وَرِضْوَانٌ مِنَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ
﴿١٥﴾ الَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَا إِنَّنَا آمَنَّا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿١٦﴾ الصَّابِرِينَ وَالصَّادِقِينَ وَالْقَانِتِينَ
وَالْمُنْفِقِينَ وَالْمُسْتَغْفِرِينَ بِالْأَسْحَارِ ﴿١٧﴾ شَهِدَ اللَّهُ أَنَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ وَالْمَلَائِكَةُ وَأُولُو الْعِلْمِ قَائِمًا بِالْقِسْطِ ۚ لَا إِلَٰهَ
إِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١٨﴾ إِنَّ الدِّينَ عِنْدَ اللَّهِ الْإِسْلَامُ ۗ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ إِلَّا مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ
الْعِلْمُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ ۗ وَمَنْ يَكْفُرْ بِآيَاتِ اللَّهِ فَإِنَّ اللَّهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٩﴾ فَإِنْ حَاجُّوكَ فَقُلْ أَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلَّهِ وَمَنِ
اتَّبَعَنِ ۗ وَقُلْ لِلَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ وَالْأُمِّيِّينَ أَأَسْلَمْتُمْ ۚ فَإِنْ أَسْلَمُوا فَقَدِ اهْتَدَوْا ۖ وَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلَاغُ ۗ وَاللَّهُ
بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ﴿٢٠﴾

आयत 10

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَن تُغْنِيَ عَنْهُمْ أَمْوَالُهُمْ وَلَا أَوْلَادُهُم مِّنَ اللَّهِ شَيْئًا

"यक़ीनन जिन लोगों ने कुफ़्र की रविश इख़्तियार की हरगिज़ ना बचा सकेंगे उन्हें उनके माल और ना उनकी औलाद अल्लाह से कुछ भी।"

अब यह ज़रा तहदीदी और चैलेंज का अंदाज़ है। ज़माना-ए-नुज़ूल के ऐतबार से आपने नोट कर लिया कि यह सूरह मुबारका 3 हिजरी में गज़वा-ए-ओहद के बाद नाज़िल हो रही है, लेकिन यह रुकूअ जो ज़ेरे मुताअला है इसके बारे में गुमाने ग़ालिब है कि यह गज़वा-ए-बद्र के बाद नाज़िल हुआ। गज़वा-ए-बद्र में मुस्लमानों को बड़ी ज़बरदस्त फ़तह हासिल हुई थी तो मुस्लमानों का morale बहुत बुलन्द था। लेकिन ऐसी रिवायात भी मिलती हैं कि जब मुस्लमान बद्र से गाज़ी बन कर, फ़तहयाब होकर वापस आये तो मदीना मुनव्वरा में जो यहूदी क़बीले थे उनमें से बाज़ लोगों ने कहा कि मुस्लमानों! इतना ना इतराओ। यह तो कुरैश के कुछ नातजुर्बेकार छोकरे थे जिनसे तुम्हारा मुक़ाबला पेश आया है, अगर कभी हमसे मुक़ाबला पेश आया तो दिन में तारे नज़र आ जायेंगे, वगैरह-वगैरह। तो इस पसमंज़र में यह अल्फ़ाज़ कहे जा रहे हैं कि सिर्फ़ मुशरिकीने मक्का पर मौक़ूफ़ (विश्राम) नहीं, आख़िरकार तमाम कुफ्फ़ार इसी तरह से ज़ेर होंगे और अल्लाह का दीन ग़ालिब होकर रहेगा। {وَاللَّهُ غَالِبٌ عَلَىٰ أَمْرِهِ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٢١﴾} (सूरह युसुफ:21)

وَأُولَٰئِكَ هُمْ وَقُودُ النَّارِ ﴿١٠﴾

"और वह तो सबके सब आग का ईंधन बनेंगे।"

आयत 11

كَدَأْبِ آلِ فِرْعَوْنَ وَالَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ

"(उनके साथ भी वैसा ही मामला होगा) जैसा कि आले फ़िरऔन और उन लोगों के साथ हुआ जो उनसे पहले गुज़रे।"

तुम्हारी तो हैसियत ही क्या है! क्या पिद्दी और क्या पिद्दी का शोरबा। आले फ़िरऔन का मामला याद करो, उनके साथ क्या हुआ था? फ़िरऔन बहुत बड़ा शहंशाह और बड़े लाव लश्कर वाला था, लेकिन उसका क्या हाल हुआ? और उससे पहले आद व समूद जैसी ज़बरदस्त क़ौमें इसी जज़ीरा नुमाये अरब में रही हैं।

كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا

"उन्होंने भी हमारी आयात को झुठलाया था।"

فَأَخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ

"तो अल्लाह ने पकड़ा उनको उनके गुनाहों की पादाश में।"

وَاللَّهُ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿١١﴾

"और अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख़्त है।"

आयत 12

قُل لِّلَّذِينَ كَفَرُوا سَتُغْلَبُونَ وَتُحْشَرُونَ إِلَىٰ جَهَنَّمَ

"(ऐ नबी ﷺ!) कह दीजिये उन लोगों से जो कुफ़्र की रविश इख़्तियार कर रहे हैं कि तुम सबके सब (दुनिया में) मग्लूब होकर रहोगे और (फिर आख़िरत में) जहन्नम की तरफ घेर कर ले जाये जाओगे।"

وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٢﴾

"और वह बहुत बुरा ठिकाना है।"

आयत 13

قَدۡ کَانَ لَکُمۡ اٰیَۃٌ فِیۡ فِئَتَیۡنِ الۡتَقَتَا ؕ

"तुम्हारे लिये एक निशानी आ चुकी है उन दो गिरोहों में जिन्होंने आपस में जंग की।"

यानि बद्र की जंग में एक तरफ़ मुस्लमान थे और दूसरी तरफ मुशरिकीने मक्का थे। इसमें तुम्हारे लिये निशानी मौजूद है।

فِئَۃٌ تُقَاتِلُ فِیۡ سَبِیۡلِ اللّٰہِ وَ اُخۡرٰی کَافِرَۃٌ

"एक गिरोह अल्लाह की राह में जंग कर रहा था और दूसरा काफ़िर था"

یَّرَوۡنَہُمۡ مِّثۡلَیۡہِمۡ رَاۡیَ الۡعَیۡنِ ؕ

"वह उन्हें देख रहे थे अपनी आँखों से कि उनसे दो गुने हैं।"

इसके कई मायने किये गये हैं। एक यह कि मुस्लमानों को तो खुल्लम-खुल्ला नज़र आ रहा था कि हमारे मुक़ाबिल हमसे दोगुनी फ़ौज है, जबकि वह तिगुनी थी। बाज़ रिवायात में यह भी आता है कि अल्लाह तआला ने गज़वा-ए-बद्र में कुफ़्फ़ार पर ऐसा रौब तारी कर दिया था कि उन्हें नज़र आ रहा था कि मुस्लमान हमसे दोगुने हैं।

وَ اللّٰہُ یُؤَیِّدُ بِنَصۡرِہٖ مَنۡ یَّشَآءُ ؕ

"और अल्लाह तआला ताईद (समर्थन) फ़रमाता है अपनी नुसरत से जिसकी चाहता है।"

اِنَّ فِیۡ ذٰلِکَ لَعِبۡرَۃً لِّاُولِی الۡاَبۡصَارِ ﴿۱۳﴾

"इसमें यक़ीनन एक इबरत है आँखें रखने वालों के लिये।"

यह इबरत और सबक़ आमूज़ी सिर्फ़ उनके लिये होती है जो आँखें रखते हों, जिनके अन्दर देखने की सलाहियत मौजूद हो।

अगली आयत फ़ितरते इंसानी के ऐतबार से बड़ी अहम है। बाज़ लोगों में ख़ास तौर पर दुनिया और अलाइक़ दुनयवी (दुनिया की दिलचस्पी) की मोहब्बत ज़्यादा शदीद होती है। यहाँ उसका असल सबब बताया जा रहा है कि अल्लाह तआला ने वाक़िअतन यह शय फ़ितरते इंसानी में रखी है। इसलिये कि अल्लाह तआला ने इस दुनिया को क़यामत तक आबाद रखना है और इसकी रौनक़े बहाल रखनी हैं। चुनाँचे मर्द और औरत की एक-दूसरे के लिये कशिश होगी तो औलाद पैदा होगी और दुनिया की आबादी में इज़ाफ़ा होता रहेगा और इस तरह दुनिया क़ायम रहेगी। दौलत की कोई तलब होगी तो आदमी मेहनत व मशक़्क़त करेगा और दौलत कमायेगा। इसलिये यह चीज़ें फ़ितरते इंसानी में basic animal instincts के तौर पर रख दी गयी हैं। बस ज़रूरत इस बात की है कि इन जिबिल्ली (स्वाभाविक) तक़ाज़ों को दबा कर रखा जाये, अल्लाह की मोहब्बत और अल्लाह की शरीअत को इससे बालातर रखा जाये। यह मतलूब नहीं है कि इनको ख़त्म कर दिया जाये। ताअज़ीबे नफ्स और नफ्सकशी (self annihilation) इस्लाम में नहीं है। यह तो रहबानियत है कि अपने नफ्स को कुचल दो, ख़त्म कर दो। जबकि इस्लाम तज़किया-ए-नफ्स और self control का दर्स देता है कि अपने आपको क़ाबू में रखो। नफ्से इंसानी एक मुँहज़ोर घोड़ा है। घोड़ा जितना ताक़तवर होता है उतना ही सवार के लिये तेज़ दौड़ना आसान होता है। लेकिन मुँहज़ोर और ताक़तवर घोड़े को क़ाबू में रखने की ज़रूरत भी है। वरना सवार अगर उसके रहमो करम पर आ गया तो वह जहाँ चाहेगा उसे पटखनी दे देगा।

आयत 14

زُیِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّہَوٰتِ مِنَ النِّسَآءِ وَ الۡبَنِیۡنَ

"मुज़य्यन कर (संवार) दी गयी है लोगों के लिये मरगूबाते (आकर्षक) दुनिया की मोहब्बत जैसे औरतें और बेटें"

मरगूबाते दुनिया में से पहली मोहब्बत औरतों की गिनवायी गयी है। फ़्राइड के नज़दीक भी इंसानी मुहर्रिकात में सबसे क़वी और ज़बरदस्त मुहर्रिक (potent motive) जिंसी जज़्बा है और यहाँ अल्लाह तआला ने भी सबसे पहले उसी का ज़िक्र किया है। अगरचे बाज़ लोगों के लिये पेट का मसला फ़ौक़ियत इख़्तियार कर जाता है और मआशी ज़रूरत जिंसी जज़्बे से भी शदीदतर हो जाती है, लेकिन वाक़िया यह है कि मर्द व औरत के माबैन कशिश इंसानी फ़ितरत का लाज़िमा है। चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ ने भी फ़रमाया है:

مَا تَرَکۡتُ بَعۡدِیۡ فِتۡنَۃً اَضَرَّ عَلَی الرِّجَالِ مِنَ النِّسَاءِ

"मैंने अपने बाद मर्दों के लिये औरतों के फ़ितने से ज़्यादा ज़रर रसाँ (हानिकारक) फ़ितना और कोई नहीं छोड़ा।" उनकी मोहब्बत इन्सान को कहाँ से कहाँ ले जाती है। बिलआम बिन बाऊरा यहूद में से एक बहुत बड़ा आलिम और फ़ाज़िल शख़्स था, मगर एक औरत के चक्कर में आकर वह शैतान का पैरो बन गया। उसका क़िस्सा सूरतुल आराफ़ में बयान हुआ है। बहरहाल औरतों की मोहब्बत इंसानी फ़ितरत के अन्दर रख दी गयी है। फिर इन्सान को बेटे बहुत पसंद हैं कि उसकी नस्ल और उसका नाम चलता रहे, वह बुढ़ापे का सहारा बनें।

وَالْقَنَاطِيْرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ

"और जमा किये हुए खज़ाने सोने के और चांदी के"

وَالْخَيْلِ الْمُسَوَّمَةِ

"और निशानज़दा घोड़े"

उम्दा नस्ल के घोड़े जिन्हें चुन कर उन पर निशान लगाये जाते हैं।

وَالْاَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ؕ

"और माल मवेशी और खेती।"

पंजाब और सराइकी इलाक़े में चौपायों को माल कहा जाता है। यह जानवर उनके मालिकों के लिये माल की हैसियत रखते हैं।

ذٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۚ

"यह सब दुनयवी ज़िन्दगी का साज़ो सामान है।"

बस नुक्ता-ए-ऐतदाल यह है कि जान लो यह सारी चीज़ें इस दुनिया की चंद रोज़ा ज़िन्दगी का साज़ो सामान हैं। इस ज़िन्दगी के लिये ज़रुरियात की हद तक इनसे फ़ायदा उठाना कोई बुरी बात नहीं है।

وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الْمَاٰبِ ﴿۱۴﴾

"लेकिन अल्लाह के पास है अच्छा लौटना।"

वह जो अल्लाह के पास है उसके मुक़ाबले में यह कुछ भी नहीं है। अगर ईमान बिलआख़िरत मौजूद है तो फिर इन्सान इन तमाम मरग़ूबात को, अपने तमाम जज़्बात और मीलानात को एक हद के अन्दर रखेगा, उससे आगे नहीं बढ़ने देगा। लेकिन अगर इनमें से किसी एक शय की मोहब्बत भी इतनी ज़ोरदार हो गयी कि आपके दिल के ऊपर उसका क़ब्ज़ा हो गया तो बस आप उसके गुलाम हो गये, अब वही आपका मअबूद है, चाहे वह दौलत हो या कोई और शय हो।

आयत 15

قُلْ اَؤُنَبِّئُكُمْ بِخَيْرٍ مِّنْ ذٰلِكُمْ ؕ

"इनसे कहिये कि क्या मैं तुम्हें बताऊँ इन तमाम चीज़ों से बहतर शय कौनसी है?"

لِلَّذِيْنَ اتَّقَوْا عِنْدَ رَبِّهِمْ جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ

"जो लोग तक़वा इख़्तियार करते हैं उनके लिये उनके रब के पास ऐसे बाग़ात हैं जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी"

तक़वा यही है कि तुम पर अपने नफ़्स का भी हक़ है जो तुम्हें अदा करना है, लेकिन नाजायज़ रास्ते से नहीं। तुम्हारे पेट का भी हक़ है, वह भी अदा करो, लेकिन अकले हलाल से। तुम्हारी बीवियों और तुम्हारी औलाद के भी तुम पर हुक़ूक़ हैं, जो तुम्हें जायज़ तरीक़ों से अदा करने हैं। तुम्हारे जो मुलाक़ाती आने वाले हैं उनका भी तुम पर हक़ है। रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस رضی اللہ عنہ से इशारा फ़रमाया था:

فَاِنَّ لِجَسَدِكَ عَلَيْكَ حَقًّا، وَاِنَّ لِعَيْنِكَ عَلَيْكَ حَقًّا، وَاِنَّ لِزَوْجِكَ عَلَيْكَ حَقًّا، وَاِنَّ لِزَوْرِكَ عَلَيْكَ حَقًّا

इन सबके हुक़ूक़ अदा करो, लेकिन अल्लाह से ऊपर किसी हक़ को फ़ाइक़ ना कर देना। बस यह है असल बात। *"गर हिफ़्ज़े मरातिब ना कुनी ज़िन्दीक़ी!"* अगर यह हिफ़्ज़े मरातिब नहीं होगा तो गोया आपका दीन भी गया और दुनिया भी गयी।

خٰلِدِيْنَ فِيْهَا
"उनमें वह हमेशा रहेंगे"

وَاَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ
"और उनके लिये बड़ी ही पाक औरतें होंगी"

وَّرِضْوَانٌ مِّنَ اللّٰهِ ۭ
"और (सबसे बढ़ कर) अल्लाह की खुशनूदी होगी।"

وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِالْعِبَادِ ۝١٥
"और अल्लाह अपने बन्दों को देख रहा है।"

आयत 16

اَلَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اِنَّنَآ اٰمَنَّا
"जो यह कहते रहते हैं परवरदिगार! हम ईमान ले आये"

فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا
"पस हमारे गुनाहों को बख्श दे"

وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۝١٦
"और हमें आग के अज़ाब से बचा ले।"

आगे उनकी मदाह (तारीफ़) में अल्फ़ाज़ इस्तेमाल हो रहे हैं कि जो यह दुआएँ करते हैं उनके यह औसाफ़ हैं। इसमें गोया तलक़ीन है कि अगर अल्लाह से यह दुआ करना चाहते हो कि अल्लाह तुम्हारे गुनाह बख्श दे और तुम्हें जहन्नम के अज़ाब से बचा ले तो अपने अन्दर यह औसाफ़ पैदा करो।

आयत 17

اَلصّٰبِرِيْنَ وَالصّٰدِقِيْنَ
"सब्र करने वाले और रास्तबाज़ (सच्चे)"

रास्तबाज़ी में रास्तगोयी भी शामिल है और रास्त किरदारी भी। यानि आपका अमल भी सही और दुरुस्त हो और क़ौल भी सही और दुरुस्त हो।

وَالْقٰنِتِيْنَ وَالْمُنْفِقِيْنَ
"और फ़रमाबरदार और अल्लाह की राह में खर्च करने वाले"

وَالْمُسْتَغْفِرِيْنَ بِالْاَسْحَارِ ۝١٧
"और अवक़ाते सहर में मगफ़िरत चाहने वाले।"

वह जो सहर का वक़्त है (small hours of the morning) उस वक़्त अल्लाह के हुज़ूर इस्तगफ़ार करने वाले। एक तो पंच वक़्ता नमाज़े हैं, और एक ख़ास वक़्त है जिसके बारे में फ़रमाया गया है कि हर रात जब रात का आखरी एक तिहाई हिस्सा बाक़ी रह जाता है तो अल्लाह तआला समाये दुनिया तक नुज़ूल फ़रमाता है और कहता है:

هَلْ مِنْ سَائِلٍ يُعْطٰى؟ هَلْ مِنْ دَاعٍ يُسْتَجَابُ لَهٗ؟ هَلْ مِنْ مُسْتَغْفِرٍ يُغْفَرُ لَهٗ؟

"है कोई माँगने वाला कि उसे अता किया जाये? है कोई दुआ करने वाला कि उसकी दुआ क़ुबूल की जाये? है कोई इस्तगफ़ार करने वाला कि उसे माफ़ किया जाये?" गोया:

हम तो माइल बा करम हैं कोई साइल ही नहीं
राह दिखलायें किसे राह रवे मंज़िल ही नहीं!

आयत 18

شَهِدَ اللّٰهُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۙ

"अल्लाह खुद गवाह है कि उसके सिवा कोई मअबूद नहीं है"

सबसे बड़ी गवाही तो अल्लाह तबारक व तआला की है, जो कुतुबे समाविया से भी ज़ाहिर है और मज़ाहिरे फ़ितरत से भी।

وَالْمَلٰۗىِٕكَةُ

"और सारे फ़रिश्ते (गवाह हैं)"

وَاُولُوا الْعِلْمِ

"और अहले इल्म भी (इस पर गवाह हैं)"

ऊलुल इल्म वही लोग हैं जिन्हें क़ुरान कहीं ऊलुल अलबाब क़रार देता है और कहीं उनके लिये "الَّذِيْنَ يَعْقِلُوْنَ" जैसे अल्फ़ाज़ आते हैं। यह वह लोग हैं जो आयाते आफ़ाक़ी के हवाले से अल्लाह को पहचान लेते हैं और मान लेते हैं कि वही मअबूदे बरहक़ है। सूरतुल बक़रह के बीसवें रुकूअ की पहली आयत हमने पढ़ी थी जिसे मैं "आयतुल आयात" क़रार देता हूँ। उसमें बहुत से मज़ाहिरे फ़ितरत बयान करके फ़रमाया गया: {لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ} (आयत:164) "(इनमें) यक़ीनन निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो अक़्ल से काम लेते हैं।" तो यह जो "قَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ" हैं, जो ऊलुल अलबाब हैं, ऊलुल इल्म हैं, वह भी गवाह हैं कि अल्लाह के सिवा कोई मअबूद नहीं है।

قَاۗىِٕمًۢا بِالْقِسْطِ ۭ

"वह अद्ल व क़िस्त (परिणाम) का क़ायम करने वाला है।"

यह इस आयत मुबारका के अहम तरीन अल्फ़ाज़ हैं। क़ब्ल अज़ अर्ज़ किया जा चुका है कि हम यह समझते हैं कि अल्लाह अद्ल क़ायम करता है और अद्ल करेगा, अलबत्ता अहले सुन्नत के नज़दीक यह कहना सूए अदब है कि अल्लाह पर अद्ल करना वाजिब है। अल्लाह पर किसी शय का वजूब नहीं है। अल्लाह को अद्ल पसंद है और वह अद्ल करने वालों से मोहब्बत रखता है। (अल हुजरात:9) { اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ} और अल्लाह खुद भी अद्ल फ़रमायेगा।

لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ﮁ

"उसके सिवा कोई मअबूद नहीं, वह ज़बरदस्त है, कमाले हिकमत वाला है।"

आयत 19

اِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْاِسْلَامُ ۣ

"यक़ीनन दीन तो अल्लाह के नज़दीक सिर्फ़ इस्लाम ही है।"

अल्लाह का पसन्दीदा और अल्लाह के यहाँ मंज़ूरशुदा दीन एक ही है और वह "इस्लाम" है। सूरतुल बक़रह और सूरह आले इमरान की निस्बते ज़ौजियत के हवाले से यह बात समझ लीजिये कि सूरतुल बक़रह में ईमान पर ज़्यादा ज़ोर है और सूरह आले इमरान में इस्लाम पर। सूरतुल बक़रह के आगाज़ में भी ईमानियात का तज़किरा है, दरमियान में आयतुल बिर्र में भी ईमानियात का बयान है और आखरी आयात (आयत:285) में भी ईमानियात का ज़िक्र है: { اٰمَنَ الرَّسُوْلُ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَّبِّهٖ وَالْمُؤْمِنُوْنَ} जबकि इस सूरह मुबारका में इस्लाम को emphasize किया गया है। यहाँ फ़रमाया: { اِنَّ الدِّيْنَ

{عِنۡدَ اللّٰہِ الۡاِسۡلَامُ} आगे जाकर आयत आयेगी: {وَمَنۡ یَّبۡتَغِ غَیۡرَ الۡاِسۡلَامِ دِیۡنًا فَلَنۡ یُّقۡبَلَ مِنۡہُ} (आयत:85) "और जो कोई इस्लाम के सिवा किसी और दीन को क़ुबूल करेगा वह उसकी जानिब से अल्लाह के यहाँ मंज़ूर नहीं किया जायेगा।"

وَمَا اخۡتَلَفَ الَّذِیۡنَ اُوۡتُوا الۡکِتٰبَ اِلَّا مِنۡۢ بَعۡدِ مَا جَآءَہُمُ الۡعِلۡمُ بَغۡیًۢا بَیۡنَہُمۡ

"और अहले किताब ने इख़्तिलाफ़ नहीं किया इसके बाद कि उनके पास इल्म आ चुका था मगर बाहमी ज़िद्दम-ज़िद्दा के सबब से।"

यह गोया सूरतुल बक़रह की आयत 213 (आयतुल इख्तलाफ़) का खुलासा है। दीने इस्लाम तो हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से चला आ रहा है। जिन लोगों ने इसमें इख्तलाफ़ किया, पगडंडियाँ निकालीं और गलत रास्तों पर मुड़ गये, इसके बाद कि उनके पास इल्म आ चुका था, उनका असली रोग वही ज़िद्दम-ज़िद्दा की रविश और ग़ालिब आने की उमंग (the urge to dominate) थी।

وَمَنۡ یَّکۡفُرۡ بِاٰیٰتِ اللّٰہِ فَاِنَّ اللّٰہَ سَرِیۡعُ الۡحِسَابِ ﴿۱۹﴾

"और जो कोई अल्लाह की आयात का इन्कार करता है तो (वह याद रखे कि) अल्लाह बहुत जल्द हिसाब चुका देने वाला है।"

अल्लाह तआला को हिसाब लेते देर नहीं लगेगी, वह बड़ी तेज़ी के साथ हिसाब ले लेगा।

आयत 20

فَاِنۡ حَآجُّوۡکَ

"फिर (ऐ नबी ﷺ!) अगर वह आप ﷺ से हुज्जत बाज़ी करें"

दलील बाज़ी और मुनाज़रे की रविश इख़्तियार करें।

فَقُلۡ اَسۡلَمۡتُ وَجۡہِیَ لِلّٰہِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ

"तो आप कह दें कि मैंने तो अपना चेहरा अल्लाह के सामने झुका दिया है और उन्होंने भी जो मेरा इत्तेबाअ कर रहे हैं।"

आप ﷺ उनसे दो टूक अंदाज़ में यह आखरी बात कह दें कि हमने तो अल्लाह के आगे सरइताअत ख़म कर दिया है। हमने एक रास्ता इख़्तियार कर लिया है। तुम जिधर जाना चाहते हो जाओ, जिस पगडण्डी पर मुड़ना चाहते हो मुड़ जाओ, जिस खाई में गिरना चाहते हो गिर जाओ। {لَکُمۡ دِیۡنُکُمۡ وَلِیَ دِیۡنِ} (अलकाफ़िरून:6)

وَقُلۡ لِّلَّذِیۡنَ اُوۡتُوا الۡکِتٰبَ وَالۡاُمِّیّٖنَ ءَاَسۡلَمۡتُمۡ

"और (ऐ नबी ﷺ!) आप कह दीजिये उनसे भी कि जिन्हें किताब दी गयी थी (यानि यहूद और नसारा) और उम्मिय्यीन से भी कि क्या तुम भी इसी तरह इस्लाम लाते हो?"

क्या तुम भी सरे तस्लीम ख़म करते हो या नहीं? ताबेअ होते हो या नहीं? अपने आपको अल्लाह के सुपुर्द करते हो या नहीं?

فَاِنۡ اَسۡلَمُوۡا فَقَدِ اہۡتَدَوۡا

"पस अगर वह भी इसी तरह इस्लाम ले आयें तो हिदायत पर हो जायेंगे।"

وَاِنۡ تَوَلَّوۡا فَاِنَّمَا عَلَیۡکَ الۡبَلٰغُ

"और अगर वह मुँह मोड़ लें तो (ऐ नबी ﷺ!) आप ﷺ पर ज़िम्मेदारी सिर्फ पहुँचा देने की है।"

आप ﷺ ने हमारा पैगाम उन तक पहुँचा दिया, हमारी दावत उन तक पहुँचा दी, हमारी आयात उन्हें पढ़ कर सुना दीं, अब क़ुबूल करना या ना करना उनका अपना इख़्तियार (choice) है। आप ﷺ पर ज़िम्मेदारी नहीं है कि यह लोग ईमान क्यों नहीं लाये। सूरतुल बक़रह में हम यह अल्फ़ाज़ पढ़ आये हैं: {وَّلَا تُسۡـَٔلُ عَنۡ اَصۡحٰبِ الۡجَحِیۡمِ} (आयत:119)

وَاللّٰہُ بَصِیۡرٌۢ بِالۡعِبَادِ ﴿٪۲۰﴾

"और अल्लाह अपने बन्दों के हाल को देख रहा है।"

वह उनसे हिसाब-किताब कर लेगा और उनसे निबट लेगा। आप ﷺ के ज़िम्मे जो फ़र्ज़ है आप उसको अदा करते रहिये।

आयात 21 से 32 तक

اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَيَقْتُلُوْنَ النَّبِيّٖنَ بِغَيْرِ حَقٍّ ۙ وَّيَقْتُلُوْنَ الَّذِيْنَ يَاْمُرُوْنَ بِالْقِسْطِ مِنَ النَّاسِ ۙ فَبَشِّرْھُمْ
بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝٢١ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ حَبِطَتْ اَعْمَالُھُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۡ وَمَا لَھُمْ مِّنْ نّٰصِرِيْنَ ۝٢٢ اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ
اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يُدْعَوْنَ اِلٰى كِتٰبِ اللّٰهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَھُمْ ثُمَّ يَتَوَلّٰى فَرِيْقٌ مِّنْھُمْ وَھُمْ مُّعْرِضُوْنَ ۝٢٣ ذٰلِكَ
بِاَنَّھُمْ قَالُوْا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّآ اَيَّامًا مَّعْدُوْدٰتٍ ۠ وَغَرَّھُمْ فِيْ دِيْنِهِمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ۝٢٤ فَكَيْفَ اِذَا جَمَعْنٰھُمْ
لِيَوْمٍ لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۣ وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَھُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ۝٢٥ قُلِ اللّٰهُمَّ مٰلِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ
تَشَاۗءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَاۗءُ ۡ وَتُعِزُّ مَنْ تَشَاۗءُ وَتُذِلُّ مَنْ تَشَاۗءُ ۭ بِيَدِكَ الْخَيْرُ ۭ اِنَّكَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝٢٦ تُوْلِجُ
الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَتُوْلِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ ۡ وَتُخْرِجُ الْـحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَتُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْـحَيِّ ۡ وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَاۗءُ بِغَيْرِ
حِسَابٍ ۝٢٧ لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِيْ شَيْءٍ اِلَّآ
اَنْ تَتَّقُوْا مِنْھُمْ تُقٰىةً ۭ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ ۭ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ ۝٢٨ قُلْ اِنْ تُخْفُوْا مَا فِيْ صُدُوْرِكُمْ اَوْ تُبْدُوْهُ يَعْلَمْهُ
اللّٰهُ ۭ وَيَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝٢٩ يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ
مُّحْضَرًا ښ وَّمَا عَمِلَتْ مِنْ سُوْۗءٍ ڔ تَوَدُّ لَوْ اَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهٗٓ اَمَدًۢا بَعِيْدًا ۭ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ ۭ وَاللّٰهُ رَءُوْفٌۢ بِالْعِبَادِ ۝٣٠ۧ
قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِيْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٣١ قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ
وَالرَّسُوْلَ ۚ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ ۝٣٢

आयत 21

اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَيَقْتُلُوْنَ النَّبِيّٖنَ بِغَيْرِ حَقٍّ

"यक़ीनन वह लोग जो अल्लाह की आयात का कुफ़्र करते हैं और अम्बिया अलै० को नाहक़ क़त्ल करते रहे हैं"

وَّيَقْتُلُوْنَ الَّذِيْنَ يَاْمُرُوْنَ بِالْقِسْطِ مِنَ النَّاسِ ۙ

"और उन लोगों को क़त्ल करते रहे हैं (या क़त्ल करते हैं) जो इन्सानों में से अद्ल व क़िस्त का हुक्म देते हैं"

इसलिये कि इन्साफ़ की बात तो बिलउमूम किसी को पसंद नहीं होती। "اَلْحَقُّ مُرٌّ" (हक़ बात कड़वी होती है)। बहुत से मौक़ों पर किसी हक़गोह इन्सान को हक़गोई की पादाश में अपनी जान से भी हाथ धोने पड़ते हैं। यहाँ फिर अद्ल व क़िस्त का मामला आया है। अल्लाह खुद "قَاۗىِٕمًۢا بِالْقِسْطِ" है और अल्लाह के महबूब बन्दे वही हैं जो अद्ल का हुक्म दें, इन्साफ़ का डंका बजाने की कोशिश करें। तो फ़रमाया कि जो ऐसे लोगों को क़त्ल करें...

فَبَشِّرْھُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝٢١

"तो (ऐ नबी ﷺ!) उन्हें बशारत सुना दीजिये दर्दनाक अज़ाब की।"

लफ्ज़ बशारत यहाँ तंज़ के तौर पर इस्तेमाल किया गया है।

आयत 22

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ

"यह वह लोग हैं जिनके तमाम आमाल दुनिया और आख़िरत में अकारत हो गये।"

क़ुरैश को यह ज़अम था कि हम खुद्दामे काबा हैं और हमारे पास जो यह लोग हज करने आते हैं हम उनको खाना खिलाते हैं, पानी पिलाते हैं, हमारी इन खिदमात के एवज़ हमें बख्श दिया जायेगा। फ़रमाया वह सारे आमाल हब्त हो जायेंगे। अगर तो सही-सही पूरे दीन को इख़्तियार करोगे तो ठीक है, वरना चाहे खैरात और भलाई के बड़े से बड़े काम किये हों, लोगों की फ़लाह व बहबूद (कल्याण) के इदारे क़ायम कर दिये हों, अल्लाह की निगाह में उनकी कोई हैसियत नहीं।

وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٢٢﴾

"और उनका फिर कोई मददगार नहीं होगा।"

आयत 23

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ أُوتُوا نَصِيبًا مِنَ الْكِتَابِ

"क्या तुमने गौर नहीं किया उन लोगों की हालत पर जिन्हें किताब का एक हिस्सा दिया गया था?"

أُوتُوا मजहूल का सीगा है और याद रहे कि जहाँ मज़हम्मत का पहलु होता है वहाँ मजहूल का सीगा आता है।

يُدْعَوْنَ إِلَىٰ كِتَابِ اللَّهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ

"अब उन्हें बुलाया जाता है अल्लाह की किताब की तरफ़ कि वह उनके माबैन फ़ैसला करे"

ثُمَّ يَتَوَلَّىٰ فَرِيقٌ مِنْهُمْ وَهُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾

"फिर उनमें से एक गिरोह पीठ फेर लेता है ऐराज़ करते हुए।"

यानि किताब को मानते भी हैं लेकिन उसके फ़ैसले को तस्लीम करने के लिये तैयार नहीं हैं।

आयत 24

ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ قَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ

"यह इस वजह से है कि यह कहते हैं कि हमें तो जहन्नम की आग छू ही नहीं सकती मगर गिनती के चंद दिन।"

यह मज़मून सूरतुल बक़रह में आ चुका है। उनकी ढिठाई का असल सबब उनके मनघडन्त ख्यालात हैं। जब उनसे कहा जाता है कि तुम किताब पर ईमान रखते हो तो उस पर अमल क्यों नहीं कर रहे? उसमें तो लिखा है कि सूद हराम है और तुम सूदखोरी पर कमरबस्ता हो, उसके हलाल को हलाल और उसके हराम को हराम क्यों नहीं जानते? तो इसके जवाब में वह अपना यह मनघडन्त अक़ीदा बयान करते हैं कि "हमें तो जहन्नम की आग छू ही नहीं सकती मगर गिनती के चंद दिन।" जब यह अक़ीदा है तो फिर इन्सान काहे को दुनिया का नुक़सान बर्दाश्त करे। *"बाबर बईश कोश कि आलम दोबारा नीस्त।"* फिर तो हलाल से, हराम से, जायज़ से, नाजायज़ से, जैसे भी ऐश दुनिया हासिल किया जा सकता हो हासिल करना चाहिये। यह अक़ीदा दरहक़ीक़त ईमान बिलआख़िरत की नफ़ी कर देता है।

وَغَرَّهُمْ فِي دِينِهِمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢٤﴾

"और उन्हें धोखे में मुब्तला कर दिया है उनके दीन के बारे में उन चीज़ों ने जो यह घड़ते रहे हैं।"

इस तरह के जो अक़ाइद व नज़रियात उन्होंने घड लिये हैं उनके बाइस यह दीन के मामले में गुमराही का शिकार हो गये हैं। अल्लाह ने तो ऐसी कोई ज़मानत नहीं दी थी। तौरात लाओ, इन्जील लाओ, कहीं ऐसी ज़मानत नहीं है। यह तो तुम्हारा मनघडन्त अक़ीदा है और इसी की वजह से अब तुम दीन के अन्दर बददीन या बेदीन हो गये हो।

आयत 25

فَكَيۡفَ اِذَا جَمَعۡنٰهُمۡ لِيَوۡمٍ لَّا رَيۡبَ فِيۡهِ‌

"तो क्या हाल होगा जब हम उन्हें इकट्ठा करेंगे उस दिन जिसके बारे में कोई शक नहीं!"

इस वक़्त तो यह बढ़-चढ़ कर बातें बना रहे हैं, ज़बान दराज़ियाँ कर रहे हैं। लेकिन जब हम इन्हें एक ऐसे दिन में जमा करेंगे जिसके आने में ज़रा शक नहीं, तो उस दिन इनका क्या हाल होगा!

وَوُفِّيَتۡ كُلُّ نَفۡسٍ مَّا كَسَبَتۡ

"और हर जान को पूरा-पूरा दे दिया जायेगा जो कुछ उसने कमाई की होगी"

وَهُمۡ لَا يُظۡلَمُوۡنَ ۝٢٥

"और उन पर कोई ज़्यादती नहीं होगी।"

इसके बाद अब फिर एक बहुत अज़ीम दुआ आ रही है। इस सूरह मुबारका में बहुत सी दुआएँ हैं। यह भी एक अज़ीम दुआ है, जिसकी बाक़ायदा तलक़ीन करके कहा गया है कि यूँ कहा करो।

आयत 26

قُلِ اللّٰهُمَّ مٰلِكَ الۡمُلۡكِ

"कहो ऐ अल्लाह! तमाम बादशाहत के मालिक!"

कुल मुल्क तेरे इख़्तियार में है।

تُؤۡتِى الۡمُلۡكَ مَنۡ تَشَآءُ

"तू हुकूमत और इख़्तियार देता है जिसको चाहता है"

وَتَنۡزِعُ الۡمُلۡكَ مِمَّنۡ تَشَآءُ

"और सल्तनत छीन लेता है जिससे चाहता है"

وَتُعِزُّ مَنۡ تَشَآءُ

"और तू इज़्ज़त देता है जिसको चाहता है"

وَتُذِلُّ مَنۡ تَشَآءُ‌

"और तू ज़लील कर देता है जिसको चाहता है।"

بِيَدِكَ الۡخَيۡرُ‌

"तेरे ही हाथ में सब खैर है।"

इसके दोनों मायने हैं। एक यह कि कुल खैर व खूबी तेरे हाथ में है और दूसरे यह कि तेरे हाथ में खैर ही खैर है। बसा अवक़ात इन्सान जिसे अपने लिये शर समझ बैठता है वह भी उसके लिये खैर होता है। सूरतुल बक़रह (आयत 216) में हम पढ़ चुके हैं: {وَعَسٰۤى اَنۡ تَكۡرَهُوۡا شَيۡـــًٔا وَّهُوَ خَيۡرٌ لَّـكُمۡ‌ۚ وَعَسٰۤى اَنۡ تُحِبُّوۡا شَيۡـــًٔا وَّهُوَ شَرٌّ لَّـكُمۡ‌}

اِنَّكَ عَلٰى كُلِّ شَىۡءٍ قَدِيۡرٌ ۝٢٦

"यक़ीनन तू हर चीज़ पर क़ादिर है।"

आयत 27

تُوْلِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ

"तू रात को ले आता है दिन में पिरो कर"

وَتُوْلِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ

"और फिर दिन को निकाल लाता है रात में से पिरो कर।"

وَتُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ

"और तू निकालता है ज़िन्दा को मुर्दे से"

وَتُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ

"और तू निकालता है मुर्दे को ज़िन्दा से।"

इसकी बेहतरीन मिसाल मुर्गी और अंडा है। अंडे में जान नहीं है लेकिन उसी में से ज़िन्दा चूज़ा बरामद होता है और मुर्गी से अंडा बरामद होता है।

وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢٧﴾

"और तू देता है जिसको चाहता है बेहद व बेहिसाब।"

आयत 28

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ

"अहले ईमान ना बनायें काफ़िरों को अपने दोस्त अहले ईमान को छोड़ कर।"

"औलिया" ऐसे क़ल्बी दोस्त होते हैं जो एक-दूसरे के राज़दार भी बन जायें और एक-दूसरे के पुश्त पनाह भी हों। यह ताल्लुक़ कुफ्फ़ार के साथ इख़्तियार करने की इजाज़त नहीं है। उनके साथ अच्छा रवैय्या, ज़ाहिरी मदारात और तहज़ीब व शाइस्तगी से बात-चीत तो और बात है, लेकिन दिली मोहब्बत, क़ल्बी रिश्ता, जज़्बाती ताल्लुक़, बाहमी नुसरत और तआवुन और एक-दूसरे के पुश्त पनाह होने का रिश्ता क़ायम कर लेने की इजाज़त नहीं है। कुफ्फ़ार के साथ इस तरह के ताल्लुक़ात अल्लाह तआला को हरगिज़ पसंद नहीं हैं।

وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِيْ شَيْءٍ

"और जो कोई भी यह हरकत करेगा तो फिर अल्लाह के साथ उसका कोई ताल्लुक़ नहीं रहेगा"

अगर अल्लाह के दुश्मनों के साथ तुम्हारी दोस्ती है तो ज़ाहिर है फिर तुम्हारा अल्लाह के साथ कोई रिश्ता व ताल्लुक़ नहीं रहा है।

اِلَّآ اَنْ تَتَّقُوْا مِنْهُمْ تُقٰىةً

"सिवाये यह कि तुम उनसे बचने के लिये अपना बचाव करना चाहो।"

बाज़ अवक़ात ऐसे हालात होते हैं कि खुले मुक़ाबले का अभी मौक़ा नहीं होता तो आप दुश्मन को तरह (उपाय) देते हैं और इस तरह गोया वक़्त हासिल करते हैं (you are buying time) तो इस दौरान अगर ज़ाहिरी खातिर मदारात का मामला भी हो जाये तो कोई हर्ज नहीं है, लेकिन मुस्तक़िल तौर पर कुफ्फ़ार से क़ल्बी मोहब्बत क़ायम कर लेना हरगिज़ जायज़ नहीं है। क़ुरान के इन्ही अल्फ़ाज़ को हमारे यहाँ अहले तशय्यो ने तक़िये की बुनियाद बना लिया है। लेकिन उन्होंने इसे इस हद तक पहुँचा दिया है की झूठ बोलना और अपने अक़ाइद को छुपा लेना भी रवा समझते हैं और उसके लिये दलील यहाँ से लाते हैं। लेकिन यह एक बिल्कुल दूसरी शक्ल है और यह सिर्फ़ ज़ाहिरी मदारात की हद तक है। जैसे की हम सूरतुल बक़रह में पढ़ चुके हैं कि अगरचे तुम्हारे खिलाफ़ यहूद के दिलों में हसद की आग भरी हुई है लेकिन {فَاعْفُوْا وَاصْفَحُوْا}

(आयत:109) अभी ज़रा दरगुज़र करते रहो और चश्मपोशी से काम लो। अभी फ़ौरी तौर पर इनके साथ मुक़ाबला शुरू करना मुनासिब नहीं है। इस हद तक मसलहत बीनी तो सही है, लेकिन यह नहीं कि झूठ बोला जाये, माज़ अल्लाह!

وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ

"और अल्लाह तुम्हें डराता है अपने आप से।"

अल्लाह से डरो। यानि किसी और से ख्वाह मा ख्वाह डर कर सिर्फ़ खातिर मदारात कर लेना भी सही नहीं है। किसी वक़्त मसलहत का तक़ाज़ा हो तो ऐसा कर लो, लेकिन तुम्हारे दिल में खौफ़ सिर्फ़ अल्लाह का रहना चाहिये।

وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ ۝۲۸

"और अल्लाह ही की तरफ़ (तुम्हें) लौट कर जाना है।"

आयत 29

قُلْ اِنْ تُخْفُوْا مَا فِيْ صُدُوْرِكُمْ اَوْ تُبْدُوْهُ يَعْلَمْهُ اللّٰهُ

"कह दीजिये (ऐ नबी ﷺ!) कि अगर तुम छुपाओ जो कुछ कि तुम्हारे सीनों में है या उसे ज़ाहिर कर दो अल्लाह उसे जानता है।"

तुम अपने सीनों में मख्फ़ी बातें एक-दूसरे से तो छुपा सकते हो, अल्लाह तआला से नहीं। सूरतुल बक़रह (आयत 284) में हम पढ़ चुके हैं: { وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِيْٓ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوْهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ } "और जो कुछ तुम्हारे दिलों में है ख्वाह तुम उसे ज़ाहिर करो ख्वाह छुपाओ अल्लाह तुमसे उसका मुहासबा कर लेगा।"

وَيَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ

"और वह जानता है जो कुछ कि आसमानों में है और जो ज़मीन में है।"

وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝۲۹

"और अल्लाह तआला हर चीज़ पर क़ादिर है।"

आयत 30

يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ مُّحْضَرًا

"(उस दिन का तसव्वुर करो) जिस दिन हर जान अपने सामने मौजूद पायेगी हर नेकी जो उसने की होगी"

وَّمَا عَمِلَتْ مِنْ سُوْٓءٍ

"और हर बुराई जो उसने कमाई होगी।"

इसका नक्शा सूरतुल ज़िलज़ाल में बाअल्फ़ाज़ खींचा गया है:

فَمَنْ يَّعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَّرَهٗ ۝۷ وَمَنْ يَّعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَّرَهٗ ۝۸

"तो जिसने एक ज़र्रे के हमवज़न नेकी की होगी वह उसको (बचश्म खुद) देख लेगा। और जिसने एक ज़र्रे के हमवज़न बुराई की होगी वह उसको (बचश्म खुद) देख लेगा।"

تَوَدُّ لَوْ اَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهٗٓ اَمَدًا بَعِيْدًا

"और (हर जान) यह चाहेगी कि काश उसके और उस (के नामाये आमाल) के दरमियान एक ज़माना-ए-दराज़ हाईल होता।"

उस वक़्त हर इन्सान यह चाहेगा कि काश मेरे और मेरे आमाल नामे के दरमियान बड़ा फ़ासला आ जाये और मेरी निगाह भी उस पर ना पड़े।

وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ

"और अल्लाह डरा रहा है तुम्हें अपने आपसे।"

यानि तक़वा इख्तियार करना है तो उसका करो, डरना है तो उससे डरो, खौफ़ खाना है तो उससे खाओ!

وَاللّٰهُ رَءُوْفٌۢ بِالْعِبَادِ۝۳۰

"और अल्लाह तआला अपने बन्दों के हक़ में बहुत शफ़ीक़ है।"

यह तम्बिहात (warnings) वह तुम्हें बार-बार इसी लिये दे रहा है ताकि तुम्हारी आक़बत ख़राब ना हो।

आयत 31

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِيْ

"(ऐ नबी ﷺ!) कह दीजिये कि अगर तुम अल्लाह से मोहब्बत करते हो तो मेरी पैरवी करो"

यह आयत बहुत मारूफ़ है और मुस्लमानों को बहुत पसंद भी है। हमारे यहाँ मवाइज़ और खिताबात में यह बहुत कसरत से बयान होती है। फ़रमाया कि ऐ नबी ﷺ अहले ईमान से कह दीजिये कि अगर तुम अल्लाह से मोहब्बत करते हो तो मेरी पैरवी करो, मेरा इत्तेबाअ करो! उसका नतीजा यह निकलेगा कि:

يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ

"अल्लाह तुमसे मोहब्बत करेगा"

وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ ۭ

"और तुम्हारे गुनाह बख्श देगा।"

وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝۳۱

"और अल्लाह बख्शने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।"

आयत 32

قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ ۚ

"कह दीजिये इताअत करो अल्लाह की और रसूल ﷺ की।"

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ ۝۳۲

"फिर अगर वह पीठ मोड़ लें तो (याद रखें कि) अल्लाह को ऐसे काफ़िर पसंद नहीं हैं।"

यह दो आयतें इस ऐतबार से बहुत अहम हैं कि इनमें रसूल अल्लाह ﷺ के लिये दो अल्फ़ाज़ आये हैं "इताअत" और "इत्तेबाअ"। इताअत अगर नहीं है तो यह कुफ़्र है। चुनाँचे इताअत तो लाज़िम है और वह भी दिली आमादगी से, मारे-बांधे की इताअत नही। लेकिन इताअत किस चीज़ में होती है? जो हुक्म दिया गया है कि यह करो वह आपको करना है। इत्तेबाअ इससे बुलन्दतर शय है। इन्सान खुद तलाश करे कि आँहुज़ूर ﷺ के आमाल क्या थे और उन पर अमल पैरा हो जाये, ख्वाह आप ﷺ ने उनका हुक्म ना दिया हो। गोया इत्तेबाअ का दायरा इताअत से वसीतर है। इन्सान को जिस किसी से मोहब्बत होती है वह उससे हर तरह से एक मुनास्बत पैदा करना चाहता है। चुनाँचे वह उसके लिबास जैसा लिबास पहनना पसंद करता है, जो चीज़ें उसको खाने में पसंद है वही चीज़ें खुद भी खाना पसंद करता है। यह ऐसी चीज़ें हैं जिनका हुक्म नहीं दिया गया लेकिन इनका इल्तेज़ाम (प्रावधान) पसन्दीदा है। एक सहाबी رضی اللہ عنہ का वाक़िया आता है कि वह एक मरतबा रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो उन्होंने देखा कि आप ﷺ के कुरते के बटन नहीं लगे हुए थे और आप ﷺ का गिरेबान खुला था। उसके बाद उन सहाबी رضی اللہ عنہ ने फिर सारी उम्र अपने कुरते के बटन नहीं लगाये। हालाँकि हुज़ूर ﷺ ने तो उन्हें इसका हुक्म नहीं दिया था। यह सहाबी رضی اللہ عنہ कहीं दूर-दराज़ से आये होंगे और एक ही मरतबा खिदमते अक़दस में हाज़िर हुए होंगे, लेकिन उन्होंने उस वक़्त मुहम्मदुन रसूल अल्लाह ﷺ को जिस शान में देखा उसको फिर अपने ऊपर लाज़िम कर लिया।

इत्तेबाअ के ज़िमन में यह बात भी लायक़ तवज्जो है कि अगरचे दीन के कुछ तक़ाज़े ऐसे हैं कि उन्हें जिस दर्जे में मुहम्मदुन रसूल अल्लाह ﷺ ने पूरा फ़रमाया उस दर्जे में पूरा करना किसी इन्सान के बस में नहीं है, फिर भी इसकी कोशिश करते रहना इत्तेबाअ का तक़ाज़ा है। मसलन रसूल अल्लाह ﷺ ने कोई मकान नहीं बनाया, कोई जायदाद नहीं

बनाई, जैसे ही वही का आगाज़ हुआ, उसके बाद आप ﷺ ने कोई दुनयवी काम नहीं किया, कोई तिजारत नहीं की। आप ﷺ ने अपने वक़्त का एक-एक लम्हा और अपनी तवानाई की एक-एक रमक़ अल्लाह के दीन की दावत और उसकी अक़ामत में लगा दी। सबके लिये तो इस मक़ाम तक पहुँचना यक़ीनन मुश्किल है, लेकिन बहरहाल बंदा-ए-मोमिन का आईडियल यह रहे और वह इसी की तरफ़ चलने की कोशिश करता रहे, अपना ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त और ज़्यादा से ज़्यादा वसाइल फ़ारिग़ करे और इस काम के अन्दर लगाये तो "इत्तेबाअ" का कम से कम तक़ाज़ा पूरा होगा। अलबत्ता जहाँ तक "इताअत" का ताल्लुक़ है उसमें कोताही क़ाबिले क़ुबूल नहीं। जहाँ हुक्म दे दिया गया कि यह हलाल है, यह हराम है, यह फ़र्ज़ है, यह वाजिब है, वहाँ हुक्म अदूली (उल्लंघन) की गुंजाइश नहीं। अगर इताअत ही से इन्कार है तो इसे क़ुरान कुफ़्र क़रार दे रहा है।

इत्तेबाअ का मामला यह है कि नबी ﷺ का इत्तेबाअ करने वाला अल्लाह का महबूब बन जाता है। यहाँ इरशाद फ़रमाया कि ऐ नबी ﷺ! अहले ईमान से कह दीजिये कि अगर तुम अल्लाह से मोहब्बत करते हो तो मेरा इत्तेबाअ करो, मेरी पैरवी करो। देखो, मेरे शबो रोज़ क्या हैं? मेरी तवानईयाँ किन कामों पर लग रही हैं? दुनिया के अन्दर मेरी दिलचस्पियाँ क्या हैं? इन मामलात में तुम मेरी पैरवी करो। इसके नतीजे में तुम अल्लाह तआला के "मुहिब्ब" से बढ़ कर "महबूब" बन जाओगे और अल्लाह तुम्हारे गुनाह बख्श देगा। वह यक़ीनन ग़फ़ूर और रहीम है। बाक़ी इताअत तो अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की हर सूरत करनी है। अगर यह इस इताअत से भी मुँह मोड़ें तो अल्लाह तआला को ऐसे काफ़िर पसंद नहीं हैं। क्योंकि इताअते रसूल ﷺ का इन्कार तो कुफ़्र हो गया। यहाँ सूरह आले इमरान के निस्फ़े अव्वल का सुलुसे अव्वल मुकम्मल हो गया। मैंने अर्ज़ किया था कि इस सूरह मुबारका की पहली 32 आयात तम्हीदी और उमूमी नौइयत की हैं। इनमें दीन के बड़े गहरे उसूल बयान हुए हैं, निहायत जामेअ दुआएँ तलक़ीन की गई हैं और मोहकमात और मुतशाबेहात का फ़र्क़ वाज़ेह किया गया है।

आयात 33 से 41 तक

إِنَّ اللَّهَ اصْطَفَىٰ آدَمَ وَنُوحًا وَآلَ إِبْرَاهِيمَ وَآلَ عِمْرَانَ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٣٣﴾ ذُرِّيَّةً بَعْضُهَا مِن بَعْضٍ ۗ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٣٤﴾
إِذْ قَالَتِ امْرَأَتُ عِمْرَانَ رَبِّ إِنِّي نَذَرْتُ لَكَ مَا فِي بَطْنِي مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنِّي ۖ إِنَّكَ أَنتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٣٥﴾ فَلَمَّا
وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ إِنِّي وَضَعْتُهَا أُنثَىٰ وَاللَّهُ أَعْلَمُ بِمَا وَضَعَتْ وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنثَىٰ ۖ وَإِنِّي سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَإِنِّي
أُعِيذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ ﴿٣٦﴾ فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُولٍ حَسَنٍ وَأَنبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا وَكَفَّلَهَا زَكَرِيَّا ۖ كُلَّمَا
دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِندَهَا رِزْقًا ۖ قَالَ يَا مَرْيَمُ أَنَّىٰ لَكِ هَٰذَا ۖ قَالَتْ هُوَ مِنْ عِندِ اللَّهِ ۖ إِنَّ اللَّهَ يَرْزُقُ مَن
يَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٣٧﴾ هُنَالِكَ دَعَا زَكَرِيَّا رَبَّهُ ۖ قَالَ رَبِّ هَبْ لِي مِن لَّدُنكَ ذُرِّيَّةً طَيِّبَةً ۖ إِنَّكَ سَمِيعُ الدُّعَاءِ ﴿٣٨﴾
فَنَادَتْهُ الْمَلَائِكَةُ وَهُوَ قَائِمٌ يُصَلِّي فِي الْمِحْرَابِ أَنَّ اللَّهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحْيَىٰ مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللَّهِ وَسَيِّدًا وَحَصُورًا
وَنَبِيًّا مِّنَ الصَّالِحِينَ ﴿٣٩﴾ قَالَ رَبِّ أَنَّىٰ يَكُونُ لِي غُلَامٌ وَقَدْ بَلَغَنِيَ الْكِبَرُ وَامْرَأَتِي عَاقِرٌ ۖ قَالَ كَذَٰلِكَ اللَّهُ يَفْعَلُ مَا
يَشَاءُ ﴿٤٠﴾ قَالَ رَبِّ اجْعَل لِّي آيَةً ۖ قَالَ آيَتُكَ أَلَّا تُكَلِّمَ النَّاسَ ثَلَاثَةَ أَيَّامٍ إِلَّا رَمْزًا ۗ وَاذْكُر رَّبَّكَ كَثِيرًا وَسَبِّحْ
بِالْعَشِيِّ وَالْإِبْكَارِ ﴿٤١﴾

सूरह आले इमरान के निस्फ़े अव्वल का दूसरा हिस्सा 31 आयात पर मुश्तमिल है। इस हिस्से में ख़िताब बराहे रास्त नसारा से है और उन्हें बताया गया है कि यह जो तुमने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को मअबूद बना लिया है और तस्लीस (Trinity) का अक़ीदा गढ़ लिया है यह सब बातिल है। ईसाईयों के यहाँ दो तरह की तस्लीस राइज रही है: 1) ख़ुदा, मरयम

और ईसा अलैहिस्सलाम और 2) ख़ुदा, रूहुल क़ुदुस और ईसा अलैहिस्सलाम। यहाँ पर वाज़ेह कर दिया गया कि यह जो तस्लीसें तुमने ईजाद कर ली हैं इनकी कोई बुनियाद नहीं है, यह तुम्हारी कज रवी है। तुमने गलत शक्ल इख़्तियार की है। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम बहुत बुरगज़ीदा पैगम्बर थे। हाँ उनकी विलादत मौज्ज़ाना तरीक़े पर हुई है। लेकिन उनसे मुत्तसालन क़ब्ल हज़रत याहया अलैहिस्सलाम की विलादत भी तो मौज्ज़ाना हुई थी। वह भी कोई कम मौज्ज़ा नहीं है। और फिर हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की विलादत भी तो बहुत बड़ा मौज्ज़ा है। अल्लाह ने आदम अलैहिस्सलाम को पैदा किया और उनसे नस्ले इंसानी का आगाज़ हुआ। चुनाँचे अगर किसी की मौज्ज़ाना विलादत अलुहियत (divinity) की दलील है तो क्या हज़रत आदम अलै० और हज़रत याहया अलै० भी इलाह हैं? तो यह सारी बहस इसी मौज़ू पर हो रही है।

आयत 33

اِنَّ اللّٰهَ اصۡطَفٰۤى اٰدَمَ وَنُوۡحًا وَّاٰلَ اِبۡرٰهِيۡمَ وَاٰلَ عِمۡرٰنَ عَلَى الۡعٰلَمِيۡنَ ۝۳۳

"यक़ीनन अल्लाह ने चुन लिया आदम अलै० को, नूह अलै० को, आले इब्राहीम अलै० को और आले इमरान को तमाम जहाँ वालों पर।"

इस्तफ़ाअ के मायने मुन्तखब करने या चुन लेने (selection) के हैं। ज़ेरे मुताअला आयत से मुतबादर (ज़ाहिर) होता है कि हज़रत आदम अलै० का भी "इस्तफ़ाअ" हुआ है। इसमें उन लोगों के लिये एक दलील मौजूद है जो तख्लीक़े आदम के ज़िमन में यह नज़रिया रखते हैं कि पहले एक नौ (species) वजूद में आयी थी और अल्लाह ने उस नौ के एक फ़र्द को चुन कर उसमें अपनी रूह फूँकी तो वह आदम अलै० बन गये। चुनाँचे वह भी चुनिन्दा (selected) थे। इस्तफ़ाअ के एक आम मायने भी होते हैं, यानि पसंद कर लेना। इन मायनों में आयत का मफ़हूम यह होगा कि अल्लाह तआला ने आदम अलै० को और नूह अलै० को और इब्राहीम अलै० के खानदान को और इमरान के खानदान को तमाम जहान वालों पर तरजीह देकर पसंद कर लिया। तारीख बनी इसराइल में "इमरान" दो अज़ीम दो शख्सियतों के नाम हैं। हज़रत मूसा अलै० के वालिद का नाम भी इमरान था और हज़रत मरयम अलै० के वालिद यानि हज़रत ईसा अलै० के नाना का नाम भी इमरान था। यहाँ पर गालिबन हज़रत मूसा अलै० के वालिद मुराद हैं। लेकिन आगे चूँकि हज़रत मरयम अलै० और ईसा अलै० का तज़किरा आ रहा है, लिहाज़ा ऐन मुमकिन है कि यहाँ पर हज़रत मरयम अलै० के वालिद की तरफ़ इशारा हो।

आयत 34

ذُرِّيَّةًۢ بَعۡضُهَا مِنۡۢ بَعۡضٍ‌ ؕ

"यह एक-दूसरे की औलाद से हैं।"

हज़रत नूह अलै० हज़रत आदम अलै० की औलाद से हैं, हज़रत इब्राहीम अलै० हज़रत नूह अलै० की औलाद से हैं, और फिर हज़रत इब्राहीम अलै० का पूरा खानदान बनी इस्माइल, बनी इसराइल और आले इमरान उनकी औलाद में से हैं।

وَاللّٰهُ سَمِيۡعٌ عَلِيۡمٌ‌ۚ ۝۳۴

"और अल्लाह सुनने वाला, जानने वाला है।"

आयत 35

اِذۡ قَالَتِ امۡرَاَتُ عِمۡرٰنَ رَبِّ اِنِّىۡ نَذَرۡتُ لَـكَ مَا فِىۡ بَطۡنِىۡ مُحَرَّرًا

"जब कहा इमरान की बीवी ने कि ऐ मेरे रब! जो बच्चा मेरे पेट में है इसको मैं तेरी ही नज़र करती हूँ, हर ज़िम्मेदारी से छुड़ा कर"

इमरान की बीवी यानि हज़रत मरयम अलै० की वालिदा बहुत ही नेक, मुत्तक़ी और ज़ाहिदा थीं। जब उनको हमल हुआ तो उन्होंने अल्लाह तआला के हुज़ूर यह अर्ज़ किया कि परवरदिगार! जो बच्चा मेरे पेट में है, जिसे तू पैदा फ़रमा रहा है,

इसे मैं तेरी ही नज़र करती हूँ। हम इस पर दुनयवी ज़िम्मेदारियों का कोई बोझ नहीं डालेंगे और इसको खालिसतन हैकल की ख़िदमत के लिये, दीन की ख़िदमत के लिये, तौरात की ख़िदमत के लिये वक़्फ़ कर देंगे। हम अपना भी कोई बोझ इस पर नहीं डालेंगे। उन्हें यह तवक्क़ो थी कि अल्लाह तआला बेटा अता फ़रमायेगा। مُحَرَّرًا के मायने हैं "इसे आज़ाद करते हुए।" यानि हमारी तरफ़ से इस पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं होगी और इसे हम तेरे लिये खालिस कर देंगे।

فَتَقَبَّلْ مِنِّيْ

"पस तू इसको मेरी तरफ़ से क़ुबूल फ़रमा!"

ऐ अल्लाह तू मेरी इस नज़र को शर्फ़े क़ुबूल अता फ़रमा।

اِنَّكَ اَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝٣٥

"यक़ीनन तू सब कुछ सुनने वाला, सब कुछ जानने वाला है।"

आयत 36

فَلَمَّا وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ اِنِّيْ وَضَعْتُهَآ اُنْثٰى

"तो जब उसे वज़अ हमल हुआ तो उसने कहा ऐ मेरे रब! यह तो मैं एक लड़की जन गयी हूँ।"

यानि मेरे यहाँ तो बेटी पैदा हो गयी है। मैं तो सोच रही थी कि बेटा पैदा होगा तो मैं उसको वक़्फ़ कर दूँगी। उस वक़्त तक हैकल के ख़ादिमों में किसी लड़की को क़ुबूल नहीं किया जाता था।

وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا وَضَعَتْ

"और अल्लाह बेहतर जानता था कि उसने क्या जना है।"

उसे क्या पता था कि उसने कैसी बेटी जनी है!

وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْاُنْثٰى

"और नहीं होगा कोई बेटा इस बेटी जैसा!"

इस जुम्ले के दोनों मायने किये गये। अव्वलन: अगर यह क़ौल माना जाये हज़रत मरयम अलै० की वालिदा का तो तर्जुमा यूँ होगा: "और लड़का, लड़की की मानिंद तो नहीं होता।" अगर लड़का होता तो मैं उसे ख़िदमत के लिये वक़्फ़ कर देती, यह तो लड़की हो गयी है। सानियन: "अगर इस क़ौल को अल्लाह की तरफ़ से माना जाये तो मफ़हूम यह होगा कि कोई बेटा ऐसा हो ही नहीं सकता जैसी बेटी तूने जन्म दी है। और अब मरयम अलै० की वालिदा का कलाम शुरू हुआ:

وَاِنِّيْ سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ

"और मैंने इसका नाम मरयम रखा है"

وَاِنِّيْٓ اُعِيْذُھَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ۝٣٦

"और (ऐ परवरदिगार!) मैं इसको और इसकी औलाद को तेरी पनाह में देती हूँ शैताने मरदूद (के हमलों) से।"

ऐ अल्लाह! तू इस लड़की (मरयम अलै०) को भी और इसकी आने वाली औलाद को भी शैतान के शर से अपनी हिफ़ाज़त में रखियो!

आयत 37

فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُوْلٍ حَسَنٍ

"तो क़ुबूल फ़रमा लिया उसको (यानि हज़रत मरयम अलै० को) उसके रब ने बड़ी ही उम्दगी के साथ"

शर्फ़े क़ुबूल अता फ़रमाया बड़े ही ख़ूबसूरत अंदाज़ में।

وَّاَنْۢبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا

"और उसको परवान चढ़ाया बहुत आला तरीक़े पर"

وَّ كَفَّلَهَا زَكَرِيَّا

"और उसको ज़करिया अलै० की कफ़ालत में दे दिया।"

हज़रत ज़करिया अलै० उनके सरपरस्त मुक़र्रर हुए और उन्होंने हज़रत मरयम अलै० की कफ़ालत व तरबियत की ज़िम्मेदारी उठाई। वह हज़रत मरयम अलै० के खालू थे। आप अलै० वक़्त के नबी थे और इस्राइली इस्तलाह में हैकले सुलेमानी के काहिने आज़म (Chief Priest) भी थे।

كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ

"जब कभी भी ज़करिया अलै० उनके पास जाते थे मेहराब में"

وَجَدَ عِنْدَهَا رِزْقًا

"तो उनके पास रिज़्क़ पाते।"

"मेहराब" से मुराद वह गोशा या हुजरा है जो हज़रत मरयम अलै० के लिये मख़सूस कर दिया गया था। हज़रत ज़करिया अलै० उनकी देख-भाल के लिये अक्सर उनके हुजरे में जाते थे। आप अलै० जब भी हुजरे में जाते तो देखते कि हज़रत मरयम अलै० के पास खाने-पीने की चीज़ें और बगैर मौसम के फ़ल मौजूद होते। बाज़ लोगों की राय यह भी है कि यहाँ रिज़्क़ से मुराद माद्दी खाना नहीं, बल्कि इल्म व हिकमत है कि जब हज़रत ज़करिया अलै० उनसे बात करते थे तो हैरान रह जाते थे कि इस लड़की को इस क़दर हिकमत और इतनी मार्फ़त कहाँ से हासिल हो गयी है?

قَالَ يٰمَرْيَمُ اَنّٰى لَكِ هٰذَا

"वह पूछते ऐ मरयम अलै०! तुम्हें यह चीज़ें कहाँ से मिलती हैं?"

यह अन्वा व अक़साम के खाने और बेमौसमी फ़ल तुम्हारे पास कहाँ से आ जाते हैं? या यह इल्म व हिकमत और मार्फ़त की बातें तुम्हें कहाँ से मालूम होती हैं?

قَالَتْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ

"वह कहती थीं कि यह सब अल्लाह की तरफ़ से है।"

यह सब उसका फज़्ल और और उसका करम है।

اِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝

"यक़ीनन अल्लाह तआला जिसको चाहता है बेहिसाब अता करता है।"

आयत 38

هُنَالِكَ دَعَا زَكَرِيَّا رَبَّهٗ

"(हज़रत ज़करिया अलै० को यह मुशाहिदा हुआ तो उन्होंने) उसी वक़्त अपने परवरदिगार से एक दुआ की।

قَالَ رَبِّ هَبْ لِيْ مِنْ لَّدُنْكَ ذُرِّيَّةً طَيِّبَةً

"उन्होंने कहा: ऐ मेरे रब! तू मुझे भी अपनी जनाब से कोई पाकीज़ा औलाद अता फ़रमा दे।"

हज़रत ज़करिया अलै० बहुत बूढ़े हो चुके थे, उनकी अहलिया भी बहुत बूढी हो चुकी थीं और सारी उम्र बाँझ रही थी और उनके यहाँ कोई औलाद नहीं हुई थी। यह मज़ामीन सूरह मरयम में ज़्यादा तफ़सील के साथ बयान हुए हैं। मक्की दौर में जबकि मुस्लमान हिजरते हब्शा के लिये गये थे, तो वहाँ जाकर नाज्जाशी के दरबार में हज़रत जाफ़र رضی اللہ عنہ बिन अबी तालिब ने सूरह मरयम की आयात पढ़ कर सुनाई थीं। इस मुनास्बत से यह मज़ामीन सूरह मरयम में भी मिलते हैं। हज़रत ज़करिया अलै० सारी उम्र बेऔलाद रहे थे, लेकिन हज़रत मरयम अलै० के पास अल्लाह तआला की क़ुदरत का मुशाहिदा करने के बाद औलाद की जो ख्वाहिश उनके अन्दर दबी हुई थी वह चिंगारी दफ्फ़तन भड़क उठी। उन्होंने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह! तू इस बच्ची को यह सब कुछ दे सकता है तो अपनी क़ुदरत से मुझे भी पाकीज़ा औलाद अता फ़रमा दे!

اِنَّكَ سَمِيۡعُ الدُّعَآءِ ﴿۳۸﴾	*"यक़ीनन तू दुआ का सुनने वाला है।"*

आयत 39

فَنَادَتۡهُ الۡمَلٰٓئِكَةُ وَهُوَ قَآئِمٌ يُّصَلِّىۡ فِى الۡمِحۡرَابِ ۙ	*"तो फ़रिश्तों ने उन्हें निदा (आवाज़) दी जबकि वह अपने हुजरे में खड़े हुए नमाज़ पढ़ रहे थे"*
اَنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحۡيٰى	*"कि अल्लाह तआला तुम्हें बशारत देता है याहया अलै० की"*
مُصَدِّقًا ۢ بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ	*"जो तस्दीक़ करेगा अल्लाह की तरफ़ से एक कलिमे की"*

इससे मुराद हज़रत ईसा अलै० हैं, जिनके लिये आयत 44 में "بِكَلِمَةٍ مِّنۡهُ" का लफ्ज़ आ रहा है।

وَسَيِّدًا وَّحَصُوۡرًا وَّنَبِيًّا مِّنَ الصّٰلِحِيۡنَ ﴿۳۹﴾	*"और सरदार होगा और तजर्रुद (अविवाहित) की ज़िन्दगी गुज़ारेगा और नबी होगा सालेहीन में से।"*

यहाँ नोट कर लीजिये कि आखरी लफ्ज़ जो हज़रत याहया अलै० की मदह के लिये आया है वह "नबी" है।

आयत 40

قَالَ رَبِّ اَنّٰى يَكُوۡنُ لِىۡ غُلٰمٌ	*"(ज़करिया अलै० ने) कहा: परवरदिगार! मेरे यहाँ लड़का कैसे हो जायेगा?"*

अभी खुद दुआ कर रहे थे, लेकिन अल्लाह की तरफ़ से बेटे की बशारत मिलने पर गालिबन उसकी तौसीक़ और re-assurance चाह रहे हैं कि मेरे यहाँ कैसे बेटा हो जायेगा?

وَّقَدۡ بَلَغَنِىَ الۡكِبَرُ	*"जबकि मैं इन्तहाई बूढ़ा हो चुका हूँ"*
وَامۡرَاَتِىۡ عَاقِرٌ ؕ	*"और मेरी बीवी बाँझ रही है।"*
قَالَ كَذٰلِكَ اللّٰهُ يَفۡعَلُ مَا يَشَآءُ ﴿۴۰﴾	*"(अल्लाह ने) फ़रमाया: इसी तरह अल्लाह जो चाहता है करता है।"*

उसे असबाब की अहतियाज नहीं है। असबाब उसके मोहताज हैं, अल्लाह असबाब का मोहताज नहीं है।

आयत 41

قَالَ رَبِّ اجۡعَلۡ لِّىۡۤ اٰيَةً ؕ	*"उन्होंने अर्ज़ किया: परवरदिगार! मेरे (इत्मिनान के) लिये कोई निशानी मुक़र्रर कर दे।"*

मुझे मालूम हो जाये कि वाक़ई ऐसा होना है और यह कलाम जो मैं सुन रहा हूँ वाक़िअतन तेरी तरफ़ से है।

قَالَ اٰيَتُكَ اَلَّا تُكَلِّمَ النَّاسَ ثَلٰثَةَ اَيَّامٍ اِلَّا رَمۡزًا ؕ	*"(अल्लाह ने) फ़रमाया: तुम्हारे लिये निशानी यह है कि अब तुम तीन दिन तक लोगों से गुफ्तगू नहीं कर सकोगे सिवाये इशारे-किनारे के।"*

यानि उनकी क़ुव्वते गोयाई सल्ब (बोलने की क्षमता बन्द) हो गयी और अब वह तीन दिन किसी से बात नहीं कर सकते थे।

وَاذْكُرْ رَّبَّكَ كَثِيْرًا

"और (अपने दिल में) अपने रब को कसरत से याद करते रहो"

وَّسَبِّحْ بِالْعَشِيِّ وَالْاِبْكَارِ ﴿٤١﴾

"और तस्बीह किया करो शाम के वक़्त भी और सुबह के वक़्त भी।"

आयात 42 से 54 तक

وَاِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰىكِ وَطَهَّرَكِ وَاصْطَفٰىكِ عَلٰى نِسَآءِ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٤٢﴾ يٰمَرْيَمُ اقْنُتِىْ لِرَبِّكِ
وَاسْجُدِىْ وَارْكَعِىْ مَعَ الرّٰكِعِيْنَ ﴿٤٣﴾ ذٰلِكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ اِلَيْكَ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ يُلْقُوْنَ اَقْلَامَهُمْ اَيُّهُمْ
يَكْفُلُ مَرْيَمَ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ يَخْتَصِمُوْنَ ﴿٤٤﴾ اِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ اسْمُهُ الْمَسِيْحُ
عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ وَجِيْهًا فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ ﴿٤٥﴾ وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِى الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَّمِنَ الصّٰلِحِيْنَ ﴿٤٦﴾
قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى يَكُوْنُ لِىْ وَلَدٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِىْ بَشَرٌ قَالَ كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَآءُ اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ
فَيَكُوْنُ ﴿٤٧﴾ وَيُعَلِّمُهُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ﴿٤٨﴾ وَرَسُوْلًا اِلٰى بَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ اَنِّىْ قَدْ جِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِّنْ
رَّبِّكُمْ اَنِّىْٓ اَخْلُقُ لَكُمْ مِّنَ الطِّيْنِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ فَاَنْفُخُ فِيْهِ فَيَكُوْنُ طَيْرًۢا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ وَاُحْىِ
الْمَوْتٰى بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَاْكُلُوْنَ وَمَا تَدَّخِرُوْنَ فِىْ بُيُوْتِكُمْ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٤٩﴾
وَمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَىَّ مِنَ التَّوْرٰىةِ وَلِاُحِلَّ لَكُمْ بَعْضَ الَّذِىْ حُرِّمَ عَلَيْكُمْ وَجِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ فَاتَّقُوا اللّٰهَ
وَاَطِيْعُوْنِ ﴿٥٠﴾ اِنَّ اللّٰهَ رَبِّىْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ ﴿٥١﴾ فَلَمَّآ اَحَسَّ عِيْسٰى مِنْهُمُ الْكُفْرَ قَالَ مَنْ
اَنْصَارِىْٓ اِلَى اللّٰهِ قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ نَحْنُ اَنْصَارُ اللّٰهِ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَاشْهَدْ بِاَنَّا مُسْلِمُوْنَ ﴿٥٢﴾ رَبَّنَآ اٰمَنَّا بِمَآ اَنْزَلْتَ وَاتَّبَعْنَا
الرَّسُوْلَ فَاكْتُبْنَا مَعَ الشّٰهِدِيْنَ ﴿٥٣﴾ وَمَكَرُوْا وَمَكَرَ اللّٰهُ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمٰكِرِيْنَ ﴿٥٤﴾

हज़रत ज़करिया और हज़रत याहया अलैहिस्सलाम का क़िस्सा बयान हो गया कि अल्लाह तआला ने हज़रत ज़करिया अलै० को शदीद ज़ईफ़ी की उम्र में एक बाँझ और बूढ़ी औरत से हज़रत याहया अलै० जैसा बेटा दे दिया। तो क्या यह आम क़ानून के मुताबिक़ है? ज़ाहिर है यह भी तो मौज्ज़ा था। इसी तरह इससे ज़रा बढ़ कर एक मौज्ज़ा हज़रते मसीह अलै० की पैदाइश है कि उन्हें बगैर बाप के पैदा फ़रमा दिया। अब इसका ज़िक्र आ रहा है।

आयत 42

وَاِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ

"और याद करो जबकि कहा फ़रिश्तों ने ऐ मरयम अलै०"

اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰىكِ وَطَهَّرَكِ وَاصْطَفٰىكِ عَلٰى نِسَآءِ الْعٰلَمِيْنَ ۝۴۲

"यक़ीनन अल्लाह ने तुम्हें चुन लिया है और तुम्हें ख़ूब पाक कर दिया है और तुम्हें तमाम जहान की ख्वातीन पर तरजीह दी है।"

आयत 43

يٰمَرْيَمُ اقْنُتِىْ لِرَبِّكِ

"ऐ मरयम अलै०! अपने रब की फ़रमा-बरदारी करती रहो"

وَاسْجُدِىْ وَارْكَعِىْ مَعَ الرّٰكِعِيْنَ ۝۴۳

"और सज्दा करती रहो और रुकूअ करती रहो रुकूअ करने वालों के साथ।"

यानि नमाज़े बा-जमाअत के अन्दर शरीक हो जाया करो।

आयत 44

ذٰلِكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ اِلَيْكَ ؕ

"यह गैब की ख़बरों में से है जो (ऐ मुहम्मद ﷺ!) हम आपको वही कर रहे हैं।"

وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ يُلْقُوْنَ اَقْلَامَهُمْ اَيُّهُمْ يَكْفُلُ مَرْيَمَ

"और आप तो उनके पास मौजूद नहीं थे जबकि वह अपने क़लम फेंक रहे थे (यह तय करने के लिये) कि उनमें से कौन मरयम का कफील होगा।"

जब हज़रत मरयम अलै० को उनकी वालिदा ने हैकल की ख़िदमत के लिये वक़्फ़ किया तो हैकल के काहिनों में से हर एक यह चाहता था कि यह बच्ची मेरी तहवील में हो, इसकी तरबियत और परवरिश की सआदत मुझे हासिल हो जाये जिसे अल्लाह के नाम पर वक़्फ़ कर दिया गया है। चुनाँचे इसके लिये वह अपने क़लम फेंक कर किसी तरह क़ुर्रा अंदाज़ी कर रहे थे। इसमें अल्लाह ने हज़रत ज़करिया अलै० का नाम निकाल दिया। यहाँ अस्नाये कलाम में नबी अकरम ﷺ को मुखातिब करके फ़रमाया जा रहा है कि आप ﷺ तो उस वक़्त वहाँ नहीं थे जब वह क़ुर्रा अंदाज़ी से यह मामला तय कर रहे थे।

وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ يَخْتَصِمُوْنَ ۝۴۴

"और ना आप उस वक़्त उनके पास मौजूद थे जबकि वह आपस में झगड़ रहे थे।"

आयत 45

اِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ ۖ

"याद करो जबकि फ़रिश्तों ने कहा ऐ मरयम अलै०! यक़ीनन अल्लाह तआला तुम्हें बशारत दे रहा है अपनी तरफ़ से एक कलिमे की"

तुम्हें अल्लाह तआला एक ऐसी हस्ती की विलादत की खुशखबरी दे रहा है जो उसकी जानिब से एक ख़ास कलिमा होगा।

اسْمُهُ الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ

"उसका नाम होगा अल-मसीह, ईसा, मरयम का बेटा"

وَجِيْهًا فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ ۝۴۵

"मरतबे वाला होगा दुनिया में भी और आख़िरत में भी और अल्लाह के बहुत ही मुक़र्रबीन बारगाह में से होगा।"

आयत 46

وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا

"और वह लोगों से गुफ्तगू करेगा गोद में भी और पूरी उम्र का होकर भी"

कहुलत चालीस बरस के बाद आती है और हज़रत मसीह अलै० का रफ़ा-ए-समावी 33 बरस की उम्र में हो गया था। गोया इस आयत का तक़ाज़ा अभी पूरा नहीं हुआ है। और इससे अंदाज़ा कर लीजिये कि यह बात कहने की ज़रूरत क्या थी? पूरी उम्र को पहुँच कर तो सभी बोलते हैं, यहाँ इसका इशारा क्यों किया गया? इसलिये ताकि हमें मालूम हो जाये की हज़रत मसीह अलै० पर मौत अभी वारिद नहीं हुई, बल्कि वह वापस आयेंगे, दुनिया में दोबारा उतरेंगे, फिर उनकी कहुलत की उम्र भी होगी। वह शादी भी करेंगे, उनकी औलाद भी होगी और उनके ज़रिये से अल्लाह तआला निज़ामे ख़िलाफ़त अला मिन्हाजन्नबुवा को पूरी दुनिया में क़ायम करेगा।

وَّمِنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝

"और वह हमारे नेकोकार बन्दों में से होगा।"

आयत 47

قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ وَلَدٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ

"(हज़रत मरयम अलै० ने यह बात सुनी तो तअज्जुब से) बोली: ऐ अल्लाह! मेरे औलाद कैसे हो जायेगी जबकि मुझे तो किसी मर्द ने हाथ तक नहीं लगाया!"

قَالَ كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَاۗءُ

"फ़रमाया: इसी तरह अल्लाह तआला तख्लीक़ फ़रमाता है जो कुछ चाहता है।"

वह अपने बनाये हुए क़वानीने फ़ितरत का पाबन्द नहीं है। अगरचे आम विलादत इसी तरह होती है कि उसमें बाप का भी हिस्सा होता है और माँ का भी, लेकिन अल्लाह तआला इन असबाब और वसाइल व ज़राये का मोहताज नहीं है, वह जैसे चाहे पैदा करता है।

اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ۝

"वह तो जब किसी अम्र का फ़ैसला कर लेता है तो उससे कहता है हो जा तो वह हो जाता है।"

आयत 48

وَيُعَلِّمُهُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ۝

"और अल्लाह तआला उसको सिखायेगा किताब और हिकमत भी और तौरात और इन्जील भी।"

यहाँ पर चार चीज़ों का ज़िक्र आया है जिनकी अल्लाह तआला ने हज़रत मसीह अलै० को तालीम दी: किताब और हिकमत और तौरात और इन्जील। इन चार चीज़ों के माबैन जो तीन "و" आये हैं उनमें से दो वावे अतफ़ हैं, जबकि दरमियानी "و" वावे तफ़सीर है। इस तरह आयत का मफ़हूम यह होगा कि "अल्लाह उनको सिखायेगा किताब और हिकमत यानि तौरात और इन्जील।" इसलिये कि तौरात में सिर्फ़ अहकाम थे, हिकमत नहीं थी और इन्जील में सिर्फ़ हिकमत है, अहकाम नहीं हैं। यही वह नुक्ता है जिसको समझ लेने से यह गुत्थी हल होती है और इसे समझे बगैर लोगों के ज़हनों में उलझनें रहती हैं।

आयत 49

وَرَسُوۡلًا اِلٰى بَنِىۡۤ اِسۡرَآءِيۡلَ ۙ

“और उसको रसूल बना कर भेजेगा बनी इसराइल की तरफ़”

अब यह जो दो ब-यक वक़्त आने वाली (contemporary) इस्तलाहात हैं इनको नोट कर लीजिये। हज़रत याहया अलै० के बारे में तमाम तौसीफ़ी कलिमात के बाद आखरी बात यह फ़रमायी: {وَّنَبِيًّا مِّنَ الصّٰلِحِيۡنَ} (आयत:39) “नबी होंगे सालिहीन में से।” जबकि हज़रत ईसा अलै० के बारे में फ़रमाया: {وَرَسُوۡلًا اِلٰى بَنِىۡۤ اِسۡرَآءِيۡلَ} यानि बनी इसराइल की तरफ़ रसूल बन कर आयेंगे। नबी और रसूल में यह फ़र्क़ नोट कर लीजिये कि हज़रत याहया अलै० सिर्फ़ नबी थे इसलिये वह क़त्ल भी कर दिये गये, जबकि हज़रत ईसा अलै० रसूल थे और रसूल क़त्ल नहीं हो सकते, इसलिये उन्हें ज़िन्दा आसमान पर उठा लिया गया। यह बहुत अहम मज़मून है। मुताअला क़ुराने हकीम के दौरान इसके और भी हवाले आयेंगे।

اَنِّىۡ قَدۡ جِئۡتُكُمۡ بِاٰيَةٍ مِّنۡ رَّبِّكُمۡ ۙ

“(चुनाँचे हज़रत मसीह अलै० बनी इसराइल को दावत दी) कि मैं तुम्हारे पास तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से निशानी लेकर आया हूँ”

अभी तक गुफ्तगू हो रही थी कि हज़रत मरयम अलै० को अल्लाह तआला की तरफ़ से यह सारी खुशखबरियाँ दी गयीं। अब यूँ समझिये कि क़िस्सा मुख़्तसर, उनकी विलादत हुई, वह पले-बढ़े, यह सारी तारीख बीच में से हज़्फ़ करके नक्शा खींचा जा रहा है कि अब हज़रत मसीह अलै० ने अपनी दावत का आगाज़ कर दिया। आप अलै० ने बनी इसराइल से कहा कि मैं तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से निशानी लेकर आया हूँ।

اَنِّىۡۤ اَخۡلُقُ لَـكُمۡ مِّنَ الطِّيۡنِ كَهَیْـــَٔةِ الطَّيۡرِ

“कि मैं तुम्हारे लिये मिट्टी से परिन्दे की मानिंद सूरत बनाता हूँ”

فَاَنۡفُخُ فِيۡهِ فَيَكُوۡنُ طَيۡرًاۢ بِاِذۡنِ اللّٰهِ ۚ

“फिर मैं उसमें फूँक मरता हूँ तो वह बन जाता है उड़ता हुआ परिन्दा अल्लाह के हुक्म से।”

यहाँ आप नोट करते जाइये कि हर मौज्ज़े के बाद “بِاِذۡنِ اللّٰهِ” फ़रमाया। यानि यह मेरा कोई दावा नहीं है, मेरा कोई कमाल नहीं है। यह जो कुछ है वह अल्लाह के हुक्म से है।

وَاُبۡرِئُ الۡاَكۡمَهَ وَالۡاَبۡرَصَ وَاُحۡىِ الۡمَوۡتٰى بِاِذۡنِ اللّٰهِ ۚ

“और मैं शिफ़ा दे देता हूँ मादरज़ाद अंधे को भी और कोढ़ी को भी, और मैं मुर्दे को ज़िन्दा कर देता हूँ अल्लाह के हुक्म से।”

وَاُنَبِّئُكُمۡ بِمَا تَاۡكُلُوۡنَ وَمَا تَدَّخِرُوۡنَ فِىۡ بُيُوۡتِكُمۡ ؕ

“और मैं तुम्हें बता सकता हूँ जो कुछ तुम खाते हो और जो कुछ तुम अपने घरों में ज़खीरा करके रखते हो।”

اِنَّ فِىۡ ذٰ لِكَ لَاٰيَةً لَّـكُمۡ اِنۡ كُنۡتُمۡ مُّؤۡمِنِيۡنَ ۚ‏ ﴿۴۹﴾

“यक़ीनन उन तमाम चीज़ों में तुम्हारे लिये निशानी है अगर तुम ईमान लाने वाले हो।”

हज़रत मसीह अलै० ने अपनी रिसालत की सदाक़त और दलील के तौर पर यह तमाम मौज्ज़ात पेश फ़रमाये।

आयत 50

وَمُصَدِّقًا لِّمَا بَيۡنَ يَدَىَّ مِنَ التَّوۡرٰٮةِ

“और मैं तस्दीक़ करते हुए आया हूँ उसकी जो मेरे सामने मौजूद है तौरात में से”

وَلِاُحِلَّ لَـكُمۡ بَعۡضَ الَّذِىۡ حُرِّمَ عَلَيۡكُمۡ

“और (इसलिये आया हूँ) ताकि मैं हलाल ठहरा दूँ तुम पर उनमें से बाज़ चीज़ें जो तुम पर हराम कर दी गयी हैं।”

यह असल में “सब्त” के हुक्म के बारे में इशारा है। जैसे हमारे यहाँ भी बाज़ मज़हबी मिज़ाज के लोगों में बड़ी सख्ती पैदा हो जाती है और वह दीन के अहकाम में गुलू करते चले जाते हैं, इसी तरह सब्त के हुक्म में यहूदियों ने इस हद तक गुलू कर लिया था कि उस रोज़ किसी मरीज़ के लिये दुआ कि अल्लाह उसे शिफ़ा दे दे, यह भी जायज़ नहीं समझते थे। वह

कहते थे कि यह भी दुनिया का काम है। चुनाँचे वह इस मामले में एक इन्तहा तक पहुँच गये थे। हज़रत मसीह अलै० ने आकर उसकी वज़ाहत की कि इस तरह की चीज़ें सब्त के तक़ाज़ों में शामिल नहीं हैं।

وَجِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ

"और मैं तुम्हारे पास लेकर आया हूँ निशानी तुम्हारे रब की तरफ से।"

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوْنِ۝۵۰

"पस अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और मेरी इताअत करो।"

आयत 51

اِنَّ اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ

"यक़ीनन अल्लाह ही मेरा भी रब है और तुम्हारा भी रब है, पस उसी की बन्दगी करो।"

هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ۝۵۱

"यही सीधा रास्ता है।"

यही अल्फ़ाज़ सूरह मरयम (आयत 36) में भी वारिद हुए हैं।

आयत 52

فَلَمَّآ اَحَسَّ عِيْسٰى مِنْهُمُ الْكُفْرَ

"पस जब ईसा अलै० ने उनकी तरफ़ से कुफ़्र को भाँप लिया"

قَالَ مَنْ اَنْصَارِيْٓ اِلَى اللّٰهِ

"तो उन्होंने पुकार लगायी कि कौन है मेरा मददगार अल्लाह की राह में?"

यहाँ फिर दरमियानी अरसे का ज़िक्र छोड़ दिया गया है। बनी इसराइल को दावत देते हुए हज़रत मसीह अलै० को कई साल बीत चुके थे। इस दावत से जब उलमा-ए-यहूद की मसनदों को ख़तरा लाहक़ हो गया और उनकी चौधराहटें खतरे में पड़ गयीं तो उन्होंने हज़रत मसीह अलै० की शदीद मुखालफ़त की। उस वक़्त तक यहूदियों पर उनके उलमा का असर व रसूख बहुत ज़्यादा था। जब आप अलै० ने उनकी तरफ़ से कुफ़्र की शिद्दत को महसूस किया कि अब यह ज़िद और मुखालफ़त पर तुल गये हैं, तो आप अलै० ने एक पुकार लगायी, एक निदा दी, एक दावते आम दी कि कौन है जो अल्लाह की राह में मेरे मददगार हैं? यानि अब जो कशाकश होने वाली है, जो तसादुम होने वाला है उसमें एक "हिज़्बुल्लाह" बनेगी और एक "हिज़्बुश्शैतान" होगी। अब कौन है जो मेरा मददगार हो अल्लाह की राह में इस जद्दो-जहद और कशाकश में? दीन का काम करने के लिये यही असल असास है। इसी बुनियाद पर कोई शख़्स उठे कि मैं दीन का काम करना चाहता हूँ, कौन है कि जो मेरा साथ दे? यह जमात साज़ी का एक बिल्कुल तबई तरीक़ा होता है। एक दाई उठता है और उस दाई पर ऐतमाद करने वाले, उससे इत्तेफाक़ करने वाले लोग उसके साथी बन जाते हैं। यह लोग ज़ाती ऐतबार से उसके साथी नहीं होते, उसकी हुकूमत और सरदारी क़ायम करने के लिये नहीं, बल्कि अल्लाह की हुकूमत क़ायम करने के लिये और अल्लाह तआला के दीन के गलबे के लिये उसका साथ देते हैं।

قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ نَحْنُ اَنْصَارُ اللّٰهِ

"कहा हवारियों ने कि हम हैं अल्लाह के मददगार!"

"हवारी" के असल मायने धोबी के हैं जो कपड़े को धो कर साफ़ कर देता है। यह लफ्ज़ फिर आगे बढ़ कर अपने अख्लाक़ और किरदार को साफ़ करने वालों के लिये इस्तेमाल होने लगा। हज़रत मसीह अलै० की तब्लीग ज़्यादातर गलैली झील के किनारों पर होती थी, जो समुन्दर की तरह बहुत बड़ी झील है। आप अलै० कभी वहाँ कपड़े धोने वाले धोबियों में तब्लीग करते थे और कभी मछलियाँ पकड़ने वाले मछियारों को दावत देते थे। आप अलै० उनसे फ़रमाया करते थे कि ऐ मछलियों का शिकार करने वालों! आओ मैं तुम्हें इन्सानों का शिकार करना सिखाऊँ।" आप अलै० ने धोबियों में तब्लीग

की तो उनमें से कुछ लोगों ने अपने आप को पेश कर दिया कि हम आपकी जद्दो-जहद में अल्लाह के मददगार बनने को तैयार हैं। यह आप अलै० के अव्वलीन साथी थे जो "हवारी" कहलाते थे। इस तरह हवारी का लफ़्ज़ साथी के मायने में इस्तेमाल होने लगा।

ءَامَنَّا بِاللّٰهِ

"हम ईमान लाये अल्लाह पर।"

وَاشْهَدْ بِاَنَّا مُسْلِمُوْنَ ۝

"और आप अलै० भी गवाह रहियेगा कि हम अल्लाह के फ़रमाबरदार हैं।"

आयत 53

رَبَّنَآ اٰمَنَّا بِمَآ اَنْزَلْتَ

"ऐ रब हमारे! हम ईमान ले आये उस पर जो तूने नाज़िल फ़रमाया"

وَاتَّبَعْنَا الرَّسُوْلَ

"और हम इत्तेबाअ कर रहे हैं तेरे रसूल का"

فَاكْتُبْنَا مَعَ الشّٰهِدِيْنَ ۝

"पस तू हमारा नाम गवाहों में लिख ले।"

यही लफ़्ज़ "गवाह" अब ईसाईयों के एक ख़ास फ़िरक़े की तरफ़ (Jehova's Witnesses) से इख़्तियार किया गया है। लफ़्ज़ यहवा (Jehova) इब्रानी में ख़ुदा के लिये आता है। यानि यह लोग अपने आप को "ख़ुदा के गवाह" कहते हैं। सूरतुल बक़रह की आयत 143 हम पढ़ आये हैं:

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا

"और (ऐ मुस्लमानों!) इसी तरह तो हमने तुम्हें एक उम्मते वस्त बनाया है ताकि तुम लोगों पर गवाह हो और रसूल ﷺ तुम पर गवाह हो।"

तो यह लफ़्ज़ "शाहिद" (गवाह) क़दीम है और इस्लामी हिकमत और इस्लाम की मुस्तलाहात में इसकी एक हैसियत है।

आयत 54

وَمَكَرُوْا وَمَكَرَ اللّٰهُ

"अब उन्होंने भी चालें चलीं और अल्लाह ने भी चाल चली।"

यहूद के उलमा और फ़रेसी हज़रत मसीह अलै० के खिलाफ़ मुख्तलिफ़ चालें चल रहे थे कि किसी तरह यह क़ानून की गिरफ्त में आ जायें और उनका काम तमाम कर दिया जाये। उन लोगों ने आँजनाब अलै० को मुरतद और वाजिबुल क़त्ल क़रार दे दिया था, लेकिन मुल्क पर सियासी इक़्तदार चूँकि रूमियों का था लिहाज़ा रूमी गवर्नर की तौसीक़ (sanction) के बगैर किसी को सज़ाए मौत नहीं दी जा सकती थी। मुल्क का बादशाह अगरचे एक यहूदी था लेकिन उसकी हैसियत कठपुतली बादशाह की थी, जैसे अंग्रेज़ी हुकूमत के तहत मिस्र के शाह फ़ारूक़ होते थे। यहूद की मज़हबी अदालतें मौजूद थीं जहाँ उनके उलमा, मुफ़्ती और फ़रेसी बैठ कर फ़ैसले करते थे, और अगर वह सज़ाए मौत का फ़ैसला दे देते थे तो उस फैसले की तन्फीद (execution) रूमी गवर्नर के ज़रिये होती थी। इस सूरते हाल में उलमाये यहूद के हाथ बंधे हुए थे और वह हज़रत मसीह अलै० को रूमी क़ानून की ज़द में लाने के लिये अपनी सी चालें चल रहे थे। वह आँजनाब अलै० से इस तरह के उल्टे-सीधे सवालात करते कि आप अलै० के जवाबात से यह साबित किया जा सके कि यह शख्स रूमी हुकूमत का बागी है।

यहूद की इन चालों का तोड़ करने के लिये अल्लाह ने अपनी चाल चली। अब अल्लाह की क्या चाल क्या थी? इसकी तफ़सील क़ुरान या हदीस में नहीं है, बल्कि "इन्जील बरनबास" में है जो पॉप की लाइब्रेरी से बरामद हुई थी। हज़रत मसीह

अलै० के हवारियों में से एक हवारी यहूदा को यहूद ने रिश्वत देकर इस बात पर राज़ी कर लिया था कि वह आप अलै० की मुखबरी करके गिरफ्तार कराये। अल्लाह तआला ने उसी गद्दार हवारी की शक्ल हज़रत मसीह अलै० की सी बदल दी और वह खुद गिरफ्तार होकर सूली चढ़ गया। हज़रत मसीह अलै० पर वह हाथ डाल ही नहीं सके। हज़रत मसीह अलै० एक बाग़ में रूपोश थे और बाग़ के अन्दर बनी हुई एक कोठरी में रात के वक़्त इबादत में मशगूल थे, जबकि आप अलै० के बारह हवारी बहार मौजूद थे। उस वक़्त वह शख्स वहाँ से चुपके से सटक लिया गया और जाकर सिपाहियों को ले आया ताकि आप अलै० को गिरफ्तार करा सके। यह रूमी सिपाही थे और क़न्दीलें (लालटेन) लेकर आये थे। उसने सिपाहियों से कहा था कि मैं अन्दर जाऊँगा, जिस शख्स को मैं कहूँ "ऐ हमारे उस्ताद" बस उसी को पकड़ लेना, वही मसीह अलै० हैं। इसलिये कि रूमियों को क्या पता था कि मसीह अलै० कौन हैं? यह शख्स जैसे ही कोठरी के अन्दर दाख़िल हुआ उसी वक़्त कोठरी की छत फटी और चार फ़रिश्तें नाज़िल हुए, जो हज़रत मसीह अलै० को लेकर चले गये। अल्लाह तआला ने उस शख्स की शक्ल तब्दील कर दी और हज़रत मसीह अलै० वाली शक्ल बना दी। अब यह घबरा कर बाहर निकला तो दूसरे हवारियों ने उससे कहा "ऐ हमारे उस्ताद!" यह सुनते ही सिपाहियों ने उसे क़ाबू कर लिया और असल में यही शख्स सूली चढ़ा है, ना कि हज़रत मसीह अलै०। यह सारी तफ़ासील इन्जील बरनबास में मौजूद हैं। यह शहादत दरहक़ीक़त नसारा ही के घर से हमें मिली है और क़ुरान का जो बयान है उसमें यह पूरी तरह फिट बैठती है कि "उन्होंने अपनी सी चालें चलीं और अल्लाह ने अपनी चाल चली।"

وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمٰكِرِيْنَ ۝۵۴

"और अल्लाह तआला बेहतरीन चाल चलने वाला है।"

आयात 55 से 63 तक

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسٰٓى اِنِّىْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ وَمُطَهِّرُكَ مِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَجَاعِلُ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْكَ فَوْقَ الَّذِيْنَ
كَفَرُوْٓا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۚ ثُمَّ اِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَاَحْكُمُ بَيْنَكُمْ فِيْمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۝۵۵ فَاَمَّا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَاُعَذِّبُهُمْ
عَذَابًا شَدِيْدًا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۡ وَمَا لَهُمْ مِّنْ نّٰصِرِيْنَ ۝۵۶ وَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فَيُوَفِّيْهِمْ
اُجُوْرَهُمْ ۭ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ ۝۵۷ ذٰلِكَ نَتْلُوْهُ عَلَيْكَ مِنَ الْاٰيٰتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيْمِ ۝۵۸ اِنَّ مَثَلَ عِيْسٰى عِنْدَ اللّٰهِ كَمَثَلِ
اٰدَمَ ۭ خَلَقَهٗ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ قَالَ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ۝۵۹ اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُنْ مِّنَ الْمُمْتَرِيْنَ ۝۶۰ فَمَنْ حَاۗجَّكَ فِيْهِ مِنْۢ بَعْدِ
مَا جَاۗءَكَ مِنَ الْعِلْمِ فَقُلْ تَعَالَوْا نَدْعُ اَبْنَاۗءَنَا وَاَبْنَاۗءَكُمْ وَنِسَاۗءَنَا وَنِسَاۗءَكُمْ وَاَنْفُسَنَا وَاَنْفُسَكُمْ ۣ ثُمَّ نَبْتَهِلْ
فَنَجْعَلْ لَّعْنَتَ اللّٰهِ عَلَي الْكٰذِبِيْنَ ۝۶۱ اِنَّ ھٰذَا لَهُوَ الْقَصَصُ الْحَقُّ ۚ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّا اللّٰهُ ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝۶۲
فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِالْمُفْسِدِيْنَ ۝۶۳

आयत 55

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسٰٓى اِنِّىْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ

"याद करो जब अल्लाह ने कहा ऐ ईसा अलै० अब मैं तुम्हें ले जाने वाला हूँ और अपनी तरफ़ उठा लेने वाला हूँ"

लफ्ज़ "مُتَوَفِّيْكَ" को क़ादयानियों ने अपने उस गलत अक़ीदे के लिये बहुत बड़ी बुनियाद बनाया है कि हज़रत मसीह अलै० की वफ़ात हो चुकी है। लिहाज़ा इस लफ्ज़ को अच्छी तरह समझ लीजिये। वफ़ा के मायने हैं पूरा करना। उर्दू में भी कहा जाता है वादा वफ़ा करो। इसी से बाब تفعيل में وَفّٰى۔ يُوَفِّيْ۔ تَوْفِيَةً का मतलब है किसी को पूरा देना। जैसा कि आयत 25

में हम पढ़ आये हैं: {فَكَيْفَ إِذَا جَمَعْنٰهُمْ لِيَوْمٍ لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۣ وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَھُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ} "तो क्या हाल होगा जब हम उन्हें इकठ्ठा करेंगे उस दिन जिसके बारे में कोई शक नहीं! और हर जान को पूरा-पूरा बदला उसके आमाल का दे दिया जायेगा और उन पर कोई ज़्यादती नहीं होगी।" बाब **تفعّل** में **تَوَفّٰی۔ یَتَوَفّٰی** का मायना होगा किसी को पूरा-पूरा ले लेना। और यह लफ्ज़ गोया ब-तमामो कमाल मुन्तबिक़ होता है हज़रत मसीह अलै० पर कि जिनको अल्लाह तआला उनके जिस्म और जान समेत दुनिया से ले गया। हम जब कहते हैं कि कोई शख्स वफ़ात पा गया तो यह इस्तआरतन कहते हैं। इसलिये कि उसका जिस्म तो यहीं रह गया सिर्फ़ जान गयी है। और यही लफ्ज़ क़ुरान (अज़ ज़ुमर:42) में नींद के लिये भी आया है: {اَللّٰهُ يَتَوَفَّى الْاَنْفُسَ حِيْنَ مَوْتِهَا وَالَّتِيْ لَمْ تَمُتْ فِيْ مَنَامِهَا} "वह अल्लाह ही है जो मौत के वक़्त रूहें क़ब्ज़ कर लेता है और जो अभी नहीं मरा उसकी रूह नींद में क़ब्ज़ कर लेता है।" इसलिये कि नींद में भी इन्सान से खुदशऊरी निकल जाती है, अगरचे वह ज़िन्दा होता है। रूह का ताल्लुक़ खुदशऊरी के साथ है। फिर जब इन्सान मरता है तो रूह और जान दोनों चली जाती हैं और सिर्फ़ जिस्म रह जाता है। क़ुरान हकीम ने इन दोनों हालतों (नींद और मौत) के लिये **توفّی** का लफ्ज़ इस्तेमाल किया है। और सबसे ज़्यादा मुकम्मल **توفّی** यह है कि अल्लाह तआला हज़रत मसीह अलै० को उनके जिस्म, जान और रूह तीनों समेत, ज्यों का त्यों, ज़िन्दा सलामत ले गया। हज़रत मसीह अलै० के रफ़ा-ए-समावी का यह अक़ीदा मुस्लमानों का है, और जहाँ तक लफ्ज़ "**تَوَفّٰی**" का ताल्लुक़ है उसमें क़तअन कोई ऐसी पेचीदा बात नहीं है जिससे कोई शख्स आप अलै० की मौत की दलील पकड़ सके, सिवाय इसके कि उन लोगों को बहकाना आसान है जिन्हें अरबी ज़बान की ग्रामर से वाक़फ़ियत नहीं है और वह एक ही वफ़ात जानते हैं, जबकि अज़रूए क़ुरान तीन क़िस्म की "वफ़ात" साबित होती है, जिसकी मैंने वज़ाहत की है। आयत ज़ेरे मुताअला के मुतज़क्किर बाला टुकड़े का तर्जुमा फिर कर लीजिये: "याद करो जब अल्लाह ने कहा कि ऐ ईसा अलै० मैं तुम्हें ले जाने वाला हूँ और तुम्हें अपनी तरफ़ उठा लेने वाला हूँ।"

وَمُطَهِّرُكَ مِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

"और तुम्हें पाक करने वाला हूँ उन लोगों से जिन्होंने (तुम्हारे साथ) कुफ्र किया है"

وَجَاعِلُ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْكَ فَوْقَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۚ

"और ग़ालिब करने वाला हूँ उन लोगों को जो तुम्हारी पैरवी करेंगे क़यामत तक उन लोगों पर जो तुम्हारा इन्कार कर रहे हैं।"

यहूद जिन्होंने हज़रत मसीह अलै० का इन्कार किया था उस वक़्त से लेकर मौजूदा ज़माने तक हज़रत मसीह अलै० के पैरोकारों से मार खाते रहे हैं। हज़रत मसीह अलै० 30 या 33 ईस्वी में आसमान पर उठा लिये गये थे और उसके बाद से यहूद पर ईसाईयों के हाथों मुसलसल अज़ाब के कोड़े बरसते रहे हैं। हज़रत मसीह अलै० के रफ़ा-ए-समावी के 40 बरस बाद 70 ईस्वी में टाइटस रूमी के हाथों हैकल सुलेमानी मस्मार हुआ और येरुशलम में एक लाख बीस हज़ार या एक लाख तैंतीस हज़ार यहूदी एक दिन में क़त्ल किये गये। गोया दो हज़ार बरस होने को हैं कि उनका काबा गिरा पड़ा है। उसकी सिर्फ़ एक दीवार (दीवारे गिरया) बाक़ी है जिस पर जाकर यह रो-धो लेते हैं।

हैकल सुलेमानी अव्वलन बख्तनसर ने छठी सदी क़ब्ल मसीह में मस्मार किया था और पूरे येरुशलम की ईंट से ईंट बजा दी थी। उसने लाखों यहूदी तहे तैग़ कर कर दिये थे और लाखों को क़ैदी बना कर अपने साथ बाबुल ले गया था। यह उनका असारत (captivity) का दौर कहलाता है। हज़रत उज़ैर अलै० के ज़माने में यह फ़लस्तीन वापस आये थे और "मअबूदे सानी" तामीर किया था, जो 70 ई० में मुन्हदिम कर दिया गया और उन्हें फ़लस्तीन से निकाल दिया गया। चुनाँचे यह मुख्तलिफ़ मुल्कों में मुन्तशिर हो गये। कोई रूस, कोई हिन्दुस्तान, कोई मिस्र और कोई यूरोप चला गया। इस तरह यह पूरी दुनिया में फ़ैल गये। यह उनका दौरे इन्तशार (Diaspora) कहलाता है। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० के दौर में जब ईसाईयों ने एक मुआहिदे के तहत येरुशलम मुस्लमानों के हवाले कर दिया तो हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने उसे खुला शहर (open city) क़रार दे दिया कि यहाँ मुस्लमान, ईसाई और यहूदी सब आ सकते हैं। इस तरह उनकी येरुशलम में आमद-ओ-रफ्त शुरू हो गयी। अलबत्ता ईसाईयों ने इस मुआहिदे में यह शर्त लिखवाई थी कि यहूदियों को यहाँ आबाद होने या जायदाद खरीदने की इजाज़त नहीं होगी। चुनाँचे हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० के ज़माने से ख़िलाफ़ते उस्मानिया

के दौर तक इस मुआहिदे पर अमल दरामद होता रहा और यहूदियों को फ़लस्तीन में आबाद होने की इजाज़त नहीं दी गयी। यहूदियों ने उस्मानी खुलफ़ा को बड़ी से बड़ी रिश्वतों की पेशकश की, लेकिन उन्हें इसमें कामयाबी ना हुई। चुनाँचे उन्होंने साज़िशें कीं और ख़िलाफ़ते उस्मानिया का ख़ात्मा करवा दिया। इसलिये कि उन्हें यह नज़र आता था कि इस ख़िलाफ़त के होते हुए यह मुमकिन नहीं होगा कि हम किसी तरह भी फ़लस्तीन में दोबारा आबाद हो सकें। उन्होंने 1917 ई० में बरतानवी वज़ीर बाल्फोर (Balfor) के ज़रिये "बाल्फ़ोर डिक्लेरेशन" मंज़ूर कराया, जिसमें उनको यह हक़ दिया गया कि वह फ़लस्तीन में आकर जायदाद भी खरीद सकते हैं और आबाद भी हो सकते हैं। इस डिक्लेरेशन की मंज़ूरी के 31 बरस बाद इसराइल की रियासत वजूद में आ गयी। यह तारीख ज़हन में रहनी चाहिये।

अब एक तरह से महसूस होता है कि यहूदी दुनिया भर में सियासत और इक़्तदार पर छाये हुए हैं, तादाद में डेढ़ करोड़ से भी कम होने के बावजूद इस वक़्त दुनिया की मईशत का बड़ा हिस्सा उनके कंट्रोल में है। लेकिन मालूम होना चाहिये कि यह सब कुछ ईसाईयों की पुश्तपनाही की वजह से है। अगर ईसाई उनकी मदद ना करें तो अरब एक दिन में उनके टुकड़े उड़ा कर रख दें। इस वक़्त पूरी अमेरिकी हुकूमत उनकी पुश्त पर है, बल्कि White Anglo Saxon Protestants यानि अमेरिका और बिरतानिया तो गोया उनके ज़ेरे खरीद हैं। दूसरे ईसाई मुमालिक भी उनके इशारों पर नाचते हैं। बहरहाल अब भी सूरते हाल यह है कि ऊपर तो ईसाई ही हैं और यह मानवी तौर पर साज़िशी अंदाज़ में नीचे से उन्हें कंट्रोल कर रहे हैं।

ثُمَّ إِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَأَحْكُمُ بَيْنَكُمْ فِيمَا كُنتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿٥٥﴾

"फिर मेरी तरफ़ ही तुम सबका लौटना होगा और मैं फ़ैसला कर दूँगा तुम्हारे माबैन उन बातों में जिनमें तुम इख्तिलाफ़ कर रहे थे।"

आयत 56

فَأَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا فَأُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا شَدِيدًا فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ

"तो वह लोग जो कुफ़्र की रविश इख़्तियार करेंगे मैं उन्हें अज़ाब दूँगा बहुत सख्त अज़ाब दुनिया में भी और आख़िरत में भी।"

وَمَا لَهُم مِّن نَّاصِرِينَ ﴿٥٦﴾

"और नहीं होंगे उनके लिये कोई मददगार।"

आयत 57

وَأَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ

"और जो ईमान लायेंगे और नेक अमल करेंगे"

فَيُوَفِّيهِمْ أُجُورَهُمْ

"तो वह उनको उनका पूरा अज्र देगा।"

देखिये यहाँ फिर وَفّٰى-يُوَفِّىْ आया है। यानि पूरा-पूरा दे देना।

وَاللَّهُ لَا يُحِبُّ الظَّالِمِينَ ﴿٥٧﴾

"और अल्लाह ज़ालिमों को पसंद नहीं करता।"

आयत 58

ذٰلِكَ نَتْلُوْهُ عَلَيْكَ مِنَ الْاٰيٰتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيْمِ ۝۵۸

"यह हम आपको पढ़ कर सुना रहे हैं आयाते इलाहिया और पुर हिकमत याद दिहानी में से।"

यहाँ भी गोया पसमंज़र में हज़रत जिब्राईल अलै० हैं जो अल्लाह की आयात और ज़िक्रे हकीम नबी अकरम ﷺ को पढ़ कर सुना रहे हैं।

आयत 59

اِنَّ مَثَلَ عِيْسٰى عِنْدَ اللّٰهِ كَمَثَلِ اٰدَمَ ۭ

"बेशक ईसा अलै० की मिसाल अल्लाह के नज़दीक आदम अलै० की सी है।"

خَلَقَهٗ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ قَالَ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ۝۵۹

"उसको मिट्टी से बनाया फिर कहा हो जा तो वह हो गया।"

क़ुरान मजीद की यह आयत उन लोगों के हक़ में दलील है जो हज़रत आदम अलै० की खुसूसी तख्लीक़ (special creation) के क़ायल हैं। उनके नज़दीक हज़रत आदम अलै० का चुनाव इरतक़ा (evolution) के नतीजे में किसी नौ (species) के वजूद में आने के बाद उसके एक फ़र्द की हैसियत से नहीं हुआ बल्कि बराहे रास्त मिट्टी से तख्लीक़ किये गये। तख्लीक़े आदम अलै० के ज़िमन में यह दोनों नज़रिये मिलते हैं और दोनों के बारे में दलाइल भी मौजूद हैं। अभी यह कोई तयशुदा हक़ाइक़ नहीं हैं। हम गौरो फ़िक्र कर सकते हैं कि क़ुरान मजीद के किस मक़ाम पर किस नज़रिये के लिये कोई ताइद या तौसीक़ मिलती है। यहाँ फ़रमाया कि "अल्लाह के नज़दीक ईसा अलै. की मिसाल ऐसे ही है जैसे आदम अलै० की। उसे मिट्टी से बनाया और कहा हो जा तो वह हो गया।" तो अब अगर आदम अलै० का मामला खुसूसी तख्लीक़ का है कि बगैर बाप के और बगैर माँ के पैदा हो गये तो क्या वह "इलाह" बन गये? उनका खालिक़ तो अल्लाह है। इसी तरह हज़रत ईसा अलै० बगैर बाप के पैदा हुए तो ख़ुदा कैसे बन गये? उनकी वालिदा को हमल हुआ है, नौ महीने माँ के पेट में रहे हैं, फिर उनकी पैदाइश हुई है। तो तख्लीक़ में उनका मामला ऐजाज़ के ऐतबार से हज़रत आदम अलै० से तो कम ही रहा है। और इससे कमतर मामला हज़रत याहया अलै० का है कि इन्तहाई बुढ़ापे को पहुँचे हुए हज़रत ज़करिया अलै० और उनकी अहलिया जो सारी उम्र बाँझ रहीं, अल्लाह ने उनको औलाद दे दी। तो यह सारे मौज्ज़ात हैं, अल्लाह को इख़्तियार है जो चाहे करे। इसमें किसी की अलुहियत की दलील नहीं निकलती।

आयत 60

اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُنْ مِّنَ الْمُمْتَرِيْنَ ۝۶۰

"यह हक़ है आप ﷺ के रब की तरफ़ से, तो हरगिज़ ना हो जाना शक करने वालों में से।"

यानि हज़रत मसीह अलै० के बारे में असल हक़ीक़त यही है जो क़ुरान ने वाज़ेह कर दी है, बाक़ी सब नसारा की अफ़साना तराज़ी है। और यह जो फ़रमाया: {فَلَا تَكُنْ مِّنَ الْمُمْتَرِيْنَ ۝۶۰} इसमें ख़िताब बज़ाहिर रसूल अल्लाह ﷺ से है मगर रुए सुखन मुखातबीन से है।

आयत 61

فَمَنْ حَاۗجَّكَ فِيْهِ مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَكَ مِنَ الْعِلْمِ

"तो (ऐ नबी ﷺ) जो भी इस मामले में आप ﷺ से हुज्जतबाज़ी करे इसके बाद कि आपके पास सही इल्म आ चुका है"

आप ﷺ के पास तो "अल-इल्म" आ चुका है, आप ﷺ जो बात कह रहे हैं अला वजहल बसीरा कह रहे हैं। इस सारी वज़ाहत के बाद भी अगर नसारा आप ﷺ से हुज्जतबाज़ी कर रहे हैं और बहस व मुनाज़रा से किनाराकश होने को तैयार नहीं हैं तो उनको आखरी चैलेंज दे दीजिये कि यह आप ﷺ के साथ "मुबाहला" कर लें। नजरान से नसारा का जो 70 अफ़राद पर मुश्तमिल वफ़्द अबु हारसा और इब्ने अलक़मा जैसे बड़े-बड़े पादरियों की सरकरदगी में मदीना आया था, उससे दावत व तब्लीग और तज़कीर व तफ़हीम का मामला कई दिन तक चलता रहा और फिर आख़िर में रसूल

अल्लाह ﷺ से कहा गया कि अगर यह इस क़दर समझाने पर भी क़ायल नहीं होते तो इन्हें मुबाहिले की दावत दे दीजिये।

فَقُلْ تَعَالَوْا نَدْعُ اَبْنَآءَنَا وَاَبْنَآءَكُمْ	*"पस आप इनसे कह दीजिये कि आओ, हम बुलाते हैं अपने बेटों को और तुम बुलाओ अपने बेटों को"*
وَنِسَآءَنَا وَنِسَآءَكُمْ	*"और हम (बुलाते हैं) अपनी औरतों को और तुम (बुलाओ) अपनी औरतों को"*
وَاَنْفُسَنَا وَاَنْفُسَكُمْ	*"और हम भी आ जाते हैं और तुम भी आ जाओ!"*
ثُمَّ نَبْتَهِلْ فَنَجْعَلْ لَّعْنَتَ اللّٰهِ عَلَى الْكٰذِبِيْنَ ﴿٦١﴾	*"फिर हम सब मिल कर दुआ करें और लानत करें अल्लाह की उन पर कि जो झूठे हैं।"*

हम सब जमा होकर अल्लाह से गिडगिड़ा कर दुआ करें और कहें कि ऐ अल्लाह! जो हममें से झूठा हो, उस पर लानत कर दे। यह मुबाहला है। और यह मुबाहला उस वक़्त होता है जबकि अहक़ाक़े हक़ हो चुके, बात पूरी वाज़ेह कर दी जाये। आपको यक़ीन हो कि मेरा मुख़ातिब बात पूरी तरह समझ गया है, सिर्फ़ ज़िद पर अड़ा हुआ है। फिर उस वक़्त यह मुबाहला आखरी शय होती है ताकि हक़ का हक़ होना ज़ाहिर हो जाये। अगर तो मुखालिफ़ को अपने मौक़फ़ की सदाक़त का यक़ीन है तो वह मुबाहला का चैलेंज क़ुबूल कर लेगा, और अगर उसके दिल में चोर है और वह जानता है कि हक़ बात तो यही है जो वाज़ेह हो चुकी है तो फिर वह मुबाहला से राहे फ़रार इख़्तियार करेगा। चुनाँचे यही हुआ। मुबाहला की दावत सुन कर वफ़द नजरान ने मोहलत माँगी कि हम मशवरा करके जवाब देंगे। मजलिसे मशावरत में उनके बड़ों ने होशमन्दी का मुज़ाहिरा करते हुए उनसे कहा: "ऐ गिरोह नसारा! तुम यक़ीनन दिलों में समझ चुके हो कि मुहम्मद ﷺ नबी मुरसल हैं और हज़रत मसीह अलै० के मुताल्लिक़ उन्होंने साफ़-साफ़ फ़ैसलाकुन बातें कही हैं। तुमको मालूम है कि अल्लाह ने बनी इस्माइल में नबी भेजने का वादा किया था। कुछ बईद नहीं यह वही नबी हों। पस एक नबी से मुबाहला व मुलाअना का नतीजा किसी क़ौम के हक़ में यही निकल सकता है कि उनका कोई छोटा-बड़ा हलाकत या अज़ाबे इलाही से ना बचे और पैगम्बर की लानत का असर नस्लों तक पहुँच कर रहे। बेहतर यही है कि हम इनसे सुलह करके अपनी बस्तियों की तरफ़ रवाना हो जायें, क्योंकि सारे अरब से लड़ाई मोल लेने की ताक़त हममें नहीं। चुनाँचे उन्होंने मुक़ाबला छोड़ कर सालाना जिज़या देना क़ुबूल किया और सुलह करके वापस चले गये।

आयत 62

اِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْقَصَصُ الْحَقُّ	*"यक़ीनन यही बिल्कुल सही सरगुज़श्त है।"*
وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّا اللّٰهُ	*"और नहीं है कोई मअबूद अल्लाह के सिवा।"*
وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ﴿٦٢﴾	*"और यक़ीनन अल्लाह तआला ही ज़बरदस्त और कमाले हिकमत वाला है।"*

आयत 63

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌ بِالْمُفْسِدِيْنَ ﴿٦٣﴾	*"फिर अगर वह पीठ मोड़ लें तो अल्लाह तआला खूब जानता है मुफ्सिदों को।"*

यहाँ आकर इस सूरह मुबारका के निस्फ़े अव्वल का पहला और दूसरा हिस्सा मुकम्मल हो गया, जो 32+31=63 आयात पर मुश्तमिल है।

आयात 64 से 71 तक

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَآءٍۢ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهٖ شَيْـًٔا وَّلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا
بَعْضًا اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ ۭ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُوْلُوا اشْهَدُوْا بِاَنَّا مُسْلِمُوْنَ ٦٤ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تُحَاۗجُّوْنَ فِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ وَمَآ
اُنْزِلَتِ التَّوْرٰىةُ وَالْاِنْجِيْلُ اِلَّا مِنْۢ بَعْدِهٖ ۭ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ٦٥ هٰٓاَنْتُمْ هٰٓؤُلَاۗءِ حَاجَجْتُمْ فِيْمَا لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ فَلِمَ تُحَاۗجُّوْنَ فِيْمَا
لَيْسَ لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ ۭ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ٦٦ مَا كَانَ اِبْرٰهِيْمُ يَهُوْدِيًّا وَّلَا نَصْرَانِيًّا وَّلٰكِنْ كَانَ حَنِيْفًا مُّسْلِمًا ۭ
وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ٦٧ اِنَّ اَوْلَى النَّاسِ بِاِبْرٰهِيْمَ لَلَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ وَھٰذَا النَّبِيُّ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۭ وَاللّٰهُ وَلِيُّ الْمُؤْمِنِيْنَ
٦٨ وَدَّتْ طَّاۗىِٕفَةٌ مِّنْ اَھْلِ الْكِتٰبِ لَوْ يُضِلُّوْنَكُمْ ۭ وَمَا يُضِلُّوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَھُمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ٦٩ يٰٓاَھْلَ الْكِتٰبِ لِمَ
تَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَاَنْتُمْ تَشْهَدُوْنَ ٧٠ يٰٓاَھْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَلْبِسُوْنَ الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوْنَ الْحَقَّ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ٧١

सूरह आले इमरान के निस्फ़े अव्वल का तीसरा हिस्सा 38 आयात (64 से 101) पर मुश्तमिल है और यह सूरतुल बक़रह के निस्फ़े अव्वल के तीसरे हिस्से (रुकूअ 15 से 18) से बहुत मुशाबेह है जिनमें हज़रत इब्राहीम अलै० का ज़िक्र, बैतुल्लाह का ज़िक्र, अहले किताब को दावते ईमान और तहवीले क़िब्ला का हुक्म है। कम व बेश वही कैफ़ियत यहाँ मिलती है। फ़रमाया:

.

आयत 64

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَآءٍۢ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये: ऐ अहले किताब! आओ एक ऐसी बात की तरफ़ जो हमारे और तुम्हारे दरमियान बिल्कुल बराबर है"

यहाँ "अहले किताब" के सीगा-ए-ख़िताब में यहूद व नसारा दोनों को जमा कर लिया गया, जबकि सूरतुल बक़रह में "يٰبَنِیْٓ اِسْرَآءِیْلَ" के सीगा-ए-ख़िताब में ज़्यादातर गुफ्तगू यहूद से थी। यहाँ अभी तक हज़रत ईसा अलै० का तज़किरा था और गोया सिर्फ़ नस्रानियों से ख़िताब था, अब अहले किताब दोनों के दोनों मुखातिब हैं कि एक ऐसी बात की तरफ़ आओ जो हमारे और तुम्हारे माबैन यक्साँ मुश्तरक और मुत्तफ़िक़ अलै है। वह क्या है?

اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ

"कि हम अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी ना करें"

وَلَا نُشْرِكَ بِهٖ شَيْـًٔا

"और उसके साथ किसी चीज़ को शरीक ना ठहरायें"

وَّلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ ۭ

"और ना हम में से कोई एक दूसरे को अल्लाह के सिवा रब ठहराये।"

यहूद व नसारा ने अपने अहबार व रुहबान का यह इख़्तियार तस्लीम कर लिया था कि वह जिस चीज़ को चाहें हलाल क़रार दे दें और जिस चीज़ को चाहें हराम ठहरा दें। यह गोया उनको रब मान लेने के मुतरादिफ़ है। जैसा कि सूरातुत्तौबा

में फ़रमाया गया: {اِتَّخَذُوْٓا اَحْبَارَھُمْ وَرُھْبَانَھُمْ اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ} (आयत:31)। मशहूर सखी हातिम ताई के बेटे अदी बिन हातिम रज़ि० (जो पहले ईसाई थे) एक मरतबा रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि क़ुरान कहता है: "उन्होंने अपने अहबार व रुहबान को अल्लाह के सिवा अपना रब बना लिया।" हालाँकि हमने तो उन्हें रब का दर्जा नहीं दिया। इस पर रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

أَمَا إِنَّهُمْ لَمْ يَكُوْنُوْا يَعْبُدُوْنَهُمْ وَلٰكِنَّهُمْ إِذَا أَحَلُّوْا لَهُمْ شَيْئًا اسْتَحَلُّوْهُ وَإِذَا حَرَّمُوْا عَلَيْهِمْ شَيْئًا حَرَّمُوْهُ

"वह उनकी इबादत तो नहीं करते थे, लेकिन जब वह उनके लिये किसी शय को हलाल क़रार देते तो वह उसे हलाल मान लेते और जब वह किसी शय को हराम क़रार दे देते तो वह उसे हराम मान लेते।"

चुनाँचे हल्त व हुरमत का इख़्तियार सिर्फ़ अल्लाह का है, और जो कोई इस हक़ को इख़्तियार करता है वह गोया रब होने का दावा करता है। अब यह सारी क़ानून साज़ी जो शरीअत के खिलाफ़ की जा रही है यह हक़ीक़त के ऐतबार से उन लोगों की जानिब से खुदाई का दावा है जो इन क़ानून साज़ इदारों में बैठे हुए हैं, और जो वहाँ पहुँचने के लिये बेताब होते हैं और उसके लिये करोड़ों रुपया खर्च करते हैं। अगर तो पहले से यह तय हो जाये कि कोई क़ानून साज़ी किताब व सुन्नत के मनाफ़ी नहीं हो सकती तो फिर आप जायें और वहाँ जाकर क़ुरान व सुन्नत के दायरे के अन्दर-अन्दर क़ानून साज़ी कीजिये। लेकिन अगर यह तहदीद नहीं है और महज़ अक्सरियत की बुनियाद पर क़ानून साज़ी हो रही है तो यह शिर्क है।

अहले किताब से कहा गया कि तौहीद हमारे और तुम्हारे दरमियान मुश्तरक अक़ीदा है। इस तरह उन्हें गौर-ओ-फ़िक्र की दावत दी गयी कि वह मवाज़ ना करें कि इस क़द्रे मुश्तरक के मैयार पर इस्लाम पूरा उतरता है या यहूदियत और नस्रानियत?

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُوْلُوا اشْهَدُوْا بِاَنَّا مُسْلِمُوْنَ ۝٦٤

"फिर अगर वह मुँह मोड़ लें तो (ऐ मुस्लमानों!) तुम कहो आप लोग गवाह रहें कि हम तो मुस्लमान हैं।"

हमने तो अल्लाह की इताअत क़ुबूल कर ली है और हम मुतज़क्किर बाला तीनों बातों पर क़ायम रहेंगे। आपको अगर यह पसंद नहीं तो आपकी मर्ज़ी!

आयत 65

يٰٓاَھْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تُحَاۗجُّوْنَ فِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ وَمَآ اُنْزِلَتِ التَّوْرٰىةُ وَالْاِنْجِيْلُ اِلَّا مِنْۢ بَعْدِهٖ

"ऐ किताब वालों! तुम इब्राहीम अलै० के बारे में क्यों झगड़ते हो हालाँकि तौरात और इन्जील नहीं नाज़िल की गयी मगर उसके बाद?"

यह बात तुम भी जानते और मानते हो कि तौरात भी हज़रत इब्राहीम अलै० के बाद नाज़िल हुई और इन्जील भी। यहूदियत भी हज़रत इब्राहीम अलै० के बाद की पैदावार है और नस्रानियत भी। वह तो मुस्लमान थे, अल्लाह के फ़रमाबरदार थे, यहूदी या नसरानी तो नहीं थे!

اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝٦٥

"तो क्या तुम अक़्ल से काम नहीं लेते?"

आयत 66

ھٰٓاَنْتُمْ ھٰٓؤُلَاۗءِ حَاجَجْتُمْ فِيْمَا لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ

"देखो तुम लोग अब तक जो भी बहस मुबाहिसा करते रहे हो वह उन चीज़ों के बारे में है जिनका तुम्हें कुछ इल्म है"

فَلِمَ تُحَاۗجُّوْنَ فِيْمَا لَيْسَ لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ

"तो अब तुम ऐसी चीज़ों के ज़िमन में हुज्जत बाज़ी क्यों करते हो जिनके बारे में तुम्हारे पास कुछ भी इल्म नहीं है?"

इन चीज़ों के बारे में तो तुम्हारे पास कोई दलील नहीं, कोई इल्मी बुनियाद नहीं।

وَاللّٰهُ يَعۡلَمُ وَاَنۡتُمۡ لَا تَعۡلَمُوۡنَ ۝٦٦

"अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते।"

आयत 67

مَا كَانَ اِبۡرٰهِيۡمُ يَهُوۡدِيًّا وَّلَا نَصۡرَانِيًّا

"(तुम्हें भी अच्छी तरह मालूम है कि) इब्राहीम अलै० ना तो यहूदी थे ना नसरानी"

وَّلٰكِنۡ كَانَ حَنِيۡفًا مُّسۡلِمًا ؕ

"बल्कि वह तो बिल्कुल यक्सु होकर अल्लाह के फ़रमाबरदार थे।"

وَمَا كَانَ مِنَ الۡمُشۡرِكِيۡنَ ۝٦٧

"और ना वह मुशरिकों में से थे।"

नज़ूले क़ुरान के वक़्त अरबों में जो तीन तबक़ात मौजूद थे, यानि मुशरिकीने अरब, यहूदी और नसरानी, वह तीनों अपने आप को हज़रत इब्राहीम अलै० से मंसूब करते थे। मुशरिकीने अरब हज़रत इस्माइल अलै० की नस्ल से होने की निस्बत से कहते थे कि हमारा रिश्ता इब्राहीम अलै० से है। इसी तरह यहूदी और नसरानी भी मिल्लते इब्राहिमी अलै० होने के दावेदार थे। लेकिन क़ुरान ने दो टूक अंदाज़ में फ़रमाया कि इब्राहीम अलै० ना तो यहूदी थी, ना नसरानी थे और ना ही मुशरिकीन में से थे, बल्कि मुस्लमान थे।

आयत 68

اِنَّ اَوۡلَى النَّاسِ بِاِبۡرٰهِيۡمَ لَلَّذِيۡنَ اتَّبَعُوۡهُ

"यक़ीनन इब्राहीम अलै० से सबसे ज़्यादा क़ुरबत रखने वाले लोग तो वह हैं जिन्होंने उनकी पैरवी की"

وَهٰذَا النَّبِىُّ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا ؕ

"और अब यह नबी (हज़रत मुहम्मद ﷺ) और जो इन पर ईमान लाये (इस निस्बत के ज़्यादा हक़दार हैं)।"

وَاللّٰهُ وَلِىُّ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ ۝٦٨

"और अल्लाह इन मोमिनों का साथी है।"

वह अहले ईमान का हामी व मददगार है, पुश्तपनाह है, हिमायती है।

आयत 69

وَدَّتۡ طَّآئِفَةٌ مِّنۡ اَهۡلِ الۡكِتٰبِ لَوۡ يُضِلُّوۡنَكُمۡ ؕ

"अहले किताब का एक गिरोह आरज़ूमन्द है कि (ऐ मुस्लमानों!) तुम्हें किसी तरह गुमराह कर दें।"

وَمَا يُضِلُّوۡنَ اِلَّاۤ اَنۡفُسَهُمۡ وَمَا يَشۡعُرُوۡنَ ۝٦٩

"और वह नहीं गुमराह कर सकेंगे मगर अपने आप को, लेकिन उन्हें इसका शऊर नहीं है।"

आयत 70

يٰۤاَهۡلَ الۡكِتٰبِ لِمَ تَكۡفُرُوۡنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَاَنۡتُمۡ تَشۡهَدُوۡنَ ۝٧٠

"ऐ अहले किताब! तुम क्यों अल्लाह तआला की आयात का इन्कार करते हो जबकि तुम खुद गवाह हो?"

तुम क़ुरान और साहिबे क़ुरान ﷺ की हक़्क़ानियत के क़ायल हो, उनको पहचान चुके हो, दिल में जान चुके हो!

आयत 71

یٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَلْبِسُوْنَ الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ
وَتَكْتُمُوْنَ الْحَقَّ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ﴿٧١﴾

"ऐ अहले किताब! तुम क्यों हक़ के ऊपर बातिल का मलमा (पोलिश) चढाते हो और हक़ को छुपाते हो जानते-बूझते?"

सूरतुल बक़रह के पाँचवे रुकूअ (आयत:42) में यह मज़मून बाअल्फ़ाज़ आया था: {وَلَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوا الْحَقَّ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ} "یٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ" के सीगा-ए-ख़िताब के साथ इन आयात में उसी तरह का दाईयाना अंदाज़ है जो सूरतुल बक़रह के पाँचवे रुकूअ में है।

आयात 72 से 80 तक

وَقَالَتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اٰمِنُوْا بِالَّذِیْٓ اُنْزِلَ عَلَى الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَجْهَ النَّهَارِ وَاكْفُرُوْٓا اٰخِرَهٗ لَعَلَّهُمْ یَرْجِعُوْنَ
﴿٧٢﴾ وَلَا تُؤْمِنُوْٓا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِیْنَكُمْ ؕ قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ ۙ اَنْ یُّؤْتٰٓى اَحَدٌ مِّثْلَ مَآ اُوْتِیْتُمْ اَوْ یُحَآجُّوْكُمْ عِنْدَ رَبِّكُمْ ؕ
قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِیَدِ اللّٰهِ ۚ یُؤْتِیْهِ مَنْ یَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِیْمٌ ﴿٧٣﴾ یَّخْتَصُّ بِرَحْمَتِهٖ مَنْ یَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِیْمِ ﴿٧٤﴾
وَمِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ مَنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِقِنْطَارٍ یُّؤَدِّهٖٓ اِلَیْكَ ۚ وَمِنْهُمْ مَّنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِدِیْنَارٍ لَّا یُؤَدِّهٖٓ اِلَیْكَ اِلَّا مَا دُمْتَ
عَلَیْهِ قَآئِمًا ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَیْسَ عَلَیْنَا فِی الْاُمِّیّٖنَ سَبِیْلٌ ۚ وَیَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ یَعْلَمُوْنَ ﴿٧٥﴾ بَلٰى مَنْ
اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ یُحِبُّ الْمُتَّقِیْنَ ﴿٧٦﴾ اِنَّ الَّذِیْنَ یَشْتَرُوْنَ بِعَهْدِ اللّٰهِ وَاَیْمَانِهِمْ ثَمَنًا قَلِیْلًا اُولٰٓئِكَ لَا خَلَاقَ
لَهُمْ فِی الْاٰخِرَةِ وَلَا یُكَلِّمُهُمُ اللّٰهُ وَلَا یَنْظُرُ اِلَیْهِمْ یَوْمَ الْقِیٰمَةِ وَلَا یُزَكِّیْهِمْ ۠ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِیْمٌ ﴿٧٧﴾ وَاِنَّ مِنْهُمْ
لَفَرِیْقًا یَّلْوٗنَ اَلْسِنَتَهُمْ بِالْكِتٰبِ لِتَحْسَبُوْهُ مِنَ الْكِتٰبِ وَمَا هُوَ مِنَ الْكِتٰبِ ۚ وَیَقُوْلُوْنَ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَمَا هُوَ مِنْ
عِنْدِ اللّٰهِ ۚ وَیَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ یَعْلَمُوْنَ ﴿٧٨﴾ مَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ یُّؤْتِیَهُ اللّٰهُ الْكِتٰبَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ ثُمَّ
یَقُوْلَ لِلنَّاسِ كُوْنُوْا عِبَادًا لِّیْ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ كُوْنُوْا رَبّٰنِیّٖنَ بِمَا كُنْتُمْ تُعَلِّمُوْنَ الْكِتٰبَ وَبِمَا كُنْتُمْ تَدْرُسُوْنَ ﴿٧٩﴾
وَلَا یَاْمُرَكُمْ اَنْ تَتَّخِذُوا الْمَلٰٓئِكَةَ وَالنَّبِیّٖنَ اَرْبَابًا ؕ اَیَاْمُرُكُمْ بِالْكُفْرِ بَعْدَ اِذْ اَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ﴿٨٠﴾

आयत 72

وَقَالَتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اٰمِنُوْا بِالَّذِیْٓ
اُنْزِلَ عَلَى الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَجْهَ النَّهَارِ وَاكْفُرُوْٓا اٰخِرَهٗ

"और अहले किताब के एक गिरोह ने कहा कि इन अहले ईमान पर जो चीज़ नाज़िल की गयी है, उस पर ईमान लाओ सुबह के वक़्त और उसका इन्कार कर दो दिन के आख़िर में"

لَعَلَّهُمْ یَرْجِعُوْنَ ﴿٧٢﴾

"शायद (इस तदबीर से) उनमें से भी कुछ फिर जायें।"

यहाँ यहूद की एक बहुत बड़ी साज़िश का ज़िक्र हो रहा है जो उनके एक गिरोह ने मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की दावत को नाकाम बनाने के लिये मुस्लमानों के खिलाफ़ तैयार की थी। इस साज़िश का पसमंज़र यह था कि दुनिया के सामने यह बात आ चुकी थी कि जो कोई एक मर्तबा दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल हो जाता था वह वापस नहीं आता था, चाहे उसे बदतरीन तशद्‌दुद का निशाना बनाया जाये, भूखा-प्यासा रखा जाये, हत्ता कि जान से मार दिया जाये। इस तरह इस्लाम की एक धाक बैठ गयी थी कि इसके अन्दर कोई ऐसी कशिश, ऐसी हक़्क़ानियत और ऐसी मिठास है कि आदमी एक मर्तबा इस्लाम क़ुबूल कर लेने के बाद बड़ी से बड़ी क़ुरबानी देने को तैयार हो जाता है, लेकिन इस्लाम से दस्तबरदार होने (त्याग करने) को तैयार नहीं होता। इस्लाम की यह जो साख बन गयी थी इसको तोड़ने का तरीक़ा उन्होंने यह सोचा कि ऐसा करो सुबह के वक़्त ऐलान करो कि हम ईमान ले आये। सारा दिन मुहम्मद (ﷺ) की सोहबत में रहो और शाम को कह दो हमने देख लिया, यहाँ कुछ नहीं है, यह दूर के ढोल सुहाने हैं, हम तो अपने कुफ़्र में वापस जा रहे हैं, हमें यहाँ से कुछ नहीं मिला। इससे मुस्लमानों में से कुछ लोग तो समझेंगे कि इन्होंने साज़िश की होगी, लेकिन यक़ीनन कुछ लोग यह भी समझेंगे कि भई बड़े मुत्तक़ी लोग थे, मुल्ला श्याने हक़ (हक़ को चाहने वाले) थे, बड़े जज़्बे और बड़ी शान के साथ इन्होंने कलमा पढ़ा था और ईमान क़ुबूल किया था, फिर सारा दिन रसूल अल्लाह ﷺ की महफ़िल में बैठे रहे हैं, आख़िर इन्होंने कुछ ना कुछ तो देखा ही होगा जो वापस पलट गये। इस अंदाज़ से आम लोगों के दिलों में वस्वसा अंदाज़ी करना बहुत आसान काम है। चुनाँचे उन्होंने मुनाफ़िक़ाना शरारत की यह साज़िश तैयार की। इस्लाम में क़त्ले मुर्तद की सज़ा का ताल्लुक़ इसी से जुड़ता है। इस्लामी रियासत में इस तरह की साज़िशों का रास्ता रोकने के लिये यह सज़ा तजवीज़ की गयी है कि जो शख़्स ईमान लाने के बाद फिर कुफ़्र में जायेगा तो क़त्ल कर दिया जायेगा, क्योंकि इस्लामी रियासत एक नज़रियाती (ideological) रियासत है, ईमान और इस्लाम ही तो उसकी बुनियादें हैं। चुनाँचे उसकी बुनियादों को कमज़ोर करने और उसकी जड़ों को खोदने वाली जो चीज़ भी हो सकती है उसका सद्दे बाब पूरी क़ुव्वत से करना चाहिये।

आयत 73

وَلَا تُؤْمِنُوْٓا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِيْنَكُمْ ۭ

"और देखो किसी की बात ना मानना मगर उसी की जो तुम्हारे दीन की पैरवी करे।"

यानि इस साज़िशी गिरोह को यह ख़तरा भी था कि अगर हम जाकर चंद घंटे अल्लाह के रसूल ﷺ के पास गुज़ारेंगे तो कहीं ऐसा ना हो कि हममें से वाक़ई किसी को इंशराहे सद्र हो जाये और वह दिल से ईमान ले आये। लिहाज़ा वह तय करके गये कि देखो, उन पर ईमान नहीं लाना है, सिर्फ़ ईमान का ऐलान करना है। क़ुरान मजीद में यह शऊरी निफ़ाक़ की मिसाल है। यानि जो वक़्त उन्होंने अपने ईमान का ऐलान करने के बाद मुस्लमानों के साथ गुज़ारा उसमें वह क़ानूनन तो मुस्लमान थे, अगर इस दौरान कोई उनमें से मर जाता तो उसकी नमाज़े जनाज़ा भी पढ़ी जाती, लेकिन खुद उन्हें मालूम था कि हम मुस्लमान नहीं है। यह शऊरी निफ़ाक़ है, जबकि एक गैर शऊरी निफ़ाक़ है कि अन्दर ईमान ख़त्म हो चुका होता है मगर इन्सान समझता है कि मैं तो मोमिन हूँ, हालाँकि उसका किरदार और अमल मुनाफ़िक़ाना है और उसके अन्दर से ईमान की पूंजी ख़त्म हो चुकी है, जैसे दीमक किसी शहतीर (लकड़ी की कड़ी) को चट कर चुकी होती है लेकिन उसके ऊपर एक पर्दा (veneer) बहरहाल बरक़रार रहता है। शऊरी निफ़ाक़ और गैर शऊरी निफ़ाक़ के इस फ़र्क़ को समझ लेना चाहिये।

قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ ۙ

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कह दीजिये कि असल हिदायत तो अल्लाह ही की हिदायत है"

आगे यहूद के साज़िशी टोले के क़ौल का तसल्सुल है कि देखो ईमान मत लाना!

اَنْ يُّؤْتٰٓى اَحَدٌ مِّثْلَ مَآ اُوْتِيْتُمْ

"मबादा किसी को वह शय दे दी जाये जो तुम्हें दी गयी थी"

यानि यह रिसालत व नबुवत और मज़हबी पेशवाई तो हमारी मीरास थी, हम अगर इन पर ईमान ले आयेंगे तो वह चीज़ हमसे इनको मुन्तक़िल हो जायेगी। लिहाज़ा मानना तो हरगिज़ नहीं है, लेकिन किसी तरह से इनकी हवा उखेड़ने के लिये हमें यह काम करना है।

اَوْ يُحَآجُّوْكُمْ عِنْدَ رَبِّكُمْ ؕ

"या तुम्हारे खिलाफ़ हुज्जत क़ायम करें तुम्हारे परवरदिगार के हुज़ूर।"

قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِ ۚ

"कह दीजिये कि फ़ज़्ल तो कुल का कुल अल्लाह के हाथ में है"

يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ؕ

"वह जिसको चाहता है दे देता है।"

उसने दो हज़ार बरस तक तुम्हें एक मंसब पर फाइज़ रखा, अब तुम उस मंसब के नाअहल साबित हो चुके हो, लिहाज़ा तुम्हें माज़ूल कर दिया गया है, और अब एक नयी उम्मत (उम्मते मुहम्मद ﷺ) को उस मक़ाम पर फाइज़ कर दिया गया है।

وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۟ۙ

"और अल्लाह बहुत वुसअत वाला और जानने वाला है।"

आयत 74

يَّخْتَصُّ بِرَحْمَتِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ؕ

"वह मुख्तस (ख़ास) कर लेता है अपनी रहमत के लिये जिसको चाहता है।"

وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيْمِ ۝

"और अल्लाह बड़े फ़ज़्ल का मालिक है।"

अगली आयत में हिकमते दावत के ऐतबार से बहुत अहम नुक्ता मौजूद है कि बुरे से बुरे गिरोह के अन्दर भी कहीं ना कहीं कोई अच्छे अफ़राद लाज़िमन होते हैं। दाई के लिये ज़रूरी है कि वह उनका तज़किरा भी करता रहे कि उनमें अच्छे लोग भी हैं, ताकि ऐसे लोगों के दिलों के अन्दर नरमी पैदा हो। इसी तरह फ़र्द का मामला है कि बुरे से बुरे आदमी के अन्दर कोई अच्छाई भी मौजूद होती है। आप अगर उसे हक़ की दावत दे रहे हैं तो उसमें जो अच्छाई है उसको मानिये, ताकि उसे मालूम हो कि इसे मुझसे कोई दुश्मनी नहीं है, मेरी जो बात वाक़ई अच्छी है उसको यह तस्लीम कर रहा है, लेकिन जो बात गलत है उसको रद्द कर रहा है। इस तरह उसके दिल में कुशादगी पैदा होगी और वह आपकी बात सुनने पर आमादा होगा। फ़रमाया:

आयत 75

وَمِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ مَنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِقِنْطَارٍ يُّؤَدِّهٖٓ اِلَيْكَ ۚ

"और अहले किताब में से ऐसे लोग भी हैं कि अगर तुम उनके पास अमानत रखवा दो ढ़ेरो माल तो वह तुम्हें पूरा-पूरा वापस लौटा देंगे।"

यानि उनमें अमानतदार लोग भी मौजूद हैं।

وَمِنْهُمْ مَّنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِدِيْنَارٍ لَّا يُؤَدِّهٖٓ اِلَيْكَ

"और उनमें ऐसे भी हैं कि अगर तुम उनके पास एक दीनार भी अमानत रखवा दो तो वह तुम्हें वापस नहीं करेंगे"

اِلَّا مَا دُمْتَ عَلَيْهِ قَآىِٕمًا ؕ

"मगर जब तक कि तुम उसके सर पर खड़े रहो।"

अगर तुम उसके सर पर सवार हो जाओ और उसको अदायगी पर मजबूर कर दो तब तो तुम्हारी अमानत वापस कर देगा, वरना नहीं देगा। उनमें से अक्सर का किरदार तो यही है, लेकिन अहले किताब में से जो थोड़े बहुत दयानतदार थे उनकी अच्छाई का ज़िक्र भी कर दिया गया। बिलफ़अल इस क़िस्म के किरदार के हामिल लोग ईसाईयों में तो मौजूद थे, यहूदियों में ना होने के बराबर थे, लेकिन "अहले किताब" के उन्वान से उनका ज़िक्र मुश्तरक तौर पर कर दिया गया। आगे ख़ास तौर पर यहूद का तज़किरा है कि उनमें यह बद-दियानती, बेईमानी और खयानत क्यों आ गयी है।

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَيْسَ عَلَيْنَا فِي الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ

"यह इसलिये कि वह कहते हैं कि इन उम्मिय्यीन के मामले में हम पर कोई मलामत नहीं है।"

यहूदियों का यह अक़ीदा तौरात में नहीं है, लेकिन उनकी असल मज़हबी किताब का दर्जा तौरात की बजाये तालमूद को हासिल है। यूँ समझिये कि तौरात तो उनके लिये "उम्मुल किताब" है, जबकि उनकी सारी शरीअत, क़वानीन वज़ाबत (मापदंड) और इबादात की सारी तफ़ासील तालमूद में हैं। और तालमूद में यह बात मौजूद है कि यहूदी के लिये यहूदी से झूठ बोलना हराम है, लेकिन गैर यहूदी से जैसे चाहो झूठ बोलो। यहूदी के लिये किसी यहूदी का माल हड़प करना हराम और नाजायज़ है, लेकिन गैर यहूदी का माल जिस तरह चाहो, धोखा, फ़रेब और बद-दियानती से हड़प करो। हम पर उसका कोई मुआखज़ा नहीं है। उनके नज़दीक इंसानियत का शर्फ़ सिर्फ़ यहूदियों को हासिल है और गैर यहूदी इन्सान हैं ही नहीं, यह असल में इन्सान नुमा हैवान (Goyems & Gentiles) हैं और इनसे फ़ायदा उठाना हमारा हक़ है, जैसा कि घोड़े को तांगे में जोतना और बेल को हल के अन्दर जोत लेना इन्सान का हक़ है। यहूदी यह अक़ीदा रखते हैं कि इन इन्सान नुमा हैवानों से हम जिस तरह चाहें लूट-खसोट का मामला करें और जिस तरह चाहें इन पर ज़ुल्मो-सितम करें, इस पर हमारी कोई पकड़ नहीं होगी, कोई मुआखज़ा नहीं होगा। अमेरिका में इस पर एक मूवी भी बनाई गयी है: "The Other Side of Israel" यह दस्तावेज़ी फिल्म वहाँ के ईसाईयों ने बनाई है और इसमें एक शख्स ने एक यहूदी कुतुबखाने में जाकर वहाँ उनकी किताबें निकाल-निकाल कर उनके हवाले से यहूदियों के नज़रियात को वाज़ेह किया है और यहूदियत का असल चेहरा दुनिया को दिखाया है। (अब इसी उन्वान से किताब भी शाया [पब्लिश] हो चुकी है।)

وَيَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ﴿٧٥﴾

"और वह झूठ घड कर अल्लाह की तरफ़ मंसूब कर रहे हैं हालाँकि वह जानते हैं (कि अल्लाह ने ऐसी कोई बात नहीं फ़रमायी)।"

आयत 76

بَلٰى مَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ﴿٧٦﴾

"क्यों नहीं! जो कोई भी अल्लाह तआला से किये हुए अपने अहद को पूरा करेगा और तक़वा की रविश इख़्तियार करेगा तो बेशक अल्लाह तआला को अहले तक़वा पसंद हैं।"

आयत 77

اِنَّ الَّذِيْنَ يَشْتَرُوْنَ بِعَهْدِ اللّٰهِ وَاَيْمَانِهِمْ ثَمَنًا قَلِيْلًا

"यक़ीनन वह लोग जो अल्लाह तआला के अहद और अपनी क़समों को फ़रोख्त करते हैं हक़ीर सी क़ीमत पर"

यानि जब वह देखते हैं कि लोग हमारी बात में कुछ शक कर रहे हैं तो ख़ुदा की क़सम खा कर कहते हैं कि ऐसा ही है।

اُولٰٓئِكَ لَا خَلَاقَ لَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ

"यह वह लोग हैं कि जिनके लिये कोई हिस्सा नहीं है आख़िरत में"

وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللّٰهُ

"और ना अल्लाह उनसे कलाम करेगा"

وَلَا يَنْظُرُ اِلَيْهِمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ

"और ना उनकी तरफ़ निगाह करेगा क़यामत के दिन"

وَلَا يُزَكِّيْهِمْ

"और ना उनको पाक करेगा"

وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝

"और उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

यह मज़मून भी तक़रीबन पूरा सूरतुल बक़रह (आयत 174) में आ चुका है।

आयत 78

وَاِنَّ مِنْهُمْ لَفَرِيْقًا يَّلْوٗنَ اَلْسِنَتَهُمْ بِالْكِتٰبِ لِتَحْسَبُوْهُ مِنَ الْكِتٰبِ وَمَا هُوَ مِنَ الْكِتٰبِ ۚ

"और उनमें एक गिरोह ऐसा भी है जो अपनी ज़बान को तोड़ता-मरोड़ता है किताब को पढ़ते हुए, ताकि तुम समझो कि (जो कुछ वह पढ़ रहे हैं) वह किताब में से है, हालाँकि वह किताब में से नहीं होता।"

उलमाए यहूद अल्फ़ाज़ को ज़रा सा इधर से उधर मरोड़ कर और मायने पैदा कर लेते थे। हम सूरतुल बक़रह में पढ़ चुके हैं कि यहूद से कहा गया "حِطَّةٌ" कहो तो "حِنْطَةٌ" कहने लगे। यानि बजाय इसके कि "ऐ अल्लाह हमारे गुनाह झाड़ दे" उन्होंने कहना शुरू कर दिया "हमें गेहूँ दे।" उन्हें तलक़ीन की गयी कि तुम कहो: "سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا" मगर उन्होंने कहा: "سَمِعْنَا وَ عَصَيْنَا"। इसी तरह का मामला वह तौरात को पढ़ते हुए भी करते थे। जब वह देखते कि जो साइल फ़तवा माँगने आया है उसकी पसंद कुछ और है जबकि तौरात का हुक्म कुछ और है तो वह अल्फ़ाज़ को तोड़-मरोड़ कर पढ़ देते कि देखो यह किताब के अन्दर मौजूद है, और इस तरह साइल को खुश करके उससे कुछ रक़म हासिल कर लेते।

وَيَقُوْلُوْنَ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَمَا هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۚ

"और वह कहते हैं यह अल्लाह की तरफ़ से है जबकि वह अल्लाह की तरफ़ से नहीं होता।"

हम यह मज़मून सूरतुल बक़रह (आयत 79) में भी पढ़ चुके हैं।

وَيَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ۝

"और वह अल्लाह पर झूठ बाँधते हैं जानते-बूझते।"

आयत 79

مَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُّؤْتِيَهُ اللّٰهُ الْكِتٰبَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ

"किसी इन्सान के शायाने-शान नहीं है कि अल्लाह तआला तो उसको किताब, हिकमत और नबुवत अता फ़रमाये"

ثُمَّ يَقُوْلَ لِلنَّاسِ كُوْنُوْا عِبَادًا لِّيْ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ

"फिर वह लोगों से कहने लगे कि मेरे बन्दे बन जाओ अल्लाह को छोड़ कर"

यह अब नस्रानियों की तरफ़ इशारा हो रहा है कि हमने तुम्हारी तरफ़ रसूल भेजे, फिर ईसा अलै० इब्ने मरयम को भेजा, उन्हें किताब दी, हिकमत दी, नबुवत दी, मौज्ज़ात दिये। और इसका तो कोई इम्कान नहीं कि वह अलै० कहते कि मुझे अल्लाह के सिवा अपना मअबूद बना लो!

وَلٰكِنْ كُوْنُوْا رَبّٰنِيّٖنَ بِمَا كُنْتُمْ تُعَلِّمُوْنَ الْكِتٰبَ وَبِمَا كُنْتُمْ تَدْرُسُوْنَ ۝

"बल्कि (वह तो यही दावत देगा कि) अल्लाह वाले बन जाओ इस वजह से कि तुम लोगों को किताब की तालीम देते हो और तुम खुद भी उसको पढ़ते हो।"

किताबे इलाही की तालीम व तअल्लम का यही तक़ाज़ा है। दीन का सीखना, सिखाना, क़ुरान का पढ़ना-पढ़ाना और हदीस व फ़िक़ह का दर्स व तदरीस इसलिये होना चाहिये कि लोगों को अल्लाह वाले बनाया जाये, ना यह कि अपने बन्दे बना कर और उनसे नज़राने वसूल करके उनका इस्तेहसाल किया जाये।

आयत 80

وَلَا يَأْمُرَكُمْ اَنْ تَتَّخِذُوا الْمَلٰٓىِٕكَةَ وَالنَّبِيّٖنَ اَرْبَابًا ؕ

"और ना कभी वह तुम्हें इस बात का हुक्म देगा कि तुम फ़रिश्तों को और अम्बिया को रब बना लो।"

मुशरिकीने मक्का ने फ़रिश्तों को रब बनाया और उनके नाम पर लात, मनात और उज्ज़ा जैसी मूर्तियाँ बना लीं, जबकि नसारा ने अल्लाह के नबी हज़रत ईसा अलै० को अपना रब बना लिया।

اَيَاْمُرُكُمْ بِالْكُفْرِ بَعْدَ اِذْ اَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۝۸۰

"तो क्या वह तुम्हें कुफ़्र का हुक्म देगा इसके बाद कि तुम मुस्लिम हो चुके हो?"

अल्लाह का वह बंदा जिसे ने किताब, हिकमत व नबुवत अता की हो, क्या तुम्हें कुफ़्र का हुक्म दे सकता है जबकि तुम फ़रमाबरदारी इख़्तियार कर चुके हो?

आयात 81 से 91 तक

وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ النَّبِيّٖنَ لَمَآ اٰتَيْتُكُمْ مِّنْ كِتٰبٍ وَّحِكْمَةٍ ثُمَّ جَاۗءَكُمْ رَسُوْلٌ مُّصَدِّقٌ لِّمَا مَعَكُمْ لَتُؤْمِنُنَّ بِهٖ
وَلَتَنْصُرُنَّهٗ ۭ قَالَ ءَاَقْرَرْتُمْ وَاَخَذْتُمْ عَلٰي ذٰلِكُمْ اِصْرِيْ ۭ قَالُوْٓا اَقْرَرْنَا ۭ قَالَ فَاشْهَدُوْا وَاَنَا مَعَكُمْ مِّنَ الشّٰهِدِيْنَ ۝۸۱ فَمَنْ
تَوَلّٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝۸۲ اَفَغَيْرَ دِيْنِ اللّٰهِ يَبْغُوْنَ وَلَهٗٓ اَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ طَوْعًا
وَّكَرْهًا وَّاِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ۝۸۳ قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ عَلٰٓي اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ
وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوْتِيَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَالنَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ۠ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْھُمْ ۡ وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ۝۸۴ وَمَنْ
يَّبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِيْنًا فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْهُ ۚ وَھُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝۸۵ كَيْفَ يَهْدِي اللّٰهُ قَوْمًا كَفَرُوْا بَعْدَ
اِيْمَانِهِمْ وَشَهِدُوْٓا اَنَّ الرَّسُوْلَ حَقٌّ وَّجَاۗءَھُمُ الْبَيِّنٰتُ ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝۸۶ اُولٰۗىِٕكَ جَزَاۗؤُھُمْ اَنَّ
عَلَيْهِمْ لَعْنَةَ اللّٰهِ وَالْمَلٰۗىِٕكَةِ وَالنَّاسِ اَجْمَعِيْنَ ۝۸۷ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۚ لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا ھُمْ يُنْظَرُوْنَ ۝۸۸ اِلَّا
الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوْا ۣ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝۸۹ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بَعْدَ اِيْمَانِهِمْ ثُمَّ ازْدَادُوْا كُفْرًا لَّنْ
تُقْبَلَ تَوْبَتُھُمْ ۚ وَاُولٰۗىِٕكَ ھُمُ الضَّاۗلُّوْنَ ۝۹۰ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَمَاتُوْا وَھُمْ كُفَّارٌ فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْ اَحَدِهِمْ مِّلْءُ
الْاَرْضِ ذَهَبًا وَّلَوِ افْتَدٰى بِهٖ ۭ اُولٰۗىِٕكَ لَھُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ وَّمَا لَھُمْ مِّنْ نّٰصِرِيْنَ ۝۹۱

आयत 81

وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ النَّبِيّٖنَ

"और याद करो जबकि अल्लाह ने तमाम अम्बिया से एक अहद लिया था कि"

لَمَآ اٰتَيْتُكُمْ مِّنْ كِتٰبٍ وَّحِكْمَةٍ ثُمَّ جَآءَكُمْ رَسُوْلٌ مُّصَدِّقٌ لِّمَا مَعَكُمْ لَتُؤْمِنُنَّ بِهٖ وَلَتَنْصُرُنَّهٗ

"जो कुछ भी मैं तुम्हें किताब और हिकमत अता करूँ, फिर तुम्हारे पास आये कोई और रसूल जो तस्दीक़ करता हो उसकी जो तुम्हारे पास (पहले से) मौजूद है तो तुम्हें लाज़िमन उस पर ईमान लाना होगा और उसकी मदद करनी होगी।"

इसलिये कि अम्बिया और रुसुल का एक तवील सिलसिला चल रहा था, और हर नबी ने आइन्दा आने वाले नबी ﷺ की पेशनगोई की है और अपनी उम्मत को उसका साथ देने की हिदायत की है। और यह भी ख़त्मे नबुवत के बारे में बहुत बड़ी दलील है कि ऐसी किसी शय का ज़िक्र क़ुरान या हदीस में नहीं है कि मुहम्मदुन रसूल अल्लाह ﷺ से ऐसा कोई अहद लिया गया हो या आप ﷺ ने अपनी उम्मत को किसी बाद में आने वाले नबी की ख़बर देकर उस पर ईमान लाने की हिदायत फ़रमायी हो, बल्कि इसके बरअक्स क़ुरान में सराहत के साथ आँहुज़ूर ﷺ को खातमुन्न नबिय्यीन फ़रमाया गया है और मुतअद्दिद अहादीस में आप ﷺ ने फ़रमाया है कि आप ﷺ के बाद कोई नबी नहीं आयेगा। हज़रत मसीह अलै० मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की बशारत देकर गये हैं और दीगर अम्बिया की किताबों में भी बशारतें मौजूद हैं। इन्जील बरनबास का तो कोई सफ़ा खाली नहीं है जिसमें आँहुज़ूर ﷺ की बशारत ना हो, लेकिन बाक़ी इन्जीलों में से यह बशारतें निकाल दी गयी हैं।

قَالَ ءَاَقْرَرْتُمْ وَاَخَذْتُمْ عَلٰى ذٰلِكُمْ اِصْرِيْ

"अल्लाह ने फ़रमाया क्या तुमने इक़रार कर लिया है और इस पर मेरी डाली हुई ज़िम्मेदारी क़ुबूल कर ली है?"

قَالُوْٓا اَقْرَرْنَا

"उन्होंने कहा हाँ हमने इक़रार किया।"

अम्बिया व रुसुल से यह अहद आलमे अरवाह में लिया गया। जिस तरह तमाम अरवाहे इंसानिया से "अहदे अलस्त" लिया गया था {اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ قَالُوْا بَلٰى} इसी तरह जिन्हें नबुवत से सरफ़राज़ होना था उनकी अरवाह से अल्लाह तआला ने यह इज़ाफ़ी अहद लिया कि मैं तुम्हें नबी बना कर भेजूँगा, तुम अपनी उम्मत को यह हिदायत करके जाना कि तुम्हारे बाद जो नबी भी आये उस पर ईमान लाना और उसकी मदद और नुसरत करना।

قَالَ فَاشْهَدُوْا وَاَنَا مَعَكُمْ مِّنَ الشّٰهِدِيْنَ ۝٨١

"अल्लाह तआला ने कहा अच्छा अब तुम भी गवाह रहो और मैं भी तुम्हारे साथ गवाहों में से हूँ।

आयत 82

فَمَنْ تَوَلّٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝٨٢

"तो जिसने भी मुँह मोड़ लिया इसके बाद तो यक़ीनन वही लोग सरकश (और नाहंजार) हैं।"

आयत 83

اَفَغَيْرَ دِيْنِ اللّٰهِ يَبْغُوْنَ

"तो क्या यह अल्लाह के दीन के सिवा कोई और दीन चाहते हैं?"

وَلَهٗٓ اَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ طَوْعًا وَّكَرْهًا وَّاِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ۝٨٣

"जबकि आसमानों और ज़मीन में जो भी है वह अल्लाह के सामने सरे तस्लीम ख़म किये हुए है, चाहे ख़ुशी से और चाहे मजबूरन, और उसी की तरफ़ उन सबको लौटा दिया जायेगा।"

आयत 84

قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا

"कहिये हम ईमान लाये अल्लाह पर और जो नाज़िल किया गया हम पर"

याद रहे कि सूरतुल बक़रह की आयत 136 में थोड़े से लफ्ज़ी फ़र्क़ के साथ यही मज़मून बयान हुआ है।

وَمَآ اُنْزِلَ عَلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ

"और जो कुछ नाज़िल किया गया इब्राहीम अलै०, इस्माइल अलै०, इसहाक़ अलै०, याक़ूब अलै० और उनकी औलाद पर"

وَمَآ اُوْتِيَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَالنَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ۠

"और जो भी मूसा अलै०, ईसा अलै० और तमाम अम्बिया अलै० को दिया गया उनके रब की तरफ़ से।"

لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ ۡ وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ﴿٨٤﴾

"हम उनमें से किसी एक के माबैन भी कोई तफ़रीक़ नहीं करते, और हम तो अल्लाह ही के फ़रमाबरदार हैं।"

आयत 85

وَمَنْ يَّبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِيْنًا فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْهُ ۚ

"और जो कोई इस्लाम के सिवा कोई और दीन इख़्तियार करना चाहेगा तो वह उसकी जानिब से क़ुबूल नहीं किया जायेगा।"

وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿٨٥﴾

"और फिर आख़िरत में वह खसारा पाने वालों में से होकर रहेगा।"

आयत 86

كَيْفَ يَهْدِي اللّٰهُ قَوْمًا كَفَرُوْا بَعْدَ اِيْمَانِهِمْ

"कैसे हिदायत देगा अल्लाह उन लोगों को जो ईमान के बाद काफ़िर हो गये?"

यानि उनके दिल ईमान ले आये थे, उन पर हक़ीक़त मुन्कशिफ़ हो गयी थी, लेकिन दुनियवी मसलहतें आड़े आ गयीं और ज़बान से इन्कार कर दिया। जैसे सूरतुल नमल में हम पढ़ेंगे: {وَجَحَدُوْا بِهَا وَاسْتَيْقَنَتْهَآ اَنْفُسُهُمْ ظُلْمًا وَّعُلُوًّا ۭ} (आयत:14) "उन्होंने ज़ुल्म और तकब्बुर के मारे उन मौज्ज़ात का इन्कार किया हालाँकि उनके दिल उनके क़ायल हो चुके थे।"

وَشَهِدُوْٓا اَنَّ الرَّسُوْلَ حَقٌّ

"और उन्होंने गवाही दी कि यह रसूल हक़ हैं"

अहले किताब जब आपस में बातें करते थे तो कहते थे कि यह वाक़िअतन नबी आखिरुज़्ज़मान हैं जो हमारी किताबों में बयान करदा पेशनगोइयों का मिस्दाक़ हैं। चुनाँचे रिवायात में आता है कि अलक़मा के दो बेटे अबु हारसा और कर्ज़ जब जब नजरान से मदीना मुनव्वरा चले आ रहे थे तो रास्ते में कर्ज़ के घोड़े को कहीं ठोकर लगी तो उसने कहा "تَعِسَ الْاَبْعَدُ" (हलाक हो जाये वह दूर वाला यानी जिसकी तरफ़ हम जा रहे हैं)। उसका इशारा मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की तरफ़ था। इस पर उसके बड़े भाई अबु हारसा ने कहा "بَلْ تَعِسَتْ اُمُّكَ" (बल्कि तेरी माँ हलाक हो जाये!) उसने कहा मेरे भाई! तुम्हें मेरी बात इस क़दर बुरी क्यों लगी? अबु हारसा ने कहा: अल्लाह की क़सम! यक़ीनन वह वही नबी उम्मी हैं जिसके हम मुन्तज़िर थे। कर्ज़ ने कहा: जब आप यह सब जानते हैं तो उन पर ईमान क्यों नहीं ले आते? अबु हारसा कहने लगा: उन बादशाहों ने हमें बड़ा मक़ाम व मरतबा अता कर रखा है, अगर हम ईमान ले आये तो वह हमसे यह सब कुछ छीन लेंगे। यह लोग सल्तनते रोमा के तहत थे और उन्हें मिस्र की हुकूमत की तरफ़ से बड़ी मराआत हासिल थीं, उन्हें माल व दौलत और इज़्ज़त व वजाहत हासिल थी। अभी यह लोग मुहम्मदे अरबी ﷺ से मुलाक़ात के लिये जा रहे थे तो यह हाल था, इससे अंदाज़ा किया जा सकता है कि आँहुज़ूर ﷺ की ख़िदमत में कई रोज़ गुज़ारने के बाद मुबाहला से राहे फ़रार

इख़्तियार करके वापस जाते हुए उन्हें किस क़दर यक़ीन हासिल हो गया होगा कि यही वह नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ हैं जिनके वह मुन्तज़िर थे। उनके दिल गवाही दे चुके थे कि यह रसूल बरहक़ (ﷺ) हैं।

وَّجَآءَهُمُ الْبَيِّنٰتُ ۭ

"और उनके पास खुली-खुली निशानियाँ भी आ चुकी हैं।"

وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۸۶

"और अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को हिदायत नहीं देता।"

आयत 87

اُولٰۗىِٕكَ جَزَاۗؤُھُمْ اَنَّ عَلَيْهِمْ لَعْنَةَ اللّٰهِ وَالْمَلٰۗىِٕكَةِ وَالنَّاسِ اَجْمَعِيْنَ ۸۷ۙ

"यही वह लोग हैं कि जिनका बदला यह है कि उन पर अल्लाह की, फ़रिश्तों की और तमाम इंसानों की लानत है।"

आयत 88

خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۚ

"उसी (लानत) में वह हमेशा रहेंगे।"

لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا ھُمْ يُنْظَرُوْنَ ۸۸ۙ

"उनके अज़ाब में कोई तख्फ़ीफ़ नहीं की जायेगी और ना ही उनको कोई मोहलत मिलेगी।"

यह अल्फ़ाज़ भी सूरतुल बक़रह (आयात 161-162) में आ चुके हैं।

आयत 89

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوْا ۣ

"सिवाये उनके जो इसके बाद तौबा कर लें और इस्लाह कर लें"

यानि सच्चे दिल से ईमान लाकर अमले सालेह की रविश पर गामज़न हो जायें।

فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۸۹

"तो यक़ीनन अल्लाह तआला बख्शने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।"

तौबा का दरवाज़ा अभी बंद नहीं है।

आयत 90

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بَعْدَ اِيْمَانِهِمْ ثُمَّ ازْدَادُوْا كُفْرًا

"बेशक जिन लोगों ने कुफ़्र किया अपने ईमान के बाद, फिर वह अपने कुफ़्र में बढ़ते चले गये"

यानि हक़ को पहचान लेने के बाद, चाहे ज़बान से माना हो या ना माना हो, फिर अगर वह कुफ़्र करते हैं या ज़बान से मानने के बाद मुर्तद हो जाते हैं, और फिर वह अपने कुफ़्र में बढ़ते चले जाते हैं।

لَّنْ تُقْبَلَ تَوْبَتُھُمْ ۚ

"उनकी तौबा कभी क़ुबूल नहीं होगी।"

وَاُولٰۗىِٕكَ ھُمُ الضَّاۗلُّوْنَ ۹۰

"और वह यक़ीनन गुमराहों में से हैं।"

आयत 91

اِنَّ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡا وَ مَاتُوۡا وَ ہُمۡ کُفَّارٌ

“यक़ीनन वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया और मर गये इसी हाल में कि वह काफ़िर थे”

فَلَنۡ یُّقۡبَلَ مِنۡ اَحَدِہِمۡ مِّلۡءُ الۡاَرۡضِ ذَہَبًا وَّ لَوِ افۡتَدٰی بِہٖ ؕ

“तो उनमें से किसी से ज़मीन की मिक़दार के बराबर सोना भी फ़िदये में क़ुबूल नहीं किया जायेगा अगर वह पेश कर सके।”

ज़ाहिर है कि यह महाल है, नामुमकिन है, लेकिन यह बात समझाने के लिये कि वहाँ पर कोई फ़िदया नहीं है फ़रमाया कि अगर कोई ज़मीन के हुजम के बराबर सोना देकर भी छुटना चाहेगा तो नहीं छुट सकेगा। यह वही बात है जो सूरतुल बक़रह की आयत 48 और आयत 123 में फ़रमायी गयी कि उस दिन किसी से कोई फ़िदया नहीं लिया जायेगा।

اُولٰٓئِکَ لَہُمۡ عَذَابٌ اَلِیۡمٌ

“यह वह लोग हैं कि जिनके लिये दर्दनाक अज़ाब है”

وَّ مَا لَہُمۡ مِّنۡ نّٰصِرِیۡنَ ﴿۹۱﴾

“और नहीं होंगे उनके लिये कोई मदद करने वाले।”

आयात 92 से 101 तक

لَنۡ تَنَالُوا الۡبِرَّ حَتّٰی تُنۡفِقُوۡا مِمَّا تُحِبُّوۡنَ ۬ؕ وَ مَا تُنۡفِقُوۡا مِنۡ شَیۡءٍ فَاِنَّ اللّٰہَ بِہٖ عَلِیۡمٌ ﴿۹۲﴾ کُلُّ الطَّعَامِ کَانَ حِلًّا لِّبَنِیۡۤ اِ
سۡرَآءِیۡلَ اِلَّا مَا حَرَّمَ اِسۡرَآءِیۡلُ عَلٰی نَفۡسِہٖ مِنۡ قَبۡلِ اَنۡ تُنَزَّلَ التَّوۡرٰىۃُ ؕ قُلۡ فَاۡتُوۡا بِالتَّوۡرٰىۃِ فَاتۡلُوۡہَاۤ اِنۡ کُنۡتُمۡ
صٰدِقِیۡنَ ﴿۹۳﴾ فَمَنِ افۡتَرٰی عَلَی اللّٰہِ الۡکَذِبَ مِنۡۢ بَعۡدِ ذٰلِکَ فَاُولٰٓئِکَ ہُمُ الظّٰلِمُوۡنَ ﴿۹۴﴾ قُلۡ صَدَقَ اللّٰہُ ۟ فَاتَّبِعُوۡا مِلَّۃَ
اِبۡرٰہِیۡمَ حَنِیۡفًا ؕ وَ مَا کَانَ مِنَ الۡمُشۡرِکِیۡنَ ﴿۹۵﴾ اِنَّ اَوَّلَ بَیۡتٍ وُّضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِیۡ بِبَکَّۃَ مُبٰرَکًا وَّ ہُدًی لِّلۡعٰلَمِیۡنَ ﴿۹۶﴾
فِیۡہِ اٰیٰتٌۢ بَیِّنٰتٌ مَّقَامُ اِبۡرٰہِیۡمَ ۬ۚ وَ مَنۡ دَخَلَہٗ کَانَ اٰمِنًا ؕ وَ لِلّٰہِ عَلَی النَّاسِ حِجُّ الۡبَیۡتِ مَنِ اسۡتَطَاعَ اِلَیۡہِ سَبِیۡلًا ؕ وَ مَنۡ
کَفَرَ فَاِنَّ اللّٰہَ غَنِیٌّ عَنِ الۡعٰلَمِیۡنَ ﴿۹۷﴾ قُلۡ یٰۤاَہۡلَ الۡکِتٰبِ لِمَ تَکۡفُرُوۡنَ بِاٰیٰتِ اللّٰہِ ٭ۖ وَ اللّٰہُ شَہِیۡدٌ عَلٰی مَا تَعۡمَلُوۡنَ ﴿۹۸﴾ قُلۡ
یٰۤاَہۡلَ الۡکِتٰبِ لِمَ تَصُدُّوۡنَ عَنۡ سَبِیۡلِ اللّٰہِ مَنۡ اٰمَنَ تَبۡغُوۡنَہَا عِوَجًا وَّ اَنۡتُمۡ شُہَدَآءُ ؕ وَ مَا اللّٰہُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعۡمَلُوۡنَ ﴿۹۹﴾
یٰۤاَیُّہَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِنۡ تُطِیۡعُوۡا فَرِیۡقًا مِّنَ الَّذِیۡنَ اُوۡتُوا الۡکِتٰبَ یَرُدُّوۡکُمۡ بَعۡدَ اِیۡمَانِکُمۡ کٰفِرِیۡنَ ﴿۱۰۰﴾ وَ کَیۡفَ تَکۡفُرُوۡنَ
وَ اَنۡتُمۡ تُتۡلٰی عَلَیۡکُمۡ اٰیٰتُ اللّٰہِ وَ فِیۡکُمۡ رَسُوۡلُہٗ ؕ وَ مَنۡ یَّعۡتَصِمۡ بِاللّٰہِ فَقَدۡ ہُدِیَ اِلٰی صِرَاطٍ مُّسۡتَقِیۡمٍ ﴿۱۰۱﴾

आयत 92

لَنۡ تَنَالُوا الۡبِرَّ حَتّٰی تُنۡفِقُوۡا مِمَّا تُحِبُّوۡنَ ۬ؕ

“तुम हरगिज़ नहीं पहुँच सकते नेकी के मक़ाम को जब तक कि खर्च ना करो उसमें से जो तुम्हें पसंद है।”

आयतुल बिर्र (सूरतुल बक़रह:177) के ज़िमन में इस आयत का हवाला भी आया था कि नेकी के मज़ाहिर में से सबसे बड़ी और सबसे मुक़द्दम शय इंसानी हमदर्दी है, और इंसानी हमदर्दी में अपना वह माल खर्च करना मतलूब है जो खुद अपने

आपको महबूब हो। ऐसा माल जो रद्दी हो, दिल से उतर गया हो, बोसीदा हो गया हो वह किसी को देकर समझा जाये कि हमने हातिम ताई की क़ब्र पर लात मार दी है तो यह बजाये खुद हिमाक़त है।

وَمَا تُنۡفِقُوۡا مِنۡ شَیۡءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِیۡمٌ ﴿۹۲﴾

"और जो कुछ भी तुम खर्च करोगे अल्लाह उससे बाख़बर है।"

आयत 93

كُلُّ الطَّعَامِ كَانَ حِلًّا لِّبَنِیۡۤ اِسۡرَآءِیۡلَ

"खाने की सारी चीज़ें (जो शरीअते मुहम्मदी ﷺ में हलाल हैं) बनी इसराइल के लिये भी हलाल थीं"

اِلَّا مَا حَرَّمَ اِسۡرَآءِیۡلُ عَلٰی نَفۡسِهٖ مِنۡ قَبۡلِ اَنۡ تُنَزَّلَ التَّوۡرٰىةُ ؕ

"सिवाय उन चीज़ों के जिन्हें इसराइल (हज़रत याक़ूब अलै०) ने हराम ठहरा लिया था अपनी जान पर, इस से पहले कि तौरात नाज़िल हो।"

यहूदी शरीअते मुहम्मदी ﷺ पर ऐतराज़ करते थे कि इसमें बाज़ ऐसी चीज़ें हलाल क़रार दी गयी हैं जो शरीअते मूसवी अलै० में हराम थीं। मसलन उनके यहाँ ऊँट का गोश्त हराम था, लेकिन शरीअते मुहम्मदी ﷺ में यह हराम नहीं है। अगर यह भी आसमानी शरीअत है तो यह तगय्युर कैसे हो गया? यहाँ उसकी हक़ीक़त बताई जा रही है कि तौरात के नुज़ूल से क़ब्ल हज़रत याक़ूब अलै० ने तबई कराहत या किसी मर्ज़ के बाइस बाअज़ चीज़ें अपने लिये ममनूअ क़रार दे ली थीं जिनमें ऊँट का गोश्त भी शामिल था। जैसे नबी अकरम ﷺ ने अपनी दो अज़वाज की दिलजोई की खातिर शहद ना खाने की क़सम खा ली थी, जिस पर यह आयत नाज़िल हुई (सूरह तहरीम:1): {يٰۤاَيُّهَا النَّبِیُّ لِمَ تُحَرِّمُ مَاۤ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكَ ۚ تَبۡتَغِیۡ مَرۡضَاتَ اَزۡوَاجِكَ ؕ} हज़रत याक़ूब अलै० की औलाद ने बाद में इन चीज़ों को हराम समझ लिया, और यह चीज़ उनके यहाँ रिवाज के तौर पर चली आ रही थी। तो अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि इन चीज़ों की हुरमत तौरात में नाज़िल नहीं हुई। खाने-पीने की वह तमाम चीज़ें जो इस्लाम ने हलाल की हैं वह बनी इसराइल के लिये भी हलाल थीं, सिवाय उन चीज़ों के जिन्हें हज़रत याक़ूब अलै० ने अपनी ज़ाती नापसंद के बाइस अपने ऊपर हराम ठहरा लिया था, और यह बात तौरात के नुज़ूल से बहुत पहले की है। इसलिये कि हज़रत याक़ूब अलै० में और नुज़ूले तौरात में चार-पाँच सौ साल का फ़सल है।

قُلۡ فَاۡتُوۡا بِالتَّوۡرٰىةِ فَاتۡلُوۡهَاۤ اِنۡ كُنۡتُمۡ صٰدِقِیۡنَ ﴿۹۳﴾

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कहिये लाओ तौरात और उसको पढ़ो अगर तुम (अपने ऐतराज़ में) सच्चे हो।"

तौरात के अन्दर तो कहीं भी ऊँट के गोश्त की हुरमत मज़कूर नहीं है।

आयत 94

فَمَنِ افۡتَرٰی عَلَی اللّٰهِ الۡكَذِبَ مِنۡۢ بَعۡدِ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوۡنَ ﴿۹۴﴾

"पस जो लोग इसके बाद भी अल्लाह की तरफ़ झूठ मंसूब करते रहें तो वही लोग ज़ालिम हैं।"

आयत 95

قُلۡ صَدَقَ اللّٰهُ ۟

"कह दीजिये अल्लाह ने जो कुछ फ़रमाया है सच फ़रमाया है"

فَاتَّبِعُوۡا مِلَّةَ اِبۡرٰهِیۡمَ حَنِیۡفًا ؕ

"पस पैरवी करो मिल्लते इब्राहीम की जो यक्सु थे (या यक्सु होकर!)"

"حَنِيۡفًا" इब्राहीम का हाल है। अगर इसे "اِتَّبِعُوۡا" का हाल (बा-माअनी حَنِيۡفِيِّيۡنَ) माना जाये तो दूसरा तर्जुमा होगा। यानि यक्सु होकर, बाद की तमाम तक़सीमात से बुलन्दतर होकर, इब्राहीम अलै० के तरीक़े की पैरवी करो!

وَمَا كَانَ مِنَ الۡمُشۡرِكِيۡنَ ۝٩٥

"और वह मुशरिकीन में से नहीं थे।"

आयत 96

اِنَّ اَوَّلَ بَيۡتٍ وُّضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِىۡ بِبَكَّةَ

"यक़ीनन पहला घर जो लोगों के लिये बनाया गया (अल्लाह की इबादत के लिये) वही है जो मक्का में है"

"بَكَّةَ" और "مَكَّةَ" दरहक़ीक़त एक ही लफ़्ज़ के लिये दो तलफ़्फ़ुज़ (pronunciations) हैं।

مُبٰرَكًا وَّهُدًى لِّلۡعٰلَمِيۡنَ ۝٩٦

"बरकत वाला है और हिदायत का मरकज़ है तमाम जहान वालों के लिये।"

आयत 97

فِيۡهِ اٰيٰتٌۢ بَيِّنٰتٌ مَّقَامُ اِبۡرٰهِيۡمَ ۚ

"इसमें बड़ी वाज़ेह निशानियाँ हैं, जैसे मक़ामे इब्राहीम अलै०।"

सूरतुल बक़रह के निस्फ़े अव्वल के आखरी चार रुकूओं (15,16,17,18) में पहले हज़रत इब्राहीम अलै० और खाना काबा का ज़िक्र है, फिर बाक़ी सारी गुफ्तगू है। यहाँ सूरह आले इमरान के निस्फ़े अव्वल के तीसरे हिस्से में हज़रत इब्राहीम अलै० और खाना काबा का तज़किरा आख़िर में आया है। गोया मज़ामीन वही हैं, तरतीब बदल गयी है।

وَمَنۡ دَخَلَهٗ كَانَ اٰمِنًا ؕ

"और जो भी उसमें दाख़िल हो जाता है अमन में आ जाता है।"

जाहिलियत के बदतरीन दौर में भी बैतुल्लाह अमन का गहवारा था। पूरे अरब के अन्दर खूँरेज़ी होती थी, लेकिन हरमे काबा में अगर कोई अपने बाप के क़ातिल को भी देख लेता था तो उसे कुछ नहीं कहता था। हरम की यह रिवायात हमेशा से रही हैं और आज तक यह अल्लाह के फ़ज़लो करम से दारुल अमन है कि वहाँ पर अमन ही अमन है।

وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الۡبَيۡتِ مَنِ اسۡتَطَاعَ اِلَيۡهِ سَبِيۡلًا ؕ

"और अल्लाह का हक़ है लोगों पर कि वह हज करें उसके घर का, जो भी इस्तताअत रखता हो उसके सफ़र की।"

وَمَنۡ كَفَرَ فَاِنَّ اللّٰهَ غَنِىٌّ عَنِ الۡعٰلَمِيۡنَ ۝٩٧

"और जिसने कुफ़्र किया तो (वह जान ले कि) अल्लाह बे नियाज़ है तमाम जहान वालों से।"

नोट कीजिये की यहाँ लफ्ज़ "كَفَرَ" आया है। इसके मायने यह हैं कि जो कोई इस्तताअत के बावजूद हज नहीं करता वह गोया कुफ़्र करता है।

अगली आयत में अहले किताब को बड़े तीखे और झिंझोड़ने के से अंदाज़ में मुख़ातिब किया जा रहा है, जैसे किसी पर निगाहें गाड़ कर उससे बात की जाये।

आयत 98

قُلْ يَاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ۖ

"कह दीजिये ऐ अहले किताब! तुम क्यों अल्लाह की आयात का इन्कार कर रहे हो?"

وَاللّٰهُ شَهِيْدٌ عَلٰى مَا تَعْمَلُوْنَ ﴿٩٨﴾

"जबकि जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उसे देख रहा है।"

आयत 99

قُلْ يَاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ

"कह दीजिये ऐ किताब वालो! तुम क्यों रोकते हो अल्लाह के रास्ते से उसको जो ईमान ले आता है"

تَبْغُوْنَهَا عِوَجًا

"तुम उसमें कजी पैदा करना चाहते हो"

तुम चाहते हो कि जो अहले ईमान हैं वह भी टेढ़े रास्ते पर चलें। चुनाँचे तुम साज़िशें करते हो कि सुबह को ईमान लाओ और शाम को काफ़िर हो जाओ ताकि अहले ईमान के दिलों में भी वस्वसे और दगदगे पैदा हो जायें।

وَّاَنْتُمْ شُهَدَآءُ ۭ

"हालाँकि तुम खुद गवाह हो!"

तुम राहे रास्त को पहचानते हो और जो कुछ कर रहे हो जानते-बूझते कर रहे हो।

وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُوْنَ ﴿٩٩﴾

"और अल्लाह गाफिल नहीं है उससे जो तुम कर रहे हो।"

लेकिन इन तमाम साज़िशों के जवाब में अहले ईमान से फ़रमाया गया है:

आयत 100

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوْا فَرِيْقًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ يَرُدُّوْكُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ كٰفِرِيْنَ ﴿١٠٠﴾

"ऐ वह लोगों जो ईमान लाये हो! अगर तुम इन अहले किताब के किसी गिरोह की बात मान लोगे तो यह तुमको तुम्हारे ईमान के बाद फिर कुफ़्र की हालत में लौटा कर ले जायेंगे।"

आयत 101

وَكَيْفَ تَكْفُرُوْنَ وَاَنْتُمْ تُتْلٰى عَلَيْكُمْ اٰيٰتُ اللّٰهِ وَفِيْكُمْ رَسُوْلُهٗ ۭ

"और (ज़रा सोचो तो सही) यह कैसे हो सकता है कि तुम फिर कुफ़्र करने लगो जबकि तुम्हें अल्लाह की आयात पढ़ कर सुनाई जा रही हैं और तुम्हारे अन्दर उसका रसूल मौजूद है।"

तुम्हारे दरमियान मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ ब-नफ्से-नफ़ीस तुम्हारी रहनुमाई के लिये मौजूद हैं और तुम्हें अल्लाह तआला की आयात पढ़-पढ़ कर सुना रहे हैं। इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि मदीना में उलमाये यहूद का कितना असर था। औस और खजरज के लोग उनसे मरऊब थे क्योंकि यह अनपढ़ लोग थे, इनके पास कोई किताब, कोई शरीअत और कोई क़ानून नहीं था, जबकि यहूद साहिबे किताब और साहिबे शरीअत थे, उनके यहाँ उलमा थे। लिहाज़ा औस और खजरज के जो लोग इस्लाम ले आये थे उनके बारे में अन्देशा होता था कि कहीं यहूदी की रेशा दवानियों का शिकार ना हो जायें। इस क़िस्म के खतरे से बचने की तदबीर भी बता दी गयी:

"और जो कोई अल्लाह से चिमट जाये उसको तो हिदायत हो गयी सिराते मुस्तक़ीम की तरफ़।"

وَمَنْ يَّعْتَصِمْ بِاللّٰهِ فَقَدْ هُدِيَ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ ١٠١

जो कोई अल्लाह की पनाह में आ जाये, अल्लाह का दामन मज़बूती से थाम ले उसे तो ज़रूर सिराते मुस्तक़ीम की हिदायत मिलेगी और वह ज़लालत व गुमराही के ख़तरात से महफ़ूज़ हो जायेगा। जैसे शीर ख्वार बच्चे को कोई ख़तरा महसूस हो तो वह दौड़ कर आयेगा और अपनी माँ के साथ चिमट जायेगा। अब वह यह समझेगा कि मैं मज़बूत क़िले में आ गया हूँ, अब मुझे कोई कुछ नहीं कह सकता। वह नहीं जानता कि माँ बेचारी तमाम ख़तरात से उसकी हिफ़ाज़त नहीं कर सकती। उसे क्या पता कि कब कोई दरिन्दा सिफ्त इन्सान उसे माँ की गौद से खींच कर उछाले और किसी बल्लम या नेज़े की आनी में पिरो दे। बहरहाल बच्चा तो यही समझता है कि अब मैं माँ की गौद में आ गया हूँ तो महफ़ूज़ पनाह में आ गया हूँ। अल्लाह का दामन वाक़िअतन महफ़ूज़ पनाहगाह है, और जो कोई उसके साथ चिमट जाता है वह गुमराही की ठोकरों से महफ़ूज़ हो जाता है और जादेह मुस्तक़ीम पर गामज़न हो जाता है।

اللهم ربّنا اجعلنا منهم! آمين يا ربّ العالمين!!

आयात 102 से 109 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ حَقَّ تُقٰتِهٖ وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۝ ١٠٢ وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا
تَفَرَّقُوْا ۠ وَاذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَاۗءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهٖٓ اِخْوَانًا ۚ وَكُنْتُمْ عَلٰي شَفَا
حُفْرَةٍ مِّنَ النَّارِ فَاَنْقَذَكُمْ مِّنْهَا ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝ ١٠٣ وَلْتَكُنْ مِّنْكُمْ اُمَّةٌ يَّدْعُوْنَ اِلَى
الْخَيْرِ وَيَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ ۭ وَاُولٰۗىِٕكَ ھُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ۝ ١٠٤ وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ تَفَرَّقُوْا وَاخْتَلَفُوْا
مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَھُمُ الْبَيِّنٰتُ ۭ وَاُولٰۗىِٕكَ لَھُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝ ١٠٥ يَّوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوْهٌ وَّتَسْوَدُّ وُجُوْهٌ ۚ فَاَمَّا الَّذِيْنَ
اسْوَدَّتْ وُجُوْھُھُمْ ۣ اَكَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ۝ ١٠٦ وَاَمَّا الَّذِيْنَ ابْيَضَّتْ وُجُوْھُھُمْ
فَفِيْ رَحْمَةِ اللّٰهِ ۭ ھُمْ فِيْھَا خٰلِدُوْنَ ۝ ١٠٧ تِلْكَ اٰيٰتُ اللّٰهِ نَتْلُوْھَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ ۭ وَمَا اللّٰهُ يُرِيْدُ ظُلْمًا لِّلْعٰلَمِيْنَ ۝ ١٠٨ وَلِلّٰهِ مَا فِي
السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ۝ ١٠٩

अब सूरह आले इमरान का निस्फ़े सानी शुरू हो रहा है, जिसका पहला हिस्सा दो रुकूओं पर मुश्तमिल है। आपने यह मुशाबेहत भी नोट कर ली होगी कि सूरतुल बक़रह के निस्फ़े अव्वल में भी एक मरतबा {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا} से ख़िताब था: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقُوْلُوْا رَاعِنَا وَقُوْلُوا انْظُرْنَا وَاسْمَعُوْا} इसी तरह सूरह आले इमरान के निस्फ़े अव्वल में भी एक आयत ऊपर आ चुकी है (आयत:100): {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوْا فَرِيْقًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ يَرُدُّوْكُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ كٰفِرِيْنَ} लेकिन मुस्लमानों से असल ख़िताब ग्याहरवे रुकूअ से शुरू हो रहा है और यहाँ पर असल में उम्मत को एक सह निकाती लाहिया (three pronged strategy) अमल दिया जा रहा है। ज़ाहिर है कि यह उम्मत अब क़यामत तक क़ायम रहने वाली है, और इसमें ज़वाल भी आयेगा और अल्लाह तआला ऊलूल अज़्म और बा-हिम्मत लोगों को भी पैदा करेगा, जैसा कि हमें मालूम है कि मुजद्दिदे दीने उम्मत हर सदी के अन्दर उठते रहे। लेकिन जब भी तजदीदे दीन का कोई काम हो, दीन को अज़सरे नौ तरो-ताज़ा करने की कोशिश हो, दीन को क़ायम करने की जद्दो-जहद हो तो उसका एक लाहिया अमल होगा। वह लाहिया अमल सूरह आले इमरान की इन तीन आयात (102,103,104) में निहायत जामियत के साथ सामने

आया है। यह हुस्ने इत्तेफ़ाक़ है कि यह भी तीन आयात हैं जैसे सूरतुल अस्र की तीन आयात हैं, जो निहायत जामेअ हैं। इन आयात के मज़ामीन पर मेरी एक किताब भी मौजूद है "उम्मते मुस्लिमा के लिये सह निकाती लाहिया अमल" और उसका अंग्रेज़ी में भी तर्जुमा हो चुका है। इस लाहिया अमल का पहला नुक्ता यह है कि जब भी कोई काम करना है तो सबसे पहले अफ़राद की शख्सियत साज़ी, किरदार साज़ी करना होगी। चुनाँचे फ़रमाया:

आयत 102

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ حَقَّ تُقٰتِهٖ

"ऐ अहले ईमान! अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो जितना कि उसके तक़वे का हक़ है"

وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۝۱۰۲

"और तुम्हें हरगिज़ मौत ना आने पाये मगर फ़रमाबरदारी की हालत में।"

क़ुरान मजीद में तक़वे की तलक़ीन के लिये यह सबसे गाढ़ी आयत है। इस पर सहाबा رضی الله عنهم घबरा गये कि या रसूल अल्लाह ﷺ! अल्लाह के तक़वे का हक़ कौन अदा कर सकता है? फिर जब सूरह तग़ाबुन की यह आयत नाज़िल हुई कि {فَاتَّقُوا اللّٰهَ مَا اسْتَطَعْتُمْ} (आयत:16) "अपनी इम्कानी हद तक अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो" तब उनकी जान में जान आयी। तक़वे के हुक्म के साथ ही यह फ़रमाया कि "मत मरना मगर हालते फ़रमाबरदारी में।" इसके मायने यह हैं कि कोई पता नहीं किस लम्हे मौत आ जाये, लिहाज़ा तुम्हारा कोई लम्हा नाफ़रमानी में ना गुज़रे, मबादा मौत का हाथ उसी वक़्त आकर तुम्हें दबोच ले। अगर पहले इस तरह की शख्सियतें ना बनी हो तो इज्तमाई इस्लाह का कोई काम नहीं हो सकता। इसलिये पहले अफ़राद की किरदार साज़ी पर ज़ोर दिया गया। उसके बाद दूसरा मरहला यह है कि एक इज्तमाइयत इख़्तियार करो।

आयत 103

وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا تَفَرَّقُوْا

"अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से थाम लो मिल-जुल कर और तफ़रक़े में ना पड़ो।"

याद रहे कि इससे पहले आयत 101 इन अल्फ़ाज़ पर ख़त्म हुई है: {وَمَنْ يَّعْتَصِمْ بِاللّٰهِ فَقَدْ هُدِيَ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ} "और जो कोई अल्लाह तआला से चिमट जाये (अल्लाह की हिफ़ाज़त में आ जाये) उसको तो हिदायत हो गई सिराते मुस्तक़ीम की तरफ।" सूरतुल हज की आखरी आयत में भी यह अल्फ़ाज़ आया है: {وَاعْتَصِمُوْا بِاللّٰهِ} "और अल्लाह से चिमट जाओ!" अब अल्लाह की हिफ़ाज़त में कैसे आया जाये? अल्लाह से कैसे चिमटें? उसके लिये फ़रमाया: {وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ} कि अल्लाह की रस्सी से चिमट जाओ, अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से थाम लो। और यह अल्लाह की रस्सी कौनसी है? मुतअद्दिद अहादीस से वाज़ेह होता है कि यह "क़ुरान" है। एक तरफ़ इन्सान में तक़वा पैदा हो, और दूसरी तरफ़ उसमें इल्म आना चाहिये, क़ुरान का फ़हम पैदा होना चाहिये, क़ुरान के नज़रियात को समझना चाहिये, क़ुरान की हिकमत को समझना चाहिये। इंसानों में इज्तमाइयत जानवरों के गल्लों की तरह नहीं हो सकती कि भेड़-बकरियों का एक बड़ा रेवड़ है और एक चरवाहा एक लकड़ी लेकर सबको हाँक रहा है। इंसानों को जमा करना है तो उनके ज़हन एक जैसे बनाने होंगे, उनकी सोच एक बनानी होगी। यह हैवाने आक़िल हैं, बाशऊर लोग हैं। इनकी सोच एक हो, नज़रियात एक हो, मक़ासिद एक हों, हम-आहंगी हो, नुक्ता-ए-नज़रिया एक हो तभी तो यह जमा होंगे। इसके लिये वह चीज़ चाहिये जो उनमें यकरंगी ख्याल, यकरंगी नज़र, यकजहती और मक़ासिद की हम-आहंगी पैदा कर दे, और वह क़ुरान है, जो "हब्लुल्लाह" है।

हज़रत अली رضی الله عنه से मरवी तवील हदीस में क़ुरान हकीम के बारे में रसूल अल्लाह ﷺ के अल्फ़ाज़ नक़ल हुए हैं: ((وَهُوَ حَبْلُ اللّٰهِ الْمَتِيْنُ))(1) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद رضی الله عنه से रिवायत है कि आँहुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया:

كِتَابُ اللّٰهِ حَبْلٌ مَمْدُوْدٌ مِنَ السَّمَاءِ اِلَى الْاَرْضِ

"अल्लाह की किताब (को थामे रखना), यही वह मज़बूत रस्सी है जो आसमान से ज़मीन तक तनी हुई है।"

एक और हदीस में फ़रमाया:

اَبْشِرُوْا اَبْشِرُوْا---- فَاِنَّ هٰذَا الْقُرْآنَ سَبَبٌ، طَرَفُهٗ بِيَدِ اللّٰهِ وَطَرَفُهٗ بِاَيْدِيْكُمْ

"खुश हो जाओ, खुशियाँ मनाओ...... यह क़ुरान एक वास्ता है, जिसका एक सीरा अल्लाह के हाथ में है और एक सीरा तुम्हारे हाथ में है।"

चुनाँचे तक़र्रुब इलल्लाह का ज़रिया भी क़ुरान है, और मुस्लमानों को आपस में जोड़ कर रखने का ज़रिया भी क़ुरान है। यही वजह है कि हमारी दावत व तहरीक का मिम्बा व सरचश्मा और मन्ना (आधार) व मदार (क्षेत्र) क़ुरान है। इसका उन्वान ही "दावत रुजूअ इलल क़ुरान" है। मैंने अपनी पूरी ज़िन्दगी अल्हम्दुलिल्लाह इसी काम में खपाई है, और इसी के ज़रिये से अंजुमन हाय खुद्दामुल क़ुरान और क़ुरान अकेडमीज़ का सिलसिला क़ायम हुआ। इन अकेडमीज़ में "एक साला रुजूअ इलल क़ुरान कोर्स" बरसहा बरस से जारी है। इस कोर्स में जदीद तालीम याफ्ता लोग दाखिला लेते हैं, जो एम.ए./एम.एस.सी. होते हैं, बाज़ पी.एच.डी. कर चुके होते हैं, डॉक्टर और इंजिनियर भी आते हैं। वह एक साल लगा कर अरबी सीखते हैं ताकि क़ुरान को समझ सकें। ज़ाहिर है जब क़ुरान मजीद के साथ आपकी वाबस्तगी होगी तो फिर आप दीन के उस रुख पर आगे चलेंगे। तो यह दूसरा नुक्ता हुआ कि अल्लाह की रस्सी को मिल-जुल कर मज़बूती से थाम लो और तफ़रक़े में ना पड़ो।

وَاذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَآءً

"और ज़रा याद करो अल्लाह का जो ईनाम जो तुम पर हुआ जबकि तुम एक-दूसरे के दुश्मन थे"

فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ

"तो अल्लाह ने तुम्हारे दिलों के अन्दर उल्फ़त पैदा कर दी"

فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهٖٓ اِخْوَانًا

"पस तुम अल्लाह के फ़ज़लो करम से भाई-भाई बन गये।"

यहाँ अव्वलीन मुख़ातिब अन्सार हैं। उनके जो दो क़बीले थे औस और खज़रज वह आपस में लड़ते आ रहे थे। सौ बरस से खानदानी दुश्मनियाँ चली आ रही थीं और क़त्ल के बाद क़त्ल का सिलसिला जारी था। लेकिन जब ईमान आ गया, इस्लाम आ गया, अल्लाह की किताब आ गयी, मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ आ गये तो अब वह शेर ओ शुक्र हो गये, उनके झगड़े ख़त्म हो गये। इसी तरह पूरे अरब के अन्दर ग़ारतगरी होती थी, लेकिन अब अल्लाह ने उसे दारुल अमन बना दिया।

وَكُنْتُمْ عَلٰى شَفَا حُفْرَةٍ مِّنَ النَّارِ

"और तुम तो आग के गढ्ढे के किनारे तक पहुँच गये थे" (बस उसमें गिरने ही वाले थे)

فَاَنْقَذَكُمْ مِّنْهَا

"तो अल्लाह ने तुम्हें उससे बचा लिया।"

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝١٠٣

"इसी तरह अल्लाह तुम्हारे लिये अपनी आयात वाज़ेह कर रहा है ताकि तुम राह पाओ (और सही राह पर क़ायम रहो)।"

उम्मते मुस्लिमा के लिये सह निकाती लाहिया अमल के यह दो नुक्ते बयान हो गये। सबसे पहले अफ़राद के किरदार की तामीर, उन्हें तक़वा और फरमाबरदारी जैसे औसाफ़ से मुत्तसिफ (तैयार) करना---और फिर उनको एक जमीअत, तंज़ीम या जमाअत की सूरत में मुनज़्ज़म करना, और उस तंज़ीम का मानवी महवर क़ुरान मजीद होना चाहिये, जो हब्लुल्लाह है। बक़ौल अल्लामा इक़बाल: *"अ-तसा मश कुन कि हब्लुल्लाह ऊस्त!"* इसको मज़बूती से थामो कि यह हब्लुल्लाह है! इस जमाअत साज़ी का फ़ितरी तरीक़ा भी हम इसी सूरत की आयत 52 के ज़ेल में पढ़ चुके हैं कि कोई अल्लाह का बंदा दाई बन कर खड़ा हो और { مَنْ اَنْصَارِيْٓ اِلَى اللّٰهِ } की आवाज़ लगाये कि मैं तो इस रास्ते पर चल रहा हूँ, अब कौन है जो मेरे साथ इस रास्ते पर आता है और अल्लाह की राह में मेरा मददगार बनता है? ऐसी जमीअत जब वजूद में आयेगी तो वह क्या करेगी? इस ज़िमन में यह तीसरी आयत अहमतरीन है:

आयत 104

وَلۡتَكُنۡ مِّنۡكُمۡ اُمَّةٌ يَّدۡعُوۡنَ اِلَى الۡخَيۡرِ وَيَاۡمُرُوۡنَ بِالۡمَعۡرُوۡفِ وَيَنۡهَوۡنَ عَنِ الۡمُنۡكَرِ‌ؕ

"और तुम में से एक जमाअत ऐसी ज़रूर होनी चाहिये जो खैर की तरफ़ दावत दे, नेकी का हुक्म देती रहे और बदी से रोकती रहे।"

उस जमाअत के करने के तीन काम बताये गये हैं, जिनमें अव्वलीन दावत इलल खैर है, और वाज़ेह रहे कि सबसे बड़ा खैर यह क़ुरान है।

وَاُولٰٓـئِكَ هُمُ الۡمُفۡلِحُوۡنَ ۝١٠٤

"और यही लोग फ़लाह पाने वाले हैं।"

यहाँ लफ्ज़ "مِّنۡكُمۡ" बड़ा मायने खेज़ है कि तुम में से एक ऐसी उम्मत वजूद में आनी चाहिये। गोया एक तो बड़ी उम्मत है उम्मते मुस्लिमा, वह तो एक सौ पचास करोड़ नफ़ूस पर मुश्तमिल है, जो ख्वाबे गफ़लत में मदहोश है, अपने मंसब को भूले हुए हैं, दीन से दूर हैं। लिहाज़ा इस उम्मत के अन्दर एक छोटी उम्मत यानि एक जमाअत वजूद में आये जो "जागो और जगाओ" का फ़रीज़ा सर अंजाम दे। अल्लाह ने तुम्हें जागने की सलाहियत दे दी है, अब औरों को जगाओ और उसके लिये ताक़त फ़राहम करो, एक मुनज़्ज़म जमाअत बनाओ! फ़रमाया कि यही लोग फ़लाह पाने वाले हैं। वह बड़ी उम्मत जो करोड़ों अफ़राद पर मुश्तमिल है और यह काम नहीं करती वह अगर फ़लाह और निजात की उम्मीद रखती है तो यह एक उम्मीद मौहूम है। फ़लाह पाने वाले सिर्फ़ यह लोग होंगे जो तीन काम करेंगे: (1) दावत इलल खैर (2) अम्र बिल मारूफ़ (3) नही अनिल मुन्कर। मैंने "मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ" के मराहिल व मदारिज (स्तिथि) के ज़िमन में भी यह बात वाज़ेह की है कि इस्लामी इन्क़लाब के लिये आखरी अक़दाम भी "नही अनिल मुन्कर बिल यद" होगा। इसलिये कि हदीस में रसूल अल्लाह ﷺ ने नही अनिल मुन्कर के तीन मरातिब बयान किये हैं। हज़रत अबु सईद ख़ुदरी रज़ि० से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

مَنۡ رَاٰى مِنۡكُمۡ مُنۡكَرًا فَلۡيُغَيِّرۡهُ بِيَدِهٖ، فَاِنۡ لَمۡ يَسۡتَطِعۡ فَبِلِسَانِهٖ، فَاِنۡ لَمۡ يَسۡتَطِعۡ فَبِقَلۡبِهٖ، وَذٰلِكَ اَضۡعَفُ الۡاِيۡمَانِ

"तुम में से जो कोई किसी मुन्कर को देखे उसका फ़र्ज़ है कि उसे ज़ोरे बाज़ू से रोक दे। पस अगर इसकी ताक़त नहीं है तो ज़बान से रोके। फिर अगर इसकी भी हिम्मत नहीं है तो दिल में बुराई से नफ़रत ज़रूर रखे। और यह ईमान का कमज़ोर तरीन दर्जा है।"

अगर दिल में नफ़रत भी ख़त्म हो गई है तो समझ लो कि मता-ए-ईमान रुख्सत हो गयी है। बक़ौल इक़बाल:

वाये नाकामी मता-ए-कारवाँ जाता रहा
कारवाँ के दिल से अहसास-ए-ज़ियाँ जाता रहा!

हाँ, दिल में नफ़रत है तो अगला क़दम उठाओ। ज़बान से कहना शुरू करो कि भाई यह चीज़ गलत है, अल्लाह ने इसको हराम ठहराया है, यह काम मत करो। लेकिन इसके साथ-साथ अपनी एक ताक़त बनाते जाओ। एक जमाअत बनाओ, क़ुव्वत मुज्तमअ करो। जब वह ताक़त जमा हो जाये तो फिर खड़े हो जाओ कि अब हम यह गलत काम नहीं करने देंगे। फिर वह होगा "नही अनिल मुन्कर बिल यद" यानि ताक़त के साथ बुराई को रोक देना। और यह होगा इन्क़लाब का आखरी मरहला।

तो इन तीन आयात के अन्दर अज़ीम हिदायत है, इन्क़लाब का पूरा लाहिया अमल मौजूद है, बल्कि इसी में मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ का जो आखरी अक़दामी अमल है वह भी पोशीदा है।

आयत 105

وَلَا تَكُوۡنُوۡا كَالَّذِيۡنَ تَفَرَّقُوۡا وَاخۡتَلَفُوۡا مِنۡۢ بَعۡدِ مَا جَآءَهُمُ الۡبَيِّنٰتُ‌ؕ

"और उन लोगों की तरह ना हो जाना जो फिरक़ो में बंट गये और उन्होंने इख्तिलाफ़ पैदा कर लिये इसके बाद कि उनके पास वाज़ेह तालीमात आ गयी थीं।"

وَاُولٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ١٠٥

"और उन्हीं लोगों के लिये बहुत बड़ा अज़ाब है।"

आयत 106

يَّوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوْهٌ وَّتَسْوَدُّ وُجُوْهٌ

"(क़यामत के दिन) जिस दिन बाज़ चेहरे बड़े रोशन और ताबनाक होंगे और बाज़ चेहरे सियाह होंगे।"

فَاَمَّا الَّذِيْنَ اسْوَدَّتْ وُجُوْهُهُمْ

"तो जिन लोगों के चेहरे सियाह होंगे (उनसे पूछा जायेगा)"

اَكَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ

"क्या तुम अपने ईमान के बाद कुफ़्र में लौट गये थे?"

हिदायत के आने के बाद तुम लोग तफ़रक़े में पड़ गये थे और हब्लुल्लाह को छोड़ दिया था।

فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ١٠٦

"तो अब अज़ाब का मज़ा चखो उस कुफ़्र के बाइस जो तुम करते रहे थे।"

आयत 107

وَاَمَّا الَّذِيْنَ ابْيَضَّتْ وُجُوْهُهُمْ فَفِيْ رَحْمَةِ اللّٰهِ

"और जिनके चेहरे रोशन और ताबनाक होंगे तो वह अल्लाह की रहमत में होंगे।"

هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ١٠٧

"वह उसी में हमेशा-हमेश रहेंगे।"

आयत 108

تِلْكَ اٰيٰتُ اللّٰهِ نَتْلُوْهَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ

"यह अल्लाह की आयात हैं जो हम आपको पढ़ कर सुना रहे हैं हक़ के साथ।"

وَمَا اللّٰهُ يُرِيْدُ ظُلْمًا لِّلْعٰلَمِيْنَ ١٠٨

"और अल्लाह तआला तो जहान वालों के लिये ज़ुल्म का इरादा नहीं रखता।"

लोग अपने ऊपर खुद ज़ुल्म करते हैं, खुद गलत रास्ते पर पड़ते हैं और फिर उसकी सज़ा उन्हें दुनिया और आख़िरत में भुगतनी पड़ती है।

आयत 109

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ

"और अल्लाह ही के लिये है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।"

وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ١٠٩

"और बिल आखिर सारे मामलात अल्लाह ही की तरफ़ लौटाये जायेंगे।"

क़ुरान हकीम में अहम मबाहिस के बाद अक्सर इस तरह की आयात आती हैं। यह गोया concluding remarks होते हैं।

आयात 110 से 120 तक

كُنْتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ تَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَتُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ ؕ وَلَوْ اٰمَنَ اَهْلُ الْكِتٰبِ
لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ ؕ مِنْهُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ وَاَكْثَرُهُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿۱۱۰﴾ لَنْ يَّضُرُّوْكُمْ اِلَّاۤ اَذًى ؕ وَاِنْ يُّقَاتِلُوْكُمْ يُوَلُّوْكُمُ
الْاَدْبَارَ ۟ ثُمَّ لَا يُنْصَرُوْنَ ﴿۱۱۱﴾ ضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ اَيْنَ مَا ثُقِفُوْۤا اِلَّا بِحَبْلٍ مِّنَ اللّٰهِ وَحَبْلٍ مِّنَ النَّاسِ وَبَآءُوْ بِغَضَبٍ
مِّنَ اللّٰهِ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الْمَسْكَنَةُ ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَيَقْتُلُوْنَ الْاَنْۢبِيَآءَ بِغَيْرِ حَقٍّ ؕ ذٰلِكَ بِمَا
عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ﴿۱۱۲﴾ لَيْسُوْا سَوَآءً ؕ مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اُمَّةٌ قَآئِمَةٌ يَّتْلُوْنَ اٰيٰتِ اللّٰهِ اٰنَآءَ الَّيْلِ وَهُمْ يَسْجُدُوْنَ
﴿۱۱۳﴾ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَيَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُسَارِعُوْنَ فِى الْخَيْرٰتِ ؕ وَاُولٰٓئِكَ مِنَ
الصّٰلِحِيْنَ ﴿۱۱۴﴾ وَمَا يَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَلَنْ يُّكْفَرُوْهُ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالْمُتَّقِيْنَ ﴿۱۱۵﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَنْ تُغْنِىَ عَنْهُمْ
اَمْوَالُهُمْ وَلَاۤ اَوْلَادُهُمْ مِّنَ اللّٰهِ شَيْـــًٔا ؕ وَاُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ﴿۱۱۶﴾ مَثَلُ مَا يُنْفِقُوْنَ فِىْ هٰذِهِ
الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا كَمَثَلِ رِيْحٍ فِيْهَا صِرٌّ اَصَابَتْ حَرْثَ قَوْمٍ ظَلَمُوْۤا اَنْفُسَهُمْ فَاَهْلَكَتْهُ ؕ وَمَا ظَلَمَهُمُ اللّٰهُ وَلٰكِنْ اَنْفُسَهُمْ
يَظْلِمُوْنَ ﴿۱۱۷﴾ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْا بِطَانَةً مِّنْ دُوْنِكُمْ لَا يَاْلُوْنَكُمْ خَبَالًا ؕ وَدُّوْا مَا عَنِتُّمْ ۚ قَدْ بَدَتِ الْبَغْضَآءُ
مِنْ اَفْوَاهِهِمْ ۖۚ وَمَا تُخْفِىْ صُدُوْرُهُمْ اَكْبَرُ ؕ قَدْ بَيَّنَّا لَكُمُ الْاٰيٰتِ اِنْ كُنْتُمْ تَعْقِلُوْنَ ﴿۱۱۸﴾ هٰۤاَنْتُمْ اُولَآءِ تُحِبُّوْنَهُمْ وَلَا
يُحِبُّوْنَكُمْ وَتُؤْمِنُوْنَ بِالْكِتٰبِ كُلِّهٖ ۚ وَاِذَا لَقُوْكُمْ قَالُوْۤا اٰمَنَّا ۖۚ وَاِذَا خَلَوْا عَضُّوْا عَلَيْكُمُ الْاَنَامِلَ مِنَ الْغَيْظِ ؕ قُلْ مُوْتُوْا
بِغَيْظِكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ﴿۱۱۹﴾ اِنْ تَمْسَسْكُمْ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ ۫ وَاِنْ تُصِبْكُمْ سَيِّئَةٌ يَّفْرَحُوْا بِهَا ؕ وَاِنْ
تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا لَا يَضُرُّكُمْ كَيْدُهُمْ شَيْـــًٔا ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ﴿۱۲۰﴾

आयत 110

كُنْتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ

"तुम वह बेहतरीन उम्मत हो जिसे लोगों के लिये बरपा किया गया है"

यहाँ उम्मते मुस्लिमा की ग़र्ज़े तासीस (reason to establish) बयान की जा रही है। यानि यह पूरी उम्मते मुस्लिमा इस मक़सद के लिये बनायी गयी थी। यह दूसरी बात है कि उम्मते मुस्लिमा अपना मक़सदे हयात भूल जाये। ऐसी सूरत में उम्मत में से जो भी जाग जायें वह दूसरों को जगा कर "उम्मत के अन्दर एक उम्मत" (Ummah within Ummah) बनायें और मज़कूरा बाला तीन काम करें। लेकिन हक़ीक़त में तो मज्मुई तौर पर इस उम्मते मुस्लिमा का फ़र्ज़े मंसबी ही यही है।

क़ब्ल अज़ हम सूरतुल बक़रह की आयत 143 में उम्मते मुस्लिमा का फ़र्ज़े मंसबी बाअल्फ़ाज़ पढ़ चुके हैं:

{وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا ؕ}

सूरह आले इमरान की आयत ज़ेरे मुताअला इसी के हमवज़न और हमपल्ला आयत है। फ़रमाया: "तुम बेहतरीन उम्मत हो जिसे लोगों के लिये निकाला गया है।" दुनिया की दीगर क़ौमें अपने लिये ज़िन्दा रहती हैं। उनके पेशे नज़र अपनी तरक्क़ी,

अपनी बेहतरी, अपनी बहबूद (कल्याण) और दुनिया में अपनी इज़्ज़त व अज़मत होती है, लेकिन तुम वह बेहतरीन उम्मत हो जिसे लोगों की रहनुमाई के लिये मबऊस किया गया है:

हम तो जीते हैं कि दुनिया में तेरा नाम रहे
कहीं मुमकिन है कि साक़ी ना रहे जाम रहे!

मुस्लमान की ज़िन्दगी का मक़सद ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को हिदायत की तरफ़ बुलाना और लोगों को जहन्नम की आग से बचाने की कोशिश करना है। तुम्हें जीना है उनके लिये, वह जीते हैं अपने लिये। तुम्हें निकाला गया है, बरपा किया गया है लोगों के लिये।

تَأْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ

"तुम हुक्म करते हो नेकी का"

وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ

"और तुम रोकते हो बदी से"

وَتُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ

"और तुम ईमान रखते हो अल्लाह पर।"

नबी अकरम ﷺ के दौर में पूरी उम्मते मुस्लिमा की यह कैफ़ियत थी। और वह जो पहले बताया गया है कि एक जमाअत वजूद में आये (आयत 104) वह उस वक़्त के लिये है जब उम्मत अपने मक़सदे वजूद को भूल गयी हो। तो ज़ाहिर बात है जिनको होश आ जाये वह लोगों को जगायें और एक जमीअत फ़राहम करें।

وَلَوْ اٰمَنَ اَهْلُ الْكِتٰبِ لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ

"और अगर अहले किताब भी ईमान ले आते तो यह उनके हक़ में बेहतर था।"

مِنْهُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ

"उनमें से कुछ तो ईमान वाले हैं"

इससे मुराद वह लोग भी हो सकते हैं जो उस वक़्त तक यहूदियों या नस्रानियों में से ईमान ला चुके थे, और वह भी जिनके अन्दर बिल क़ुव्वा (potentially) ईमान मौजूद था और अल्लाह को मालूम था कि वह कुछ अर्से के बाद ईमान ले आयेंगे।

وَاَكْثَرُهُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝١١٠

"लेकिन उनकी अक्सरियत नाफ़रमानों पर मुश्तमिल है।"

वही मामला जो आज उम्मते मुस्लिमा का हो चुका है। आज उम्मत की अक्सरियत का जो हाल है वह सबको मालूम है।

आयत 111

لَنْ يَّضُرُّوْكُمْ اِلَّآ اَذًى

"(ऐ मुस्लमानों!) यह तुम्हें कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगे सिवाय थोडी सी कोफ्त के।"

यह तुम्हारे लिये थोड़ी सी ज़बान दराज़ी और कोफ्त का सबब तो बनते रहेंगे, लेकिन यह बिल फ़अल तुम्हें कोई ज़रर नहीं पहुँचा सकेंगे।

وَاِنْ يُّقَاتِلُوْكُمْ يُوَلُّوْكُمُ الْاَدْبَارَ

"और अगर यह तुमसे जंग करेंगे तो पीठ दिखा देंगे।"

इनमें जुर्रात नहीं है, यह बुज़दिल हैं, तुम्हारा मुक़ाबला नहीं कर सकेंगे।

ثُمَّ لَا يُنْصَرُوْنَ ۝١١١

"फिर उनकी मदद नहीं की जायेगी।"

यह ऐसे बेबस होंगे कि इनको कहीं से मदद भी नहीं मिल सकेगी।

आयत 112

ضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ اَيْنَ مَا ثُقِفُوْٓا

"उनके ऊपर ज़िल्लत थोप दी गयी है जहाँ कहीं भी पाये जायें"

اِلَّا بِحَبْلٍ مِّنَ اللّٰهِ وَحَبْلٍ مِّنَ النَّاسِ

"सिवाये यह कि (उन्हें किसी वक़्त) अल्लाह का कोई सहारा हासिल हो जाये या लोगों की तरफ़ से कोई सहारा मिल जाये"

जैसे आज पूरी ईसाई दुनिया उनका सहारा बनी हुई है। इसराइल अपने बल पर नही, बल्कि पूरी ईसाई दुनिया की पुश्तपनाही पर क़ायम है। खलीज की जंग में इत्तेहादी अफ़वाज के कमान्डर एंड चीफ ने साफ़ कह दिया था कि यह सारी जंग हमने इसराइल के तहफ्फ़ुज़ के लिये लड़ी है। गोया इस क़दर खूँरेज़ी से सिर्फ़ इसराइल का तहफ्फ़ुज़ पेशे नज़र था।

وَبَاۗءُوْ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ

"और यह अल्लाह तआला के गज़ब के मुस्तहिक़ हो गये"

وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الْمَسْكَنَةُ

"और इनके ऊपर कम हिम्मती मुसल्लत कर दी गयी।"

ذٰلِكَ بِاَنَّھُمْ كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ

"यह इसलिये हुआ कि यह अल्लाह तआला की आयात का इन्कार करते रहे"

وَيَقْتُلُوْنَ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ

"और अम्बिया को नाहक़ क़त्ल करते रहे।"

ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ﴿١١٢﴾

"और यह इसलिये हुआ कि इन्होंने नाफ़रमानी की रविश इख़्तियार की और हुदूद से तजावुज़ करते रहे।"

याद रहे कि यह आयत थोड़े से लफ्ज़ी फ़र्क़ के साथ सूरतुल बक़रह में भी गुज़र चुकी है। (आयत 61)

आयत 113

لَيْسُوْا سَوَاۗءً

"यह सबके सब बराबर नहीं हैं।"

इनमें अच्छे भी हैं, बुरे भी हैं।

مِنْ اَھْلِ الْكِتٰبِ اُمَّةٌ قَاۗىِٕمَةٌ يَّتْلُوْنَ اٰيٰتِ اللّٰهِ اٰنَاۗءَ الَّيْلِ وَھُمْ يَسْجُدُوْنَ ﴿١١٣﴾

"अहले किताब में ऐसे लोग भी हैं जो (सीधे रास्ते पर) क़ायम हैं, रात के अवक़ात में अल्लाह की आयात की तिलावत करते हैं और सज्दा करते हैं।"

रसूल अल्लाह ﷺ के ज़माने में ख़ास तौर पर ईसाई राहिबों की एक कसीर तादाद इस किरदार की हामिल थी। उन्ही में से एक बहीरा राहिब था जिसने बचपन में आँहुज़ूर ﷺ को पहचान लिया था। यहूद में भी इक्का-दुक्का लोग इस तरह के बाक़ी होंगे, लेकिन अक्सरो बेशतर यहूद में से यह किरदार ख़त्म हो चुका था, अलबत्ता ईसाईयों में ऐसे लोग बकसरत मौजूद थे।

आयत 114

يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ

"वह ईमान रखते हैं अल्लाह पर और यौमे आख़िर पर"

وَيَأْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ

"और नेकी का हुक्म देते हैं और बुराई से रोकते हैं"

وَيُسَارِعُوْنَ فِي الْخَيْرٰتِ

"और नेकियों में एक-दूसरे से आगे निकलने की कोशिश करते हैं।"

وَاُولٰۗىِٕكَ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝۱۱۴

"और यक़ीनन यह लोग सालेहीन में से हैं।"

आयत 115

وَمَا يَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَلَنْ يُّكْفَرُوْهُ

"जो खैर भी यह करेंगे तो उसकी नाक़द्री नहीं की जायेगी।"

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالْمُتَّقِيْنَ ۝۱۱۵

"और अल्लाह ऐसे मुत्तक़ी लोगों से खूब वाक़िफ है।"

आयत 116

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ اَمْوَالُهُمْ وَلَآ اَوْلَادُھُمْ مِّنَ اللّٰهِ شَـيْـــًٔـا

"(इसके बरअक्स) जो लोग कुफ़्र पर अड़ गये, उनके काम नहीं आ सकेंगे ना उनके अमवाल ना उनकी औलाद अल्लाह से बचाने में कुछ भी।"

وَاُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ النَّارِ

"यही लोग जहन्नमी हैं।"

هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝۱۱۶

"उसी में हमेशा रहेंगे।"

आयत 117

مَثَلُ مَا يُنْفِقُوْنَ فِيْ هٰذِهِ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا

"दुनिया की इस ज़िन्दगी में यह लोग जो भी खर्च करते हैं उसकी मिसाल ऐसी है"

क़ुरेशे मक्का अहले अहले ईमान के खिलाफ़ जो जंगी तैयारियाँ कर रहे थे तो उसके लिये माल खर्च करते थे। फ़ौज तैयार करनी हो तो उसके लिये ऊँट और दीगर सवारियों की ज़रूरत है, सामाने हर्बो ज़र्ब की ज़रूरत है, तो ज़ाहिर है उसके लिये माल तो खर्च होगा। यह इस इन्फ़ाक़े माल की तरफ़ इशारा है कि यह लोग दुनिया की ज़िन्दगी में जो कुछ खर्च करते हैं या तो दीन की मुखालफ़त के लिये या अपने जी को ज़रा झूठी तसल्ली देने के लिये करते हैं कि हम कुछ सदक़ा व खैरात भी करते हैं, चाहे हमारा किरदार कितना ही गिर गया हो। तो उनके इन्फ़ाक़ की मिसाल ऐसी है:

كَمَثَلِ رِيْحٍ فِيْهَا صِرٌّ

"कि जैसे एक ज़ोरदार आँधी जिसमें पाला हो"

اَصَابَتۡ حَرۡثَ قَوۡمٍ ظَلَمُوۡۤا اَنۡفُسَهُمۡ فَاَهۡلَكَتۡهُ

"वह किसी ऐसी क़ौम की खेती को आ पड़े जिसने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया हो, फिर वह उस (खेती) को तबाह व बर्बाद और तहस-नहस करके रख दे।"

यानि उनकी यह नेकियाँ, यह इन्फ़ाक़, यह जद्दो-जहद और दौड़-धूप सबकी सब बिल्कुल ज़ाया हो जाने वाली है।

وَمَا ظَلَمَهُمُ اللّٰهُ وَلٰكِنۡ اَنۡفُسَهُمۡ يَظۡلِمُوۡنَ ۝١١٧

"और उन पर अल्लाह ने कोई ज़ुल्म नहीं किया, बल्कि वह अपनी जानों पर खुद ज़ुल्म ढा रहे हैं।"

आयत 118

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَتَّخِذُوۡا بِطَانَةً مِّنۡ دُوۡنِكُمۡ

"ऐ अहले ईमान! अपने सिवा किसी को अपना राज़दार ना बनाओ"

यानि जिस शख्स के बारे में इत्मिनान हो कि साहिबे ईमान है, मुस्लमान है, उसके अलावा किसी और शख्स को अपना भेदी और महरमे राज़ ना बनाओ। यहूदी एक अर्से से मदीने में रहते थे और औस व खज़रज के लोगों की उनसे दोस्तियाँ थीं, पुराने ताल्लुक़ात और रवाबित थे। इसकी वजह से बाज़ अवक़ात सादा लौ मुस्लमान अपनी सादगी में राज़ की बातें भी उन्हें बता देते थे। इससे उन्हें रोका गया।

لَا يَاۡلُوۡنَكُمۡ خَبَالًا

"वह तुम्हारे लिये किसी खराबी में कोई कसर नहीं छोड़ते।"

وَدُّوۡا مَا عَنِتُّمۡ

"उन्हें पसंद है वह चीज़ जो तुम्हें तकलीफ़ और मशक्क़त में डाले।"

قَدۡ بَدَتِ الۡبَغۡضَآءُ مِنۡ اَفۡوَاهِهِمۡ

"उनकी दुश्मनी उनके मुँह से भी ज़ाहिर हो चुकी है।"

उनका कलाम ऐसा ज़हर आलूदा होता है कि उससे इस्लाम और मुस्लमानों की दुश्मनी टपकती पड़ती है। यह अपनी ज़बानों से आतिश बरसाते हैं।

وَمَا تُخۡفِيۡ صُدُوۡرُهُمۡ اَكۡبَرُ

"और जो कुछ उनके सीने छुपाये हुए हैं वह इससे भी बढ़ कर है।"

जो कुछ उनकी ज़बानों से ज़ाहिर होता है वह तो फिर भी कम है, उनके दिलों के अन्दर दुश्मनी और हसद की जो आग भड़क रही है वह इससे कहीं बढ़ कर है।

قَدۡ بَيَّنَّا لَكُمُ الۡاٰيٰتِ اِنۡ كُنۡتُمۡ تَعۡقِلُوۡنَ ۝١١٨

"हमने तुम्हारे लिये अपनी आयात को वाज़ेह कर दिया है अगर तुम अक़्ल से काम लो।"

यानि अपने तर्ज़े अमल पर गौर करो और इससे बाज़ आ जाओ!

आयत 119

هٰۤاَنۡتُمۡ اُولَآءِ تُحِبُّوۡنَهُمۡ

"यह तुम्ही हो कि उनको दोस्त रखते हो"

यह तुम्हारी शराफ़त और सादालोई है कि तुम उनसे मोहब्बत करते हो और पुराने ताल्लुक़ात और दोस्तियों को निभाना चाहते हो।

وَلَا يُحِبُّوۡنَكُمۡ

"लेकिन (जान लो कि) वह तो तुमसे मोहब्बत नहीं करते"

वह तुमसे दोस्ती नहीं रखते।

وَتُؤْمِنُوْنَ بِالْكِتٰبِ كُلِّهٖ

"हालाँकि (तुम्हारी शान यह है कि) तुम पूरी किताब को मानते हो।"

तुम तौरात को भी मानते हो, इन्जील को भी मानते हो। सूरतुन्निसा में अल्फ़ाज़ आये हैं: {اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ ....} (आयत:44) क्या तुमने उन लोगों को देखा जिन्हें किताब का एक हिस्सा दिया गया था...." चुनाँचे तमाम आसमानी किताबें अल्लाह तआला की उस क़दीम किताब "उम्मुल किताब" ही के हिस्से हैं। उसी "उम्मुल किताब" में से पहले तौरात आयी, फिर इन्जील आयी और फिर यह क़ुरान मजीद आया है, जो हिदायते कामिला पर मुश्तमिल है। तो तुम तो पूरी की पूरी किताब को मानते हो।

وَاِذَا لَقُوْكُمْ قَالُوْٓا اٰمَنَّا

"और जब वह तुमसे मिलते हैं तो कहते हैं हम भी मोमिन हैं।"

وَاِذَا خَلَوْا عَضُّوْا عَلَيْكُمُ الْاَنَامِلَ مِنَ الْغَيْظِ

"और जब वह ख़लवत में होते हैं तो अब तुम पर गुस्से की वजह से अपनी उँगलियाँ चबाते हैं।"

जब वह देखते हैं कि अब उनकी कुछ पेश नहीं जा रही और इस्लाम का मामला और आगे से आगे बढ़ता जा रहा है तो गुस्से में पेच व ताब खाते हैं और अपनी उँगलियाँ चबाते हैं।

قُلْ مُوْتُوْا بِغَيْظِكُمْ

"उनसे कहो मर जाओ अपने इस ग़म व गुस्से में।"

اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ﴿١١٩﴾

"यक़ीनन अल्लाह तआला जो कुछ सीनों के अन्दर मुज़मर है उससे भी वाक़िफ है।"

आयत 120

اِنْ تَمْسَسْكُمْ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ

"(ऐ मुस्लमानों!) अगर तुम्हें कोई भलाई पहुँच जाये तो उनको बुरी लगती है।"

अगर तुम्हें कोई कामयाबी हासिल हो जाये, कहीं फ़तह नसीब हो जाये तो उनको इससे तकलीफ़ पहुँचती है।

وَاِنْ تُصِبْكُمْ سَيِّئَةٌ يَّفْرَحُوْا بِهَا

"और अगर तुम्हें कोई तकलीफ़ पहुँचे तो इससे वह खुश होते हैं।"

अगर तुम्हें कोई गज़न्द (चोट) पहुँच जाये, कहीं आरज़ी तौर पर शिकस्त हो जाये, जैसे ओहद में हो गयी थी, तो बड़े खुश होते हैं, शादयाने बजाते हैं।

وَاِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا لَا يَضُرُّكُمْ كَيْدُهُمْ شَيْـًٔا

"लेकिन अगर तुम सब्र करते रहो और तक़वा की रविश इख़्तियार किये रहो तो उनकी यह सारी चालें तुम्हें कोई मुस्तक़िल नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगी।

सूरतुल बक़रह में सब्र और सलाह (नमाज़) से मदद लेने की तलक़ीन की गयी थी, यहाँ सलाह की जगह लफ्ज़ तक़वा आ गया है कि अगर तुम यह करते रहोगे तो फिर बिलआखिर उनकी सारी साज़िशें नाकाम होंगी।

اِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ﴿١٢٠﴾

"जो कुछ यह कर रहे हैं यक़ीनन अल्लाह तआला उसका इहाता किये हुए है।"

यह अल्लाह तआला के दायरे से और उसकी खींची हुई हद से आगे नहीं निकल सकते। यह उसके अन्दर-अन्दर उछल-कूद कर रहे हैं और साज़िशें कर रहे हैं। लेकिन अल्लाह तआला तुम्हें यह ज़मानत दे रहा है कि यह तुम्हें कोई मुस्तक़िल नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगे।

आयात 121 से 129 तक

وَاِذْ غَدَوْتَ مِنْ اَهْلِكَ تُبَوِّئُ الْمُؤْمِنِيْنَ مَقَاعِدَ لِلْقِتَالِ ۭ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ١٢١ اِذْ هَمَّتْ طَّاۗىِٕفَتٰنِ مِنْكُمْ اَنْ
تَفْشَلَا ۙ وَاللّٰهُ وَلِيُّهُمَا ۭ وَعَلَي اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ١٢٢ وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ بِبَدْرٍ وَّاَنْتُمْ اَذِلَّةٌ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ
تَشْكُرُوْنَ ١٢٣ اِذْ تَقُوْلُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ اَلَنْ يَّكْفِيَكُمْ اَنْ يُّمِدَّكُمْ رَبُّكُمْ بِثَلٰثَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰۗىِٕكَةِ مُنْزَلِيْنَ ١٢٤ بَلٰٓى ۙ اِنْ
تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا وَيَاْتُوْكُمْ مِّنْ فَوْرِھِمْ ھٰذَا يُمْدِدْكُمْ رَبُّكُمْ بِخَمْسَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰۗىِٕكَةِ مُسَوِّمِيْنَ ١٢٥ وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ
اِلَّا بُشْرٰى لَكُمْ وَلِتَطْمَىِٕنَّ قُلُوْبُكُمْ بِهٖ ۭ وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ الْعَزِيْزِ الْحَكِيْمِ ١٢٦ لِيَقْطَعَ طَرَفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا
اَوْ يَكْبِتَھُمْ فَيَنْقَلِبُوْا خَاۗىِٕـبِيْنَ ١٢٧ لَيْسَ لَكَ مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ اَوْ يَتُوْبَ عَلَيْھِمْ اَوْ يُعَذِّبَھُمْ فَاِنَّھُمْ ظٰلِمُوْنَ ١٢٨ وَلِلّٰهِ
مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَاۗءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ١٢٩

यहाँ से सूरह आले इमरान के निस्फ़े सानी के दूसरे हिस्से का आगाज़ हो रहा है, जो छः रुकूआत पर मुहीत है। यह छः रुकूअ मुसलसल गज़वा-ए-ओहद के हालात व वाक़िआत और उन पर तबसिरे पर मुश्तमिल हैं। गज़वा-ए-ओहद शवाल 3 हिजरी में पेश आया था। इससे पहले रमज़ान 2 हिजरी में गज़वा-ए-बद्र पेश आ चुका था, जिसका तज़किरा हम सूरतुल अन्फ़ाल में पढ़ेंगे। इसलिये कि तरतीबे मुसहफ़ ना तो तरतीबे ज़मानी के ऐतबार से है और ना ही तरतीबे नुज़ूली के मुताबिक़। गज़वा-ए-बद्र में अल्लाह तआला ने मुस्लमानों को बहुत ज़बरदस्त फ़तह दी थी और कुफ्फ़ारे मक्का को बड़ी ज़क (चोट) पहुँची थी। उनके सत्तर (70) सरबरावरदा लोग मारे गये थे, जिनमें क़ुरैश के तक़रीबन सारे बड़े-बड़े सरदार भी शामिल थे। अहले मक्का के सीनों में इन्तेक़ाम की आग भड़क रही थी और उनके इन्तक़ामी जज़्बात लावे की तरह खोल रहे थे। चुनाँचे एक साल के अन्दर-अन्दर उन्होंने पूरी तैयारी की और तमाम साज़ो सामान जो वह जमा कर सकते थे जमा कर लिया। अबु जहल गज़वा-ए-बद्र में मारा जा चुका था और अब क़ुरैश के सबसे बड़े सरदार अबु सुफ़ियान थे। (अबु सुफ़ियान चूँकि बाद में ईमान ले आये थे और सहाबियत के मरतबे से सरफ़राज़ हुए थे लिहाज़ा हम उनका नाम अहतराम से लेते हैं।) अबु सुफ़ियान तीन हज़ार जंगजुओं का लश्कर लेकर मदीना पर चढ़ दौड़े। अहले मक्का अपनी फ़तह यक़ीनी बनाने के लिये इस दफ़ा अपने बच्चों और ख़ास तौर पर ख्वातीन को भी साथ लेकर आये थे ताकि उनकी ग़ैरत बेदार रहे कि अगर कहीं मैदान से हमारे क़दम उखड गये तो हमारी औरतें मुस्लमानों के कब्ज़े में चली जायेंगी। अबु सुफ़ियान की बीवी हिन्दा बिन्ते उत्बा भी लश्कर के हमराह थी। (वह भी बाद में फ़तह मक्का के मौके पर ईमान ले आयी थीं।) गज़वा-ए-बद्र में हिन्दा का बाप, भाई और चचा मुस्लमानों के हाथों वासिल-ए-जहन्नम हो चुके थे, लिहाज़ा उसके सीने के अन्दर भी इन्तेक़ाम की आग भड़क रही थी। मक्का का शायद ही कोई घर बचा हो जिसका कोई फ़र्द गज़वा-ए-बद्र में मारा ना गया हो।

इस मौके पर नबी अकरम ﷺ ने मदीना मुनव्वरा में एक मुशावरत मुनअक्क़िद फ़रमायी कि अब क्या हिकमते अमली इख़्तियार करनी चाहिये, जबकि तीन हज़ार का लश्कर मदीना पर चढ़ाई करने आ रहा है। रसूल अल्लाह ﷺ का अपना रुझान इस तरफ़ था कि इस सूरते हाल में हम अगर मदीना में महसूर होकर मुक़ाबला करें तो बेहतर रहेगा। अजीब इत्तेफ़ाक़ है कि रईसुल मुनाफ़िक़ीन अब्दुल्लाह बिन उबई की भी यही राय थी। लेकिन वह लोग जो बद्र के बाद ईमान लाये थे और वह जो गज़वा-ए-बद्र में शरीक नहीं हो पाये थे उनमें से ख़ास तौर पर नौजवानों की तरफ़ से खुसूसी जोशो खरोश का मुज़ाहिरा हो रहा था कि हमें मैदान में निकल कर दुश्मन का डट कर मुक़ाबला करना चाहिये, हमें तो शहादत दरकार है, हमें आख़िर मौत से क्या डर है?

शहादत है मतलूब-ओ-मक़सूदे मोमिन
ना माले गनीमत ना किशवर कुशाई!

चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ ने उनके जज़्बात का लिहाज़ करते हुए फ़ैसला फ़रमा दिया कि दुश्मन का खुले मैदान में मुक़ाबला किया जायेगा। नबी अकरम ﷺ ने एक हज़ार की नफ़री लेकर मदीना से जबल-ए-ओहद की जानिब कूच फ़रमाया, लेकिन रास्ते ही में अब्दुल्लाह बिन उबई अपने तीन सौ आदमियों को साथ लेकर यह कह कर वापस चला गया कि जब हमारे मशवरे पर अमल नहीं होता और हमारी बात नहीं मानी जाती तो हम ख्वाहमा ख्वाह अपनी जानें जोखिम में क्यों डालें? तीन सौ मुनाफ़िक़ीन के चले जाने के बाद इस्लामी लश्कर में सिर्फ़ सात सौ अफ़राद बाक़ी रह गये थे, जिनमें कमज़ोर ईमान वाले भी थे। चुनाँचे दामने ओहद में पहुँच कर मदीना के दो खानदानों बनु हारसा और बनु सलमा के क़दम भी थोड़ी देर के लिये डगमगाये और उन्होंने वापस लौटना चाहा, लेकिन फिर अल्लाह तआला ने उनको हौसला दिया और उनके क़दम जमा दिये।

इसके बाद जंग हुई तो अल्लाह की तरफ़ से मदद आयी। अल्लाह ने लश्करे इस्लाम को फ़तह दे दी और मुशरिकीन के क़दम उखड़ गये। नबी अकरम ﷺ ने ओहद पहाड़ को अपनी पुश्त पर रखा था और उसके दामन में सफ़बंदी की थी। सामने दुश्मन का लश्कर था। पहाड़ में एक दर्रा था और हुज़ूर ﷺ को अन्देशा था कि ऐसा ना हो कि वहाँ से हम पर हमला हो जाये और हम दो तरफ़ से चक्की के दो पाटों के दरमियान आ जायें। लिहाज़ा आप ﷺ ने उस दर्रे पर हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की इमारत में पचास तीर अंदाज़ तैनात फ़रमा दिये थे और उन्हें ताकीद फ़रमायी थी यहाँ से मत हिलना। चाहे तुम देखो कि हम सब मारे गये हैं और हमारा गोश्त चीलें और कव्वे नोच रहे हैं तब भी यह जगह मत छोड़ना! लेकिन जब मुस्लमानों को फ़तह हो गयी तो दर्रे पर मामूर हज़रात में इख्तलाफ़े राये हो गया। उनमें से अक्सर ने कहा कि रसूल ﷺ ने हमें जो इतनी ताकीद फ़रमायी थी वह तो शिकस्त की सूरत में थी, अब तो फ़तह हो गयी है, लिहाज़ा अब हमें भी चल कर माले गनीमत जमा करने में बाक़ी सब लोगों का साथ देना चाहिये। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० वहाँ के लोकल कमांडर थे, वह उन्हें मना करते रहे कि यहाँ से हरगिज़ मत हटो, रसूल अल्लाह ﷺ का हुक्म याद रखो। लेकिन वह तो हुज़ूर ﷺ के हुक्म की तावील कर चुके थे। उनमें से 35 अफ़राद दर्रा छोड़ कर चले गये और सिर्फ़ 15 बाक़ी रह गये।

खालिद बिन वलीद (जो उस वक़्त तक ईमान नहीं लाये थे) मुशरिकीन की घुड़सवार फ़ौज (cavalry) के कमांडर थे। उनकी उक़ाबी निगाह ने देख लिया कि वह दर्रा खाली है। उनकी पैदल फ़ौज (infantry) शिकस्त खा चुकी थी और भगदड़ मच चुकी थी। ऐसे में वह अपने दो सौ घुड़सवारों के दस्ते के साथ ओहद का चक्कर काट कर पुश्त से उस दर्रे के रास्ते मुस्लमानों पर हमलावर हो गये। दर्रे पर सिर्फ़ 15 तीर अंदाज़ बाक़ी थे, उनके लिये दो सौ घुड़सवारों की यलगार को रोकना मुमकिन नहीं था और वह मज़ाहमत (प्रतिरोध) करते हुए शहीद हो गये। इस अचानक हमले से यकायक जंग का पांसा पलट गया और मुस्लमानों की फ़तह शिकस्त में बदल गयी। सत्तर सहाबा किराम रज़ि० शहीद हो गये। रसूल अल्लाह ﷺ खुद भी ज़ख़्मी हो गये। खौद की कड़ियाँ आप ﷺ के रुख्सार में घुस गयीं और दन्दाने मुबारक शहीद हो गये। खून इतना बहा कि आप ﷺ पर बेहोशी तारी हो गयी, और यह भी मशहूर हो गया कि हुज़ूर ﷺ का इन्तेक़ाल हो गया है। इससे मुस्लमानों के हौंसले पस्त हो गये। लेकिन फिर जब रसूल अल्लाह ﷺ ने लोगों को पुकारा तो लोग हिम्मत करके जमा हुए। तब आप ﷺ ने यह फ़ैसला किया कि इस वक़्त पहाड़ पर चढ़ कर बचाव कर लिया जाये, और आप ﷺ तमाम मुस्लमानों को लेकर कोहे ओहद पर चढ़ गये। इस मौक़े पर अबु सुफ़ियान और खालिद बिन वलीद के माबैन इख्तलाफ़े राय हो गया। खालिद बिन वलीद का कहना था कि हमें उनके पीछे पहाड़ पर चढ़ना चाहिये और उन्हें ख़त्म करके ही दम लेना चाहिये। लेकिन अबु सुफ़ियान बड़े हक़ीक़त पसंद और ज़रीक शख्स थे। उन्होंने कहा कि नहीं, मुस्लमान ऊँचाई पर हैं, वह ऊपर से पत्थर फेंकेगे और तीर बरसायेंगे तो हमारे लिये शदीद जानी नुक़सान का अन्देशा है। हमने बद्र का बदला ले लिया है, यही बहुत है। चुनाँचे मुशरिकीन वहाँ से चले गये। मुताअला-ए-आयात से क़ब्ल गज़वा-ए-ओहद के सिलसिला-ए-वाक़िआत का यह इज्माली ख़ाका ज़हन में रहना चाहिये।

आयत 121

وَاِذۡ غَدَوۡتَ مِنۡ اَهۡلِكَ تُبَوِّئُ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ مَقَاعِدَ لِلۡقِتَالِ ؕ

“(और ऐ नबी ﷺ!) याद कीजिये जबकि सुबह को आप ﷺ अपने घर से निकले थे और मुस्लमानों को जंग के मोर्चों में मामूर कर रहे थे।”

गज़वा-ए-ओहद की सुबह आप ﷺ हज़रत आयशा के हुजरे से बरामद हुए थे और जंग के मैदान में सफ़बंदी कर रहे थे, वहाँ मोर्चे मुअय्यन कर रहे थे और उनमें सहाबा किराम رضی اللہ عنہم को मामूर कर रहे थे

وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿١٢١﴾

"जबकि अल्लाह सब कुछ सुनने वाला जानने वाला है।"

आयत 122

اِذْ هَمَّتْ طَّآىِٕفَتٰنِ مِنْكُمْ اَنْ تَفْشَلَا

"जबकि तुम में से दो गिरोह बुज़दिली दिखाने पर आमादा हो गये थे"

उन्होंने कुछ कमज़ोरी दिखाई, हौसला छोड़ने लगे और उनके पाँव लड़खड़ाये।

وَاللّٰهُ وَلِيُّهُمَا

"हालाँकि अल्लाह उनका पुश्त पनाह था।"

وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ﴿١٢٢﴾

"और अल्लाह ही पर तवक्कुल करना चाहिये अहले ईमान को।"

जंग के आगाज़ से पहले अन्सार के दो घरानों बनु हारसा और बनु सलमा के क़दम वक़्ती तौर पर डगमगा गये थे, बर-बनाये तबा-ए-बशरी उनके हौसले पस्त होने लगे थे और उन्होंने वापसी का इरादा कर लिया था, लेकिन अल्लाह तआला ने उनके दिलों को साबित अता फ़रमाया और उनके क़दमों को जमा दिया। फिर उनका ज़िक्र क़ुरान में कर दिया गया। और वह इस पर फ़ख्र करते थे कि हम वह लोग हैं जिनका ज़िक्र अल्लाह तआला ने क़ुरान में {مِنْكُمْ} और { وَاللّٰهُ وَلِيُّهُمَا } के अल्फ़ाज़ में किया है। गौरतलब बात यह है कि तीन सौ मुनाफ़िक़ीन जो मैदाने जंग से चले गये थे अल्लाह तआला ने उनका ज़िक्र तक नहीं किया। गोया वह इस लायक़ भी नहीं हैं कि उनका बराहे रास्त ज़िक्र किया जाये। अलबत्ता आख़िर में उनका ज़िक्र बिल्वास्ता तौर पर (indirectly) आयेगा।

आयत 123

وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ بِبَدْرٍ وَّاَنْتُمْ اَذِلَّةٌ

"और अल्लाह ने तो तुम्हारी मदद बद्र में भी की थी जबकि तुम बहुत कमज़ोर थे।"

गज़वा-ए-बद्र में एक हज़ार मुशरिकीन के मुक़ाबले में अहले ईमान सिर्फ़ तीन सौ तेरह थे, जबकि सबके पास तलवारें भी नहीं थीं। कुल आठ तलवारें थीं। कुफ्फ़ारे मक्का एक सौ घोड़ों का रिसाला लेकर आये थे और इधर सिर्फ़ दो घोड़े थे। उधर सात सौ ऊँट थे और इधर सत्तर ऊँट थे। इस सबके बावजूद अल्लाह ने तुम्हारी मदद की थी और तुम्हें अपने से ताक़तवर दुश्मन पर गलबा अता फ़रमाया था।

فَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿١٢٣﴾

"तो अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो ताकि तुम अल्लाह का (सही मायने में) शुक्र अदा कर सको।"

आयत 124

اِذْ تَقُوْلُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ اَلَنْ يَّكْفِيَكُمْ اَنْ يُّمِدَّكُمْ رَبُّكُمْ بِثَلٰثَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰٓىِٕكَةِ مُنْزَلِيْنَ ﴿١٢٤﴾

"(ऐ नबी ﷺ!) जब आप कह रहे थे अहले ईमान से कि क्या तुम्हारे लिये यह काफ़ी नहीं है कि तुम्हारा रब तुम्हारी मदद करे तीन हज़ार फ़रिश्तों से जो आसमान से उतरने वाले होंगे?"

यानि ऐ मुस्लमानों! अगर मुक़ाबले में तीन हज़ार का लश्कर आ गया है तो क्या गम है। मैं तुम्हे खुशख़बरी देता हूँ कि अल्लाह तआला तुम्हारी मदद को तीन हज़ार फ़रिश्ते भेजेगा जो आसमान से उतरेंगे। अल्लाह तआला ने अपने नबी ﷺ

की इस खुशख़बरी को, जो एक तरह से इस्तदआ (इच्छा) भी हो सकती थी, फ़ौरी तौर पर शर्फ़े क़ुबूलियत अता फ़रमाया और इसकी मंज़ूरी का ऐलान फ़रमा दिया।

आयत 125

بَلٰٓی ۙ اِنۡ تَصۡبِرُوۡا وَ تَتَّقُوۡا وَ یَاۡتُوۡکُمۡ مِّنۡ فَوۡرِہِمۡ ہٰذَا

"क्यों नहीं (ऐ मुस्लमानों!) अगर तुम सब्र करोगे और तक़वा की रविश पर रहोगे और अगर वह फ़ौरी तौर पर तुम पर हमलावर हो जायें"

یُمۡدِدۡکُمۡ رَبُّکُمۡ بِخَمۡسَۃِ اٰلٰفٍ مِّنَ الۡمَلٰٓئِکَۃِ مُسَوِّمِیۡنَ ﴿۱۲۵﴾

"तो तुम्हारा रब तुम्हारी मदद करेगा पाँच हज़ार फ़रिश्तों के ज़रिये से जो निशानज़दा घोड़ों पर आएँगे।"

आयत 126

وَ مَا جَعَلَہُ اللّٰہُ اِلَّا بُشۡرٰی لَکُمۡ

"और अल्लाह ने इसको नहीं बनाया मगर तुम्हारे लिये बशारत"

وَ لِتَطۡمَئِنَّ قُلُوۡبُکُمۡ بِہٖ ؕ

"और ताकि तुम्हारे दिल इससे मुत्मईन हो जायें।"

وَ مَا النَّصۡرُ اِلَّا مِنۡ عِنۡدِ اللّٰہِ الۡعَزِیۡزِ الۡحَکِیۡمِ ﴿۱۲۶﴾

"वरना मदद तो होनी ही अल्लाह की तरफ़ से है जो ग़ालिब और हिकमत वाला है।"

यह तो अल्लाह तआला की तरफ़ से बशारत के तौर पर तुम्हारे दिलों के इत्मिनान के लिये तुम्हें बता दिया गया है, वरना अल्लाह फ़रिश्तों को भेजे बगैर भी तुम्हारी मदद कर सकता है, वह "कुन-फ़-यकून" की शान रखता है। तुम्हें यह बशारत तुम्हारी तबअ बशरी के हवाले से दी गयी है कि अगर तीन हज़ार की तादाद में दुश्मन सामने हुआ तो तुम्हारी मदद को तीन हज़ार फ़रिश्ते उतार आएँगे, और अगर वह फ़ौरी तौर पर हमलावर हो गये तो हम पाँच हज़ार फ़रिश्ते भेज देंगे।

आयत 127

لِیَقۡطَعَ طَرَفًا مِّنَ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡۤا

"(और यह मदद वह तुम्हें इसलिये देगा) ताकि काफ़िरों का एक बाज़ू काट दे"

اَوۡ یَکۡبِتَہُمۡ فَیَنۡقَلِبُوۡا خَآئِبِیۡنَ ﴿۱۲۷﴾

"या उन्हें ज़लील कर दे कि वह खाइब (असफ़ल) व खासिर (हारे हुए) होकर लौट जायें।"

यह बात ज़हन में रहे कि यहाँ गज़वा-ए-ओहद के हालात व वाक़िआत और उन पर तबसिरा ज़मानी तरतीब से नहीं है। सबसे पहले रसूल अल्लाह ﷺ का अपने घर से निकल कर मैदाने जंग में मोर्चाबंदी का ज़िक्र हुआ। फिर उससे पहले का ज़िक्र हो रहा है जब ख़बरें पहुँची होंगी कि तीन हज़ार का लश्कर मदीना पर हमलावर होने के लिये आ रहा है और रसूल अल्लाह ﷺ ने अहले ईमान को अल्लाह तआला की मदद व नुसरत की खुशखबरी दी होगी। अब इस जंग के दौरान मुस्लमानों से जो कुछ खताएँ और गलतियाँ हुईं उनकी निशानदेही की जा रही है। खुद आँहुज़ूर ﷺ से भी ख़ता का एक मामला हुआ, उस पर भी गिरफ्त है, बल्कि सबसे पहले उसी मामले को लाया जा रहा है। जब आप ﷺ शदीद ज़ख़्मी हो गये और आप ﷺ पर बेहोशी तारी हो गयी, फिर जब होश आया तो आप ﷺ की ज़बान पर यह अल्फ़ाज़ आ गये:

کَیۡفَ یُفۡلِحُ قَوۡمٌ خَضَبُوۡا وَجۡہَ نَبِیِّہِمۡ بِالدَّمِ وَھُوَ یَدۡعُوۡھُمۡ اِلَی اللّٰہِ

"यह क़ौम कैसे फ़लाह पायेगी जिसने अपने नबी के चेहरे को खून से रंग दिया जबकि वह उन्हें अल्लाह की तरफ़ बुला रहा था!"

तलवार का वार आँहुज़ूर ﷺ के रुख्सार की हड्डी पर पड़ा था और उससे आप ﷺ के दो दाँत भी शहीद हो गये थे। ज़ख्म से खून का फ़व्वारा छूटा था जिससे आप ﷺ का पूरा चेहरा मुबारक लहूलुहान हो गया था। खून इतनी मिक़दार में बह गया था कि आप ﷺ पर बेहोशी तारी हो गयी। आप ﷺ होश में आये तो ज़बाने मुबारक से यह अल्फ़ाज़ अदा हो गये। इस पर यह आयत नाज़िल हुई: {.... لَيْسَ لَكَ مِنَ الْأَمْرِ شَيْءٌ } ऐ नबी ﷺ इस मामले में आप ﷺ का कोई इख़्तियार नहीं है, आप ﷺ का काम दावत देना और तब्लीग करना है। लोगों की हिदायत और ज़लालत के फ़ैसले हम करते हैं। और देखिये अल्लाह ने क्या शान दिखाई? जिस शख़्स की वजह से मुस्लमानों को हज़ीमत (हार) उठाना पड़ी, यानि खालिद बिन वलीद, अल्लाह तआला ने हुज़ूर ﷺ ही की ज़बाने मुबारक से उसे "سَيْفٌ مِنْ سُيُوْفِ اللهِ" (अल्लाह की तलवारों में से एक तलवार) का ख़िताब दिलवा दिया।

आयत 128

لَيْسَ لَكَ مِنَ الْأَمْرِ شَيْءٌ

"(ऐ नबी ﷺ!) इस मामले में आपको कोई इख़्तियार नहीं"

أَوْ يَتُوْبَ عَلَيْهِمْ أَوْ يُعَذِّبَهُمْ

"अल्लाह उनकी तौबा क़ुबूल करे या उन्हें अज़ाब दे"

यह अल्लाह के इख़्तियार में है, वह चाहेगा तो उनको तौबा की तौफ़ीक़ दे देगा, वह ईमान ले आएँगे, या अल्लाह चाहेगा तो उन्हें अज़ाब देगा।

فَإِنَّهُمْ ظٰلِمُوْنَ ﴿١٢٨﴾

"इसलिये कि वह ज़ालिम हैं।"

उनके ज़ालिम होने में कोई शुबह नहीं, लिहाज़ा वह सज़ा के हक़दार तो हो चुके हैं। लेकिन हो सकता है अल्लाह उन्हें हिदायत दे दे। देखिये, यह वक़्त-वक़्त की बात होती है। चंद साल पहले ताइफ़ में रसूल अल्लाह ﷺ से जिस तरह बदसुलूकी का मुज़ाहिरा किया गया वह आप ﷺ की ज़िन्दगी का शदीद-तरीन दिन था। इस पर जिब्राइल अलै० ने आकर कहा कि यह मलाकुल जिबाल (पहाड़ों का फ़रिश्ता) हाज़िर है। यह कहता है कि मुझे अल्लाह ने भेजा है, आप ﷺ फ़रमायें तो इन दोनों पहाड़ों को टकरा दूँ जिनके माबैन वादी के अन्दर यह शहर ताइफ़ आबाद है, ताकि यह सब पिस जायें, इनका सुरमा बन जाये। आप ﷺ ने फ़रमाया कि नहीं, क्या अजब कि अल्लाह तआला उनकी आइन्दा नस्लों को हिदायत दे दे। लेकिन यह वक़्त कुछ ऐसा था कि बरबनाये तबअ बशरी ज़बान मुबारक से वह जुमला निकल गया। इसलिये कि:

وَالْعَبْدُ عَبْدٌ وَإِنْ تَرَقّٰى وَالرَّبُّ رَبٌّ وَإِنْ تَنَزَّلَ

"बंदा, बंदा ही रहता है चाहे कितना ही बुलन्द हो जाये, और रब, रब ही है चाहे कितना ही नुज़ूल फ़रमा ले!"

आयत 129

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ؕ

"अल्लाह ही के लिये है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।"

يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ ؕ

"वह जिसको चाहता है बख्श देता है और जिसको चाहता है अज़ाब देता है।"

وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿١٢٩﴾

"और अल्लाह गफ़ूर व रहीम है।"

आयात 130 से 143 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوا الرِّبٰوٓا اَضْعَافًا مُّضٰعَفَةً ۠ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ﴿۱۳۰﴾ وَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِيْٓ اُعِدَّتْ
لِلْكٰفِرِيْنَ ﴿۱۳۱﴾ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ﴿۱۳۲﴾ وَسَارِعُوْٓا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ
وَالْاَرْضُ ۙ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ ﴿۱۳۳﴾ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ فِي السَّرَّآءِ وَالضَّرَّآءِ وَالْكٰظِمِيْنَ الْغَيْظَ وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ ۭ وَاللّٰهُ
يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿۱۳۴﴾ وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ فَاسْتَغْفَرُوْا لِذُنُوْبِهِمْ ۠ وَمَنْ يَّغْفِرُ
الذُّنُوْبَ اِلَّا اللّٰهُ ۠ وَلَمْ يُصِرُّوْا عَلٰي مَا فَعَلُوْا وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ﴿۱۳۵﴾ اُولٰٓئِكَ جَزَآؤُهُمْ مَّغْفِرَةٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَجَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ وَنِعْمَ اَجْرُ الْعٰمِلِيْنَ ﴿۱۳۶﴾ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ ۙ فَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوْا كَيْفَ
كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ﴿۱۳۷﴾ هٰذَا بَيَانٌ لِّلنَّاسِ وَهُدًى وَّمَوْعِظَةٌ لِّلْمُتَّقِيْنَ ﴿۱۳۸﴾ وَلَا تَهِنُوْا وَلَا تَحْزَنُوْا وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ اِنْ
كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿۱۳۹﴾ اِنْ يَّمْسَسْكُمْ قَرْحٌ فَقَدْ مَسَّ الْقَوْمَ قَرْحٌ مِّثْلُهٗ ۭ وَتِلْكَ الْاَيَّامُ نُدَاوِلُهَا بَيْنَ النَّاسِ ۚ وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ
الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَتَّخِذَ مِنْكُمْ شُهَدَآءَ ۭ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ ﴿۱۴۰﴾ وَلِيُمَحِّصَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَمْحَقَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۱۴۱﴾ اَمْ
حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ وَيَعْلَمَ الصّٰبِرِيْنَ ﴿۱۴۲﴾ وَلَقَدْ كُنْتُمْ تَمَنَّوْنَ الْمَوْتَ مِنْ
قَبْلِ اَنْ تَلْقَوْهُ ۠ فَقَدْ رَاَيْتُمُوْهُ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ﴿۱۴۳﴾

आयत 130

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوا الرِّبٰوٓا اَضْعَافًا مُّضٰعَفَةً ۠

"ऐ अहले ईमान! सूद मत खाओ दोगुना-चौगुना बढ़ता हुआ"

यहाँ पर सूद मुरक्कब (compund interest) का ज़िक्र आया है जो बढ़ता-चढ़ता रहता है। वाज़ेह रहे कि शराब और जुए की तरह सूद की हुरमत के अहकाम भी तदरीजन (धीरे-धीरे) नाज़िल हुए हैं। सबसे पहले एक मक्की सूरत, सूरह रूम में इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह और सूद को एक-दूसरे के मक़ाबिल रख कर सूद की क़बाहत और शनाअत को वाज़ेह कर दिया गया:

وَمَآ اٰتَيْتُمْ مِّنْ رِّبًا لِّيَرْبُوَا۟ فِيْٓ اَمْوَالِ النَّاسِ فَلَا يَرْبُوْا عِنْدَ اللّٰهِ ۚ وَمَآ اٰتَيْتُمْ مِّنْ زَكٰوةٍ تُرِيْدُوْنَ وَجْهَ اللّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُضْعِفُوْنَ ﴿۳۹﴾

जैसे कि शराब और जुए की खराबी को सूरतुल बक़रह (आयत 219) में बयान कर दिया गया था। इसके बाद आयत ज़ेरे मुताअला में दूसरे क़दम के तौर पर महाजनी सूद (usury) से रोक दिया गया। हमारे यहाँ आज-कल भी ऐसे सूदखोर मौजूद हैं जो बहुत ज़्यादा शरह सूद पर लोगों को क़र्ज़ देते हैं और उनका खून चूस जाते हैं। तो यहाँ उस सूद की मज़म्मत आयी है। सूद के बारे में आखरी और हत्मी हुक्म 9 हिजरी में नाज़िल हुआ, लेकिन तरतीबे मुसहफ़ में वह सूरतुल बक़रह में है। वह पूरा रुकूअ (नम्बर 38) हम मुताअला कर चुके हैं। वहाँ पर सूद को दो टूक अंदाज़ में हराम क़रार दे दिया गया और सूदखोरी से बाज़ ना आने पर अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ से जंग का अल्टीमेटम दे दिया गया।

सवाल पैदा होता है कि गज़वा-ए-ओहद के हालत व वाक़िआत के दरमियान सूदखोरी की मज़म्मत क्यों बयान हुई? ऐसा महसूस होता है कि दर्रे पर मामूर पचास तीर अंदाज़ों में से पैंतीस अपनी जगह छोड़ कर जो चले गये थे तो उनके तहतुल शऊर में माले गनीमत की कोई तलब थी, जो नहीं होनी चाहिये थी। इस हवाले से सूदखोरी की मज़म्मत बयान

की गयी कि यह भी इन्सान के अन्दर माल व दौलत से ऐसी मोहब्बत पैदा कर देती है जिसकी वजह से उसके किरदार में बड़े-बड़े खला पैदा हो सकते हैं।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝١٣٠

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

आयत 131

وَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِيْٓ اُعِدَّتْ لِلْكٰفِرِيْنَ ۝١٣١

"और उस आग से बचो जो काफ़िरों के लिये तैयार की गयी है।"

आयत 132

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ۝١٣٢

"और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करते रहो ताकि तुम पर रहम किया जाये।"

आयत 133

وَسَارِعُوْٓا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ وَالْاَرْضُ ۙ

"और मुसाबक़त (competition) करो अपने रब की मग़फ़िरत के हुसूल के लिये और उस जन्नत को हासिल करने के लिये जिसका फैलाव आसमानों और ज़मीन जितना है"

اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ ۝١٣٣

"वह तैयार की गयी है (और सँवारी गयी है) अहले तक़वा के लिये।"

आयत 134

الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ فِي السَّرَّاۗءِ وَالضَّرَّاۗءِ

"वो लोग जो खर्च करते हैं कुशादगी में भी और तंगी में भी"

यहाँ भी तक़ाबुल मुलाहिज़ा कीजिये कि सूद के मुक़ाबले में इन्फ़ाक़ का ज़िक्र हो रहा है।

وَالْكٰظِمِيْنَ الْغَيْظَ وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ ۭ

"और वह अपने गुस्से को पी जाने वाले और लोगों की खताओं से दरगुज़र करने वाले हैं।"

وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝١٣٤

"और अल्लाह तआला ऐसे मोहसिनीन को पसंद करता है।"

यह दर्जा-ए-अहसान है, जो इस्लाम और ईमान के बाद का दर्जा है।

आयत 135

وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَھُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ

"और जिनका हाल यह है कि अगर कभी उनसे किसी बेहयाई का इरतकाब हो जाये या अपने ऊपर कोई और ज़ुल्म कर बैठें तो फ़ौरन उन्हें अल्लाह याद आ जाता है"

فَاسْتَغْفَرُوْا لِذُنُوْبِهِمْ

"पस वह उससे अपने गुनाहों की बख़्शीश माँगते हैं।"

यह मज़मून सूरतुन्निसा में आयेगा कि किसी मुस्लमान शख्स से अगर कोई खता हो जाये और वह फ़ौरन तौबा कर ले तो अल्लाह तआला ने अपने ऊपर वाजिब ठहरा लिया है कि उसकी तौबा ज़रूर क़ुबूल फ़रमायेगा।

وَمَنْ يَّغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّا اللّٰهُ

"और कौन है जो माफ़ कर सके गुनाहों को सिवाय अल्लाह के?"

وَلَمْ يُصِرُّوْا عَلٰى مَا فَعَلُوْا وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ۝١٣٥

"और वह अपने उस गलत फ़अल (काम) पर जानते-बूझते इसरार नहीं करते।"

यानि ऐसा नहीं कि गुनाह पर गुनाह करते चले जा रहे हैं कि मौत आने पर तौबा कर लेंगे। उस वक़्त की तौबा तौबा नहीं है। एक मुस्लमान से अगर जज़्बात की रू में बह कर या भूल-चूक में कोई गुनाह सरज़द हो जाये और वह होश आने पर अल्लाह के हुज़ूर गिड़गिड़ाये, अज़्मे मुसम्मम (वादा) करे कि दोबारा ऐसा नहीं करेगा, और पूरी पशेमानी के साथ समीम क़ल्ब से अल्लाह की जनाब में तौबा करे तो अल्लाह तआला उसकी तौबा क़ुबूल करने की ज़मानत देता है।

आयत 136

اُولٰۗىِٕكَ جَزَاۗؤُھُمْ مَّغْفِرَةٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ

"यह हैं वह लोग कि जिनका बदला हैं उनके रब की तरफ़ से मगफ़िरत"

وَجَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا

"और वह बाग़ात कि जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी और वह उनमें हमेशा-हमेश रहेंगे।"

وَنِعْمَ اَجْرُ الْعٰمِلِيْنَ ۝١٣٦

"और क्या ही अच्छा बदला है अमल करने वालों के लिये।"

आयत 137

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ

"तुमसे पहले भी बहुत से हालात व वाक़िआत गुज़र चुके हैं"

فَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ

"तो ज़मीन में घूमो-फिरो"

فَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ۝١٣٧

"और देखो कि कैसा अंजाम हुआ झुठलाने वालों का!"

क़ुरैश के तिजारती काफ़िले शाम (सीरिया) की तरफ़ जाते थे तो रास्ते में क़ौमे समूद का मसकन भी आता था और वह बस्तियाँ भी आती थीं जिनमें कभी हज़रत लूत अलै० ने तब्लीग की थी। उनके खण्डरात से इबरत हासिल करो कि उनके साथ क्या कुछ हुआ।

आयत 138

هٰذَا بَيَانٌ لِّلنَّاسِ وَھُدًى وَّمَوْعِظَةٌ لِّلْمُتَّقِيْنَ ۝١٣٨

"यह वज़ाहत है लोगों के लिये और हिदायत और नसीहत है मुत्तक़ीन के हक़ में।"

आयत 139

وَلَا تَهِنُوْا وَلَا تَحْزَنُوْا

"और ना कमज़ोर पड़ो और ना गम खाओ"

وَاَنۡتُمُ الۡاَعۡلَوۡنَ اِنۡ کُنۡتُمۡ مُّؤۡمِنِیۡنَ ﴿۱۳۹﴾

"और तुम ही सर बुलन्द रहोगे अगर तुम मोमिन हुए।"

यह आयत बहुत अहम है। यह अल्लाह तआला का पुख्ता वादा है कि तुम ही ग़ालिब व सरबुलन्द होगे, आखरी फ़तह तुम्हारी होगी, बशर्ते कि तुम मोमिन हुए। यह आयत हमें दावते फ़िक्र देती है कि आज दुनिया में जो हम ज़लील हैं, ग़ालिब व सरबुलन्द नहीं हैं, तो नतीजा क्या निकलता है? यह कि हमारे अन्दर ईमान नहीं है, हम हक़ीक़ी ईमान से महरूम हैं। हम जिस ईमान के मुद्दई हैं वह महज़ एक मौरूसी अक़ीदा है, यक़ीने क़ल्बी और conviction वाला ईमान नहीं है। यह हो नहीं सकता कि उम्मत के अन्दर हक़ीक़ी ईमान मौजूद हो और फिर भी वह दुनिया में ज़लील व ख्वार हो।

आयत 140

اِنۡ یَّمۡسَسۡکُمۡ قَرۡحٌ فَقَدۡ مَسَّ الۡقَوۡمَ قَرۡحٌ مِّثۡلُهٗ ؕ

"अगर तुम्हें अब चरका लगा है तो तुम्हारे दुश्मन को भी ऐसा ही चरका इससे पहले लग चुका है।"

अहले ईमान को गज़वा-ए-ओहद में इतनी बड़ी चोट पहुँची थी कि सत्तर सहाबा रज़ि० शहीद हो गये। उनमें हज़रत हमज़ा रज़ि० भी थे और मुसअब बिन उमैर रज़ि० भी। अन्सार का कोई घराना ऐसा नहीं था जिसका कोई फ़र्द शहीद ना हुआ हो। रसूल अल्लाह ﷺ और मुस्लमान जब मदीना वापस आये तो हर घर में कोहराम मचा हुआ था। उस वक़्त तक मय्यत पर बैन करने की मुमानियत नहीं हुई थी। औरतें मरसिये कह रही थीं, बैन (नौहा) कर रही थीं, मातम कर रही थीं। इस हालत में खुद आँहुज़ूर ﷺ की ज़बाने मुबारक से अल्फ़ाज़ निकल गये: لٰكِنَّ حَمْزَةَ لَا بَوَاكِيَ لَهٗ![1] "हाय हमज़ा के लिये तो कोई रोने वालियाँ भी नहीं हैं!" क्योंकि मदीना में हज़रत हमज़ा रज़ि० की कोई रिश्तेदार ख्वातीन नहीं थीं। हमज़ा रज़ि० तो मुहाजिर थे। अन्सार के घरानों की ख्वातीन अपने-अपने मकतूलों पर आँसू बहा रही थीं और बैन (नौहा) कर रही थीं। फिर अन्सार ने अपने घरों से जाकर ख्वातीन को हज़रत हमज़ा रज़ि० की हमशीरा हज़रत सफ़िया रज़ि० के घर भेजा कि वहाँ जाकर ताज़ियत करें। बहरहाल दुःख तो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ को भी पहुँचा है। आख़िर आप ﷺ के सीने के अन्दर एक हस्सास दिल था, पत्थर का कोई टुकड़ा तो नहीं था। यहाँ अल्लाह तआला अहले ईमान की दिलजोई के लिये फ़रमा रहा है कि इतने ग़मगीन ना हो, इतने मलूल ना हो, इतने दिल गिरफ्ता ना हो। इस वक़्त अगर तुम्हें कोई चरका लगा है तो तुम्हारे दुश्मन को इस जैसा चरका इससे पहले लग चुका है। एक साल पहले उनके भी सत्तर अफ़राद मारे गये थे।

وَتِلۡكَ الۡاَیَّامُ نُدَاوِلُهَا بَیۡنَ النَّاسِ ۚ

"यह तो दिन हैं जिनको हम लोगों में उलट-फेर करते रहते हैं।"

यह ज़माने के नशेबो फ़राज़ हैं जिन्हें हम लोगों के दरमियान गर्दिश देते रहते हैं। किसी क़ौम को हम एक सी कैफ़ियत में नहीं रखते।

وَلِیَعۡلَمَ اللّٰهُ الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡا

"और यह इसलिये होता है कि अल्लाह देख ले कि कौन हक़ीक़तन मोमिन हैं"

अगर इम्तिहान और आज़माइश ना आये, तकलीफ़ ना आये क़ुर्बानी ना देनी पड़े, कोई ज़क ना पहुँचे तो कैसे पता चले कि हक़ीक़ी मोमिन कौन है? इम्तिहान व आज़माइश से तो पता चलता है कि कौन साबित क़दम रहा। अल्लाह तआला जानना चाहता है, देखना चाहता है, ज़ाहिर करना चाहता है कि किसने अपना सब कुछ लगा दिया? किसने सब्र किया?

وَیَتَّخِذَ مِنۡکُمۡ شُهَدَآءَ ؕ

"और वह चाहता है कि तुम में से कुछ को मक़ामे शहादत अता करे।"

उन्हें अपनी गवाही के लिये क़ुबूल कर ले।

وَاللّٰهُ لَا یُحِبُّ الظّٰلِمِیۡنَ ﴿۱۴۰﴾

"अल्लाह ज़ालिमों को पसंद नहीं करता।"

अगर तुम्हें तकलीफ़ पहुँची है तो इसका यह मतलब नहीं है कि अल्लाह ने कुफ्फ़ार की मदद की है और उनको पसंद किया है (माज़ अल्लाह!)

आयत 141

وَلِيُمَحِّصَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَمْحَقَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿١٤١﴾

"और यह इसलिये हुआ है कि अल्लाह अहले ईमान को बिल्कुल पाक पाक-साफ़ कर दे और काफिरों को मिटा दे।"

मुस्लमानों में से ख़ास तौर पर अन्सारे मदीना की आज़माइश मतलूब है जो अभी ईमान लाये हैं, उनमें कुछ पुख्ता ईमान वाले हैं, कुछ कमज़ोर ईमान वाले हैं और कुछ मुनाफ़िक़ भी हैं। अल्लाह चाहता है कि वह पूरे तरीक़े से पुख्ता हो जायें, और अगर कोई कच्चा ही रहता है तो वह अहले ईमान से कट जाये, ताकि बहैसियते मज्मुई जमाती क़ुव्वत को कोई ज़ौफ़ (नुक़सान) ना पहुँचे। तो यह जो तुम्हारे अन्दर हर तरह के लोग गडमड हो गये हैं कि कुछ मोमिन सादिक़ हैं, पुख्ता ईमान वाले हैं, कुछ कमज़ोर ईमान वाले हैं और कुछ मुनाफ़िक़ भी हैं, तो अल्लाह तआला ने यह तम्हीस की है कि सबको छाँट कर अलग कर दिया है। चुनाँचे अब्दुल्लाह बिन उबइ और उसके तीन सौ साथियों के निफ़ाक़ का पर्दा चाक हो गया, वरना उनकी असलियत तुम पर कैसे ज़ाहिर होती? "बहस व तम्हीस" हम उर्दू में भी इस्तेमाल करते हैं। बहस के मायने हैं कुरेदना और तम्हीस अलग-अलग करना।

आयत 142

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ

"क्या तुमने समझा था कि जन्नत में यूँ ही दाख़िल हो जाओगे?"

وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ وَيَعْلَمَ الصّٰبِرِيْنَ ﴿١٤٢﴾

"हालाँकि अभी तो अल्लाह ने देखा ही नहीं है तुम में से कौन वाक़िअतन (अल्लाह की राह में) जिहाद करने वाले हैं और सब्र व इस्तक़ामत का मुज़ाहिरा करने वाले हैं।"

गोया ~ *"अभी इश्क़ के इम्तिहान और भी हैं!"* अभी तो तुम्हारे लिये इस रास्ते में कड़ी से कड़ी मंज़िलें आने वाली हैं। याद रहे कि यह मज़मून हम सूरतुल बक़रह की आयत 214 में पढ़ आये हैं। नोट कीजिये कि ज़ेरे मुताअला आयत का नम्बर 142 है, यानि हंदसों की सिर्फ़ तरतीब बदली है।

आयत 143

وَلَقَدْ كُنْتُمْ تَمَنَّوْنَ الْمَوْتَ مِنْ قَبْلِ اَنْ تَلْقَوْهُ

"और तुम तो मौत की तमन्ना कर रहे थे इससे पहले कि उससे मुलाक़ात होती।"

فَقَدْ رَاَيْتُمُوْهُ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ﴿١٤٣﴾

"सो अब तुमने उसको देख लिया है अपनी आँखों से।"

यहाँ रुए सुखन उन लोगों की तरफ़ है जो नये-नये ईमान लाये थे और उनमें से ख़ास तौर पर नौजवानों ने कहा था कि हमें तो शहादत चाहिये और हम तो खुले मैदान में जाकर मुक़ाबला करेंगे। उनके जज़्बात पर थोड़ा सा तबसिरा हो रहा है कि उस वक़्त तो जोशे क़िताल और ज़ोक़े शहादत का इज़हार हो रहा था, अब तुमने मौत देख ली है ना! तो यह है मौत जिसे इन्सान इतनी आसानी के साथ क़ुबूल नहीं करता।

आयात 144 से 148 तक

وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ اَفَا۟ىِٕنْ مَّاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ ۭ وَمَنْ يَّنْقَلِبْ عَلٰى
عَقِبَيْهِ فَلَنْ يَّضُرَّ اللّٰهَ شَـيْـــًٔا ۭ وَسَيَجْزِي اللّٰهُ الشّٰكِرِيْنَ ١٤٤ وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تَمُوْتَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ كِتٰبًا مُّؤَجَّلًا ۭ
وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِهٖ مِنْھَا ۚ وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِهٖ مِنْھَا ۭ وَسَنَجْزِي الشّٰكِرِيْنَ ١٤٥ وَكَاَيِّنْ مِّنْ نَّبِيٍّ
قٰتَلَ ۙ مَعَهٗ رِبِّيُّوْنَ كَثِيْرٌ ۚ فَمَا وَهَنُوْا لِمَآ اَصَابَھُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَمَا ضَعُفُوْا وَمَا اسْتَكَانُوْا ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الصّٰبِرِيْنَ ١٤٦
وَمَا كَانَ قَوْلَھُمْ اِلَّآ اَنْ قَالُوْا رَبَّنَا اغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا وَاِسْرَافَنَا فِيْٓ اَمْرِنَا وَثَبِّتْ اَقْدَامَنَا وَانْصُرْنَا عَلَي الْقَوْمِ
الْكٰفِرِيْنَ ١٤٧ فَاٰتٰىھُمُ اللّٰهُ ثَوَابَ الدُّنْيَا وَحُسْنَ ثَوَابِ الْاٰخِرَةِ ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ١٤٨

आयत 144

وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ

"मुहम्मद (ﷺ) इसके सिवा कुछ नहीं कि बस एक रसूल हैं।"

गज़वा-ए-ओहद के दौरान जब यह अफ़वाह उड़ गई कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का इन्तेक़ाल हो गया है तो बाज़ लोग बहुत दिल गिरफ्ता हो गये कि अब किस लिये जंग करनी है? हज़रत उमर रज़ि० भी उनमें से थे। आप रज़ि० ने रसूल अल्लाह ﷺ की वफ़ात की ख़बर सुन कर तलवार फेंक दी और दिल बर्दाश्ता होकर बैठ गये कि अब हमने जंग करके क्या लेना है! यहाँ इस तर्ज़े अमल पर गिरफ़्त हो रही है कि तुम्हारा यह रवैय्या गलत था। मुहम्मद ﷺ इसके सिवा कुछ नहीं हैं कि वह अल्लाह के रसूल हैं, वह मअबूद तो नहीं हैं। तुम उनके लिये जिहाद नहीं कर रहे, बल्कि अल्लाह के लिये कर रहे हो, अल्लाह के दीन के गलबे के लिये अपने जान व माल क़ुर्बान कर रहे हो। मुहम्मद ﷺ तो अल्लाह के रसूल हैं।

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ

"उनसे पहले भी बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं।"

اَفَا۟ىِٕنْ مَّاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ ۭ

"तो क्या अगर उनका इन्तेक़ाल हो जाये या क़त्ल कर दिये जायें तो तुम अपनी एड़ियों के बल लौट जाओगे?"

क्या इस सूरत में तुम उल्टे पाँव राहे हक़ से फिर जाओगे? क्या यही तुम्हारे दीन और ईमान की हक़ीक़त है?

وَمَنْ يَّنْقَلِبْ عَلٰى عَقِبَيْهِ فَلَنْ يَّضُرَّ اللّٰهَ شَـيْـــًٔا ۭ

"और जो कोई भी अपनी एड़ियों के बल लौट जायेगा वह अल्लाह का कुछ भी नुक़सान ना करेगा।"

وَسَيَجْزِي اللّٰهُ الشّٰكِرِيْنَ ١٤٤

"हाँ अल्लाह बदला देगा शुक्र करने वालों को।"

हज़रत उमर रज़ि० चूँकि जज़्बाती इन्सान थे लिहाज़ा रसूल अल्लाह ﷺ की वफ़ात की ख़बर सुन कर हौंसला छोड़ गये। आप रज़ि० की तक़रीबन यही कैफ़ियत फिर हुज़ूर ﷺ के इन्तेक़ाल पर हो गयी थी। आप रज़ि० तलवार सूंत कर बैठ गये थे कि जो कहेगा कि मुहम्मद ﷺ का इन्तेक़ाल हो गया है मैं उसका सर उड़ा दूँगा। हज़रत अबु बक्र रज़ि० "सानी-ए-इस्लाम व गार-ओ-बदर व क़ब्र" उस वक़्त मदीना के मज़ाफ़ात में थे। आप रज़ि० आते ही सीधे अपनी बेटी हज़रत आयशा रज़ि० के हुजरे में गये। रसूल अल्लाह ﷺ के चेहरे मुबारक पर चादर थी, आप रज़ि० ने चादर हटाई और झुक कर आँहुज़ूर ﷺ की पेशानी को बोसा दिया और रो दिये। फिर कहा: ऐ अल्लाह के रसूल, मेरे माँ-बाप आप ﷺ पर क़ुर्बान! अल्लाह तआला आप ﷺ पर दो मौतें जमा नहीं करेगा। यानि अब दोबारा आप ﷺ पर मौत वारिद नहीं होगी, अब तो आप ﷺ को हयाते जावेदानी हासिल हो चुकी है। हज़रत अबु बक्र रज़ि० बाहर आये और लोगों से ख़िताब शुरू किया तो हज़रत उमर रज़ि० बैठ गये। हज़रत अबु बक्र रज़ि० ने अल्लाह तआला की हम्दो सना के बाद फ़रमाया: مَنْ كَانَ يَعْبُدُ مُحَمَّدًا فَاِنَّ مُحَمَّدًا قَدْ مَاتَ، وَمَنْ كَانَ يَعْبُدُ اللّٰهَ فَاِنَّ اللّٰهَ حَيٌّ لَا يَمُوْتُ "जो कोई मुहम्मद ﷺ की इबादत करता था

वह जान ले कि मुहम्मद ﷺ का इन्तेक़ाल हो चुका है, और जो कोई अल्लाह की इबादत करता था उसे मालूम हो कि अल्लाह तो ज़िन्दा है, जिसे मौत नहीं आयेगी।" इसके बाद आप रज़ि० ने यह आयत तिलावत फ़रमायी:

وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ اَفَا۟ىِٕنْ مَّاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ ۭ وَمَنْ يَّنْقَلِبْ عَلٰي عَقِبَيْهِ فَلَنْ يَّضُرَّ اللّٰهَ شَـيْـــًٔـا ۭ وَسَيَجْزِي اللّٰهُ الشّٰكِرِيْنَ ﴿١٤٤﴾

हज़रत अबु बक्र रज़ि० की ज़बानी यह आयत सुन कर लोगों को ऐसे महसूस होता था कि जैसे यह आयत उसी वक़्त नाज़िल हुई हो।(1)

आयत 145

وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تَمُوْتَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ

"और किसी जान के लिये यह मुमकिन नहीं है कि वह मर सके मगर अल्लाह के हुक्म से"

كِتٰبًا مُّؤَجَّلًا ۭ

"(हर एक की मौत का) वक़्त मुक़र्रर लिखा हुआ है।"

अज्ले मुअय्यन के साथ हर एक का वक़्त तय है। लिहाज़ा इन्सान की बेहतरीन मुहाफ़िज़ खुद मौत है। आपकी मौत का जो वक़्त मुक़र्रर है उससे पहले कोई आपके लिये मौत नहीं ला सकता।

وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِهٖ مِنْھَا ۚ

"जो कोई दुनिया का अज्र व सवाब चाहता है हम उसे उसमें से दे देते हैं।"

وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِهٖ مِنْھَا ۭ

"और जो वाक़िअतन आख़िरत का अज्र चाहता है हम उसे उसमें से देंगे।"

यह मज़मून सूरतुल बक़रह की आयात 200-202 में हज के सिलसिले में आ चुका है।

وَسَنَجْزِي الشّٰكِرِيْنَ ﴿١٤٥﴾

"और शुक्र करने वालों को हम भरपूर जज़ा देंगे।"

आयत 146

وَكَاَيِّنْ مِّنْ نَّبِيٍّ قٰتَلَ ۙ مَعَهٗ رِبِّيُّوْنَ كَثِيْرٌ ۚ

"कितने ही नबी ऐसे गुज़रे हैं कि जिनके साथ होकर बहुत से अल्लाह वालों ने जंग की।"

ऐ मुस्लमानों! तुम्हारे साथ जो यह वाक़िया पेश आया है वह पहला तो नहीं है। अल्लाह के बहुत से नबी ऐसे गुज़रे हैं जिनकी मईयत (साथ) में बहुत सारे अल्लाह वालों ने, अल्लाह के मानने और चाहने वालों ने, अल्लाह के दीवानों और मतवालों ने, अल्लाह के गुलामों और आशिक़ों ने अल्लाह के दुश्मनों से जंगें की हैं। "رِبِّيّ" और "رَبّانی" का लफ़्ज़ आज भी यहूदियों के यहाँ इस्तेमाल होता है।

فَمَا وَهَنُوْا لِمَآ اَصَابَھُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"तो अल्लाह की राह में जो भी तकलीफ़ें उन पर आयीं उस पर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी"

وَمَا ضَعُفُوْا وَمَا اسْتَكَانُوْا ۭ

"और ना उन्होंने कमज़ोरी दिखाई और ना ही (बातिल के आगे) सर निगो (सर झुकाना) हुए।"

وَاللّٰهُ يُحِبُّ الصّٰبِرِيْنَ ﴿١٤٦﴾

"और अल्लाह तआला को ऐसे ही साबिरों से मोहब्बत है।"

तो ऐ मुस्लमानों! उनका किरदार अपनाओ और दिल गिरफ्ता ना हो।

आयत 147

وَمَا كَانَ قَوْلَهُمْ اِلَّآ اَنْ قَالُوْا رَبَّنَا اغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا وَاِسْرَافَنَا فِيْٓ اَمْرِنَا

"और उनका तो हर मरहले पर यही क़ौल होता था कि वह दुआ करते थे कि ऐ रब हमारे! बख्श दे हमें हमारे गुनाह और अगर हमसे अपने किसी मामले में हद से तजावुज़ हो गया हो तो उसे माफ़ फरमा दे"

وَثَبِّتْ اَقْدَامَنَا وَانْصُرْنَا عَلَي الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ١٤٧

"और हमारे क़दमों को जमा दे और हमारी मदद फ़रमा काफ़िरों के मुक़ाबले में।"

हज़रत तालूत के साथियों की भी यही दुआ थी और सूरतुल बक़रह के इख्तताम पर आने वाली दुआ के अल्फ़ाज़ भी यही थे: {فَانْصُرْنَا عَلَي الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ}।

आयत 148

فَاٰتٰىھُمُ اللّٰهُ ثَوَابَ الدُّنْيَا وَحُسْنَ ثَوَابِ الْاٰخِرَةِ

"तो उन लोगों को अल्लाह तआला ने दुनिया का सवाब भी अता फ़रमाया और आख़िरत के सवाब का भी बहुत ही उम्दा हिस्सा अता किया।"

उन्हें दुनिया की सरबुलन्दी भी दी, फ़तुहात से भी नवाज़ा और आख़िरत का बहतरीन अज्र भी अता फ़रमाया।

وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ١٤٨

"और अल्लाह तआला ऐसे ही मोहसिनीन को पसंद करता है।"

आयात 149 से 155 तक

يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يَرُدُّوْكُمْ عَلٰٓي اَعْقَابِكُمْ فَتَنْقَلِبُوْا خٰسِرِيْنَ ١٤٩ بَلِ اللّٰهُ مَوْلٰىكُمْ ۚ وَھُوَ
خَيْرُ النّٰصِرِيْنَ ١٥٠ سَنُلْقِيْ فِيْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الرُّعْبَ بِمَآ اَشْرَكُوْا بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ سُلْطٰنًا ۚ وَمَاْوٰىھُمُ النَّارُ ۭ
وَبِئْسَ مَثْوَى الظّٰلِمِيْنَ ١٥١ وَلَقَدْ صَدَقَكُمُ اللّٰهُ وَعْدَهٗٓ اِذْ تَحُسُّوْنَھُمْ بِاِذْنِهٖ ۚ حَتّٰٓي اِذَا فَشِلْتُمْ وَ تَنَازَعْتُمْ فِي الْاَمْرِ
وَعَصَيْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَآ اَرٰىكُمْ مَّا تُحِبُّوْنَ ۭ مِنْكُمْ مَّنْ يُّرِيْدُ الدُّنْيَا وَمِنْكُمْ مَّنْ يُّرِيْدُ الْاٰخِرَةَ ۚ ثُمَّ صَرَفَكُمْ عَنْھُمْ
لِيَبْتَلِيَكُمْ ۚ وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ ۭ وَاللّٰهُ ذُوْ فَضْلٍ عَلَي الْمُؤْمِنِيْنَ ١٥٢ اِذْ تُصْعِدُوْنَ وَلَا تَلْوٗنَ عَلٰٓي اَحَدٍ وَّالرَّسُوْلُ
يَدْعُوْكُمْ فِيْٓ اُخْرٰىكُمْ فَاَثَابَكُمْ غَمًّۢا بِغَمٍّ لِّكَيْلَا تَحْزَنُوْا عَلٰي مَا فَاتَكُمْ وَلَا مَآ اَصَابَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ١٥٣
ثُمَّ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْۢ بَعْدِ الْغَمِّ اَمَنَةً نُّعَاسًا يَّغْشٰى طَاۗىِٕفَةً مِّنْكُمْ ۙ وَطَاۗىِٕفَةٌ قَدْ اَهَمَّتْھُمْ اَنْفُسُھُمْ يَظُنُّوْنَ بِاللّٰهِ غَيْرَ
الْحَقِّ ظَنَّ الْجَاهِلِيَّةِ ۭ يَقُوْلُوْنَ ھَلْ لَّنَا مِنَ الْاَمْرِ مِنْ شَيْءٍ ۭ قُلْ اِنَّ الْاَمْرَ كُلَّهٗ لِلّٰهِ ۭ يُخْفُوْنَ فِيْٓ اَنْفُسِھِمْ مَّا لَا يُبْدُوْنَ لَكَ ۭ
يَقُوْلُوْنَ لَوْ كَانَ لَنَا مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ مَّا قُتِلْنَا ھٰهُنَا ۭ قُلْ لَّوْ كُنْتُمْ فِيْ بُيُوْتِكُمْ لَبَرَزَ الَّذِيْنَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ اِلٰى

مَضَاجِعِهِمْ ۚ وَلِيَبْتَلِيَ اللّٰهُ مَا فِيْ صُدُوْرِكُمْ وَلِيُمَحِّصَ مَا فِيْ قُلُوْبِكُمْ ۗ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ۝ اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَلَّوْا
مِنْكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ۙ اِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ الشَّيْطٰنُ بِبَعْضِ مَا كَسَبُوْا ۚ وَلَقَدْ عَفَا اللّٰهُ عَنْهُمْ ۗ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ۝

आयत 149

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يَرُدُّوْكُمْ عَلٰٓي اَعْقَابِكُمْ

“ऐ अहले ईमान! अगर तुम उन लोगों का कहना मानोगे जिन्होंने कुफ़्र की रविश इख़्तियार की है तो वह तुम्हें तुम्हारी एड़ियों के बल वापस ले जायेंगे”

فَتَنْقَلِبُوْا خٰسِرِيْنَ ۝

“फिर तुम बिल्कुल नामुराद होकर रह जाओगे।”

आयत 150

بَلِ اللّٰهُ مَوْلٰىكُمْ ۚ

“हक़ीक़त यह है कि तुम्हारा मौला तो अल्लाह है।”

तुम्हें यह समझना चाहिये कि तुम्हारा मौला, मददगार, पुश्तपनाह, साथी और हिमायती अल्लाह है।

وَھُوَ خَيْرُ النّٰصِرِيْنَ ۝

“और वही है जो सबसे अच्छा मददगार है।”

आयत 151

سَنُلْقِيْ فِيْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الرُّعْبَ

“हम अनक़रीब काफ़िरों के दिलों में रौब डाल देंगे”

بِمَآ اَشْرَكُوْا بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ سُلْطٰنًا ۚ

“इस सबब से कि उन्होंने ऐसी चीज़ों को अल्लाह का शरीक ठहराया जिनके हक़ में उसने कोई सनद नहीं उतारी।”

وَمَاْوٰىھُمُ النَّارُ ۭ وَبِئْسَ مَثْوَى الظّٰلِمِيْنَ ۝

“और उनका ठिकाना जहन्नम है, और बहुत ही बुरा ठिकाना है उन ज़ालिमों के लिये।”

इस आयत में दरअसल तौजीह (खुलासा) बयान हो रही है कि गज़वा-ए-ओहद में मुशरिकीन वापस क्यों चले गये, जबकि उनको इस दर्जा खुली फ़तह हासिल हो चुकी थी और मुस्लमानों को हज़ीमत उठाना पड़ी थी। रसूल अल्लाह ﷺ और सहाबा किराम रज़ि० ने पहाड़ के ऊपर चढ़ कर पनाह ले ली थी। खालिद बिन वलीद कह रहे थे कि हमें उनका तअक़्क़ुब करना चाहिये और इस मामले को ख़त्म कर देना चाहिये। लेकिन अबु सुफ़ियान के दिल में अल्लाह ने उस वक़्त ऐसा रौब डाल दिया कि वह लश्कर को लेकर वहाँ से चले गये। वरना वाक़िअतन उस वक़्त सूरते हाल बहुत मख्दूश (बुरी) हो चुकी थी।

आयत 152

وَلَقَدْ صَدَقَكُمُ اللّٰهُ وَعْدَهٗٓ اِذْ تَحُسُّوْنَھُمْ بِاِذْنِهٖ ۚ

“और अल्लाह ने तो तुमसे (ताइद व नुसरत का) जो वादा किया था वह पूरा कर दिया जबकि तुन उनको तहे तैग़ (क़त्ल) कर रहे थे अल्लाह के हुक्म से।”

गज़वा-ए-ओहद में जो आरज़ी शिकस्त हो गयी थी और मुस्लमानों को ज़क पहुँची थी, जिससे उनके दिल ज़ख़्मी थे उसके ज़िमन में अब यह आयत एक क़ौले फ़ैसल के अंदाज़ में आयी है कि देखो मुस्लमानों! तुम हमसे कोई शिकायत नहीं कर सकते, अल्लाह ने तुमसे ताइद व नुसरत का जो वादा किया था वह पूरा कर दिया था जबकि तुम उन्हें अल्लाह के हुक्म से क़त्ल कर रहे थे, गाजर-मूली की तरह काट रहे थे। तुम्हें फ़तह हासिल हो गयी थी और हमारा वादा पूरा हो चुका था।

حَتّٰٓى اِذَا فَشِلْتُمْ وَ تَنَازَعْتُمْ فِى الْاَمْرِ

"यहाँ तक कि जब तुम ढीले पड़ गये और अम्र में तुमने झगड़ा किया"

فَشِلْتُمْका तर्जुमा बाज़ मुतर्जिमीन ने कुछ और भी किया है, लेकिन मेरे नज़दीक यहाँ नज़्म (Discipline) को ढीला करना मुराद है। इस्लामी नज़्मे जमाअत में सम-ओ-ताअत (Listen & Obey) को बुनियादी अहमियत हासिल है, और ज़ाहिर है कि सम-ओ-ताअत में एक ही शख़्स की इताअत मक़सूद नहीं होती। रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत भी फ़र्ज़ थी और आप ﷺ अगर किसी को अमीर मुक़र्रर करते तो उसकी इताअत भी फ़र्ज़ थी। हज़रत अबु हुरैरा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

مَنْ اَطَاعَنِىْ فَقَدْ اَطَاعَ اللهَ، وَمَنْ عَصَانِىْ فَقَدْ عَصَى اللهَ، وَمَنْ اَطَاعَ اَمِيْرِىْ فَقَدْ اَطَانِىْ، وَمَنْ عَصٰى اَمِيْرِىْ فَقَدْ عَصَانِىْ

"जिसने मेरी इताअत की उसने अल्लाह की इताअत की, और जिसने मेरी नाफ़रमानी की उसने अल्लाह की नाफ़रमानी की। और जिसने मेरे मुक़र्रर करदा अमीर की इताअत की उसने मेरी इताअत की, और जिसने मेरे नामज़दकरदा अमीर की नाफ़रमानी की उसने मेरी नाफ़रमानी की।"

अगरचे रसूल अल्लाह ﷺ के हुक्म की तो उन्होंने तावील कर ली थी कि हुज़ूर ﷺ ने जो यह फ़रमाया था कि अगर हम सब भी अल्लाह की राह में क़त्ल हो जायें और तुम देखो कि चीलें और कव्वे हमारा गोश्त खा रहे हैं तब भी यहाँ से ना हटना, तो यह शिकस्त की सूरत में था, लेकिन अब तो फ़तह हो गयी है। चुनाँचे उन्होंने जान-बूझ कर अल्लाह के रसूल ﷺ के हुक्म की खिलाफ़वर्ज़ी नहीं की थी। लेकिन उन्होंने अपने मक़ामी अमीर (लोकल कमांडर) के हुक्म की खिलाफ़वर्ज़ी की थी। मेरे नज़दीक यहाँ "**وَعَصَيْتُمْ**" से यही हुक्म अदूली मुराद है, इस्लामी नज़्मे जमाअत में ऊपर से लेकर नीचे तक, सिपहसालार से लेकर लोकल कमांडर तक, दर्जा-ब-दर्जा निज़ामे सम-ओ-ताअत की पाबंदी ज़रूरी है। फ़ौज का एक सिपहसालार है, लेकिन फिर पूरी फ़ौज के कई हिस्से होते हैं और हर एक का एक अमीर होता है। मैसरह, मेमना, क़ल्ब और हरावल दस्ते वगैरह, हर एक का एक कमांडर होता है। अब अगर उन कमांडरों के अहकाम से सरताबी होगी तो ऐसी फ़ौज का जो अंजाम होगा वह मालूम है। चुनाँचे एक जमाअत के अन्दर दर्जा-ब-दर्जा जो भी निज़ामे सम-ओ-ताअत है उसकी पूरी-पूरी पाबन्दी ज़रूरी है।

وَعَصَيْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَآ اَرٰىكُمْ مَّا تُحِبُّوْنَ ۭ

"और तुमने नाफ़रमानी की इसके बाद कि तुमने वह चीज़ देख ली जो तुम्हें महबूब है।"

{**عَصَيْتُمْ**} के बारे में वज़ाहत हो चुकी है कि इससे मुराद अल्लाह के रसूल ﷺ की नाफ़रमानी नहीं, बल्कि लोकल कमांडर की नाफ़रमानी है। {مِّنْۢ بَعْدِ مَآ اَرٰىكُمْ مَّا تُحِبُّوْنَ ۭ} से अक्सर मुफ़स्सिरीन ने माले ग़नीमत मुराद लिया है, कि दर्रे पर मामूर हज़रात माले ग़नीमत की तलब में दर्रा छोड़ कर चले गये, लेकिन मेरे नज़दीक यह बात दुरुस्त नहीं है। इसलिये कि माले ग़नीमत की तक़सीम का क़ानून तो गज़वा-ए-बद्र के बाद सूरतुल अन्फ़ाल में नाज़िल हो चुका था। उसकी रू से चाहे कोई शख़्स कुछ जमा करे या ना करे उसे माले ग़नीमत में से बराबर का हिस्सा मिलेगा। यहाँ { مِّنْۢ بَعْدِ مَآ اَرٰىكُمْ } {مَّا تُحِبُّوْنَ ۭ} से मुराद दरअसल "फ़तह" है और इसके लिये "القُرآن يُفسِّر بعضُه بَعضًا" की रू से सूरतुस्सफ़ की यह आयत (आयत:13) हमारी रहनुमाई करती है: {وَاُخْرٰى تُحِبُّوْنَهَا ۭ نَصْرٌ مِّنَ اللّٰهِ وَفَتْحٌ قَرِيْبٌ ۭ} गोया बंदा-ए-मोमिन को दुनिया में फ़तह व नुसरत महबूब होती है, लेकिन उसे इसको अपना मक़सूद नहीं बनाना। उसका मक़सूद अल्लाह की रज़ाजोई और अपने फ़र्ज़ की अदायगी है। बाक़ी कामयाबी या नाकामी अल्लाह की मर्ज़ी और उसकी हिकमत के तहत होती है। अल्लाह कब फ़तह लाना चाहता है वह बेहतर जानता है।

مِنۡكُمۡ مَّنۡ يُّرِيۡدُ الدُّنۡيَا

"तुम में से वह भी हैं जो दुनिया चाहते हैं"

यानि वह ख्वाहिश रखते हैं कि दुनिया में फ़तह व नुसरत और कामयाबी हासिल हो जाये, हमारा बोल-बाला हो जाये, हमारी हुकूमत क़ायम हो जाये।

وَمِنۡكُمۡ مَّنۡ يُّرِيۡدُ الۡاٰخِرَةَ ۚ

"और तुम में से वह भी हैं जो सिर्फ़ आख़िरत के तलबगार हैं।"

ثُمَّ صَرَفَكُمۡ عَنۡهُمۡ لِيَبۡتَلِيَكُمۡ ۚ

"फिर अल्लाह ने तुम्हारा रुख फेर दिया उनकी तरफ़ से ताकि तुम्हारी आज़माइश करे।"

पहले वह भाग रहे थे और तुम उनका तअक्क़ुब कर रहे थे, अब मामला उल्टा हो गया कि तुम पसपा (पीछे हटना) हो गये और अपनी जानें बचाने के लिये इधर-उधर जाये पनाह (बचने की जगह) ढूँढने लगे। तुम्हारी यह पसपाई तुम्हारे लिये आज़माइश थी।

وَلَقَدۡ عَفَا عَنۡكُمۡ ؕ

"और अल्लाह तुम्हें माफ़ कर चुका है।"

तुम में से जिस किसी से जो भी खता हुई अल्लाह ने उसे माफ़ फ़रमा दिया।

وَاللّٰهُ ذُوۡ فَضۡلٍ عَلَى الۡمُؤۡمِنِيۡنَ ﴿۱۵۲﴾

"और अल्लाह तआला अहले ईमान के हक़ में बहुत फ़ज़ल वाला है।"

आयत 153

اِذۡ تُصۡعِدُوۡنَ وَلَا تَلۡوٗنَ عَلٰٓى اَحَدٍ

"याद करो, जबकि तुम (पहाड़ पर) चढ़े चले जा रहे थे (जान बचाने के लिये) और किसी की तरफ़ मुड़ कर भी नहीं देख रहे थे"

وَّالرَّسُوۡلُ يَدۡعُوۡكُمۡ فِىۡٓ اُخۡرٰٮكُمۡ

"और रसूल (ﷺ) तुम्हें पुकार रहे थे तुम्हारे पीछे से"

ग़ज़वा-ए-ओहद में खालिद बिन वलीद के अचानक हमले से एक भगदड़ सी मच गयी थी। बाज़ सहाबा रज़ि० ने रसूल अल्लाह ﷺ को अपने हिफ़ाज़ती हिसार में ले लिया था और उन्होंने अपने जिस्मों को ढाल बना कर आँहुज़ूर ﷺ की हिफ़ाज़त की। बहुत से लोग सरासीमा (भौचक्के) होकर अपनी जान बचाने की खातिर भाग खड़े हुए। बाज़ कोहे ओहद पर चढ़े जा रहे थे। अल्लाह के रसूल ﷺ उन्हें पुकार-पुकार कर वापस बुला रहे थे।

فَاَثَابَكُمۡ غَمًّا ۢ بِغَمٍّ

"तो अल्लाह तआला तुम पर ग़म के बाद ग़म मुसलसल डालता रहा"

لِّكَيۡلَا تَحۡزَنُوۡا عَلٰى مَا فَاتَكُمۡ وَلَا مَآ اَصَابَكُمۡ ؕ

"ताकि (आइन्दा के लिये तुम्हें यह सबक़ मिले कि) तुम ग़मगीन ना हुआ करो उस पर कि जो तुम्हारे हाथ से जाता रहे और ना उस तकलीफ़ पर कि जो तुम पर आ पड़े।"

यानि *"रन्ज से ख़ूंगर हुआ इन्सान तो मिट जाता है रन्ज!"* आदमी को अगर कभी इत्तेफ़ाक़न ही रन्ज व ग़म का सामना करना पड़े तो उसका असर बहुत ज़्यादा होता है, लेकिन जब पे-दर-पे रन्ज व ग़म उठाने पड़ें तो उनकी शिद्दत में कमी वाक़ेअ हो जाती है। दामने ओहद में मुसलमानों को पे-दर-पे तकालीफ़ बर्दाश्त करना पड़ीं। सबसे बड़ा रन्ज जो पेश आया वह हुज़ूर ﷺ के इन्तेक़ाल की ख़बर थी, जिस पर किसी को अपने तन-बदन का तो होश ही नहीं रहा कि खुद उसको क्या ज़ख्म लगा है। इस तरह अल्लाह तआला ने उस वक़्त की कैफ़ियत में एक तख्फ़ीफ़ पैदा कर दी।

وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝١٥٣

"और अल्लाह बाख़बर है उससे जो तुम कर रहे थे।"

आयत 154

ثُمَّ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْۢ بَعْدِ الْغَمِّ اَمَنَةً

"फिर उस ग़म के बाद अल्लाह तआला ने तुम पर इत्मिनान नाज़िल फ़रमाया"

نُّعَاسًا يَّغْشٰى طَاۗىِٕفَةً مِّنْكُمْ ۙ

"यानि नींद जो तुम में से एक गिरोह पर तारी हो गयी"

इन्सान को नींद जो आती है यह इत्मिनाने क़ल्ब का मज़हर होती है कि जैसे अब उसने सब कुछ भुला दिया। ऐन हालते जंग में ऐसी कैफ़ियत अल्लाह की रहमत का मज़हर थी।

وَطَاۗىِٕفَةٌ قَدْ اَهَمَّتْھُمْ اَنْفُسُھُمْ

"और एक गिरोह ऐसा था कि जिन्हें अपनी जानों की पड़ी हुई थी"

يَظُنُّوْنَ بِاللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ ظَنَّ الْجَاهِلِيَّةِ ۭ

"वह अल्लाह के बारे में नाहक़ जहालत वाले गुमान कर रहे थे।"

अब्दुल्लाह बिन उबई और उसके तीन सौ साथी तो मैदाने जंग के रास्ते ही से वापस हो गये थे। उसके बाद भी अगर मुसलमानों की जमात में कुछ मुनाफ़िक़ीन बाक़ी रह गये थे तो उनका हाल यह था कि उस वक़्त उन्हें अपनी जानों के लाले पड़े हुए थे। ऐसी कैफ़ियत में उन्हें ऊँघ कैसे आती? उनका हाल तो यह था कि उनके दिलों में वसवसे आ रहे थे कि अल्लाह ने तो मदद का वादा किया था, लेकिन वह वादा पूरा नही हुआ, अल्लाह की बात सच्ची साबित नहीं हुई। इस तरह उनके दिल व दिमाग में खिलाफ़े हक़ीक़त ज़माना-ए-जाहिलियत के गुमान पैदा हो रहे थे।

يَقُوْلُوْنَ هَلْ لَّنَا مِنَ الْاَمْرِ مِنْ شَيْءٍ ۭ

"वह कह रहे थे कि हमारे लिये भी इख़्तियार में कोई हिस्सा है या नहीं?"

यह वह लोग हो सकते हैं जिन्होंने जंग से क़ब्ल मशवरा दिया था (जैसे हुज़ूर ﷺ की अपनी राय भी थी) कि मदीने के अन्दर महसूर (बंद) रह कर जंग की जाये। जब उनके मशवरे पर अमल नही हुआ तो वह कहने लगे कि इन मामलात में हमारा भी कोई इख़्तियार है या सारी बात मुहम्मद (ﷺ) ही की चलेगी? यह भी जमाती ज़िन्दगी की एक ख़राबी है कि हर शख्स चाहता है कि मेरी बात भी मानी जाये, मेरी राय को भी अहमियत दी जाये। आख़िर हम सब अपने अमीर ही की राय क्यों मानते चले जायें? हमारा भी कुछ इख़्तियार है या नहीं?

قُلْ اِنَّ الْاَمْرَ كُلَّهٗ لِلّٰهِ ۭ

"कह दीजिये कि सारा मामला अल्लाह के इख़्तियार में है।"

يُخْفُوْنَ فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ مَّا لَا يُبْدُوْنَ لَكَ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ) यह अपने दिल में वह बात छुपा रहे हैं जो आप पर ज़ाहिर नहीं कर रहे।"

उनके दिल में क्या है, अब अल्लाह खोल कर बता रहा है।

يَقُوْلُوْنَ لَوْ كَانَ لَنَا مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ مَّا قُتِلْنَا ھٰهُنَا ۭ

"यह (अपने दिल में) कहते हैं कि अगर इख़्तियार में हमारा भी कुछ हिस्सा होता तो हम यहाँ ना मारे जाते।"

अगर हमारी राय मानी जाती, हमारे मशवरे पर अमल होता तो हम यहाँ क़त्ल ना होते। यानि हमारे इतने लोग यहाँ पर शहीद ना होते।

قُلْ لَّوْ كُنْتُمْ فِيْ بُيُوْتِكُمْ

"इनसे कहिये अगर तुम सबके सब अपने घरों में होते"

لَبَرَزَ الَّذِيْنَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ اِلٰى مَضَاجِعِهِمْ ۚ

"तब भी जिन लोगों का क़त्ल होना मुक़द्दर था वह अपनी क़त्लगाहों तक पहुँच कर रहते।"

अल्लाह की मशीयत (मर्ज़ी) में जिनके लिये तय था कि उन्हें शहादत की खलअत फाखरह (लिबास) पहनाई जायेगी वह खुद-ब-खुद अपने घरों से निकाल आते और कशां-कशां (एक-एक करके) उन जगहों पर पहुँच जाते जहाँ उन्होंने खलअत शहादत ज़ेब तन करनी (पहननी) थी। यह तो अल्लाह तआला के फ़ैसले होते हैं, तुम्हारी तदबीर से उनका कोई ताल्लुक़ नहीं है।

وَلِيَبْتَلِيَ اللّٰهُ مَا فِيْ صُدُوْرِكُمْ

"और यह (मामला जो पेश आया) इसलिये था कि अल्लाह उसे आज़मा ले जो कुछ तुम्हारे सीनों में था"

وَلِيُمَحِّصَ مَا فِيْ قُلُوْبِكُمْ ۭ

"और ताकि वह बिल्कुल पाक और खालिस कर दे जो कुछ तुम्हारे दिलों में है।"

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ۝١٥٤

"और अल्लाह तआला सीनों के अन्दर मख्फी (छुपी) बातों को भी जानता है।"

आयत 155

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَلَّوْا مِنْكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ۙ

"तुम में से वह लोग जो मैदाने जंग से चले गये उस दिन जब दो गिरोह एक-दूसरे के मुक़ाबले में आये"

यह ऐसे मुख्लिस हज़रात का तज़किरा है जो अचानक हमले के बाद जंग की शिद्दत से घबरा कर अपनी जान बचाने के लिये वक़्ती तौर पर पीठ फेर गये। उनमें से कुछ लोग कोहे ओहद पर चढ़ गये थे और कुछ उससे ज़रा आगे बढ़ कर मैदान ही से बाहर चले गये थे। उनमें बाज़ कबार (सीनियर) सहाबा का नाम भी आता है। दरअसल यह भगदड़ मच जाने के बाद ऐसी अज़तरारी (emergency) कैफ़ियत थी कि उसमें किसी से भी किसी ज़ौफ़ (कमी) और कमज़ोरी का इज़हार हो जाना बिल्कुल क़रीने क़यास (मुमकिन सी) बात है।

اِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ الشَّيْطٰنُ بِبَعْضِ مَا كَسَبُوْا ۚ

"असल में शैतान ने उनके पाँव फिसला दिये थे उनके बाज़ अफ़आल (कामों) की वजह से।"

किसी वक़्त कोई तक़सीर (गलती) हो गयी हो, कोई कोताही हो गयी हो, या किसी कमज़ोरी का इज़हार हो गया हो, यह मुख्लिस मुसलमानों से भी बईद (दूर) नहीं। ऐसा मामला हर एक से पेश आ सकता है। मासूम तो सिर्फ़ नबी होते हैं। इंसानी कमज़ोरियों की वजह से शैतान को मौक़ा मिल जाता है कि किसी वक़्त वह अड़ंगा लगा कर उस शख्स को फिसला दे, ख्वाह वह कितना ही नेक और कितना ही साहिबे रुतबा हो।

وَلَقَدْ عَفَا اللّٰهُ عَنْهُمْ ۭ

"और अल्लाह उन्हें माफ़ कर चुका है।"

यह अल्फ़ाज़ बहुत अहम हैं। बाज़ गुमराह फिरक़े इस बात को बहुत उछालते हैं और बाज़ सहाबा किराम रज़ि० की तौहीन करते हैं, उन पर तनक़ीद (आलोचना) करते हैं कि यह मैदाने जंग से पीठ दिखा कर भाग गये थे। लेकिन वह यह भूल जाते हैं कि अल्लाह तआला उनकी माफ़ी का ऐलान कर चुका है। इसके बाद अब किसी मुस्लमान के लिये जायज़ नहीं है कि उन पर ज़बाने तअन दराज़ (निंदा) करे।

اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ۝١٥٥

"यक़ीनन अल्लाह तआला माफ़ फ़रमाने वाला और बुर्दबार है।"

आयात 156 से 180 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَقَالُوْا لِاِخْوَانِهِمْ اِذَا ضَرَبُوْا فِى الْاَرْضِ اَوْ كَانُوْا غُزًّى لَّوْ كَانُوْا عِنْدَنَا
مَا مَاتُوْا وَمَا قُتِلُوْا ۚ لِيَجْعَلَ اللّٰهُ ذٰلِكَ حَسْرَةً فِىْ قُلُوْبِهِمْ ؕ وَاللّٰهُ يُحْىٖ وَيُمِيْتُ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ﴿۱۵۶﴾ وَلَئِنْ قُتِلْتُمْ
فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوْ مُتُّمْ لَمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَحْمَةٌ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُوْنَ ﴿۱۵۷﴾ وَلَئِنْ مُّتُّمْ اَوْ قُتِلْتُمْ لَاِلَى اللّٰهِ تُحْشَرُوْنَ ﴿۱۵۸﴾ فَبِمَا
رَحْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ لِنْتَ لَهُمْ ۚ وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيْظَ الْقَلْبِ لَانْفَضُّوْا مِنْ حَوْلِكَ ۪ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ
وَشَاوِرْهُمْ فِى الْاَمْرِ ۚ فَاِذَا عَزَمْتَ فَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِيْنَ ﴿۱۵۹﴾ اِنْ يَّنْصُرْكُمُ اللّٰهُ فَلَا غَالِبَ لَكُمْ ۚ
وَاِنْ يَّخْذُلْكُمْ فَمَنْ ذَا الَّذِىْ يَنْصُرُكُمْ مِّنْۢ بَعْدِهٖ ؕ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۶۰﴾ وَمَا كَانَ لِنَبِىٍّ اَنْ يَّغُلَّ ؕ وَمَنْ
يَّغْلُلْ يَاْتِ بِمَا غَلَّ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۚ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿۱۶۱﴾ اَفَمَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَ اللّٰهِ كَمَنْۢ بَآءَ
بِسَخَطٍ مِّنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰىهُ جَهَنَّمُ ؕ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ﴿۱۶۲﴾ هُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۶۳﴾ لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ
عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اِذْ بَعَثَ فِيْهِمْ رَسُوْلًا مِّنْ اَنْفُسِهِمْ يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيٰتِهٖ وَيُزَكِّيْهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ ۚ وَاِنْ
كَانُوْا مِنْ قَبْلُ لَفِىْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ﴿۱۶۴﴾ اَوَلَمَّاۤ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَدْ اَصَبْتُمْ مِّثْلَيْهَا ۙ قُلْتُمْ اَنّٰى هٰذَا ؕ قُلْ هُوَ مِنْ عِنْدِ
اَنْفُسِكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ﴿۱۶۵﴾ وَمَاۤ اَصَابَكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ فَبِاِذْنِ اللّٰهِ وَلِيَعْلَمَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۙ﴿۱۶۶﴾
وَلِيَعْلَمَ الَّذِيْنَ نَافَقُوْا ۖۚ وَقِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا قَاتِلُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوِ ادْفَعُوْا ؕ قَالُوْا لَوْ نَعْلَمُ قِتَالًا لَّاتَّبَعْنٰكُمْ ؕ هُمْ
لِلْكُفْرِ يَوْمَئِذٍ اَقْرَبُ مِنْهُمْ لِلْاِيْمَانِ ۚ يَقُوْلُوْنَ بِاَفْوَاهِهِمْ مَّا لَيْسَ فِىْ قُلُوْبِهِمْ ؕ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا يَكْتُمُوْنَ ۚ﴿۱۶۷﴾ اَلَّذِيْنَ
قَالُوْا لِاِخْوَانِهِمْ وَقَعَدُوْا لَوْ اَطَاعُوْنَا مَا قُتِلُوْا ؕ قُلْ فَادْرَءُوْا عَنْ اَنْفُسِكُمُ الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿۱۶۸﴾ وَلَا
تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ قُتِلُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتًا ؕ بَلْ اَحْيَآءٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُوْنَ ۙ﴿۱۶۹﴾ فَرِحِيْنَ بِمَاۤ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۙ
وَيَسْتَبْشِرُوْنَ بِالَّذِيْنَ لَمْ يَلْحَقُوْا بِهِمْ مِّنْ خَلْفِهِمْ ۙ اَلَّا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۘ﴿۱۷۰﴾ يَسْتَبْشِرُوْنَ بِنِعْمَةٍ مِّنَ
اللّٰهِ وَفَضْلٍ ۙ وَّاَنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚۛ﴿۱۷۱﴾ اَلَّذِيْنَ اسْتَجَابُوْا لِلّٰهِ وَالرَّسُوْلِ مِنْۢ بَعْدِ مَاۤ اَصَابَهُمُ الْقَرْحُ ۛؕ
لِلَّذِيْنَ اَحْسَنُوْا مِنْهُمْ وَاتَّقَوْا اَجْرٌ عَظِيْمٌ ۚ﴿۱۷۲﴾ اَلَّذِيْنَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ اِنَّ النَّاسَ قَدْ جَمَعُوْا لَكُمْ فَاخْشَوْهُمْ
فَزَادَهُمْ اِيْمَانًا ۖۗ وَّقَالُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ ﴿۱۷۳﴾ فَانْقَلَبُوْا بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ وَفَضْلٍ لَّمْ يَمْسَسْهُمْ سُوْٓءٌ ۙ وَّاتَّبَعُوْا
رِضْوَانَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ ذُوْ فَضْلٍ عَظِيْمٍ ﴿۱۷۴﴾ اِنَّمَا ذٰلِكُمُ الشَّيْطٰنُ يُخَوِّفُ اَوْلِيَآءَهٗ ۪ فَلَا تَخَافُوْهُمْ وَخَافُوْنِ اِنْ كُنْتُمْ
مُّؤْمِنِيْنَ ﴿۱۷۵﴾ وَلَا يَحْزُنْكَ الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِى الْكُفْرِ ۚ اِنَّهُمْ لَنْ يَّضُرُّوا اللّٰهَ شَيْئًا ؕ يُرِيْدُ اللّٰهُ اَلَّا يَجْعَلَ لَهُمْ حَظًّا فِى
الْاٰخِرَةِ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ﴿۱۷۶﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ اشْتَرَوُا الْكُفْرَ بِالْاِيْمَانِ لَنْ يَّضُرُّوا اللّٰهَ شَيْئًا ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿۱۷۷﴾ وَلَا
يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْۤا اَنَّمَا نُمْلِىْ لَهُمْ خَيْرٌ لِّاَنْفُسِهِمْ ؕ اِنَّمَا نُمْلِىْ لَهُمْ لِيَزْدَادُوْۤا اِثْمًا ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ ﴿۱۷۸﴾ مَا كَانَ
اللّٰهُ لِيَذَرَ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلٰى مَاۤ اَنْتُمْ عَلَيْهِ حَتّٰى يَمِيْزَ الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ ؕ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَى الْغَيْبِ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ

يَجْتَبِيْ مِنْ رُّسُلِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ۖ فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ ۚ وَاِنْ تُؤْمِنُوْا وَتَتَّقُوْا فَلَكُمْ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿١٧٩﴾ وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ
يَبْخَلُوْنَ بِمَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ هُوَ خَيْرًا لَّهُمْ ۭ بَلْ هُوَ شَرٌّ لَّهُمْ ۭ سَيُطَوَّقُوْنَ مَا بَخِلُوْا بِهٖ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ وَلِلّٰهِ مِيْرَاثُ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ﴿١٨٠﴾

आयत 156

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا

"ऐ अहले ईमान! तुम उन लोगों की मानिंद ना हो जाना जिन्होंने कुफ़्र किया"

وَقَالُوْا لِاِخْوَانِهِمْ اِذَا ضَرَبُوْا فِي الْاَرْضِ اَوْ كَانُوْا غُزًّى لَّوْ كَانُوْا عِنْدَنَا مَا مَاتُوْا وَمَا قُتِلُوْا ۚ

"और जिन्होंने अपने भाइयों के बारे में जबकि वह ज़मीन में सफ़र पर निकले हुए थे या किसी जिहाद में शरीक थे (और वहाँ उनका इन्तेक़ाल हो गया) कहा कि अगर वह हमारे पास होते तो ना मरते, ना क़त्ल होते।"

हर शख़्स की मौत का वक़्त तो मुअय्यन है। वह अगर तुम्हारी गोद में बैठे हो तब भी मौत आ जायेगी। चाहे वह बहुत ही मज़बूत पहरे वाले क़िलों में हों मौत तो वहाँ भी पहुँच जायेगी। तो तुम इस तरह की बातें ना करो। यह तो काफ़िरों के अन्दाज़ की बातें हैं कि अगर हमारे पास होते और जंग में ना जाते तो बच जाते। यह सारी बातें दरहक़ीक़त ईमान के मनाफ़ी हैं। एक हदीस में आता है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: ((فَإِنَّ لَوْ تَفْتَحُ عَمَلَ الشَّيْطَانِ))(1) "काश का लफ़्ज़ शैतान के अमल का दरवाज़ा खोल देता है।" यानि यह कहना कि काश ऐसे हो जाता तो यूँ हो जाता, इस कलमे ही से शैतान का अमल शुरू हो जाता है। जो हुआ इसलिये हुआ कि अल्लाह तआला को उसका होना मंज़ूर था, उसकी हिकमतें उसे मालूम हैं, हम उसकी हिकमत का इहाता नहीं कर सकते।

لِيَجْعَلَ اللّٰهُ ذٰلِكَ حَسْرَةً فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۭ

"(यह बात इसलिये इनकी ज़ुबान पर आती है) ताकि अल्लाह इसको उनके दिलों में हसरत का बाइस बना दे।"

इस क़िस्म की बातों से अल्लाह तआला उनके दिलों में हसरत की आग जला देता है। यह भी गोया उनके कुफ़्र की सज़ा है।

وَاللّٰهُ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ۭ

"और देखो अल्लाह ही ज़िन्दा रखता है और वही मौत वारिद करता है।"

وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ﴿١٥٦﴾

"और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उसे देख रहा है।"

आयत 157

وَلَىِٕنْ قُتِلْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوْ مُتُّمْ

"और अगर तुम अल्लाह की राह में क़त्ल हो जाओ या वैसे ही तुम्हें मौत आ जाये"

لَمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَحْمَةٌ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُوْنَ ﴿١٥٧﴾

"तो अल्लाह तआला की तरफ़ से जो मगफ़िरत और रहमत तुम्हें मिलेगी वह कहीं बेहतर है उन चीज़ों से जो यह जमा कर रहे हैं।"

अगर दुनिया में 10-15 साल और जी लेते तो क्या कुछ जमा कर लेते? अल्लाह तआला ने तुम्हें शहादत की मौत दे दी, तुम्हारे लिये इससे बड़ी सआदत और क्या होगी!

आयत 158

وَلَىِٕنۡ مُّتُّمۡ اَوۡ قُتِلۡتُمۡ لَاِالَى اللّٰهِ تُحۡشَرُوۡنَ ﴿۱۵۸﴾

"और चाहे तुम मरो या क़त्ल हो, बहरहाल अल्लाह ही के पास इकट्ठे किये जाओगे।"

चाहे तुम्हें अपने बिस्तरों पर मौत आये और चाहे तुम क़त्ल हो, हर हाल में तुम्हें अल्लाह की जनाब में हाज़िर कर दिया जायेगा। तुम्हारी आखरी मंज़िल तो वही है, ख्वाह तुम बिस्तर पर पड़े हुए दम तोड़ दो या मैदाने जंग के अन्दर जामे शहादत नोश कर लो।

आयत 159

فَبِمَا رَحۡمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ لِنۡتَ لَهُمۡ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ!) यह तो अल्लाह की रहमत है कि आप इनके हक़ में बहुत नर्म हैं।"

इस सूरह मुबारका की यह आयत भी बड़ी अहम है। जमाअती ज़िन्दगी में जो भी अमीर हो, साहिबे अम्र हो, जिसके पास ज़िम्मेदारियाँ हों, जिसके गिर्द उसके साथी जमा हों, उसे यह ख्याल रहना चाहिये कि आख़िर वह भी इन्सान हैं, उनके भी कोई जज़्बात और अहसासात हैं, उनकी इज़्ज़ते नफ्स भी है, लिहाज़ा उनके साथ नरमी की जानी चाहिये, सख्ती नहीं। वह कोई मुलाज़िम नहीं हैं, बल्कि रज़ाकार (volunteers) हैं। आँहुज़ूर ﷺ के साथ जो लोग थे वह कोई तनख्वाह याफ्ता सिपाही तो नहीं थे। यह लोग ईमान की बुनियाद पर जमा हुए थे। अब भी कोई दीनी जमाअत वजूद में आती है तो जो लोग उसमें काम कर रहे हैं वह दीनी जज़्बे के तहत जुड़े हुए हैं, लिहाज़ा उनके उमरा को उनके साथ नर्म रवैय्या इख़्तियार करना चाहिये। रसूल अल्लाह ﷺ को मुख़ातिब करके कहा जा रहा है कि यह अल्लाह की रहमत का मज़हर है कि आप ﷺ इनके हक़ में बहुत नर्म हैं।

وَلَوۡ كُنۡتَ فَظًّا غَلِيۡظَ الۡقَلۡبِ لَانۡفَضُّوۡا مِنۡ حَوۡلِكَ ۪

"और अगर आप ﷺ तंदखू और सख्त दिल होते तो यह आप ﷺ के इर्द-गिर्द से मुन्तशिर हो जाते।"

कोई कारवाँ से टूटा, कोई बदगुमाँ हरम से
कि अमीर कारवाँ में नहीं खोये दिल नवाज़ी!

فَاعۡفُ عَنۡهُمۡ

"पस आप उनसे दरगुज़र करें"

चूँकि बाज़ सहाबा रज़ि० से इतनी बड़ी गलती हुई थी कि उसके नतीजे में मुसलमानों को बहुत बड़ा चरका लगा था, लिहाज़ा आँहुज़ूर ﷺ से कहा जा रहा है कि अपने इन साथियों के लिये अपने दिल में मैल मत आने दीजिये। इनकी गलती और कोताही को अल्लाह ने माफ़ कर दिया है तो आप ﷺ भी इन्हें माफ़ कर दें। आम हालात में भी आप इन्हें माफ़ करते रहा करें।

وَاسۡتَغۡفِرۡ لَهُمۡ

"और इनके लिये मगफ़िरत तलब करें"

इनसे जो भी खता हो जाये उस पर इनके लिये इस्तगफ़ार किया करें।

وَشَاوِرۡهُمۡ فِى الۡاَمۡرِ ۚ

"और मामलात में इनसे मशवरा लेते रहें।"

ऐसा तर्ज़े अमल इख़्तियार ना करें कि आइन्दा उनकी कोई बात नहीं सुननी, बल्कि उनको भी मशवरे में शामिल रखिये। इससे भी बाहमी ऐतमाद पैदा होता है कि हमारा अमीर हमसे मशवरा करता है, हमारी बात को भी अहमियत देता है। यह भी दरहक़ीक़त इज्तमाई ज़िन्दगी के लिये बहुत ही ज़रूरी बात है।

فَاِذَا عَزَمۡتَ فَتَوَكَّلۡ عَلَى اللّٰهِ ۚ

"फिर जब आप फ़ैसला कर लें तो अब अल्लाह पर तवक्कुल करें।"

मशवरे के बाद जब आप ﷺ का दिल किसी राय पर मुत्मईन हो जाये और आप एक फ़ैसला कर लें तो अब किसी शख्स की बात की परवाह ना करें, अब सारा तवक्कुल अल्लाह की ज़ात पर हो। गज़वा-ए-ओहद से पहले रसूल अल्लाह ﷺ ने मशवरा किया था, उस वक़्त कुछ लोगों की राय वही थी जो आँहुज़ूर ﷺ की राय थी, यानि मदीना में महसूर होकर जंग की जाये। लेकिन कुछ हज़रात ने कहा हम तो खुले मैदान में जंग करना चाहते हैं, हमें तो शहादत की मौत चाहिये तो हुज़ूर ﷺ ने उनकी रिआयत की और बाहर निकलने का फ़ैसला फ़रमा दिया। इसके फ़ौरन बाद जब आप ﷺ हज़रत आयशा के हुजरे से बरामद हुए तो खिलाफ़े मामूल आप ﷺ ने ज़िरह पहनी हुई थी और हथियार लगाये हुए थे। इससे लोगों को अंदाज़ा हो गया कि कुछ सख्त मामला पेश आने वाला है। चुनाँचे उन लोगों ने कहा हुज़ूर ﷺ हम अपनी राय वापस लेते हैं, जो आप ﷺ की राय है आप उसके मुताबिक़ फ़ैसला कीजिये। लेकिन आप ﷺ ने फ़रमाया कि नहीं, यह फ़ैसला बरक़रार रहेगा। नबी को यह ज़ेबा नहीं है कि हथियार बाँधने के बाद जंग किये बगैर उन्हें उतार दे। यह आयत गोया नही अकरम ﷺ के तर्ज़े अमल की तौसीक़ में नाज़िल हुई है कि जब आप एक फ़ैसला कर लें तो अल्लाह पर तवक्कुल कीजिये।

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِيْنَ ﴿١٥٩﴾

"यक़ीनन अल्लाह तआला तवक्कुल करने वालों को पसंद करता है।"

आयत 160

اِنْ يَّنْصُرْكُمُ اللّٰهُ فَلَا غَالِبَ لَكُمْ ۚ

"(ऐ मुसलमानों! देखो) अगर अल्लाह तुम्हारी मदद करेगा तो कोई तुम पर ग़ालिब नही आ सकता।"

وَاِنْ يَّخْذُلْكُمْ فَمَنْ ذَا الَّذِيْ يَنْصُرُكُمْ مِّنْۢ بَعْدِهٖ

"और अगर वह तुम्हें छोड़ दे (तुम्हारी मदद से दस्त-कश हो जाये) तो कौन है जो तुम्हारी मदद करेगा इसके बाद?"

وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ﴿١٦٠﴾

"और अल्लाह ही पर तवक्कुल करना चाहिये ईमान वालों को।"

आयत 161

وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَّغُلَّ ۭ

"और किसी नबी की यह शान नहीं है कि वह ख्यानत करे।"

غَلَّ يَغِلُّ غِلًّا के मायने हैं ख्यानत करना और माले ग़नीमत में से किसी चीज़ का चोरी कर लेना, जबकि غَلَّ يَغُلُّ غُلُوْلًا के मायने दिल में कीना होने के हैं। रिवायात में आता है कि आँहुज़ूर ﷺ पर मुनाफ़िक़ों ने इल्ज़ाम लगाया था कि आप ﷺ ने माले ग़नीमत में कोई ख्यानत की है (माज़ अल्लाह सुम्मा माज़ अल्लाह!) यह उस इल्ज़ाम का जवाब दिया जा रहा है कि किसी नबी ﷺ की शान नहीं है कि वह ख्यानत का इरतकाब करे। अलबत्ता मौलाना इस्लाही साहब ने यह राय ज़ाहिर की है कि इस लफ्ज़ को सिर्फ़ माली ख्यानत के साथ मखसूस करने की कोई दलील नहीं। यह दरअसल मुनाफ़िक़ीन के उस इल्ज़ाम की तरदीद (इन्कार) है जो उन्होंने ओहद की शिकस्त के बाद रसूल अल्लाह ﷺ पर लगाया था कि हमने तो इस शख्स पर ऐतमाद किया, इसके हाथ पर बैत की, अपने नेक व बद का इसको मालिक बनाया, लेकिन यह इस ऐतमाद से बिल्कुल गलत फ़ायदा उठा रहे हैं और हमारे जान व माल को अपने ज़ाती हुसूलों और उमंगों के लिये तबाह कर रहे हैं। यह अरब पर हुकूमत करना चाहते हैं और इस मक़सद के लिये इन्होंने हमारी जानों को तख्ता-ए-मश्क़ बनाया है। यह सरीहन क़ौम की बदख्वाही और उसके साथ गद्दारी व बेवफ़ाई है। क़ुरान ने उनके इस इल्ज़ाम की तरदीद फ़रमायी है कि तुम्हारा यह इल्ज़ाम बिल्कुल झूठ है, कोई नबी अपनी उम्मत के साथ कभी बेवफ़ाई और बदअहदी नहीं करता। नबी जो क़दम भी उठाता है रज़ा-ए-इलाही की तलब में और उसके अहकाम के तहत उठाता है।

وَمَنۡ يَّغۡلُلۡ يَاۡتِ بِمَا غَلَّ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ‌ۚ

"और जो कोई ख्यानत करेगा तो वह अपनी ख्यानत की हुई चीज़ समेत हाज़िर होगा क़यामत के दिन।"

अल्लाह तआला के क़ानून-ए-जज़ा-ओ-सज़ा से एक नबी से बढ़ कर कौन बाख़बर होगा?

ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفۡسٍ مَّا كَسَبَتۡ وَهُمۡ لَا يُظۡلَمُوۡنَ‏ ﴿۱۶۱﴾

"फिर हर जान को पूरा-पूरा दे दिया जायेगा जो कुछ उसने कमाया होगा और उन पर कुछ ज़ुल्म ना होगा।"

नोट कीजिये लफ्ज़ "**تُوَفّٰى**" यहाँ भी पूरा-पूरा दे दिये जाने के मायने में आया है।

आयत 162

اَفَمَنِ اتَّبَعَ رِضۡوَانَ اللّٰهِ كَمَنۡۢ بَآءَ بِسَخَطٍ مِّنَ اللّٰهِ

"तो क्या भला वह शख्स जिसने अल्लाह की रज़ा की पैरवी की उसकी मानिंद हो जायेगा जो अल्लाह के ग़ज़ब और गुस्से को कमा कर लौटा?"

وَمَاۡوٰٮهُ جَهَنَّمُ‌ؕ

"और उसका ठिकाना जहन्नम है।"

وَبِئۡسَ الۡمَصِيۡرُ‏ ﴿۱۶۲﴾

"और वह बहुत ही बुरी जगह है पहुँचने की।"

आयत 163

هُمۡ دَرَجٰتٌ عِنۡدَ اللّٰهِ‌ؕ

"उनकी भी दर्जाबंदियाँ हैं अल्लाह के यहाँ।"

जैसे नेकोकारों के दर्जे हैं इसी तरह वहाँ बदकारों के भी दर्जे हैं। सब बदकार बराबर नहीं और सब नेकोकार बराबर नहीं।

وَاللّٰهُ بَصِيۡرٌۢ بِمَا يَعۡمَلُوۡنَ‏ ﴿۱۶۳﴾

"और जो कुछ यह कर रहे हैं अल्लाह उसे देख रहा है।"

अब आगे जो आयत आ रही है, यह मज़मून सूरतुल बक़रह में दो मरतबा आ चुका है। पहली मरतबा सूरतुल बक़रह के पंद्रहवें रुकूअ में हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माइल अलै० की दुआ (आयत:129) में यह मज़मून बाअल्फ़ाज़ आया था:

رَبَّنَا وَابۡعَثۡ فِيۡهِمۡ رَسُوۡلًا مِّنۡهُمۡ يَتۡلُوۡا عَلَيۡهِمۡ اٰيٰتِكَ وَيُعَلِّمُهُمُ الۡكِتٰبَ وَالۡحِكۡمَةَ وَيُزَكِّيۡهِمۡ‌ؕ

फिर अट्ठारहवें रुकूअ के आख़िर में यह अल्फ़ाज़ आये थे (आयत 151):

كَمَآ اَرۡسَلۡنَا فِيۡکُمۡ رَسُوۡلًا مِّنۡکُمۡ يَتۡلُوۡا عَلَيۡكُمۡ اٰيٰتِنَا وَيُزَکِّيۡکُمۡ وَيُعَلِّمُکُمُ الۡكِتٰبَ وَالۡحِكۡمَةَ وَيُعَلِّمُكُمۡ مَّا لَمۡ تَكُوۡنُوۡا تَعۡلَمُوۡنَ ؕ‏ ﴿۱۵۱﴾

अब यह मज़मून तीसरी मरतबा यहाँ आ रहा है:

आयत 164

لَقَدۡ مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الۡمُؤۡمِنِيۡنَ

"दरहक़ीक़त अल्लाह ने यह बहुत बड़ा अहसान किया है अहले ईमान पर"

اِذۡ بَعَثَ فِيۡهِمۡ رَسُوۡلًا مِّنۡ اَنۡفُسِهِمۡ

"जब उनमें उठाया एक रसूल ﷺ उन्ही में से"

यानि उनकी अपनी क़ौम में से।

يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيٰتِهٖ

"जो तिलावत करके उन्हें सुनाता है उसकी आयात"

وَيُزَكِّيْهِمْ

"और उन्हें पाक करता है"

وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ

"और तालीम देता है उन्हें किताब व हिकमत की।"

यह इन्क़लाबे नबवी ﷺ के असासी मन्हाज के चार अनासिर हैं, जिन्हें क़ुरान इसी तरतीब से बयान करता है: तिलावते आयात, तज़किया और तालीम किताब व हिकमत। हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माइल अलै० की दुआ में जो तरतीब थी, अल्लाह ने उसको तब्दील किया है। इस पर सूरतुल बक़रह आयत 151 के ज़ेल में गुफ्तगू हो चुकी है।

وَاِنْ كَانُوْا مِنْ قَبْلُ لَفِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ۝١٦٤

"और यक़ीनन इससे पहले (यानि रसूल ﷺ की आमद से क़ब्ल) तो वह लाज़िमन खुली गुमराही के अन्दर मुब्तला थे।"

आयत 165

اَوَلَمَّآ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَدْ اَصَبْتُمْ مِّثْلَيْهَا ۙ قُلْتُمْ اَنّٰى هٰذَا ۭ

"और क्या जब तुम पर एक मुसीबत आयी, जबकि तुम उससे दोगुनी मुसीबत उनको पहुँचा चुके हो तो तुम कहने लगे कि यह कहाँ से आ गई?"

यानि यह क्यों हो गया? अल्लाह ने पहले मदद की थी, अब क्यों नहीं की?

قُلْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اَنْفُسِكُمْ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये यह तुम्हारे अपने नफ्सों (की शरारत की वजह) से हुआ है।"

गलती तुमने की थी, अमीर के हुक्म की खिलाफ़वर्ज़ी तुमने की थी, जिसका खामियाज़ा तुमको भुगतना पड़ा।

اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝١٦٥

"यक़ीनन अल्लाह तो हर चीज़ पर क़ादिर है।"

गोया उसी मज़मून को यहाँ दोहरा कर लाया गया है जो पीछे आयत 152 में बयान हो चुका है कि अल्लाह तो वादा अपना कर चुका था और तुम दुश्मन पर ग़ालिब आ चुके थे, मगर तुम्हारी अपनी गलती की वजह से जंग का पांसा पलट गया। अल्लाह चाहता तो तुम्हें कोई सज़ा ना देता, बगैर सज़ा दिये माफ़ कर देता, लेकिन अल्लाह की हिकमत का तक़ाज़ा यह हुआ कि तुम्हें सज़ा दी जाये। इसलिये कि अभी तो बड़े-बड़े मराहिल आने हैं। अगर इसी तरह तुम नज़म को तोड़ते रहे और अहकाम की खिलाफ़वर्ज़ी करते रहे तो फिर तुम्हारी हैसियत एक जमाअत की तो नहीं होगी, फिर तो एक अनबूह होगा, "हुजूम-ए-मोमिनीन" होगा, जबकि अल्लाह के दीन को ग़ालिब करने के लिये एक मुनज़्ज़म जमाअत, लश्कर, फ़ौज, हिज़्बुल्लाह दरकार है।

आयत 166

وَمَآ اَصَابَكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ فَبِاِذْنِ اللّٰهِ

"और जो भी मुसीबत तुम पर आयी है उस दिन जब दोनों लश्कर आपस में भिड गये थे वह अल्लाह के इज़्न से आयी है"

अल्लाह के इज़्न के बगैर तो यह तकलीफ़ नहीं आ सकती थी।

وَلِيَعْلَمَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝١٦٦ۙ

"और यह इसलिये थी कि अल्लाह ज़ाहिर कर दे ईमान वालों को।"

यह ज़ाहिर हो जाये कि कौन हैं असल मोमिन, हक़ीक़ी मोमिन जो सब्र व इस्तक़ामत का मुज़ाहिरा करते हैं।

आयत 167

وَلِيَعْلَمَ الَّذِيْنَ نَافَقُوْا ۚ

"और ताकि उन लोगों को भी ज़ाहिर कर दे जिन्होंने मुनाफ़क़त इख़्तियार की।"

"لِيَعْلَمَ" के मायने हैं "ताकि जान ले" --- लेकिन चूँकि अल्लाह तआला हर चीज़ का जानने वाला है लिहाज़ा ऐसे मक़ामात पर तर्जुमा किया जाता है: "ताकि अल्लाह ज़ाहिर कर दे।" जैसा की अल्लाह तआला ने वाक़िअतन ज़ाहिर कर दिया कि कौन मोमिन है और कौन मुनाफ़िक़! अब्दुल्लाह बिन उबई अपने तीन सौ साथियों को लेकर चला गया तो सब पर उनका निफ़ाक़ ज़ाहिर हो गया। अब आइन्दा अहले ईमान उनकी बात पर ऐतबार तो नहीं करेंगे, उनकी चिकनी-चुपड़ी बातें कान लगा कर तो नहीं सुनेंगे। तो अल्लाह तआला ने चाहा कि यह बिल्कुल वाज़ेह हो जाये कि Who is who & What is what?

وَقِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا قَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوِ ادْفَعُوْا ۭ

"और उन (मुनाफ़िक़ों) से कहा गया कि आओ अल्लाह की राह में जंग करो या (कम से कम शहर का) दिफ़ा (बचाव) करो।"

अब्दुल्लाह बिन उबई जब अपने तीन सौ आदमियों को लेकर वापस जा रहा था तो उस वक़्त उनसे कुछ लोगों ने कहा होगा कि बेवक़ूफ़ों! कहाँ जा रहे हो? इस वक़्त तो लश्कर सामने है। अगर एक हज़ार में से तीन सौ आदमी निकाल जायेंगे तो बाक़ी लोगों के दिलों में भी कुछ ना कुछ कमज़ोरी पैदा होगी। अगर तुम मैदाने जंग में दुश्मन का मुक़ाबला नहीं कर सकते तो कम से कम मदीने के दिफ़ा के लिये तो कमरबस्ता (तैयार) हो जाओ। अगर मदीने पर हमला हुआ तो क्या होगा? अगर यहाँ पर यह लश्कर शिकस्त खा गया तो क्या दुश्मन तुम्हारी बहू-बेटियों को अपनी बांदियाँ (गुलाम) बना कर नहीं ले जायेंगे?

قَالُوْا لَوْ نَعْلَمُ قِتَالًا لَّااتَّبَعْنٰكُمْ ۭ

"उन्होंने कहा कि अगर हम समझते कि जंग होनी है तो हम ज़रूर तुम्हारा साथ देते।"

यानि यह तो दरहक़ीक़त नूराकुश्ती हो रही है, यह हक़ीक़त में जंग है ही नहीं। यह जो मक्के से मुहम्मद (ﷺ) के साथी मुहाजिरीन आये हैं और अब यह जो मक्का ही से लश्कर हम पर चढ़ाई करके आया है यह सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं और हमारा इनसे कोई सरोकार नहीं।

هُمْ لِلْكُفْرِ يَوْمَىِٕذٍ اَقْرَبُ مِنْھُمْ لِلْاِيْمَانِ ۚ

"यह लोग उस दिन ईमान की निस्बत कुफ़्र से क़रीबतर थे।"

يَقُوْلُوْنَ بِاَفْوَاهِهِمْ مَّا لَيْسَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۭ

"यह अपने मुँहों से वह बात कह रहे हैं जो इनके दिलों में नहीं है।"

وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا يَكْتُمُوْنَ ١٦٧ۚ

"और अल्लाह उस चीज़ को खूब जानता है जो कुछ वह छुपा रहे हैं।"

आयत 168

اَلَّذِيْنَ قَالُوْا لِاِخْوَانِهِمْ وَقَعَدُوْا لَوْ اَطَاعُوْنَا مَا قُتِلُوْا ۭ

"यह वह लोग हैं जो खुद तो बैठे रहे और अपने (शहीद हो जाने वाले) भाइयों की निस्बत कहा कि अगर वह भी हमारे साथ आ गये होते तो क़त्ल ना होते।"

قُلْ فَادْرَءُوْا عَنْ اَنْفُسِكُمُ الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿١٦٨﴾

"तो (ऐ नबी ﷺ) इनसे कहिये अच्छा अगर तुम (अपने इस क़ौल में) सच्चे हो तो अपनी जानों से मौत को हटा कर दिखा दो।"

क्या तुम अपने आप से मौत को टाल लोगे? खुद मौत से बचे रहोगे? क्या मौत तुम्हें अपने घरों में नहीं आयेगी?

आयत 169

وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ قُتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتًا ۭ

"और हरगिज़ ना समझना उन लोगों को जो अल्लाह की राह में क़त्ल हो जायें कि वह मुर्दा हैं।"

यही मज़मून क़ब्ल अज़ सूरतुल बक़रह में आ चुका है:

وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ يُّقْتَلُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتٌ ۭ بَلْ اَحْيَاۗءٌ وَّلٰكِنْ لَّا تَشْعُرُوْنَ ﴿١٥٤﴾

بَلْ اَحْيَاۗءٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُوْنَ ﴿١٦٩﴾

"बल्कि वह तो ज़िन्दा हैं, अपने रब के पास रिज़्क़ पा रहे हैं।"

आयत 170

فَرِحِيْنَ بِمَآ اٰتٰىھُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۙ

"शादाँ व फ़रहाँ हैं उस पर जो कुछ अल्लाह तआला ने उन्हें अपने फ़ज़ल से अता किया है"

وَيَسْتَبْشِرُوْنَ بِالَّذِيْنَ لَمْ يَلْحَقُوْا بِهِمْ مِّنْ خَلْفِهِمْ ۙ

"और बशारत हासिल कर रहे हैं उन लोगों के बारे में जो उनके पीछे (दुनिया में) रह गये हैं और अभी उनसे नहीं मिले"

اَلَّا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا ھُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿١٧٠﴾

"कि ना उन पर कोई खौफ़ होगा और ना वह हुज़्न से दो-चार होंगे।"

आयत 171

يَسْتَبْشِرُوْنَ بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ وَفَضْلٍ ۙ

"वह खुशियाँ मना रहे हैं अल्लाह तआला की नेअमत की वजह से और उसके फ़ज़ल की बिना पर"

وَّاَنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٧١﴾

"और इस बात पर कि अल्लाह तआला अहले ईमान के अज्र को ज़ाया नहीं करता।"

अब आगे जो आयात आ रही हैं उनके बारे में तारीख व सीरत की किताबों में दो क़िस्म की रिवायात आती हैं। एक तो यह कि कुफ्फ़ार की फ़ौज के वापस चले जाने के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने बाज़ ज़रूरी अमूर निबटाये और शुहदा की तद्फ़ीन (दफ़न) की। उसके बाद आप ﷺ को अचानक ख्याल आया कि यह कुफ्फ़ार चले तो गये हैं, लेकिन हो सकता है उन्हें अपनी गलती का अहसास हो कि इस वक़्त तो मुस्लमान इस हालत में थे कि हम उन्हें ख़त्म कर सकते थे, लिहाज़ा वह कहीं दोबारा पलट कर हमलावर ना हो जायें। चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ ने मुसलमानों को क़ुरैश के तअक़्क़ुब के लिये तैयार हो जाने का हुक्म दिया, ताकि उन्हें मालूम हो जाये कि हमने हिम्मत नहीं हार दी। इसके बावजूद कि अहले ईमान के जिस्म ज़ख्मों से चूर-चूर थे, इतना बड़ा सदमा पहुँचा था, वह फिर तैयार हो गये और हुज़ूर ﷺ जाँनिसारों की एक जमाअत के साथ कुफ्फ़ार के तअक़्क़ुब में हमरा अल असद तक गये जो मदीना से 8 मील के फ़ासले पर है। इधर अबु सुफ़ियान को वाक़िअतन अपनी गलती का अहसास हो चुका था और वह मक़ामे रव्हा पर रुक कर अपनी फ़ौज की अज़सर नौ तंज़ीम करके वापस पलट कर मदीना पर हमलावर होने का इरादा कर रहा था। उधर से आने वाले एक ताजिर से

उसने कहा भी था कि जाकर मुसलमानों को बता दो कि मैं बहुत बड़ा लश्कर लेकर दोबारा आ रहा हूँ। लेकिन जब अबु सुफ़ियान ने देखा कि मुसलमानों के अज़म व हौसले में कोई कमी नहीं आयी है और वह उनके तअक़्क़ुब में आ रहे हैं तो इरादा बदल लिया और लश्कर को मक्का की तरफ़ कूच का हुक्म दे दिया।

इसी तरह का एक और वाक़िया बयान होता है कि अबु सुफ़ियान जाते हुए यह कह गया था कि अब अगले साल बद्र में दोबारा मुलाक़ात होगी। यानि एक साल पहले बद्र में जंग हुई थी, अब ओहद में हमारा मुक़ाबला हो गया। अब अगले साल फिर हमारे और तुम्हारे दरमियान तीसरा मुक़ाबला बद्र में होगा। चुनाँचे अगले साल रसूल अल्लाह ﷺ सहाबा किराम (रज़ि०) को लेकर बद्र तक गये। यह मुहिम "बद्रे सुगरा" कहलाती है। उधर से अबु सुफ़ियान पूरे लाव-लश्कर के साथ आ गया और इस मरतबा भी कुछ लोगों के ज़रिये से अहले ईमान में खौफ़ व हरास फ़ैलाने की कोशिश की कि लोगो क्या कर रहे हो, क़ुरैश तो बहुत बड़ा लश्कर लेकर आ रहे हैं, तुम उसका मुक़ाबला ना कर पाओगे! तो इसके जवाब में मुसलमानों ने सब्र व तवक्कुल का मुज़ाहिरा किया और वह कलिमात कहे जो आगे आ रहे हैं। तो यह आयात दोनों वाक़िआत पर मुन्तबिक़ हो सकती हैं।

आयत 172

اَلَّذِيْنَ اسْتَجَابُوْا لِلّٰهِ وَالرَّسُوْلِ مِنْۢ بَعْدِ مَآ اَصَابَهُمُ الْقَرْحُ

"जिन लोगों ने लब्बैक कही अल्लाह और रसूल ﷺ की पुकार पर इसके बाद कि उनको चरका लग चुका था।"

यह आयत साबक़ा आयात के तसल्सुल में आयी है। यानि इस अज्रे अज़ीम के मुस्तहिक़ वह लोग ठहरेंगे जो कि ओहद की शिकस्त का ज़ख्म खाने के बाद भी उनके अज़म व ईमान का यह हाल है कि ज्यों ही अल्लाह और रसूल की जानिब से उन्हें एक ताज़ा मुहिम के लिये पुकारा गया वह फ़ौरन तैयार हो गये।

لِلَّذِيْنَ اَحْسَنُوْا مِنْهُمْ وَاتَّقَوْا اَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝

"उनमें से जो भी मोहसिनीन और मुत्तक़ीन हैं उनके लिये बहुत बड़ा अज्र है।"

आयत 173

اَلَّذِيْنَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ اِنَّ النَّاسَ قَدْ جَمَعُوْا لَكُمْ فَاخْشَوْهُمْ

"यह वह लोग हैं जिनसे लोगों ने कहा कि तुम्हारे खिलाफ़ बड़ी फ़ौजें जमा हो गयी हैं, पस उनसे डरो!"

فَزَادَهُمْ اِيْمَانًا ڰ

"तो इस बात ने उनके ईमान में और ज़्यादा इज़ाफ़ा कर दिया"

وَّقَالُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ ۝

"और उन्होंने कहा अल्लाह हमारे लिये काफ़ी है और वही बेहतरीन कारसाज़ है।"

उसी का सहारा सबसे अच्छा सहारा है। चुनाँचे यह लोग बेख़ौफ़ होकर मुक़ाबले के लिये निकले।

आयत 174

فَانْقَلَبُوْا بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ وَفَضْلٍ

"पस वह लौट आये अल्लाह की नेअमत और उसके फ़ज़ल के साथ"

अबु सुफ़ियान को जब पता चला कि मुहम्मद ﷺ हमारे तअक़्क़ुब में आ रहे हैं तो उसने आफ़ियत इसी में समझी कि सीधा मक्का मुकर्रमा की तरफ़ रुख कर लिया जाये। "बद्रे सुगरा" की मुहिम में भी यही हुआ कि जब उसने सुना कि मुहम्मद

रसूल अल्लाह ﷺ तो अपने पूरे साथियों के साथ मुक़ाबले पर आ गये हैं तो वह कन्नी कतरा कर और तरह देकर निकल गया और मुक़ाबले में नहीं आया।

لَّمْ يَمْسَسْهُمْ سُوْٓءٌ

"उनको किसी क़िस्म का भी ज़र्र नहीं पहुँचा"

उन्हें इस मुहिम में कोई तकलीफ़ नहीं पहुँची। यह अल्लाह की तरफ़ से एक आज़माइश थी जिसमें वह पूरे उतरे।

وَّاتَّبَعُوْا رِضْوَانَ اللّٰهِ

"और उन्होंने तो अल्लाह की रज़ा की पैरवी की।"

उन्हें अल्लाह की रज़ा व खुशनुदी पर चलने का शर्फ़ हासिल हो गया।

وَاللّٰهُ ذُوْ فَضْلٍ عَظِيْمٍ ۝١٧٤

"और यक़ीनन अल्लाह तआला बड़े फ़ज़्ल का मालिक है।

आयत 175

اِنَّمَا ذٰلِكُمُ الشَّيْطٰنُ يُخَوِّفُ اَوْلِيَآءَهٗ

"(ऐ मुसलमानों!) यह शैतान है जो तुम्हें डराता है अपने साथियों से"

वह तो चाहता है कि अपने साथी कुफ्फ़ार यानि हिज़्बुश्श्यतान का खौफ़ तुम पर तारी कर दे। इसके एक मायने यह भी लिये गये हैं कि शैतान अपने दोस्तों को डराता है। यानि शैतान की इस तख्वीफ़ का असर उन्हीं पर होता है जो उसके वली होते हैं, लेकिन जो औलिया अल्लाह हैं उन पर शैतान की तरफ़ से इस क़िस्म की वस्वसा अंदाज़ी का असर नहीं होता।

فَلَا تَخَافُوْهُمْ وَخَافُوْنِ

"तो तुम उनसे ना डरो, मुझसे डरो"

اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝١٧٥

"अगर तुम मोमिने सादिक़ हो।"

आयत 176

وَلَا يَحْزُنْكَ الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِي الْكُفْرِ

"और (ऐ नबी ﷺ) यह लोग आपके लिये बाइसे गम ना बनें जो कुफ़्र के मामले में इस क़दर भाग-दौड़ कर रहे हैं।"

मदीना के यहूद और मक्का के मुशरिकीन मुसलमानों के खिलाफ़ साज़-बाज़ में मसरूफ़ रहते। कभी यहूदियों का कोई वफ़द सरदाराने मक्का के पास जाकर कहता कि तुम मुसलमानों पर चढ़ाई करो, हम अन्दर से तुम्हारी मदद करेंगे। कभी क़ुरैश यहूदियों से राब्ता करते। गोया आज-कल की इस्तलाह में बड़ी Diplomatic Activity हो रही थी। इन हालात में रसूल अल्लाह ﷺ और आप ﷺ की वसातत से अहले ईमान को इत्मिनान दिलाया जा रहा है कि इनकी सरगर्मियों से रंजीदा ना हों, इनकी सारी रेशादवानियों की हैसियत सैलाब के ऊपर आ जाने वाले झाग के सिवा कुछ नहीं है।

اِنَّهُمْ لَنْ يَّضُرُّوا اللّٰهَ شَيْـًٔا

"वह अल्लाह को हरगिज़ कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगे।"

يُرِيْدُ اللّٰهُ اَلَّا يَجْعَلَ لَهُمْ حَظًّا فِي الْاٰخِرَةِ

"अल्लाह चाहता है कि इनके लिये आख़िरत में कोई हिस्सा ना रखे।"

यह गोया अल्लाह के इस फ़ैसले का ज़हूर है कि इनका आख़िरत में कोई हिस्सा ना हो।

وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝١٧٦

"और उनके लिये तो बड़ा अज़ाब है।"

आयत 177

إِنَّ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْكُفْرَ بِالْإِيمَانِ لَن يَضُرُّوا اللَّهَ شَيْئًا

"यक़ीनन जिन लोगों ने ईमान हाथ से देकर कुफ़्र खरीद लिया वह अल्लाह को कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकते।"

وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١٧٧﴾

"और उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 178

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا أَنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ خَيْرٌ لِّأَنفُسِهِمْ

"और मत समझें यह काफ़िर कि हम जो इन्हें मोहलत दे रहे हैं तो यह इनके हक़ में बेहतर है।"

काफ़िरों को मोहलत इसलिये मिलती है कि वह अपने कुफ़्र में और बढ़ जायें ताकि अपने आपको बुरे से बुरे अज़ाब का मुस्तहिक़ बना लें। अल्लाह उनको ढील ज़रूर देता है, लेकिन यह ना समझो कि यह ढील उनके हक़ में अच्छी है।

إِنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ لِيَزْدَادُوا إِثْمًا

"हम तो इनको सिर्फ़ इसलिये ढील देते हैं ताकि वह गुनाह में और इज़ाफ़ा कर लें।"

وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّهِينٌ ﴿١٧٨﴾

"और उनके लिये अहानत आमेज़ अज़ाब होगा।"

आयत 179

مَا كَانَ اللَّهُ لِيَذَرَ الْمُؤْمِنِينَ عَلَىٰ مَا أَنتُمْ عَلَيْهِ

"अल्लाह वह नहीं कि छोड़े रखे मुसलमानों को इस हालत में जिस पर तुम हो"

حَتَّىٰ يَمِيزَ الْخَبِيثَ مِنَ الطَّيِّبِ

"यहाँ तक कि वह ख़बीस को तय्यब से मुमय्यज़ (distinguish) कर दे।"

यह आयत भी फ़लसफ़ा-ए-आज़माइश के ज़िमन में बहुत अहम है कि अल्लाह तआला अपने नेक और सालेह बन्दों को तकलीफ़ में क्यों डालता है, हालाँकि वह तो क़ादिरे मुतलक़ है, आने वाहिद में जो चाहे कर सकता है। फ़रमाया जा रहा है कि यह बात अल्लाह की हिकमत के मुताबिक़ नहीं है कि वह तुम्हें उसी हाल में छोड़े रखे जिस पर तुम हो। अभी तुम्हारे अन्दर कमज़ोर और पुख्ता ईमान वाले गडमड हैं, बल्कि अभी तो मुनाफ़िक़ और मोमिन भी गडमड हैं। तो जब तक इन अनासिर को अलग-अलग ना कर दिया जाये और तुम्हारी इज्तमाइयत से यह तमाम नापाक अनासिर निकाल ना दिये जायें उस वक़्त तक तुम आइन्दा पेश आने वाले मुश्किल और कठिन हालात के लिये तैयार नहीं हो सकते। आगे तुम्हें सल्तनत रोमा से टकराना है, तुम्हें सल्तनत किसरा से टक्कर लेने है। अभी तो यह अन्दरून मुल्क अरब तुम्हारी जंगें हो रही हैं। इन आज़माइशों का मक़सद यह है कि तुम्हारी इज्तमाइयत की ततहीर (purge) होती रहे, यहाँ तक कि मुनाफ़िक़ीन और सादिक़ुल ईमान लोग बिल्कुल निखर कर अलैहदा हो जायें।

وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَى الْغَيْبِ

"और अल्लाह तआला का यह भी तरीक़ा नहीं है कि तुम्हें गैब की ख़बरें बताये"

وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَجْتَبِي مِن رُّسُلِهِ مَن يَشَاءُ

"लेकिन (इस काम के लिये) अल्लाह मुन्तखब कर लेता है अपने रसूलों में से जिसको चाहता है।"

वह अपने रसूलों में से जिसको चाहता है गैब के हालात भी बताता है। रसूलों को गैब अज़-खुद मालूम नहीं होता, अल्लाह के बताने से मालूम होता है। यानि इन आज़माइशों में क्या हिकमतें हैं और इनमें तुम्हारे लिये क्या खैर पिन्हा है, हर चीज़ हर एक को नहीं बतायी जायेगी, अलबत्ता यह चीज़ें हम अपने रसूलों को बता देते हैं।

فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ ۚ

"पस ईमान पुख्ता रखो अल्लाह पर और उसके रसूलों (अलै०) पर।"

وَاِنْ تُؤْمِنُوْا وَتَتَّقُوْا فَلَكُمْ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿۱۷۹﴾

"और अगर तुम (यह दो शर्तें पूरी कर दोगे) ईमान में साबित क़दम रहोगे और तक़वा पर कारबंद रहोगे तो तुम्हारे लिये बहुत बड़ा अज्र है।"

आयत 180

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ بِمَآ اٰتٰىھُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ھُوَ خَيْرًا لَّھُمْ ۭ

"और ना ख्याल करें वो लोग जो बुख्ल कर रहे हैं उस माल में जो अल्लाह ने उन्हें दिया है अपने फ़ज़ल में से कि यह बुख्ल उनके हक़ में बेहतर है।"

ज़ाहिर बात है कि जब जंग-ए-ओहद के लिये तैयारी हो रही होगी तो हुज़ूर ﷺ ने मुसलमानों को इन्फ़ाक़े माल की दावत दी होगी ताकि असबाबे जंग फ़राहम किये जायें। लेकिन जिन लोगों ने दौलतमन्द होने के बावजूद बुख्ल किया उनकी तरफ़ इशारा हो रहा है कि उन्होंने बुख्ल करके जो अपना माल बचा लिया वह यह ना समझें कि उन्होंने कोई अच्छा काम किया है। यह माल अल्लाह ने उन्हें अपने फ़ज़ल से अता किया था, इसमें बुख्ल से काम लेकर उन्होंने अच्छा नहीं किया।

بَلْ ھُوَ شَرٌّ لَّھُمْ ۭ

"बल्कि यह उनके हक़ में बहुत बुरा है।"

سَيُطَوَّقُوْنَ مَا بَخِلُوْا بِهٖ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ

"उसी माल के तौक़ बना कर उनकी गर्दनों में पहनाये जाएँगे जिसमें उन्होंने बुख्ल किया था, क़यामत के दिन।"

وَلِلّٰهِ مِيْرَاثُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ

"और आसमानों और ज़मीन की विरासत बिलआख़िर अल्लाह ही के लिये है।"

दुनिया का माल-ओ-असबाब आज तुम्हारे पास है तो कल किसी और के पास चला जायेगा और बिलआख़िर सब कुछ अल्लाह के लिये रह जायेगा। आसमानों और ज़मीन की मीरास का हक़ीक़ी वारिस अल्लाह तआला ही है।

وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ﴿۱۸۰﴾

"और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे बाख़बर है।"

यहाँ वह छः रुकूअ मुकम्मल हो गये हैं जो गज़वा-ए-ओहद के हालात व वाक़िआत और उन पर तबसिरे पर मुश्तमिल थे। इस सूरह मुबारका के आख़िरी दो रुकूअ की नौइयत "हासिले कलाम" की है। यह गोया concluding रुकूअ हैं।

आयात 181 से 189 तक

لَقَدْ سَمِعَ اللّٰهُ قَوْلَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ فَقِيْرٌ وَّنَحْنُ اَغْنِيَاۗءُ ۘ سَنَكْتُبُ مَا قَالُوْا وَقَتْلَھُمُ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ ۙ وَّنَقُوْلُ
ذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ ﴿۱۸۱﴾ ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ﴿۱۸۲﴾ اَلَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ عَهِدَ
اِلَيْنَآ اَلَّا نُؤْمِنَ لِرَسُوْلٍ حَتّٰى يَاْتِيَنَا بِقُرْبَانٍ تَاْكُلُهُ النَّارُ ۭ قُلْ قَدْ جَاۗءَكُمْ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِيْ بِالْبَيِّنٰتِ وَبِالَّذِيْ قُلْتُمْ
فَلِمَ قَتَلْتُمُوْھُمْ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿۱۸۳﴾ فَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقَدْ كُذِّبَ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِكَ جَاۗءُوْ بِالْبَيِّنٰتِ وَالزُّبُرِ وَالْكِتٰبِ
الْمُنِيْرِ ﴿۱۸۴﴾ كُلُّ نَفْسٍ ذَاۗىِٕقَةُ الْمَوْتِ ۭ وَاِنَّمَا تُوَفَّوْنَ اُجُوْرَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ

فَازَ ۭ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ ۝١٨٥ لَتُبْلَوُنَّ فِيْٓ اَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ ۣ وَلَتَسْمَعُنَّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ
مِنْ قَبْلِكُمْ وَمِنَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْٓا اَذًى كَثِيْرًا ۭ وَاِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ ذٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ ۝١٨٦ وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ
مِيْثَاقَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ لَتُبَيِّنُنَّهٗ لِلنَّاسِ وَلَا تَكْتُمُوْنَهٗ ۡ فَنَبَذُوْهُ وَرَاۗءَ ظُهُوْرِهِمْ وَاشْتَرَوْا بِهٖ ثَمَنًا قَلِيْلًا ۭ
فَبِئْسَ مَا يَشْتَرُوْنَ ۝١٨٧ لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ يَفْرَحُوْنَ بِمَآ اَتَوْا وَّيُحِبُّوْنَ اَنْ يُّحْمَدُوْا بِمَا لَمْ يَفْعَلُوْا فَلَا تَحْسَبَنَّھُمْ
بِمَفَازَةٍ مِّنَ الْعَذَابِ ۚ وَلَھُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝١٨٨ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝١٨٩

आयत 181

لَقَدْ سَمِعَ اللّٰهُ قَوْلَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ فَقِيْرٌ وَّنَحْنُ اَغْنِيَاۗءُ

"अल्लाह ने सुन लिया है क़ौल उन लोगों का जिन्होंने कहा कि अल्लाह फ़क़ीर है और हम ग़नी हैं।"

यह बात कहने वालों में मुनाफ़िक़ीन भी शामिल हो सकते हैं और यहूदी भी। जब रसूल अल्लाह ﷺ मुसलमानों को इन्फ़ाक़े माल की तरग़ीब देते थे कि अल्लाह को क़र्ज़े हस्ना दो तो यहूदियों और उनके ज़ेरे असर मुनाफ़िक़ों ने इसका मज़ाक उड़ाते हुए कहना शुरू कर दिया कि हाँ अल्लाह फ़क़ीर हो गया है और हमसे क़र्ज़ माँग रहा है, जबकि हम ग़नी हैं, हमारे पास दौलत है।

سَنَكْتُبُ مَا قَالُوْا

"हम लिख रखेंगे जो कुछ उन्होंने कहा है"

इन अल्फ़ाज़ में अल्लाह तआला की शदीद नाराज़गी झलकती है। अल्लाह तआला फ़ौरन तो गिरफ्त नहीं करता लेकिन एक वक़्त आयेगा जिस दिन उन्हें अपने इस क़ौल की पूरी सज़ा मिल जायेगी। और सिर्फ़ यही नहीं:

وَقَتْلَھُمُ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ ۙ

"और इनके नाहक़ क़त्ल अम्बिया को भी (लिख रखेंगे)"

इससे पहले यह जो नबियों को नाहक़ क़त्ल करते रहे हैं इनका यह जुर्म भी इनके नामा-ए-आमाल में सब्त है।

وَّنَقُوْلُ ذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ ۝١٨١

"और हम कहेंगे अब चखो मज़ा इस जला देने वाली आग के अज़ाब का।"

आयत 182

ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْكُمْ

"यह सब कुछ तुम्हारे अपने ही हाथों ने आगे भेजा है"

وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ۝١٨٢

"और अल्लाह तो अपने बन्दों के हक़ में हरगिज़ ज़ालिम नहीं है।"

आयत 183

اَلَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ عَهِدَ اِلَيْنَآ

"जो लोग यह कहते हैं कि अल्लाह ने हमसे एक अहद ले लिया था"

اَلَّا نُؤْمِنَ لِرَسُوْلٍ حَتّٰى يَاْتِيَنَا بِقُرْبَانٍ تَاْكُلُهُ النَّارُ ۭ

"कि हम किसी रसूल पर ईमान ना लायें जब तक वह ऐसी क़ुर्बानी पेश ना करे जिसे आग़ खा जाये।"

यहाँ रुए सुखन फिर यहूद की तरफ़ हो गया है। नौए इन्सानी जब अहदे तफ़ूलियत (बचपन के दौर) में थी तो खर्क़े आदत चीज़ें बहुत हुआ करती थीं। उनमें से एक बात यह भी थी कि अगर कोई शख्स अल्लाह की जनाब में कोई जानवर ज़िबह करके पेश करता तो आसमान से एक आग़ उतरती जो उसे भस्म कर देती थी और यह इस बात की अलामत होती थी कि यह क़ुर्बानी क़ुबूल हो गयी। जैसे हाबील और क़ाबील के क़िस्से (अल मायदा:27) में आया है कि: { اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ ۭ} "जब दोनों ने क़ुर्बानी पेश की तो एक की क़ुर्बानी क़ुबूल हो गयी और दूसरे की क़ुबूल नहीं हुई।" यह पाता कैसे चला? ईद-उल-अज़हा के मौक़े पर हम जो क़ुर्बानियाँ करते हैं उनके बारे में हम नहीं जानते कि किसकी क़ुर्बानी क़ुबूल हुई और किसकी क़ुबूल नहीं हुई। यह तो अल्लाह ही जानता है। लेकिन पहले ऐसी हिस्सी अलामात होती थीं कि पता चल जाता था कि यह क़ुर्बानी अल्लाह ने क़ुबूल कर ली है। बनी इस्राईल के इब्तदाई दौर में भी यह निशानी मौजूद थी कि आसमान से उतरने वाली आग़ का क़ुर्बानी को भस्म कर देना उसकी क़ुबूलियत की अलामत थी। मदीने के यहूद ने कटहुज्जती का मुज़ाहिरा करते हुए कहा कि हमसे तो अल्लाह ने यह अहद ले लिया था कि हम किसी रसूल पर ईमान नहीं लायेंगे जब तक कि वह यह मौज्ज़ा ना दिखाये। तो अगर मौहम्मद (ﷺ) वाक़ई रसूल ﷺ हैं तो यह मौज्ज़ा दिखायें। उसका जवाब दिया जा रहा है:

قُلْ قَدْ جَاۗءَكُمْ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِيْ بِالْبَيِّنٰتِ

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कहिये तुम्हारे पास मुझसे पहले बहुत से रसूल आ चुके हैं वाज़ेह मौज्ज़ों के साथ"

وَبِالَّذِيْ قُلْتُمْ

"और वह चीज़ भी लेकर आये जिसके लिये तुम कह रहे हो"

उन्होंने सौ ख़तनी क़ुर्बानी का मौज्ज़ा भी दिखाया जिसका तुम मुतालबा कर रहे हो।

فَلِمَ قَتَلْتُمُوْھُمْ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ١٨٣

"फिर तुमने उन्हें क्यों क़त्ल किया अगर तुम सच्चे हो?"

आयत 184

فَاِنْ كَذَّبُوْكَ

"फिर (ऐ नबी ﷺ) अगर वह आप ﷺ को झुठला दें"

तो यह कोई तअज्जुब की बात नहीं। यह मामला सिर्फ़ आप ﷺ ही के साथ नहीं हुआ।

فَقَدْ كُذِّبَ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِكَ

"तो आप ﷺ से पहले भी बहुत से रसूलों को झुठलाया जा चुका है"

यह तो इस रास्ते का एक आम तजुर्बा है, जिससे आप ﷺ को भी गुज़रना पड़ेगा।

جَاۗءُوْ بِالْبَيِّنٰتِ وَالزُّبُرِ وَالْكِتٰبِ الْمُنِيْرِ ١٨٤

"जो आये थे वाज़ेह निशानियाँ और सहीफ़े और रोशन किताब लेकर।"

आयत 185

كُلُّ نَفْسٍ ذَاۗىِٕقَةُ الْمَوْتِ ۭ

"हर ज़ी नफ्स को मौत का मज़ा चखना है।"

मौत तो एक दिन आकर रहनी है।

وَاِنَّمَا تُوَفَّوْنَ اُجُوْرَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ

"और तुमको तुम्हारे आमाल का पूरा-पूरा बदला तो क़यामत ही के दिन दिया जायेगा।"

فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ ؕ

"तो जो कोई बचा लिया गया जहन्नम से और दाख़िल कर दिया गया जन्नत में तो वह कामयाब हो गया।"

اللھم ربنا اجعلنا منھم- ऐ अल्लाह! हमें भी उन लोगों में शामिल फरमाना!

وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ ۝۱۸۵

"और यह दुनिया की ज़िन्दगी तो इसके सिवा कुछ नहीं की सिर्फ़ धोखे का सामान है।"

आयत 186

لَتُبْلَوُنَّ فِيْٓ اَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ ۣ

"(मुसलमानों! याद रखो) तुम्हें लाज़िमन आज़माया जायेगा तुम्हारे मालों में भी और तुम्हारी जानों में भी।"

यह वही मज़मून है जो सूरतुल बक़रह के उन्नीसवे रुकूअ में गुज़र चुका है: { وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوْعِ وَنَقْصٍ مِّنَ الْاَمْوَالِ وَالْاَنْفُسِ وَالثَّمَرٰتِ ۭ} (आयत:155) "और हम तुम्हें लाज़िमन आज़माएंगे किसी क़दर खौफ़ से भूख से और मालों, जानों और समरात (फलों) के नुक़सान से।" यहाँ मजहूल का सीगा है कि तुम्हें लाज़िमन आज़माया जायेगा, तुम्हारी आज़माइश की जायेगी तुम्हारे मालों में भी और तुम्हारी जानों में भी। कान खोल कर सुन लो कि यह ईमान का रास्ता फूलों की सेज नहीं है, यह काँटों भरा बिस्तर है। ऐसा नहीं होगा कि ठण्डे-ठण्डे और बग़ैर तकलीफ़ें उठाये तुम्हें जन्नत मिल जायेगी। सूरतुल बक़रह (आयत:214) में हम पढ़ चुके हैं कि "क्या तुमने यह समझ रखा है कि यूँही जन्नत में दाख़िल हो जाओगे हालाँकि अभी तो तुम पर वह हालात व वाक़िआत वारिद नहीं हुए जो तुमसे पहलों पर हुए थे....."

وَلَتَسْمَعُنَّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَمِنَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْٓا اَذًى كَثِيْرًا ۭ

"और तुम्हें लाज़िमन सुननी पड़ेंगी उन लोगों से भी जिन्हें तुमसे पहले किताब दी गयी थी और उनसे भी जिन्होंने शिर्क किया, बड़ी तकलीफ़देह बातें।"

यह सब कुछ सुनों और सब्र करो। जैसे रसूल अल्लाह ﷺ से इब्तदा में कहा गया था: { وَاصْبِرْ عَلٰي مَا يَقُوْلُوْنَ وَاهْجُرْهُمْ هَجْرًا جَمِيْلًا} (अल मुज़म्मिल:10) "और उन बातों पर सब्र कीजिये जो यह लोग कहते हैं और वज़अदारी (गर्व) के साथ इनसे अलग हो जाइये।" आप ﷺ को क्या कुछ नहीं सुनना पड़ा। किसी ने कह दिया मजनून है, किसी ने कह दिया शायर है, किसी ने कहा साहिर है, किसी ने कहा मसहूर है। सूरतुल हिज्र के आख़िर में इरशाद है (आयत 97): { وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيْقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُوْلُوْنَ} "(ऐ नबी ﷺ) हमें खूब मालूम है कि यह (मुशरिकीन) जो कुछ कह रहे हैं उससे आप ﷺ का सीना भिंचता है।" इनकी ज़बानों से जो कुछ आप ﷺ को सुनना पड़ रहा है उससे आप ﷺ को तकलीफ़ पहुँचती है, लेकिन सब्र कीजिये! वही बात मुसलमानों से कही जा रही है।

وَاِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ ذٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ ۝۱۸۶

"और अगर तुम सब्र करते रहोगे (साबित क़दम रहोगे) और तक़वा की रविश इख़्तियार किये रखोगे तो बेशक यह बड़े हिम्मत के कामों में से है।"

आयत 187

وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ

"और याद करो जबकि अल्लाह ने उन लोगों से एक क़ौल व क़रार लिया था जिनको किताब दी गयी थी"

لَتُبَيِّنُنَّهٗ لِلنَّاسِ وَلَا تَكْتُمُوْنَهٗ ۡ

"कि तुम लाज़िमन उसे लोगों के सामने वाज़ेह करोगे और उसे छुपाओगे नहीं"

فَنَبَذُوْهُ وَرَآءَ ظُهُوْرِهِمْ
"तो उन्होंने उस अहद को पसे-पुश्त फ़ेंक दिया"

وَاشْتَرَوْا بِهٖ ثَمَنًا قَلِيْلًا ؕ
"और उसकी बड़ी हक़ीर सी क़ीमत वसूल कर ली।"

فَبِئْسَ مَا يَشْتَرُوْنَ ﴿۱۸۷﴾
"तो बहुत ही बुरी शय है जो वह (उसके बदले में) हासिल कर रहे हैं।"

आयत 188

لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ يَفْرَحُوْنَ بِمَآ اَتَوْا
"आप उनके बारे में ख्याल ना करें जो अपने किये पर ख़ुश होते हैं"

अगर कुछ नेकी कर लेते हैं, किसी को कुछ दे देते हैं तो उस पर बहुत इतराते हैं, अकड़ते हैं कि हमने यह कुछ कर लिया है।

وَّيُحِبُّوْنَ اَنْ يُّحْمَدُوْا بِمَا لَمْ يَفْعَلُوْا
"और (इससे भी बढ़ कर) चाहते हैं कि उनकी तारीफ़ की जाये ऐसे कामों पर जो उन्होंने किये ही नहीं"

आज कल इसकी सबसे बड़ी मिसाल स्पासनामे हैं, जो तक़रीबात में मदऊ (invited) शख्सियात को पेश किये जाते हैं। इन स्पासनामों में उन हज़रात के ऐसे-ऐसे कारहाये नुमाया बयान किये जाते हैं जो उनकी पुश्तों में से भी किसी ने ना किये हों। इस तरह उनकी ख़ुशामद और चापलूसी की जाती है और वह उसे पसंद करते हैं।

فَلَا تَحْسَبَنَّهُمْ بِمَفَازَةٍ مِّنَ الْعَذَابِ ۚ
"तो उनके बारे में यह ख्याल ना करें कि वह अज़ाब से बच जायेंगे।"

وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿۱۸۸﴾
"और उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 189

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ
"और अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन की बादशाही।"

وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿۱۸۹﴾ۧ
"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

आयात 190 से 200 तक

اِنَّ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰيٰتٍ لِّاُولِي الْاَلْبَابِ ﴿۱۹۰﴾ۚۙ الَّذِيْنَ يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ قِيٰمًا
وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰي جُنُوْبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُوْنَ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا ۚ سُبْحٰنَكَ فَقِنَا عَذَابَ
النَّارِ ﴿۱۹۱﴾ رَبَّنَآ اِنَّكَ مَنْ تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ اَخْزَيْتَهٗ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ﴿۱۹۲﴾ رَبَّنَآ اِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا يُّنَادِيْ
لِلْاِيْمَانِ اَنْ اٰمِنُوْا بِرَبِّكُمْ فَاٰمَنَّا ڰ رَبَّنَا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا وَكَفِّرْ عَنَّا سَيِّاٰتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَارِ ﴿۱۹۳﴾ۚ رَبَّنَا وَاٰتِنَا مَا
وَعَدْتَّنَا عَلٰي رُسُلِكَ وَلَا تُخْزِنَا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ اِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيْعَادَ ﴿۱۹۴﴾ فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ اَنِّىْ لَآ اُضِيْعُ عَمَلَ

عَامِلٍ مِّنْكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى ۚ بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۚ فَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا وَاُخْرِجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ وَاُوْذُوْا فِيْ سَبِيْلِيْ
وَقٰتَلُوْا وَقُتِلُوْا لَاُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ وَلَاُدْخِلَنَّهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۚ ثَوَابًا مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ
عِنْدَهٗ حُسْنُ الثَّوَابِ ﴿١٩٥﴾ لَا يَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فِي الْبِلَادِ ﴿١٩٦﴾ مَتَاعٌ قَلِيْلٌ ۣ ثُمَّ مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۭ وَبِئْسَ الْمِهَادُ
﴿١٩٧﴾ لٰكِنِ الَّذِيْنَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا نُزُلًا مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۭ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ
لِّلْاَبْرَارِ ﴿١٩٨﴾ وَاِنَّ مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ لَمَنْ يُّؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ خٰشِعِيْنَ لِلّٰهِ ۙ لَا يَشْتَرُوْنَ بِاٰيٰتِ
اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا ۭ اُولٰۗىِٕكَ لَهُمْ اَجْرُھُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ﴿١٩٩﴾ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اصْبِرُوْا وَصَابِرُوْا
وَرَابِطُوْا ۣ وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ﴿٢٠٠﴾

सूरह आले इमरान का आख़री रुकूअ क़ुरान मजीद के अज़ीम-तरीन मक़ामात में से है। इसकी पहली छः आयात के बारे में रिवायत आती है कि जिस शब में यह नाज़िल हुईं तो पूरी रात हुज़ूर ﷺ पर रक़्त (संवेदना) तारी रही और आप ﷺ खड़े, बैठे, लेटे हुए रोते रहे। नमाज़े तहज्जुद के दौरान भी आप ﷺ पर रक़्त तारी रही। फिर आप ﷺ ने बहुत तवील सज्दा किया, उसमें भी गिरया तारी रहा और सज्दागाह आँसूओं से तर हो गयी। फिर आप ﷺ कुछ देर लेटे रहे लेकिन वह कैफ़ियत बरक़रार रही। यहाँ तक कि सुबह सादिक़ हो गयी। हजरत बिलाल रज़ि० जब फज्र की नमाज़ की इत्तलाअ देने के लिये हाज़िर हुए और आप ﷺ को इस कैफ़ियत में देखा तो वजह दरयाफ्त की। आप ﷺ ने फ़रमाया: "ऐ बिलाल, मैं क्यों ना रोऊँ कि आज की शब मेरे रब ने मुझ पर यह आयात नाज़िल फ़रमायी हैं।" फिर आप ﷺ ने इन आयात की तिलावत फ़रमायी (इस रिवायत को इमाम राज़ी ने तफ़सीर कबीर में बयान किया है) यानि वह गिरया और रक़्त शुक्र के जज़्बे के तहत थी।

यह भी नोट कीजिये कि यह सूरह आले इमरान का बीसवाँ रुकूअ शुरू हो रहा है और सूरतुल बक़रह के बीसवें रुकूअ की पहली आयत के अल्फ़ाज़ यह थे:

اِنَّ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَالْفُلْكِ الَّتِيْ تَجْرِيْ فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ وَمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ مِنَ السَّمَاۗءِ مِنْ مَّاۗءٍ فَاَحْيَا بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَثَّ فِيْهَا مِنْ كُلِّ دَاۗبَّةٍ ۠ وَّتَصْرِيْفِ الرِّيٰحِ وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَاۗءِ وَالْاَرْضِ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ﴿١٦٤﴾

इसी "अयातुल आयात" का ख़ुलासा यहाँ आ गया है:

आयत 190

اِنَّ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ

"यक़ीनन आसमानों और ज़मीन की तख्लीक़ में और रात और दिन के उलट-फेर में"

لَاٰيٰتٍ لِّاُولِي الْاَلْبَابِ ﴿١٩٠﴾

"होशमन्द लोगों के लिये निशानियाँ हैं।"

सूरतुल बक़रह की आयत 164 इन अल्फ़ाज़ पर ख़त्म हुई थी: {لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ} "उन लोगों के लिये निशानियाँ हैं जो अक़्ल से काम लेते हैं।" यहाँ उन लोगों को "ऊलूल अल्बाब" का नाम दिया गया। यह हिदायत का पहला क़दम है कि क़ायनात को देखो, मज़ाहिरे फ़ितरत का मुशाहिदा करो—

खोल आँख, ज़मीं देख, फ़लक देख, फ़ज़ा देख
मशरिक़ से उभरते हुए सूरज को ज़रा देख!

यह सब आयाते इलाहिया हैं, इनको देखो और अल्लाह को पहचानो। अगला क़दम यह है कि जब अल्लाह को पहचान लिया तो अब उसे याद रखो। यानि—

फ़िक्रे क़ुरान इख्तलाते ज़िक्र-ओ-फ़िक्र
फ़िक्र रा कामिल ना दीदम जुज़-बा-ज़िक्र!

आयत 191

الَّذِيْنَ يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ قِيٰمًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِهِمْ

"जो अल्लाह का ज़िक्र करते रहते हैं, खड़े भी, बैठे भी और अपने पहलुओं पर भी"

وَيَتَفَكَّرُوْنَ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ

"और मज़ीद गौर-ओ-फ़िक्र करते रहते हैं आसमानों और ज़मीन की तख्लीक़ में।"

इस गौर-ओ-फ़िक्र से वह एक दूसरे नतीजे पर पहुँचते हैं और वो पुकार उठते हैं:

رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا

"ऐ हमारे रब! तूने यह सब कुछ बे-मक़सद तो पैदा नहीं किया है।"

और फिर उनका ज़हन अपनी तरफ़ मुन्तक़िल होता है कि मेरी ज़िन्दगी का मक़सद क्या है? मैं किस लिये पैदा किया गया हूँ? क्या मेरी ज़िन्दगी बस यही है कि खाओ-पीओ, औलाद पैदा करो और दुनिया से रुख्सत हो जाओ? मालूम हुआ कि नहीं, कोई खला है। इंसानी आमाल के नतीजे निकलने चाहिये, इन्सान को उसकी नेकी और बदी का बदला मिलना चाहिये, जो इस दुनिया में अक्सर-ओ-बेशतर नहीं मिलता। दुनिया में अक्सर यही देखा गया है कि नेकोकार फ़ाक़ों से रहते हैं और बदकार ऐश करते हैं। चुनाँचे कोई और ज़िन्दगी होनी चाहिये, कोई और दुनिया होनी चाहिये जिसमें अच्छे-बुरे आमाल का भरपूर बदला मिल जाये, मकाफ़ाते अमल (काम का बदला) हो। लिहाज़ा वह कह उठते हैं:

سُبْحٰنَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۝١٩١

"तू पाक है (इससे कि कोई अबस [बेकार] काम करे), पस तू हमें दोज़ख़ के अज़ाब से बचा!"

तूने यक़ीनन एक दूसरी दुनिया तैयार कर रखी है, जिसमें जज़ा व सज़ा के लिये जन्नत भी है और जहन्नम भी!

आयत 192

رَبَّنَآ اِنَّكَ مَنْ تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ اَخْزَيْتَهٗ

"ऐ हमारे रब! जिसको तूने दाख़िल कर दिया आग में बेशक उसको तूने रुसवा कर दिया।"

وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ۝١٩٢

"और ज़ालिमों के लिये कोई मददगार नहीं होंगे।"

आयत 193

رَبَّنَآ اِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا

"ऐ हमारे रब! हमने एक पुकारने वाले को सुना"

يُّنَادِيْ لِلْاِيْمَانِ اَنْ اٰمِنُوْا بِرَبِّكُمْ فَاٰمَنَّا

"जो ईमान की निदा दे रहा था कि ईमान लाओ अपने रब पर, तो हम ईमान ले आये।"

ईमान बिल्लाह और ईमान बिल आख़िरत के बाद ऐसे लोगों के कानों में ज्यों ही किसी नबी या रसूल की पुकार आती है तो फ़ौरन लब्बैक कहते हैं, ज़रा भी देर नहीं लगाते। जैसे हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने फ़ौरी तौर पर रसूल अल्लाह ﷺ की दावत क़ुबूल कर ली, इसलिये कि ईमान बिल्लाह और ईमान बिल आख़िरत तक तो वह ख़ुद पहुँच चुके थे। सूरतुल फ़ातिहा के मज़ामीन को ज़हन में ताज़ा कर लीजिये कि ऊलूल अल्बाब में से एक शख़्स जो अपनी सलामती-ए-तबअ, सलामती-ए-फ़ितरत और सलामती-ए-अक़्ल की रहनुमाई में यहाँ तक पहुँच गया कि उसने अल्लाह को पहचान लिया, आख़िरत को पहचान लिया, यह भी तय कर लिया कि उसे अल्लाह की बन्दगी ही का रास्ता इख़्तियार करना है, लेकिन इसके बाद वह नबुवत व रिसालत की रहनुमाई का मोहताज है, लिहाज़ा अल्लाह तआला के हुज़ूर दस्ते सवाल दराज़ करता है: {اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝} यहाँ भी यही मज़मून है कि अब ऐसे शख़्स के सामने अगर किसी नबी की दावत आयेगी तो उसका रद्दे अमल क्या होगा। अब आगे एक अज़ीम-तरीन दुआ आ रही है। यह उस दुआ से जो सूरतुल बक़रह के आख़िर में आयी थी बाज़ पहलुओं से कहीं ज़्यादा अज़ीमतर है।

رَبَّنَا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا

"ऐ हमारे रब, हमारे गुनाह बख़्श दे!"

وَكَفِّرْ عَنَّا سَيِّاٰتِنَا

"और हमारी बुराइयाँ हमसे दूर कर दे!"

हमारे नामा-ए-आमाल के धब्बे भी धो दे और हमारे दामने किरदार के जो दाग़ हैं वह भी साफ़ कर दे।

وَتَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَارِ ۝١٩٣

"और हमें वफ़ात दीजियो अपने नेकोकार (और वफादार) बन्दों के साथ।"

आयत 194

رَبَّنَا وَاٰتِنَا مَا وَعَدْتَّنَا عَلٰي رُسُلِكَ

"ऐ हमारे रब, हमें बख़्श वह सब-कुछ जिसका तूने वादा किया है हमसे अपने रसूलों के ज़रिये से"

وَلَا تُخْزِنَا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ

"और हमें रुसवा ना कीजियो क़यामत के दिन।"

اِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيْعَادَ ۝١٩٤

"यक़ीनन तू अपने वादे के ख़िलाफ़ नहीं करेगा।"

हमें शक है तो इस बात में कि आया हम तेरे उन वादों के मिस्दाक़ साबित हो सकेंगे या नहीं। लिहाज़ा तू अपनी शाने गफ़्फ़ारी से हमारी कोताहियों की पर्दापोशी करना और हमें वह सब-कुछ अता कर देना जो तूने अपने रसूलों के ज़रिये से वादा किया है।

आयत 195

فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ

"तो उनके रब ने उनकी दुआ क़ुबूल फ़रमायी"

यह है दुआ की क़ुबूलियत की इन्तहा कि इस दुआ के फ़ौरन बाद अल्लाह तआला की तरफ़ से क़ुबूलियत का ऐलान हो रहा है।

اَنِّىْ لَآ اُضِيْعُ عَمَلَ عَامِلٍ مِّنْكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى ۚ

"कि मैं तुम में से किसी अमल करने वाले के किसी अमल को ज़ाया करने वाला नहीं हूँ, ख्वाह वह मर्द हो या औरत।"

بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۚ

"तुम सब एक-दूसरे ही में से हो।"

एक ही बात के नुत्फ़े से बेटा भी है और बेटी भी, और एक ही माँ के रहम में बेटा भी पला है और बेटी भी।

فَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا وَاُخْرِجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ

"सो जिन्होंने हिजरत की और जो अपने घरों से निकाल दिये गये"

وَاُوْذُوْا فِيْ سَبِيْلِيْ

"और जिन्हें मेरी राह में ईज़ायें पहुँचायी गयीं"

وَقٰتَلُوْا وَقُتِلُوْا

"और जिन्होंने (मेरी राह में) जंग की और जानें भी दे दीं"

لَاُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ

"मैं लाज़िमन उनसे उनकी बुराइयों को दूर कर दूँगा"

उनके नामा-ए-आमाल में अगर कोई धब्बे होंगे तो उन्हें धो दूँगा।

وَلَاُدْخِلَنَّهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۚ

"और लाज़िमन दाख़िल करूँगा उन्हें उन बाग़ात में जिनके नीचे नहरें बहती हैं।"

ثَوَابًا مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۭ

"और यह बदला होगा अल्लाह के पास से।"

यानि अल्लाह तआला के ख़ास खज़ाना-ए-फ़ज़्ल से।

وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الثَّوَابِ ۝ ١٩٥

"और बेहतरीन बदला तो अल्लाह ही के पास है।"

अब आख़री पाँच आयात जो आ रही हैं उनकी हैसियत इस सूरह मुबारका के तमाम मुबाहिस पर "खात्मा-ए-कलाम" की हैं। याद रहे कि इस सूरत में अहले किताब का उमूमी ज़िक्र भी हुआ है और यहूद व नसारा का अलग-अलग भी। फिर इसमें अहले ईमान का ज़िक्र भी है और मुशरिकीन का भी। अब फरमाया:

आयत 196

لَا يَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فِي الْبِلَادِ ۝ ١٩٦ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ) आपको धोखे में ना डाले इन काफ़िरों की चलत-फिरत शहरों के अन्दर।"

यह काफ़िर जो इधर से उधर और उधर से इधर भाग-दौड़ कर रहे हैं, और इस्लाम और मुस्लमानों को ख़त्म करने के लिये साज़िशें कर रहे हैं, जमीयतें फ़राहम कर रहे हैं, इससे आप ﷺ किसी धोखे में ना आयें, किसी मुगालते का शिकार ना हों, उनकी ताक़त के बारे में कहीं आप ﷺ मरऊब ना हो जायें।

आयत 197

مَتَاعٌ قَلِيْلٌ ۣ

"यह तो बस थोड़ा सा फ़ायदा उठाना है"

यह तो महज़ चंद रोज़ा ज़िन्दगी के लिये हमने इन्हें कुछ साज़ो-सामान दे दिया है।

ثُمَّ مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ

"फिर उनका ठिकाना जहन्नम ही है।"

وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٩٧﴾

"और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।"

आयत 198

لٰكِنِ الَّذِيْنَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ

"इसके बरअक्स जिन लोगों ने अपने रब का तक़वा इख़्तियार किया"

لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا

"उनके लिये बाग़ात हैं जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी, जिनमें वह हमेशा-हमेशा रहेंगे"

نُزُلًا مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ

"यह उनके लिये इब्तदाई मेहमान नवाज़ी होगी अल्लाह की तरफ़ से।"

وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ لِّلْاَبْرَارِ ﴿١٩٨﴾

"और मज़ीद जो अल्लाह के पास है वह कहीं बेहतर है नेकोकारों के लिये।"

जन्नत की असल नेअमतें तो बयान में आ ही नहीं सकतीं। उनके बारे में हज़रत अबु हुरैरा रज़ि० से मरवी यह मुत्तफ़िक़ अलै हदीस याद रखें कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

قَالَ اللّٰهُ تَبَارَكَ وَتَعَالٰى: اَعْدَدْتُ لِعِبَادِيَ الصَّالِحِيْنَ مَا لَا عَيْنٌ رَأَتْ وَلَا اُذُنٌ سَمِعَتْ وَلَا خَطَرَ عَلٰى قَلْبِ بَشَرٍ

"अल्लाह तआला का इरशाद है: मैंने अपने सालेह बन्दों के लिये (जन्नत में) वह कुछ तैयार कर रखा है जो ना तो किसी आँख ने देखा और ना किसी कान ने सुना, और ना ही किसी इन्सान के दिल में उसका ख्याल ही गुज़रा।"

क़ुरान व हदीस में जन्नत की जिन नेअमतों का तज़किरा है उनकी हैसियत अहले जन्नत के लिये نُزُل (इब्तदाई मेहमान नवाज़ी) की होगी।

आयत 199

وَاِنَّ مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ لَمَنْ يُّؤْمِنُ بِاللّٰهِ

"और बेशक अहले किताब में वह भी हैं जो ईमान रखते हैं अल्लाह पर"

وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ

"और उस पर भी ईमान रखते हैं जो तुम पर नाज़िल किया गया और उस पर भी जो उनकी तरफ नाज़िल किया गया"

خٰشِعِيْنَ لِلّٰهِ

"अल्लाह से डरते रहते हैं"

उनके दिलों में अल्लाह का खौफ़ है, वह आजिज़ी और तवाज़े इख़्तियार करते हैं।

لَا يَشْتَرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا

"वह अल्लाह की आयात को हक़ीर सी क़ीमत पर फ़रोख्त नहीं करते।"

اُولٰٓئِكَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ

"ऐसे ही लोगों का अज्र उनके रब के पास महफ़ूज़ है।"

اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ﴿١٩٩﴾

"यक़ीनन अल्लाह जल्द हिसाब चुकाने वाला है।"

वह हिसाब लेने में देर नहीं लगाता। आखरी आयत फिर बहुत जामेअ है:

आयत 200

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اصْبِرُوْا وَصَابِرُوْا

"ऐ अहले ईमान! सब्र करो और सब्र में अपने दुश्मनों से बढ़ जाओ"

मुसाबरत बाबे मुफ़ाअला से है और इसमें मुक़ाबला होता है। एक तो है सब्र करना, साबित क़दम रहना, और एक है मुसाबरत यानि सब्र व इस्तक़ामत में दुश्मन से बढ़ जाना। एक सब्र वह भी तो कर रहे हैं। तुम्हें आज चरका लगा है तो उन्हें एक साल पहले ऐसा ही चरका लगा था और 70 मारे गये थे। वह एक साल के अन्दर फिर चढ़ाई करके आ गये, तो तुम अपना दिल ग़मगीन करके क्यों बैठे हुए हो? तुम्हें तो उनसे बढ़ कर सब्र करना है, उनसे बढ़ कर क़ुर्बानियाँ देनी हैं, तभी तुम हक़ीक़त में अल्लाह के वफ़ादार साबित होंगे।

وَرَابِطُوْا ۣ

"और मरबूत रहो।"

मुराब्ता पहरे को भी कहते हैं और नज़्म व ज़ब्त (discipline) की पाबन्दी करते हुए बाहम जुड़े रहने को भी। गज़वा-ए-ओहद में शिकस्त का सबब नज़्म का ढ़ीलापन और समो-ताअत में कमी थी। लिहाज़ा यहाँ सब्र व मुसाबरत के साथ-साथ नज़्म की पाबन्दी और बाहम मरबूत रहने की ताकीद फ़रमायी गयी है।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रखो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

यह आखरी और अहमतरीन चीज़ है। यह सब-कुछ करोगे तो फ़लाह मिलेगी। ऐसे ही घर बैठे तुम फौज़ व फ़लाह से हमकिनार नहीं हो सकोगे।

بارک اللّٰہ لی ولکم فی القرآن العظیم ونفعنی وایاکم بالآیات والذکر الحکیم

सूरतुन्निसा

तम्हीदी कलिमात

क़ुरान मजीद में मक्की और मदनी सूरतों के जो ग्रुप हैं उनमें से पहला ग्रुप पाँच सूरतों पर मुश्तमिल है। इस ग्रुप में मक्की सूरत सिर्फ़ सूरतुल फ़ातिहा है, जो हुज्म में बहुत छोटी मगर मायने व मफ़हूम और अज़मत व फ़ज़ीलत में बहुत बड़ी है। इसके बाद चार सूरतें मदनी हैं: अल् बक़रह, अन्निसा, आले इमरान और अल् मायदा। यह चार सूरतें दो-दो सूरतों के दो जोड़ों की शक्ल में हैं। पहला जोड़ा सूरतुल बक़रह और सूरह आले इमरान का है, और इन्हें खुद रसूल अल्लाह ﷺ ने एक मुश्तरक नाम दिया है "अज़्ज़हरावैन"। इन दो सूरतों में जो मुनास्बतें और मुशाबहतें हैं वह वह तर्जुमे के दौरान तफ़सील के साथ हमारे सामने आती रही हैं। इनमें निस्बते ज़ौजियत किस ऐतबार से है और यह एक-दूसरे की तकमील किस पहलु से करती हैं, यह बात भी सामने आ चुकी है।

अब दो सूरतें सूरतुन्निसा और सूरतुल मायदा जोड़े की शक्ल में आ रही हैं। इन दो जोड़ों में एक नुमाया फ़र्क़ (contrast) यह नज़र आयेगा कि साबक़ा (पिछली) दो सूरतों में पहले हुरूफ़े मुक़त्तआत हैं और फिर दोनों में क़ुराने मजीद कुतबे समाविया की अज़मत का बयान है, जबकि इन दोनों सूरतों में इस तरह की कोई तम्हीदी गुफ्तुगू नहीं है, बल्कि बराहे रास्त ख़िताब हो रहा है। अलबत्ता निस्बते ज़ौजियत के ऐतबार से इनमें यह फ़र्क़ है कि सूरतुन्निसा के आगाज़ में सीगा-ए-ख़िताब "يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ" (ऐ लोगों) है, यानि ख़िताब आम है, और सूरतुल मायदा का आगाज़ होता है "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" के सीगे से, यानि वहाँ ख़िताब ख़ास तौर पर इंसानों में से उन लोगों से है जो ईमान के दावेदार हैं। बाक़ी जिस तरह सूरतुल बक़रह और आले इमरान निस्फ़ैन में मुन्क़सिम हैं इस तरह का मामला इन दोनों सूरतों का नहीं है।

अपने असलूब के ऐतबार से यह दोनों सूरतें सूरतुल बक़रह के निस्फ़े सानी के मुशाबेह हैं। यानि चंद मज़ामीन की लड़ियाँ चल रही हैं, लेकिन एक रस्सी की तरह आपस में इस तरह बटी हुई और गुथी हुई हैं कि वह लड़ियाँ मुसलसल नहीं बल्कि कटवाँ नज़र आती हैं। अगर आप चार मुख्तलिफ़ रंगों की लड़ियों को आपस में बट कर रस्सी की शक्ल दे दें तो उनमें से कोई सा रंग भी मुसलसल नज़र नहीं आयेगा, बल्कि बारी-बारी चारों रंग नज़र आते रहेंगे। अब अगर आप उस रस्सी को खोल देंगे तो हर एक लड़ी अलग हो जायेगी और चारों रंग अलग-अलग नज़र आयेंगे। सूरतुल बक़रह के निस्फ़े सानी के मज़ामीन के बारे में मैंने बताया था कि यह गोया चार लड़ियाँ हैं, जिनमें दो का ताल्लुक़ शरीअत से है और दो का जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह से। शरीअत की दो लड़ियों में से एक इबादात की और दूसरी मामलात की है, जबकि जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह की लड़ियों में से एक जिहाद बिल माल यानि इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह और दूसरी जिहाद बिल नफ्स की आखरी शक्ल यानि क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह है।

यहाँ सूरतुन्निसा में भी आप देखेंगे कि तीन लड़ियाँ इसी तरह आपस में गुथी हुई हैं और इनके रंग कटवाँ नज़र आते हैं, लेकिन अगर आप इन सबको अलैहदा-अलैहदा कर लें तो इनमें से हर एक अपनी जगह एक अलग मज़मून बन जायेगा। यह तीन लड़ियाँ ख़िताब के ऐतबार से हैं। चुनाँचे एक लड़ी तो वह है जिसमें ख़िताब अहले ईमान से है, और सूरतुल बक़रह की तरह इसके ज़ेल में वही चार चीज़ें आ रही हैं: क़िताल, इन्फ़ाक़, अहकामे शरीअत और इबादात। दूसरी लड़ी में ख़िताब अहले किताब से है और इसमें नसारा और यहूद दोनों शामिल हैं। पहली दो सूरतों में यहूद व नसारा का मामला अलैहदा-अलैहदा था, जबकि इस सूरत में अहले किताब के ज़ेल में यह दोनों मिले-जुले हैं। तीसरी लड़ी इस सूरह मुबारका का वह सबसे बड़ा हिस्सा है जो मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब पर मुश्तमिल है, लेकिन अक्सर व बेशतर लोग वहाँ बात समझ नहीं पाते। इसलिये कि सीगा-ए-ख़िताब वहाँ भी "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" होता है। वाज़ेह रहे कि पूरे क़ुरान में कहीं भी "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ نَافَقُوْا" के अल्फ़ाज़ नहीं आये। सीगा-ए-ख़िताब "يٰٓاَيُّهَا الْكٰفِرُوْنَ" भी है, "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا" भी है और "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" भी, लेकिन "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ نَافَقُوْا" कहीं नहीं है। इसलिये कि मुनाफ़िक़ भी क़ानूनन तो मुस्लमान ही होते थे। तो असल में यह पहचानने के लिये बड़ी गहरी नज़र की ज़रूरत है कि किसी मक़ाम पर "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" के अल्फ़ाज़ में रुए सुखन मोमिनीन

सादिक़ीन की तरफ़ है या मुनाफ़िक़ीन की तरफ़। अगर यह फ़र्क़ ना किया जाये तो बाज़ मक़ामात पर बड़ी गलतफ़हमी हो जाती है। मसलन सूरह अत्तौबा का यह मक़ाम मुलाहिज़ा कीजिये: (आयत:38) {يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَا لَكُمْ اِذَا قِيْلَ لَكُمُ انْفِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى الْاَرْضِ} "ऐ अहले ईमान! तुम्हें क्या हो जाता है जब तुम्हें कहा जाता है कि निकलो अल्लाह की राह में तो तुम ज़मीन में धँसे जाते हो?" इस अन्दाज़े तखातब से एक आम सूए ज़न पैदा हो सकता है कि शायद यह आम मुसलमानों का हाल था। हालाँकि इस तर्ज़े अमल का मुज़ाहिरा मुसलमानों की तरफ़ से नहीं बल्कि मुनाफ़िक़ीन की तरफ़ से होता था और वहाँ यह आम मुसलमानों का नहीं, मुनाफ़िक़ीन का मसला था। चुनाँचे रुए सुखन मुनाफ़िक़ीन ही की तरफ़ है। मोमिनीन सादिक़ीन तो हर वक़्त खुले दिल से माल व जान की क़ुर्बानी के लिये आमादा रहते थे। गोया:

वापस नहीं फेरा कोई फ़रमान जूनून का
तन्हा नहीं लौटी कभी आवाज़ जरस की!

तो असल में देखना यह होता है कि किस आयत में रुए सुखन किसकी तरफ़ है।

मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब के ऐतबार से यह सूरह मुबारका अहमतरीन है। सूरतुल बक़रह में तो कहीं लफ्ज़ निफ़ाक़ आया ही नहीं। यह हिकमते खुदावन्दी है कि इस मर्ज़ को पहले छुपा कर रखा और इसकी सिर्फ़ अलामात बयान कर दीं कि जो कोई भी अपने अन्दर इन अलामात को देखे वह मुतनब्बा (सावधान) हो जाये और अपने इलाज की तरफ़ मुतवज्जा हो जाये। लेकिन जो लोग इस तरह मुतवज्जा नहीं होते तो मालूम हुआ कि उनको अब ज़रा नुमाया करना ज़रूरी है और बात ज़रा उरिया अंदाज़ से करनी पड़ेगी। चुनाँचे सूरह आले इमरान में एक-दो जगह निफ़ाक़ का लफ्ज़ आ गया। लेकिन अब यहाँ सूरतुन्निसा में सबसे बड़ा हिस्सा मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब पर मुश्तमिल है। मेरा तजज़िया यह है कि इस सूरत की 176 आयात में से 55 आयात में रुए सुखन मोमिनीन सादिक़ीन की तरफ़ है, सिर्फ़ 37 आयात में अहले किताब यानि यहूद व नसारा से मुश्तरक तौर पर ख़िताब है, जबकि 84 आयात में ख़िताब मुनाफ़िक़ीन से है। लेकिन याद रहे कि जहाँ भी उनसे बात होगी "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" के हवाले से होगी। इसलिये कि ईमान के दावेदार तो वह भी थे। मुनाफ़िक़ वही तो होता है जो ईमान का दावा करता है मगर हक़ीक़त में ईमान से तही दामन होता है, चाहे वह शऊरी तौर पर मुनाफ़िक़ हो चाहे ग़ैर शऊरी तौर पर।

सूरतुन्निसा और सूरतुल मायदा के माबैन एक फ़र्क़ नोट कर लीजिये। इंसानी तमद्दुन में सबसे बुनियादी चीज़ मआशरा है, और मआशरे में बुनियादी अहमियत औरत और मर्द के ताल्लुक़ को हासिल है। दूसरे यह कि मआशरे में कुछ कमज़ोर तबक़ात होते हैं, जिनके हुक़ूक़ का लिहाज़ करना ज़रूरी है। यह मज़मून आपको सूरतुन्निसा में मिलेगा। आइली क़वानीन सूरतुल बक़रह में तफ़सील से आ चुके हैं। एक मर्द और एक औरत के दरमियान अज़्द्वाज का जो रिश्ता जुड़ता है जिससे फिर खानदान वजूद में आता है, जो मआशरे की बुनियादी इकाई (unit) और उसकी जड़ और बुनियाद है, इससे मुताल्लिक़ तफ़सीली हिदायात सूरतुल बक़रह में आ चुकी हैं। सूरह आले इमरान इस ऐतबार से मुनफ़रिद है कि उसमें शरीअत के अहकाम नहीं हैं, सिवाये उस एक हुक्म के जो सूद के बारे में आया है (आयत:130): {يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوا الرِّبٰٓوا اَضْعَافًا مُّضٰعَفَةً}। लेकिन अब यहाँ सूरतुन्निसा में तमद्दुन की मआशरती सतह पर मज़ीद हिदायात दी जा रही हैं। ख़ास तौर पर उस मआशरे के जो दबे हुए और पिसे हुए तबक़ात थे उनकी हुर्रियत व आज़ादी, उनके बेहतर मक़ाम और उनके हुक़ूक़ की तरफ़ मुतवज्जा किया जा रहा है।

मआशरे में जिन्स (sex) का मामला भी बहुत अहम है। किसी मआशरे में अगर जिन्सी मामलात पर क़दग़नें (control) ना हों और वह जिन्सी फ़साद का शिकार हो जाये तो वहाँ तबाही फैल जायेगी। इस ज़िमन में इब्तदाई अहकाम इस सूरत में आये हैं कि एक इस्लामी मआशरे में जिन्सी नज़्म व ज़ब्त (sex-discipline) कैसे क़ायम किया जाये और जिन्सी बेराहरवी से कैसे निबटा जाये। तो इस तरीक़े से तमद्दुन की बुनियादी मंज़िल पर गुफ्तुगू हो रही है। सूरतुल मायदा में तमद्दुन की बुलन्दतरीन मंज़िल रियासत ज़ेरे बहस आयेगी और आला सतह पर अदालती निज़ाम के लिये हिदायात दी जाएँगी कि चोरी, डाका वगैरह का सद्दे बाब कैसे किया जायेगा। इस ज़िमन में हुदूद व ताज़ीरात (सज़ाएँ) भी बयान की जाएँगी। बाक़ी सूरतुन्निसा की तरह सूरतुल मायदा में भी अहले किताब से फ़ैसलाकुन ख़िताब है।

मैंने आगाज़ में अर्ज़ किया था कि पहले ग्रुप की इन चार मदनी सूरतों में दो मज़मून मुतावाज़ी चलते हैं। पहला मज़मून शरीअते इस्लामी का है और सूरतुल बक़रह में अहकामे शरीअत का इब्तदाई ख़ाका दे दिया गया है, जबकि शरीअत के

तकमीली अहकाम सूरतुल मायदा में हैं। इन सूरतों में दूसरा मज़मून अहले किताब से ख़िताब है और वह भी तदरीजन आगे बढ़ते हुए सूरतुल मायदा में अपनी तकमीली सूरत को पहुँचता है। चुनाँचे अहले किताब से आखरी और फ़ैसलाकुन बातें सूरतुल मायदा में मिलती हैं। इन तम्हीदी कलिमात के बाद अब हम इस सूरह मुबारका का मुताअला शुरू करते हैं।

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

आयात 1 से 10 तक

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيْرًا وَّنِسَاۗءً ۚ
وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْ تَسَاۗءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا ﴿١﴾ وَاٰتُوا الْيَتٰمٰٓى اَمْوَالَھُمْ وَلَا تَتَبَدَّلُوا
الْخَبِيْثَ بِالطَّيِّبِ ۠ وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَھُمْ اِلٰٓى اَمْوَالِكُمْ ۭ اِنَّهٗ كَانَ حُوْبًا كَبِيْرًا ﴿٢﴾ وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى
فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَاۗءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ ۚ فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تَعْدِلُوْا فَوَاحِدَةً اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۭ ذٰلِكَ
اَدْنٰٓى اَلَّا تَعُوْلُوْا ﴿٣﴾ وَاٰتُوا النِّسَاۗءَ صَدُقٰتِهِنَّ نِحْلَةً ۭ فَاِنْ طِبْنَ لَكُمْ عَنْ شَيْءٍ مِّنْهُ نَفْسًا فَكُلُوْهُ هَنِيْۗـــــًٔـا مَّرِيْۗـــــًٔـا ﴿٤﴾ وَلَا
تُؤْتُوا السُّفَهَاۗءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِىْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيٰمًا وَّارْزُقُوْھُمْ فِيْھَا وَاكْسُوْھُمْ وَقُوْلُوْا لَھُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ﴿٥﴾
وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى حَتّٰٓي اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ ۚ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِّنْھُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوْٓا اِلَيْھِمْ اَمْوَالَھُمْ ۚ وَلَا تَاْكُلُوْھَآ اِسْرَافًا
وَّبِدَارًا اَنْ يَّكْبَرُوْا ۭ وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ ۚ وَمَنْ كَانَ فَقِيْرًا فَلْيَاْكُلْ بِالْمَعْرُوْفِ ۭ فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْھِمْ اَمْوَالَھُمْ
فَاَشْهِدُوْا عَلَيْھِمْ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيْبًا ﴿٦﴾ لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۠ وَلِلنِّسَاۗءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ
الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ اَوْ كَثُرَ ۭ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا ﴿٧﴾ وَاِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ اُولُوا الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنُ
فَارْزُقُوْھُمْ مِّنْهُ وَقُوْلُوْا لَھُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ﴿٨﴾ وَلْيَخْشَ الَّذِيْنَ لَوْ تَرَكُوْا مِنْ خَلْفِھِمْ ذُرِّيَّةً ضِعٰفًا خَافُوْا عَلَيْھِمْ ۠
فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ وَلْيَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا ﴿٩﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِيْ بُطُوْنِھِمْ نَارًا ۭ
وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا ﴿١٠﴾ۧ

आयत 1

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ

"ऐ लोगों अपने उस रब का तक़वा इख़्तियार करो जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया"

देखिये मआशरती मसाइल के ज़िमन में गुफ्तुगू इस बुनियादी बात से शुरू की गयी है कि अपने खालिक़ व मालिक का तक़वा इख़्तियार करो।

وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا

"और उसी से उसका जोड़ा बनाया"

नोट कीजिये की यहाँ यह अल्फ़ाज़ नहीं हैं कि "उसने तुम्हें एक आदम से पैदा किया और उसी (आदम) से उसका जोड़ा बनाया", बल्कि "نَّفۡسٍ وَّاحِدَةٍ" (एक जान) का लफ्ज़ है। गोया इससे यह भी मुराद हो सकती है कि ऐन आदम (अलै०) ही से उनका जोड़ा बनाया गया हो, जैसा की बाज़ रिवायात से भी इशारा मिलता है, और यह भी मुराद हो सकती है कि आदम की नौअ से उनका जोड़ा बनाया गया, जैसा की बाज़ मुफ़स्सिरीन का ख्याल है। इसलिये कि नौअ एक है, जिन्सें दो हैं। इन्सान (Human Beings) नौअ (Species) एक है, लेकिन उसके अन्दर ही से जो जिन्सी तफ़रीक़ (Sexual differentiation) हुई है, उसके हवाले से उसका जोड़ा बनाया है।

وَبَثَّ مِنۡهُمَا رِجَالًا كَثِيۡرًا وَّنِسَآءً

"और उन दोनों से फैला दिये (ज़मीन में) कसीर तादाद में मर्द और औरतें।"

"مِنۡهُمَا" से मुराद यक़ीनन आदम व हव्वा हैं। यानि अगर आप इस तमद्दुने इंसानी का सुराग लगाने के लिये पीछे से पीछे जाएँगे तो आगाज़ में एक इंसानी जोड़ा (आदम व हव्वा) पाएँगे। इस रिश्ते से पूरी नौए इंसानी इस सतह पर जाकर रिश्ता-ए-अख़ुवत में मुन्सलिक (बंधन) हो जाती है। एक तो सगे बहन-भाई हैं। दादा-दादी पर जाकर cousins का हल्क़ा बन जाता है। इससे ऊपर परदादा-परदादी पर जाकर एक और वसीअ हल्क़ा बन जाता है। इसी तरह चलते जाइये तो मालूम होगा कि पूरी नौए इंसानी बिलआखिर एक जोड़े (आदम व हव्वा) की औलाद है।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيۡ تَسَآءَلُوۡنَ بِهٖ وَالۡاَرۡحَامَ

"और तक़वा इख़्तियार करो उस अल्लाह का जिसका तुम एक-दूसरे को वास्ता देते हो, और रहमी रिश्तों का लिहाज़ रखो।"

तक़वा की ताकीद मुलाहिज़ा कीजिये कि एक ही आयत में दूसरी मर्तबा फिर तक़वा का हुक्म है। फ़रमाया कि उस अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो जिसका तुम एक-दूसरे को वास्ता देते हो। आपको मालूम है कि फ़क़ीर भी माँगता है तो अल्लाह के नाम पर माँगता है, अल्लाह के वास्ते माँगता है, और अक्सर व बेशतर जो तमद्दुनी मामलात होते हैं उनमें भी अल्लाह का वास्ता दिया जाता है। घरेलू झगड़ों को जब निबटाया जाता है तो आखिरकार कहना पड़ता है कि अल्लाह का नाम मानो और अपनी इस ज़िद से बाज़ आ जाओ! तो जहाँ आखरी अपील अल्लाह ही के हवाले से करनी है तो अगर उसका तक़वा इख़्तियार करो तो यह झगड़े होंगे ही नहीं। उसने इस मआशरे के मुख्तलिफ़ तबक़ात के हुक़ूक़ मुअय्यन कर दिये हैं, मसलन मर्द और औरत के हुक़ूक़, रब्बुल माल और आमिल के हुक़ूक़, फ़र्द और इज्तमाइयत के हुक़ूक़ वगैरह। अगर अल्लाह के अहकाम की पैरवी की जाये और उसके आयद करदा हुक़ूक़ व फ़राइज़ की पाबन्दी की जाये तो झगड़ा नहीं होगा।

मज़ीद फ़रमाया की रहमी रिश्तों का लिहाज़ रखो! जैसा की अभी बताया गया कि रहमी रिश्तों का अव्वलीन दायरा बहन-भाई हैं, जो अपने वालिदैन की औलाद हैं। फिर दादा-दादी पर जाकर एक बड़ी तादाद पर मुश्तमिल दूसरा दायरा वजूद में आता है। यह रहमी रिश्ते हैं। इन्हीं रहमी रिश्तों को फैलाते जाइये तो कुल बनी आदम और कुल बिनाते हव्वा सब एक ही नस्ल से हैं, एक ही बाप और एक ही माँ की औलाद हैं।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيۡكُمۡ رَقِيۡبًا ①

"यक़ीनन अल्लाह तुम पर निगरान है।"

यह तक़वा की रूह है। अगर हर वक़्त यह ख्याल रहे कि कोई मुझे देख रहा है, मेरा हर अमल उसकी निगाह में है, कोई अमल उससे छुपा हुआ नहीं है तो इन्सान का दिल अल्लाह के तक़वे से मामूर हो जायेगा। अगर यह इस्तेहज़ार (ध्यान) रहे कि चाहे मैंने सब दरवाज़े और खिड़कियाँ बंद कर दीं और परदे गिरा दिये हैं लेकिन एक आँख से मैं नहीं छुप सकता तो यही तक़वा है। और अगर तक़वा होगा तो फिर अल्लाह के हर हुक्म की पाबन्दी की जायेगी।

यह हिकमते नबवी है कि इस आयत को नबी अकरम ﷺ ने ख़ुत्बा-ए-निकाह में शामिल फ़रमाया। निकाह का मौक़ा वह होता है कि एक मर्द और एक औरत के दरमियान रिश्ता-ए-अज़्द्वाज क़ायम हो रहा है। यानि आदम का एक बेटा और हव्वा की एक बेटी फिर उसी रिश्ते में मुन्सलिक हो रहे हैं जिसमें आदम और हव्वा थे। जिस तरह उन दोनों से नस्ल फैली है उसी तरह अब इन दोनों से नस्ल आगे बढ़ेगी। लेकिन इस पूरे मआशरती मामले में, खानदानी मामलात में, आइली मामलात में अल्लाह का तक़वा इन्तहाई अहम है। जैसे हमने सूरतुल बक़रह में देखा कि बार-बार {وَاتَّقُوا اللّٰهَ} की ताकीद फ़रमायी गयी। इसलिये कि अगर तक़वा नहीं होगा तो फिर खाली क़ानून मौअस्सर नहीं होगा। क़ानून को तो तख़्ता-ए-

मश्क़ भी बनाया जा सकता है कि बज़ाहिर क़ानून का तक़ाज़ा पूरा हो रहा हो लेकिन उसकी रूह बिल्कुल ख़त्म होकर रह जाये। सूरतुल बक़रह में इसी तर्ज़े अमल के बारे में फ़रमाया गया कि: {وَلَا تَتَّخِذُوْٓا اٰيٰتِ اللّٰهِ هُزُوًا ۡ} (आयत:231) “और अल्लाह की आयात को मज़ाक़ ना बना लो।”

आयत 2

وَاٰتُوا الْيَتٰمٰٓى اَمْوَالَهُمْ

“और यतीमों के माल उनके हवाले कर दो”

मआशरे के दबे हुए तबक़ात में से यतीम एक अहम तबक़ा था। दौरे जाहिलियत में उनके कोई हुक़ूक़ नहीं थे और उनके माल हड़प कर लिये जाते थे। वह बहुत कमज़ोर थे।

وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيْثَ بِالطَّيِّبِ ۠

“और (अपने) बुरे माल को (उनके) अच्छे माल से ना बदलो”

ऐसा हरगिज़ ना हो कि यतीमों के माल में से अच्छा-अच्छा ले लिया और अपना रद्दी माल उसमें शामिल कर दिया।

وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَهُمْ اِلٰٓى اَمْوَالِكُمْ ۭ

“और उनके माल अपने मालों में शामिल करके हड़प ना करो।”

اِنَّهٗ كَانَ حُوْبًا كَبِيْرًا ۝

“यक़ीनन यह बहुत बड़ा गुना है।”

यतीमों के बाज़ सरपरस्त जो तक़वा और खौफ़-ए-ख़ुदा से तही दामन होते हैं, अव्वल तो उनका माल हड़प कर जाते हैं, और अगर ऐसा ना भी करें तो उनका अच्छा माल ख़ुर्द-बर्द (गबन) करके अपना रद्दी और बेकार माल उसमें शामिल कर देते हैं और इस तरह तादाद पूरी कर देते हैं। फिर ऐसा भी होता है कि उनके माल को अपने माल के साथ मिला लेते हैं ताकि उसे बाआसानी हड़प कर सकें। उनको ऐसे सब हथकण्डों से रोक दिया गया।

आयत 3

وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى

“और अगर तुम्हें अन्देशा हो कि तुम यतीम बच्चियों के बारे में इन्साफ़ नहीं कर सकोगे”

فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَاۗءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ

“तो (उन्हें अपने निकाह में ना लाओ बल्कि) जो औरतें तुम्हें पसंद हों उनसे निकाह कर लो दो-दो, तीन-तीन, चार-चार तक।”

इस आयत में “यतामा” से मुराद यतीम बच्चियाँ और ख़्वातीन हैं। यतीम लड़के तो उम्र की एक ख़ास हद को पहुँचने के बाद अपनी आज़ाद मर्ज़ी से ज़िन्दगी गुज़ार लेते थे, लेकिन यतीम लड़कियों का मामला यह होता था कि उनके वली और सरपरस्त उनके साथ निकाह भी कर लेते थे। इस तरह यतीम लड़कियों के माल भी उनके क़ब्ज़े में आ जाते थे, और यतीम लड़कियों के पीछे उनके हुक़ूक़ की निगहदाश्त करने वाला भी कोई नहीं होता था। अगर माँ-बाप होते तो ज़ाहिर है कि वह बच्ची के हुक़ूक़ के बारे में भी कोई बात करते। लिहाज़ा उनका कोई परसाने हाल नहीं होता था। चुनाँचे फ़रमाया गया कि अगर तुम्हें अन्देशा हो कि तुम उनके बारे में इन्साफ़ नहीं कर सकोगे तो फिर तुम उन यतीम बच्चियों से निकाह मत करो, बल्कि दूसरी औरतें जो तुम्हें पसंद हों उनसे निकाह करो। अगर ज़रूरत हो तो दो-दो, तीन-तीन, चार-चार की हद तक निकाह कर सकते हो, इसकी तुम्हें इजाज़त है। लेकिन तुम यतीम बच्चियों के वली बन कर उनकी शादियाँ कहीं और करो ताकि तुम उनके हुक़ूक़ के पासबान बन कर खड़े हो सको। वरना अगर तुमने उनको अपने घरों में डाल लिया तो कौन होगा जो उनके हुक़ूक़ के बारे में तुमसे बाज़पुर्स कर सके? मुन्करीन सुन्नत और मुन्करीन हदीस ने इस आयत की मुख्तलिफ़ ताबीरात की हैं, जो यहाँ बयान नहीं की जा सकतीं। इसका सही मफ़हूम यही है जो सलफ़ से चला आ रहा है और जो

हज़रत आयशा सिद्दीक़ा (रज़ि०) से मरवी है। मज़ीद बराँ तादादे अज़्द्वाज के बारे में यही एक आयत क़ुरान मजीद में है। इस आयत की रू से तादादे अज़्द्वाज को महदूद किया गया है और चार से ज़्यादा बीवियाँ रखने को ममनूअ (prohibited) कर दिया गया है।

فَاِنۡ خِفۡتُمۡ اَلَّا تَعۡدِلُوۡا فَوَاحِدَةً

"लेकिन अगर तुम्हें अन्देशा हो कि उनके दरमियान अद्ल ना कर सकोगे तो फिर एक ही पर बस करो"

यह जो हमने इजाज़त दी है कि दो-दो, तीन-तीन, चार-चार औरतों से निकाह कर लो, इसकी शर्ते लाज़िम यह है कि बीवियों के दरमियान अद्ल करो। अगर तम्हें अन्देशा हो कि इस शर्त को पूरा नहीं कर सकोगे और उनमें बराबरी ना कर सकोगे तो फिर एक ही शादी करो, इससे ज़्यादा नहीं। बीवियों के माबैन अद्ल व इन्साफ़ में हर उस चीज़ का ऐतबार होगा जो शुमार में आ सकती है। मसलन हर बीवी के पास जो वक़्त गुज़ारा जाये उसमें मसावात होनी चाहिये। नान-नफ्क़ा, ज़ेवरात, कपड़े और दीगर माल व असबाब, गर्ज़ यह कि तमाम माद्दी चीज़ें जो देखी-भाली जा सकती हैं उनमें इन्साफ़ और अद्ल लाज़िम है। अलबत्ता दिली मैलान और रुझान जिस पर इन्सान को क़ाबू नहीं होता, उसमें गिरफ़्त नहीं है।

اَوۡ مَا مَلَكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ ؕ

"या वह औरतें जो तुम्हारी मिल्के यमीन हों।"

यानि वह औरतें जो जंगों में गिरफ़्तार होकर आईं और हुकूमत की तरफ़ से लोगों में तक़सीम कर दी जायें। वह एक अलैहदा मामला है और उनकी तादाद पर कोई तहदीद नहीं है।

ذٰلِكَ اَدۡنٰۤى اَلَّا تَعُوۡلُوۡا ؕ﴿۳﴾

"यह इससे क़रीबतर है कि तुम एक ही तरफ़ को ना झुक पड़ो।"

कि बस एक ही बीवी की तरफ़ मैलान है और, जैसा कि आगे आयेगा, मुअल्लक़ होकर रह गयी हैं कि ना वह शौहर वालियाँ हैं और ना आज़ाद हैं कि कहीं और निकाह कर लें।

आयत 4

وَاٰتُوا النِّسَآءَ صَدُقٰتِهِنَّ نِحۡلَةً ؕ

"और औरतों को उनके महर खुशदिली के साथ दिया करो।"

औरतों के महर तावान समझ कर ना दिया करो, बल्कि फ़र्ज़ जानते हुए अदा किया करो। صَدُقَاتٌ صِدَاقٌ की जमा है, जबकि صَدَقَةٌ की जमा صَدَقَاتٌ आती है।

فَاِنۡ طِبۡنَ لَـكُمۡ عَنۡ شَىۡءٍ مِّنۡهُ نَفۡسًا

"फिर अगर वह ख़ुद अपनी रज़ामंदी से उसमें से कोई चीज़ तुम्हें छोड़ दें"

तुमने जो महर मुक़र्रर किया था वह उन्हें अदा कर दिया, अब वह तुम्हें उसमें से कोई चीज़ हदिया कर रही हैं, तोहफ़ा दे रही हैं तो कोई हर्ज नहीं।

فَكُلُوۡهُ هَنِيۡٓــًٔا مَّرِیۡٓــــًٔا ﴿۴﴾

"तो तुम उसको खाओ मज़े से ख़ुशग्वारी से।"

तुम उसे बेखटके इस्तेमाल में ला सकते हो, इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन यह हो उनकी मर्ज़ी से, ज़बरदस्ती और ज़बर करके ना ले लिया जाये।

आयत 5

وَلَا تُؤۡتُوا السُّفَهَآءَ اَمۡوَالَكُمُ الَّتِىۡ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمۡ قِيٰمًا

“और मत पकड़ा दो नासमझों को अपने वह माल जिनको अल्लाह ने तुम्हारे गुज़रान का ज़रिया बनाया है”

मआशरे में एक तबक़ा ऐसा भी होता है जो नादानों और नासमझ लोगों (سُفَھَاء) पर मुश्तमिल होता है। इनमें बच्चे भी शामिल हैं जो अभी सन शऊर को नहीं पहुँचे। ऐसे बच्चे अगर यतीम हो जायें तो वह विरासत में मिलने वाले माल को अलल्लो-तलल्लो में उड़ा सकते हैं। लिहाज़ा यहाँ हिदायत की गयी है कि ऐसे माल के बेजा इस्तेमाल की मआशरती सतह पर रोकथाम होनी चाहिये। यह तसव्वुर नाक़ाबिले क़ुबूल है कि मेरा माल है, मैं जैसे चाहूँ ख़र्च करूँ! चुनाँचे इस माल को “اَمۡوَالَكُمۡ” कहा गया कि यह असल में मआशरे की मुश्तरिक बहबूद (कल्याण) के लिये है। अगरचे इन्फ़रादी मिल्कियत है, लेकिन फिर भी इसे मआशरे की मुश्तरिक बहबूद में ख़र्च होना चाहिये।

وَّارۡزُقُوۡهُمۡ فِيۡهَا وَاكۡسُوۡهُمۡ

“हाँ उन्हें उसमें से खिलाते और पहनाते रहो”

وَقُوۡلُوۡا لَهُمۡ قَوۡلًا مَّعۡرُوۡفًا ۝

“और उनसे बात किया करो अच्छे अंदाज़ में।”

इसी उसूल के तहत बिरतानवी दौर के हिन्दुस्तान में Court of wards मुक़र्रर कर दिये जाते थे। अगर कोई बड़ा जागीरदार या नवाब फ़ौत हो जाता और यह अन्देशा महसूस होता कि उसका बेटा आवारा है और वह सब कुछ उड़ा देगा, ख़त्म कर देगा तो हुकूमत उस मीरास को अपनी हिफ़ाज़त में ले लेती और वुरसा के लिये उसमें से सालाना वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर देती। बाक़ी सब माल व असबाब जमा रहता था ताकि यह उनकी आइन्दा नस्ल के काम आ सके।

आयत 6

وَابۡتَلُوا الۡيَتٰمٰى حَتّٰٓى اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ ۚ

“और यतीमों की जाँच-परख करते रहो यहाँ तक कि वह निकाह की उम्र को पहुँच जायें।”

فَاِنۡ اٰنَسۡتُمۡ مِّنۡهُمۡ رُشۡدًا

“फिर अगर तुम उनके अन्दर सूझ-बूझ पाओ”

तुम महसूस करो कि अब यह बाशऊर हो गये हैं, समझदार हो गये हैं।

فَادۡفَعُوۡۤا اِلَيۡهِمۡ اَمۡوَالَهُمۡ ۚ

“तो उनके अमवाल उनके हवाले कर दो।”

وَلَا تَاۡكُلُوۡهَاۤ اِسۡرَافًا وَّبِدَارًا اَنۡ يَّكۡبَرُوۡا ؕ

“और तुम उसे हड़प ना कर जाओ इसराफ़ और जल्दीबाज़ी करके (इस डर से) कि वह बड़े हो जाएँगे।”

ऐसा ना हो कि तुम यतीमों का माल ज़रूरत से ज़्यादा और जल्दबाज़ी में ख़र्च करने लगो, इस ख्याल से कि बच्चे जवान हो जाएँगे तो यह माल उनके हवाले करना है, लिहाज़ा इससे पहले-पहले हम इसमें से जितना हड़प कर सकें कर जायें।

وَمَنۡ كَانَ غَنِيًّا فَلۡيَسۡتَعۡفِفۡ ۚ

“और जो कोई ग़नी हो उसको चाहिये कि वह परहेज़ करे।”

यतीम का वली अगर ख़ुद ग़नी है, अल्लाह ने उसको दे रखा है, उसके पास कशाइश है तो उसे यतीम के माल में से कुछ भी लेने का हक़ नहीं है। फिर उसे यतीम के माल से बचते रहना चाहिये।

وَمَنۡ كَانَ فَقِيۡرًا فَلۡيَاۡكُلۡ بِالۡمَعۡرُوۡفِ ؕ

“और जो कोई मोहताज हो तो खाये दस्तूर के मुताबिक़।”

अगर कोई ख़ुद तंगदस्त है, मोहताज है और वह यतीम की निगहदाश्त भी कर रहा है, उसका कुछ वक़्त भी उस पर सर्फ़ हो रहा है तो मारूफ़ तरीक़े से अगर वह यतीम के माल में से कुछ खा भी ले तो कुछ हर्ज नहीं है। इस्लाम की तालीम बड़ी फ़ितरी है, इसमें ग़ैरफ़ितरी बन्दिशें नहीं हैं जिन पर अमल करना नामुमकिन हो जाये।

فَإِذَا دَفَعْتُمْ إِلَيْهِمْ أَمْوَالَهُمْ فَأَشْهِدُوا عَلَيْهِمْ ۚ

"फिर जब तुम उनके माल उनके हवाले करो तो इस पर गवाह ठहरा लो।"

उनका माल व मताअ गवाहों की मौजूदगी में उनके हवाले किया जाये कि उनकी यह-यह चीज़ें आज तक मेरी तहवील में थीं, अब मैंने इनके हवाले कर दीं।

وَكَفَىٰ بِاللَّهِ حَسِيبًا ۝٦

"और अल्लाह काफ़ी है हिसाब लेने के लिये।"

यह दुनिया का मामला है कि इसके लिये लिखत-पढ़त और शहादत है। बाक़ी असल हिसाब तो तुम्हें अल्लाह के यहाँ जाकर देना है।

आयत 7

لِلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ

"मर्दों के लिये भी हिस्सा है उसमें से जो तरका छोड़ा हो वालिदैन ने और रिश्तेदारों ने"

وَلِلنِّسَاءِ نَصِيبٌ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ

"और औरतों का भी हिस्सा है उसमें से जो तरका है वालिदैन और रिश्तेदारों का"

यहाँ अब पहली मरतबा औरतों को विरासत का हक़ दिया जा रहा है, वरना क़ब्ल अज़ इस्लाम अरब मआशरे में औरत का कोई हक़ विरासत नहीं था।

مِمَّا قَلَّ مِنْهُ أَوْ كَثُرَ ۚ

"चाहे वह विरासत थोड़ी हो या ज़्यादा हो।"

अल्लाह तआला का क़ानून इस पर हर सूरत में पूरी तरह नाफ़िज़ होना चाहिये।

نَصِيبًا مَفْرُوضًا ۝٧

"यह हिस्सा है (अल्लाह की तरफ़ से) फ़र्ज़ किया गया।"

आगे आप देखेंगे कि इस क़ानूने विरासत की किस तरह बार-बार ताकीद आ रही है। साथ ही आप यह भी देखते रहें कि हमारे मआशरे के अन्दर अल्लाह तआला के इस हुक्म की किस तरह धज्जियाँ बिखरती हैं। ख़ास तौर पर हमारे शिमाली इलाक़े में वैसे तो नमाज़ रोज़े का बहुत अहतमाम होता है, लेकिन वहाँ के लोग बेटियों को विरासत में हिस्सा देने को किसी सूरत तैयार नहीं होते, बल्कि अपने रिवाज की पैरवी करते हैं। शरीअत की कुछ चीज़ें बहुत अहम हैं और क़ुरान में उनका हुक्म इन्तहाई ताकीद के साथ आता है।

आयत 8

وَإِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ أُولُو الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينُ

"और जब हाज़िर हो तक़सीम के वक़्त क़राबतदार और यतीम और मोहताज"

जब विरासत की तक़सीम हो रही हो तो अब अगर वहाँ कुछ क़राबतदार, कुछ यतीम और कुछ मोहताज भी आ जायें।

فَارْزُقُوهُمْ مِنْهُ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَعْرُوفًا ۝٨

"तो उन्हें भी कुछ दे दिला दो उसमें से और उनसे माक़ूल अंदाज़ में बात करो।"

वह देख रहे हैं कि इस वक़्त विरासत तक़सीम हो रही है और वह बिल्कुल मोहताज हैं, तो उनके अहसासे महरूमियत का जो भी मदावा हो सकता है करो, और उनसे बड़े अच्छे अंदाज़ में बात करो। उन्हें झिड़को नहीं कि हमारी विरासत तक़सीम हो रही है और यहाँ तुम कौन आ गये हो?

आयत 9

وَلۡيَخۡشَ الَّذِيۡنَ لَوۡ تَرَكُوۡا مِنۡ خَلۡفِهِمۡ ذُرِّيَّةً ضِعٰفًا خَافُوۡا عَلَيۡهِمۡ

"और डरते रहना चाहिये उन लोगों को कि अगर उन्होंने भी छोड़े होते अपने पीछे ना तवाँ (कमज़ोर) बच्चे तो उनके बारे में उन्हें कैसे-कैसे अन्देशे होते।"

فَلۡيَتَّقُوا اللّٰهَ

"तो उन्हें चाहिये कि अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करें"

उन्हें यह ख्याल करना चाहिये कि यह यतीम जो इस वक़्त आ गये हैं यह भी किसी के बच्चे हैं, जिनके सर पर बाप का साया नहीं रहा। लिहाज़ा वह उनके सर पर शफक्क़त का हाथ रखें।

وَلۡيَقُوۡلُوۡا قَوۡلًا سَدِيۡدًا ﴿۹﴾

"और सीधी-सीधी (हक़ पर मब्नी) बात करें।"

आयत 10

اِنَّ الَّذِيۡنَ يَاۡكُلُوۡنَ اَمۡوَالَ الۡيَتٰمٰى ظُلۡمًا

"यक़ीनन वह लोग जो यतीमों का माल हड़प करते हैं नाहक़"

اِنَّمَا يَاۡكُلُوۡنَ فِىۡ بُطُوۡنِهِمۡ نَارًا‌ ؕ

"वह तो अपने पेटों में आग ही भर रहे हैं।"

وَسَيَصۡلَوۡنَ سَعِيۡرًا ﴿۱۰﴾

"और वह अनक़रीब भड़कती आग में दाख़िल होंगे।"

अन्दर की आग तो वह ख़ुद अपने पेटों में डाल रहे हैं और वह ख़ुद भी समूचे दोज़ख़ की भड़कती आग में डाल दिये जाएँगे। गोया एक आग उनके अन्दर होगी और एक वसीअ व अरीज़ आग उनके बाहर होगी। यह दस आयतें बड़ी जामेअ हैं, जिनमें उस मआशरे के पसमान्दा तबक़ात में से एक-एक का ख्याल करके निहायत बारीक बीनी और हिकमत के साथ अहकाम दिये गये हैं।

आयात 11 से 14 तक

يُوۡصِيۡكُمُ اللّٰهُ فِىۡۤ اَوۡلَادِكُمۡ‌ ۖ لِلذَّكَرِ مِثۡلُ حَظِّ الۡاُنۡثَيَيۡنِ‌ ۚ فَاِنۡ كُنَّ نِسَآءً فَوۡقَ اثۡنَتَيۡنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ‌ ۚ وَاِنۡ كَانَتۡ
وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصۡفُ‌ ؕ وَلِاَ بَوَيۡهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنۡهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنۡ كَانَ لَهٗ وَلَدٌ‌ ۚ فَاِنۡ لَّمۡ يَكُنۡ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗۤ
اَبَوٰهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ‌ ؕ فَاِنۡ كَانَ لَهٗۤ اِخۡوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ مِنۡۢ بَعۡدِ وَصِيَّةٍ يُّوۡصِىۡ بِهَاۤ اَوۡ دَيۡنٍ‌ ؕ اٰبَآؤُكُمۡ وَاَبۡنَآؤُكُمۡ لَا
تَدۡرُوۡنَ اَيُّهُمۡ اَقۡرَبُ لَـكُمۡ نَفۡعًا‌ ؕ فَرِيۡضَةً مِّنَ اللّٰهِ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا ﴿۱۱﴾ وَلَـكُمۡ نِصۡفُ مَا تَرَكَ اَزۡوَاجُكُمۡ اِنۡ
لَّمۡ يَكُنۡ لَّهُنَّ وَلَدٌ‌ ۚ فَاِنۡ كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكۡنَ مِنۡۢ بَعۡدِ وَصِيَّةٍ يُّوۡصِيۡنَ بِهَاۤ اَوۡ دَيۡنٍ‌ ؕ وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا
تَرَكۡتُمۡ اِنۡ لَّمۡ يَكُنۡ لَّكُمۡ وَلَدٌ‌ ۚ فَاِنۡ كَانَ لَكُمۡ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكۡتُمۡ مِّنۡۢ بَعۡدِ وَصِيَّةٍ تُوۡصُوۡنَ بِهَاۤ اَوۡ دَيۡنٍ‌ ؕ وَاِنۡ كَانَ
رَجُلٌ يُّوۡرَثُ كَلٰلَةً اَوِ امۡرَاَةٌ وَّلَهٗۤ اَخٌ اَوۡ اُخۡتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنۡهُمَا السُّدُسُ‌ ۚ فَاِنۡ كَانُوۡۤا اَكۡثَرَ مِنۡ ذٰ لِكَ فَهُمۡ شُرَكَآءُ فِى

الثُّلُثِ مِنۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصٰى بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۙ غَيْرَ مُضَاۗرٍّ ۚ وَصِيَّةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَلِيْمٌ ﴿١٢﴾ تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ ۭ وَمَنْ يُّطِعِ
اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ يُدْخِلْهُ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ﴿١٣﴾ وَمَنْ يَّعْصِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ
وَيَتَعَدَّ حُدُوْدَهٗ يُدْخِلْهُ نَارًا خَالِدًا فِيْهَا ۠ وَلَهٗ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ ﴿١٤﴾

सूरतुन्निसा का दूसरा रुकूअ बड़ा मुख़्तसर है और इसमें सिर्फ़ चार आयात हैं, लेकिन मानवी तौर पर इनमें एक क़यामत मुज़मर है। यह क़ुरान हकीम का ऐजाज़ है कि चार आयतों के अन्दर इस्लाम का पूरा क़ानूने विरासत बयान कर दिया गया है जिस पर पूरी-पूरी जिल्दें लिखी गयी हैं। गोया जामिअत की इन्तहा है।

आयत 11

يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ ۤ

"अल्लाह तआला तुम्हें वसीयत करता है तुम्हारी औलाद के बारे में"

لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۚ

"कि लड़के के लिये हिस्सा है दो लड़कियों के बराबर"

فَاِنْ كُنَّ نِسَاۗءً فَوْقَ اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ ۚ

"फिर अगर लड़कियाँ ही हों (दो या) दो से ज़्यादा तो उनके लिये तरके का दो तिहाई है।"

وَاِنْ كَانَتْ وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصْفُ ۭ

"और अगर एक ही लड़की है तो उसके लिये आधा है।"

ज़ाहिर है अगर एक ही बेटा है तो वह पूरे तरके का वारिस हो जायेगा। लिहाज़ा जब बेटी का हिस्सा बेटे से आधा है तो अगर एक ही बेटी है तो उसे आधी विरासत मिलेगी, आधी दूसरे लोगों को जायेगी। वह एक अलैहदा मामला है।

وَلِاَبَوَيْهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنْ كَانَ لَهٗ وَلَدٌ ۚ

"और मय्यत के वालिदैन में से हर एक के लिये छठा हिस्सा है जो उसने छोड़ा अगर मय्यत के औलाद हो।"

अगर कोई शख्स फ़ौत हो जाये और उसके वालिदैन या दोनों में से कोई एक ज़िन्दा हो तो उसकी विरासत में से उनका भी मुअय्यन हिस्सा है। अगर वफ़ात पाने वल शख्स साहिबे औलाद है तो उसके वालिदैन में से हर एक के लिये विरासत में छठा हिस्सा है। यानि मय्यत के तरके में से एक तिहाई वालिदैन को चला जायेगा और दो तिहाई औलाद में तक़सीम होगा।

فَاِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗٓ اَبَوٰهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ ۚ

"और अगर उसके औलाद ना हो और उसके वारिस माँ-बाप ही हों तो उसकी माँ का एक तिहाई है।"

अगर कोई शख्स लावलद फ़ौत हो जाये तो उसके तरके में से उसकी माँ को एक तिहाई और बाप को दो तिहाई मिलेगा। यानि बाप का हिस्सा माँ से दो गुना हो जायेगा।

فَاِنْ كَانَ لَهٗٓ اِخْوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ

"फिर अगर मय्यत के बहन-भाई हों तो उसकी माँ का छठा हिस्सा है"

अगर मरने वाला बेऔलाद हो लेकिन उसके बहन-भाई हों तो इस सूरत में माँ का हिस्सा मज़ीद कम होकर एक तिहाई के बजाये छठा हिस्सा रह जायेगा और बाक़ी बाप को मिलेगा, लेकिन बहन-भाइयों को कुछ ना मिलेगा। वह बाप की तरफ़ से विरासत के हक़दार होंगे। लेकिन साथ ही फ़रमा दिया:

مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ

"बाद उस वसीयत की तकमील के जो वह कर जाये या बाद अदाये क़र्ज़ के।"

विरासत की तक़सीम से पहले दो काम कर लेने ज़रूरी हैं। एक यह कि अगर उस शख़्स के ज़िम्मे कोई क़र्ज़ है तो वह अदा किया जाये। और दूसरे यह कि अगर उसने कोई वसीयत की है तो उसको पूरा किया जाये। फिर विरासत तक़सीम होगी।

ابَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ لَا تَدْرُوْنَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ لَكُمْ نَفْعًا ۚ

"तुम्हारे बाप और तुम्हारे बेटे, तुम नहीं जानते कि उनमें से कौन तुम्हारे लिये ज़्यादा नाफ़ेअ है।"

فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ

"यह अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर किया हुआ फ़रीज़ा है।"

तुम अपनी अक़्लों को छोड़ो और अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर करदा हिस्सों के मुताबिक़ विरासत तक़सीम करो। कोई आदमी यह समझे कि मेरे बूढ़े वालिदैन हैं, मेरी विरासत में ख्वाह मा ख्वाह उनके लिये हिस्सा क्यों रख दिया गया है? यह तो खा पी चुके, ज़िन्दगी गुज़र चुके, विरासत तो अब मेरी औलाद ही को मिलनी चाहिये, तो यह सोच बिल्कुल ग़लत है। तुम्हें बस अल्लाह का हुक्म मानना है।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ۝11

"यक़ीनन अल्लाह तआला इल्म व हिकमत वाला है।"

उसका कोई हुक्म इल्म और हिकमत से खाली नहीं है।

आयत 12

وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ اَزْوَاجُكُمْ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهُنَّ وَلَدٌ ۚ

"और तुम्हारा हिस्सा तुम्हारी बीवियों के तरके में से आधा है अगर उनके कोई औलाद ना हो।"

बीवी फ़ौत हो गयी है और उसके कोई औलाद नहीं है तो जो वह छोड़ गयी है उसमें से निस्फ़ शौहर का हो जायेगा। बाक़ी जो निस्फ़ है वह मरहूमा के वालिदैन और बहन-भाइयों में हस्बे क़ायदा तक़सीम होगा।

فَاِنْ كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ

"और अगर उनके औलाद है तो तो तुम्हारे लिये चौथाई है उसमें से जो उन्होंने छोड़ा"

مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْنَ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ

"बाद उस वसीयत की तामील के जो वह कर जायें या बाद अदाये क़र्ज़ के।"

अगर मरने वाली ने औलाद छोड़ी है तो मौजूदा शौहर को मरहूमा के माल से अदाये देन व इन्फ़ाज़े वसीयत के बाद कुल माल का चौथाई हिस्सा मिलेगा और बाक़ी तीन चौथाई दूसरे वुरसा में तक़सीम होगा।

وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّكُمْ وَلَدٌ ۚ

"और उनके लिये चौथाई है तुम्हारे तरके का अगर तुम्हारे औलाद नहीं है।"

فَاِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ

"और अगर तुम्हारे औलाद है तो उनके लिये आठवाँ हिस्सा है तुम्हारे तरके में से"

مِّنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوْصُوْنَ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ

"उस वसीयत की तामील के बाद जो तुमने की हो या क़र्ज़ अदा करने के बाद।"

अगर मरने वाले ने कोई औलाद नहीं छोड़ी तो अदाये देन व इन्फ़ाज़े वसीयत के बाद उसकी बीवी को उसके तरके का चौथाई मिलेगा, और अगर उसने कोई औलाद छोड़ी है तो इस सूरत में बाद अदाये देन व वसीयत के बीवी को आठवाँ हिस्सा मिलेगा। अगर बीवी एक से ज़्यादा हैं तो भी मज़कूरा हिस्सा सब बीवियों में तक़सीम हो जायेगा।

وَإِنْ كَانَ رَجُلٌ يُّوْرَثُ كَلٰلَةً أَوِ امْرَأَةٌ

"और अगर कोई शख़्स जिसकी विरासत तक़सीम हो रही है कलाला हो, या औरत हो ऐसी ही"

"कलाला" वह मर्द या औरत है जिसके ना तो वालिदैन ज़िन्दा हों और ना उसकी कोई औलाद हो।

وَّلَهٗٓ أَخٌ أَوْ أُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ

"और उसका एक भाई या एक बहन हो तो उनमें से हर एक के लिये छठा हिस्सा है।"

فَإِنْ كَانُوْٓا أَكْثَرَ مِنْ ذٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَآءُ فِي الثُّلُثِ

"और अगर वह इससे ज़्यादा हों तो वह सब एक तिहाई में शरीक होंगे"

मुफ़स्सिरीन का इज्माअ है कि यहाँ कलाला की मीरास के हुक्म में भाई और बहनों से मुराद अख़्याफ़ी (माँ शरीक) भाई और बहन हैं। रहे ऐनी और अलाती भाई-बहन तो उनका हुक्म इसी सूरत के आखिर में इरशाद हुआ है। अरबों में दरअसल तीन क़िस्म के बहन-भाई होते हैं। एक "ऐनी" जिनका बाप भी मुश्तरिक हो और माँ भी, जिन्हें हमारे यहाँ हक़ीक़ी कहते हैं। दूसरे "अलाती" बहन-भाई, जिनका बाप एक और माँयें जुदा हों। अहले अरब के यहाँ यह भी हक़ीक़ी बहन-भाई होते हैं और इनका हुक्म वही है जो "ऐनी" बहन-भाइयों का है। वह इन्हें "सौतेल" नहीं समझते। उनके यहाँ सौतेला वह कहलाता है जो एक माँ से हो लेकिन उसका बाप दूसरा हो। यह "अख़्याफ़ी" बहन-भाई कहलाते हैं। एक शख़्स की औलाद थी, वह फ़ौत हो गया। उसके बाद उसकी बीवी ने दूसरी शादी कर ली। तो अब उस दूसरे खाविन्द से जो औलाद है वह पहले खाविन्द की औलाद के अख़्याफ़ी बहन-भाई हैं। तो कलाला की मीरास के हुक्म में यहाँ अख़्याफ़ी भाई-बहन मुराद हैं।

مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصٰى بِهَآ أَوْ دَيْنٍ

"उस वसीयत की तामील के बाद जो की गयी या अदाये क़र्ज़ के बाद"

यह दो शर्तें हर सूरत बाक़ी रहेंगी। मरने वाले की ज़िम्मे अगर कोई क़र्ज़ है तो पहले वह अदा किया जायेगा, फिर उसकी वसीयत की तामील की जायेगी, उसके बाद मीरास वारिसों में तक़सीम की जायेगी।

غَيْرَ مُضَآرٍّ

"बग़ैर किसी को ज़रर पहुँचाये।"

यह सारा काम ऐसे होना चाहिये कि किसी को ज़रर (नुक़सान) पहुँचाने की नीयत ना हो।

وَصِيَّةً مِّنَ اللّٰهِ

"यह ताकीद है अल्लाह की तरफ़ से।"

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَلِيْمٌ ⑫

"और अल्लाह तआला सब कुछ जानने वाला कमाले हिल्म वाला है।"

उसके हुक्म और बुर्दबारी पर धोखा ना खाओ कि वह तुम्हें पकड़ नहीं रहा है। *"ना जा उसके तहम्मुल पर कि है बेढब गिरफ़्त उसकी!"* उसकी पकड़ जब आयेगी तो उससे बचना मुमकिन नहीं होगा: {إِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيْدٌ} (अल बुरूज:12) "यक़ीनन तुम्हारे रब की पकड़ बड़ी सख्त है।"

आयत 13

تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ

"यह अल्लाह की मुक़र्रर की हुई हुदूद हैं।"

وَمَنۡ یُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗ یُدۡخِلۡهُ جَنّٰتٍ تَجۡرِیۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ

“और जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करेगा वह दाख़िल करेगा उसे उन बाग़ात में जिसके दामन में नदियाँ बहती होंगी”

خٰلِدِیۡنَ فِیۡهَا ؕ

“उनमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे।”

وَذٰلِكَ الۡفَوۡزُ الۡعَظِیۡمُ ﴿۱۳﴾

“और यही है बहुत बड़ी कामयाबी।”

आयत 14

وَمَنۡ یَّعۡصِ اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗ وَیَتَعَدَّ حُدُوۡدَهٗ

“और जो कोई नाफ़रमानी करेगा अल्लाह और उसके रसूल की और तजावुज़ करेगा उसकी हुदूद से”

یُدۡخِلۡهُ نَارًا خَالِدًا فِیۡهَا ۪

“वह दाख़िल करेगा उसको आग में जिसमें वह हमेशा रहेगा।”

وَلَهٗ عَذَابٌ مُّهِیۡنٌ ﴿۱۴﴾

“और उसके लिये अहानत आमेज़ अज़ाब होगा।”

आयात 15 से 22 तक

وَالّٰتِیۡ یَاۡتِیۡنَ الۡفَاحِشَةَ مِنۡ نِّسَآئِكُمۡ فَاسۡتَشۡهِدُوۡا عَلَیۡهِنَّ اَرۡبَعَةً مِّنۡكُمۡ ۚ فَاِنۡ شَهِدُوۡا فَاَمۡسِكُوۡهُنَّ فِی الۡبُیُوۡتِ حَتّٰی
یَتَوَفّٰهُنَّ الۡمَوۡتُ اَوۡ یَجۡعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ سَبِیۡلًا ﴿۱۵﴾ وَالَّذٰنِ یَاۡتِیٰنِهَا مِنۡكُمۡ فَاٰذُوۡهُمَا ۚ فَاِنۡ تَابَا وَاَصۡلَحَا فَاَعۡرِضُوۡا
عَنۡهُمَا ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِیۡمًا ﴿۱۶﴾ اِنَّمَا التَّوۡبَةُ عَلَی اللّٰهِ لِلَّذِیۡنَ یَعۡمَلُوۡنَ السُّوۡٓءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ یَتُوۡبُوۡنَ مِنۡ قَرِیۡبٍ فَاُولٰٓئِكَ
یَتُوۡبُ اللّٰهُ عَلَیۡهِمۡ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِیۡمًا حَكِیۡمًا ﴿۱۷﴾ وَلَیۡسَتِ التَّوۡبَةُ لِلَّذِیۡنَ یَعۡمَلُوۡنَ السَّیِّاٰتِ ۚ حَتّٰۤی اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ
الۡمَوۡتُ قَالَ اِنِّیۡ تُبۡتُ الۡـٰٔنَ وَلَا الَّذِیۡنَ یَمُوۡتُوۡنَ وَهُمۡ كُفَّارٌ ؕ اُولٰٓئِكَ اَعۡتَدۡنَا لَهُمۡ عَذَابًا اَلِیۡمًا ﴿۱۸﴾ یٰۤاَیُّهَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡا لَا
یَحِلُّ لَكُمۡ اَنۡ تَرِثُوا النِّسَآءَ كَرۡهًا ؕ وَلَا تَعۡضُلُوۡهُنَّ لِتَذۡهَبُوۡا بِبَعۡضِ مَاۤ اٰتَیۡتُمُوۡهُنَّ اِلَّاۤ اَنۡ یَّاۡتِیۡنَ بِفَاحِشَةٍ مُّبَیِّنَةٍ ۚ
وَعَاشِرُوۡهُنَّ بِالۡمَعۡرُوۡفِ ۚ فَاِنۡ كَرِهۡتُمُوۡهُنَّ فَعَسٰۤی اَنۡ تَكۡرَهُوۡا شَیۡـًٔا وَّیَجۡعَلَ اللّٰهُ فِیۡهِ خَیۡرًا كَثِیۡرًا ﴿۱۹﴾ وَاِنۡ اَرَدۡتُّمُ
اسۡتِبۡدَالَ زَوۡجٍ مَّكَانَ زَوۡجٍ ۙ وَّاٰتَیۡتُمۡ اِحۡدٰهُنَّ قِنۡطَارًا فَلَا تَاۡخُذُوۡا مِنۡهُ شَیۡـًٔا ؕ اَتَاۡخُذُوۡنَهٗ بُهۡتَانًا وَّاِثۡمًا مُّبِیۡنًا ﴿۲۰﴾
وَكَیۡفَ تَاۡخُذُوۡنَهٗ وَقَدۡ اَفۡضٰی بَعۡضُكُمۡ اِلٰی بَعۡضٍ وَّاَخَذۡنَ مِنۡكُمۡ مِّیۡثَاقًا غَلِیۡظًا ﴿۲۱﴾ وَلَا تَنۡكِحُوۡا مَا نَكَحَ اٰبَآؤُكُمۡ مِّنَ
النِّسَآءِ اِلَّا مَا قَدۡ سَلَفَ ؕ اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً وَّمَقۡتًا ؕ وَسَآءَ سَبِیۡلًا ﴿۲۲﴾

अब इस्लामी मआशरे की तहरीर के लिये अहकाम दिये जा रहे हैं। मुस्लमान जब तक मक्का में थे तो वहाँ कुफ्फ़ार का गलबा था। अब मदीना में अल्लाह तआला ने मुसलमानों को वह हैसियत दी है कि अपने मामलात को सँवारना शुरू करें।

चुनाँचे एक-एक करके उन मआशरती मामलात और समाजी मसाइल को ज़ेरे बहस लाया जा रहा है। इस्लामी मआशरे में इफ़्फ़त व अस्मत को बुनियादी अहमियत हासिल होती है। लिहाज़ा अगर मआशरे में जिन्सी बेराहरवी मौजूद है तो उसकी रोकथाम कैसे हो? उसके लिये इब्तदाई अहकाम यहाँ आ रहे हैं। इस ज़िमन में तकमीली अहकाम सूरह अल नूर में आएँगे। मआशरती मामलात के ज़िमन में अहकाम पहले सूरतुन्निसा, फिर सूरतुल अहज़ाब, फिर सूरह अल नूर और फिर सूरतुल मायदा में बतदरीज आये हैं। यह अल्लाह तआला की हिकमत का तक़ाज़ा है कि सूरतुल अहज़ाब और सूरह अल नूर को मुसहफ़ में काफ़ी आगे रखा गया है और यहाँ पर सूरतुन्निसा के बाद सूरतुल मायदा आ गयी है।

आयत 15

وَالّٰتِيْ يَاْتِيْنَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِّسَاۗىِٕكُمْ

"और तुम्हारी औरतों में से जो किसी बेहयाई का इरतकाब करें"

فَاسْتَشْهِدُوْا عَلَيْهِنَّ اَرْبَعَةً مِّنْكُمْ ۚ

"तो उन पर अपने में से चार गवाह लाओ।"

فَاِنْ شَهِدُوْا فَاَمْسِكُوْهُنَّ فِي الْبُيُوْتِ

"पस अगर वह गवाही दे दें तो उन औरतों को घरों में बंद कर दो"

حَتّٰى يَتَوَفّٰىھُنَّ الْمَوْتُ

"यहाँ तक कि मौत उनको ले जाये"

इसी हालत में उनकी ज़िन्दगी का ख़ात्मा हो जाये।

اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَھُنَّ سَبِيْلًا ۝

"या अल्लाह उनके लिये कोई और रास्ता निकाल दे।"

बदकारी के मुताल्लिक़ यह इब्तदाई हुक्म था। बाद में सूरह अल नूर में हुक्म आ गया कि बदकारी करने वाले मर्द व औरत दोनों को सौ-सौ कोड़े लगाये जायें। मालूम होता है कि यहाँ ऐसी लड़कियों या औरतों का तज़किरा है जो मुसलमानों में से थीं मगर उनका बदकारी का मामला किसी ग़ैर मुस्लिम मर्द से हो गया जो इस्लामी मआशरे के दबाव में नहीं है। ऐसी औरतों के मुताल्लिक़ यह हिदायत फ़रमायी गयी कि उन्हें ता हुक्म सानी घरों के अन्दर महबूस (क़ैदी) रखा जाये।

आयत 16

وَالَّذٰنِ يَاْتِيٰنِھَا مِنْكُمْ فَاٰذُوْھُمَا ۚ

"और जो दोनों तुम में से इस (बदकारी) का इरतकाब करें तो उन दोनों को ईज़ा (तकलीफ़) पहुँचाओ।"

अगर बदकारी का इरतकाब करने वाले मर्द व औरत दोनों मुसलमानों में से ही हों तो दोनों को अज़ियत दी जाये। यानि उनकी तौहीन व तज़लील की जाये और मारा-पीटा जाये।

فَاِنْ تَابَا وَاَصْلَحَا فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمَا ۭ

"फिर अगर वह तौबा कर लें और इस्लाह कर लें तो उनको छोड़ दो।"

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ۝

"यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत तौबा क़ुबूल फ़रमाने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।"

वाज़ेह रहे कि यह बिल्कुल इब्तदाई अहकाम हैं। इसी लिये इनकी वज़ाहत में तफ़सीरों में बहुत से अक़वाल मिल जाएँगे। इसलिये कि जब हुदूद नाफ़िज़ हो गईं तो यह उबूरी और आरज़ी अहकाम मनसूख क़रार पाये। जैसा की सूरतुन्निसा में क़ानूने विरासत नाज़िल होने के बाद सूरतुल बक़रह में वारिद शुदा वसीयत का हुक्म साक़ित हो गया।

आयत 17

اِنَّمَا التَّوْبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السُّوْٓءَ بِجَهَالَةٍ

"अल्लाह के ज़िम्मे है तौबा क़ुबूल करना ऐसे लोगों की जो कोई बुरी हरकत कर बैठते हैं जहालत और नादानी में"

ثُمَّ يَتُوْبُوْنَ مِنْ قَرِيْبٍ

"फिर जल्दी ही तौबा कर लेते हैं"

एक साहिबे ईमान पर कभी ऐसा वक़्त भी आ सकता है कि खारजी असरात इतने शदीद हो जायें या नफ्स के अन्दर का हैजान उसे जज़्बात से मग़लूब कर दे और वह कोई गुनाह का काम कर गुज़रे। लेकिन इसके बाद उसे जैसे ही होश आयेगा उस पर शदीद नदामत तारी हो जायेगी और वह अल्लाह के हुज़ूर तौबा करेगा। ऐसे शख्स के बारे में फ़रमाया गया है कि उसकी तौबा क़ुबूल करना अल्लाह के ज़िम्मे है।

فَاُولٰٓئِكَ يَتُوْبُ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ ۭ

"तो यही हैं जिनकी तौबा अल्लाह क़ुबूल फ़रमायेगा।"

وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ⑰

"और अल्लाह तआला बाख़बर है और हकीम व दाना है।"

आयत 18

وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السَّيِّاٰتِ ۚ

"और ऐसे लोगों का कोई हक़ नहीं है तौबा का जो बुरे काम किये चले जाते हैं।"

मुसलसल हरामखोरियाँ करते रहते हैं, ज़िन्दगी भर ऐश उड़ाते रहते हैं।

حَتّٰٓي اِذَا حَضَرَ اَحَدَھُمُ الْمَوْتُ قَالَ اِنِّىْ تُبْتُ الْــٰٔنَ

"यहाँ तक कि जब उनमें से किसी की मौत का वक़्त आ जाता है तो उस वक़्त वह कहता है कि अब मैं तौबा करता हूँ"

وَلَا الَّذِيْنَ يَمُوْتُوْنَ وَھُمْ كُفَّارٌ ۭ

"और ना उन लोगों की तौबा है जो कुफ़्र की हालत में ही मर जाते हैं।"

उनकी तौबा का कोई सवाल ही नहीं।

اُولٰٓئِكَ اَعْتَدْنَا لَھُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ⑱

"ऐसे लोगों के लिये तो हमने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 19

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَرِثُوا النِّسَاۗءَ كَرْهًا ۭ

"ऐ अहले ईमान! तुम्हारे लिये जायज़ नहीं कि तुम औरतों को ज़बरदस्ती विरासत में ले लो।"

यह भी अरब जाहिलियत की एक मकरूह रस्म थी जिसमें औरतों के तबक़े पर शदीद ज़ुल्म होता था। होता यूँ था कि एक शख्स फ़ौत हुआ है, उसकी चार-पाँच बीवियाँ हैं, तो उसका बड़ा बेटा वारिस बन गया है। अब उसकी हक़ीक़ी माँ तो एक ही है, बाक़ी सौतेली माँयें हैं, तो वह उनको विरासत में ले लेता था कि यह मेरे क़ब्ज़े में रहेंगी, बल्कि उनसे शादियाँ भी कर लेते थे या बगैर निकाह अपने घरों में डाले रखते थे, या फिर यह कि इख़्तियार अपने हाथ में रख कर उनकी शादियाँ कहीं और करते थे तो महर ख़ुद ले लेते थे। चुनाँचे फ़रमाया कि ऐ अहले ईमान, तुम्हारे लिये जायज़ नहीं है कि तुम औरतों के ज़बरदस्ती वारिस बन बैठो! जिस औरत का शौहर फ़ौत हो गया वह आज़ाद है। इद्दत गुज़ार कर जहाँ चाहे जाये और जिससे चाहे निकाह कर ले।

وَلَا تَعۡضُلُوۡهُنَّ لِتَذۡهَبُوۡا بِبَعۡضِ مَاۤ اٰتَيۡتُمُوۡهُنَّ

"और ना यह जायज़ है कि तुम उन्हें रोके रखो ताकि उनसे वापस ले लो उसका कुछ हिस्सा जो कुछ तुमने उनको दिया है"

निकाह के वक़्त तो बड़े चाव थे, बड़े लाड़ उठाये जा रहे थे और क्या-क्या दे दिया था, और अब वह सब वापस हथियाने के लिये तरह-तरह के हथकंडे इस्तेमाल हो रहे हैं, उन्हें तंग किया जा रहा है, ज़हनी तौर पर तकलीफ़ पहुँचाई जा रही है।

اِلَّاۤ اَنۡ يَّاۡتِيۡنَ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍۚ

"हाँ अगर वह सरीह बदकारी की मुरतकिब हुई हों (तो तुम्हें उनको तंग करने का हक़ है)।"

अगर किसी से सरीह हरामकारी का फ़अल सरज़द हो गया और उस पर उसे कोई सज़ा दी जाये (जैसा कि ऊपर आ चुका है **(فَاٰذُوۡهُمَا)** इसकी तो इजाज़त है। इसके बगैर किसी पर ज़्यादती करना जायज़ नहीं है। ख़ास तौर पर अगर नीयत यह हो कि मैं इससे अपना महर वापस ले लूँ, यह इन्तहाई कमीनगी है।

وَعَاشِرُوۡهُنَّ بِالۡمَعۡرُوۡفِۚ

"और औरतों के साथ अच्छे तरीक़े पर मआशरत इख़्तियार करो।"

उनके साथ भले तरीक़े पर, ख़ुश अस्लूबी से, नेकी और रास्ती के साथ गुज़र-बसर करो।

فَاِنۡ كَرِهۡتُمُوۡهُنَّ فَعَسٰۤى اَنۡ تَكۡرَهُوۡا شَيۡـًٔـا وَّيَجۡعَلَ اللّٰهُ فِيۡهِ خَيۡرًا كَثِيۡرًا ۝١٩

"अगर वह तुम्हें नापसन्द हों तो बईद नहीं कि एक चीज़ तुम्हें नापसन्द हो और उसमें अल्लाह ने तुम्हारे लिये बहुत कुछ बेहतरी रख दी हो।"

अगर तुम्हें किसी वजह से अपनी औरतें नापसन्द हो गयी हों तो हो सकता है कि किसी शय को तुम नापसन्द करो, दर हालाँकि अल्लाह ने उसी में तुम्हारे लिये खैरे कसीर रख दिया हो। एक औरत किसी एक ऐतबार से आपके दिल से उतार गयी है, तबीयत का मैलान नहीं रहा है, लेकिन पता नहीं उसमें और कौन-कौन सी खूबियाँ हैं और वह किस-किस ऐतबार से आपके लिये खैर का ज़रिया बनती है। तो इस मामले को अल्लाह के हवाले करो, और उनके हुक़ूक़ अदा करते हुए, उनके साथ ख़ुश अस्लूबी से गुज़र-बसर करो। अलबत्ता अगर मामला ऐसा हो गया है कि साथ रहना मुमकिन नहीं है तो तलाक़ का रास्ता खुला है, शरीअते इस्लामी ने इसमें कोई तंगी नहीं रखी है। यह मसीहियत की तरह का कोई गैर माक़ूल निज़ाम नहीं है कि तलाक़ हो ही नहीं सकती।

आयत 20

وَاِنۡ اَرَدْتُّمُ اسۡتِبۡدَالَ زَوۡجٍ مَّكَانَ زَوۡجٍ ۙ

"और अगर तुम्हारा इरादा एक बीवी की जगह दूसरी बीवी ले आने का हो"

अगर तुमने फ़ैसला कर ही लिया हो कि एक बीवी की जगह दूसरी बीवी लानी है।

وَّاٰتَيۡتُمۡ اِحۡدٰٮهُنَّ قِنۡطَارًا

"और उनमें से किसी एक को तुमने ढ़ेरों माल दिया हो"

فَلَا تَاۡخُذُوۡا مِنۡهُ شَيۡـًٔـا ؕ

"तो उसमें से कोई भी शय वापस ना लो।"

औरतों को तुमने जो महर दिया था वह उनका है, अब उसमें से कुछ वापस नहीं ले सकते।

اَتَاۡخُذُوۡنَهٗ بُهۡتَانًا وَّاِثۡمًا مُّبِيۡنًا ۝٢٠

"क्या तुम उसे वापस लोगे बोहतान लगा कर और सरीह गुनाह के मुरतकिब होकर?"

आयत 21

وَ كَيۡفَ تَاۡخُذُوۡنَهٗ وَقَدۡ اَفۡضٰى بَعۡضُكُمۡ اِلٰى بَعۡضٍ

"और तुम उसे कैसे वापस ले सकते हो जबकि तुम एक-दूसरे के साथ सोहबत कर चुके हो?"

कुछ अक़्ल के नाखुन लो, कुछ शऊर और शराफ़त का सबूत दो। तुम उनसे वह माल किस तरह वापस लेना चाहते हो जबकि तुम्हारे माबैन दुनिया का इन्तहाई क़रीबी ताल्लुक़ क़ायम हो चुका है।

وَّاَخَذۡنَ مِنۡكُمۡ مِّيۡثَاقًا غَلِيۡظًا ﴿۲۱﴾

"और वह तुमसे मज़बूत क़ौल व क़रार ले चुकी हैं।"

यह क़ौल व क़रार निकाह के वक़्त होता है जब मर्द औरत के महर व नफ़क़ा की पूरी ज़िम्मेदारी लेता है।

आयत 22

وَلَا تَنۡكِحُوۡا مَا نَكَحَ اٰبَآؤُكُمۡ مِّنَ النِّسَآءِ

"और जिन औरतों से तुम्हारे बाप निकाह कर चुके हों उनसे तुम निकाह मत करो"

जैसा कि पहले ज़िक्र हुआ, अय्यामे जाहिलियत में सौतेली माँओं को निकाह करके या बगैर निकाह के घर में डाल लिया जाता था। ऐसे निकाह को उस मआशरे में भी "निकाहे मक़्त" कहा जाता था। यानि यह बहुत ही बुरा निकाह है। ज़ाहिर है फ़ितरते इंसानी तो ऐसे ताल्लुक़ से इबा करती है, मगर उनके यहाँ यह रिवाज था। क़ुरान मजीद ने इस मक़ाम पर इसका सख्ती से सद्दे बाब किया है।

اِلَّا مَا قَدۡ سَلَفَ‌ؕ

"सिवाये इसके जो हो चुका।"

اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً وَّمَقۡتًا ؕ

"यक़ीनन यह बड़ी बेहयाई की बात है और अल्लाह तआला के ग़ज़ब को भड़काने वाली है।"

وَسَآءَ سَبِيۡلًا ﴿۲۲﴾

"और बहुत ही बुरा रास्ता है।"

अगली आयत में मुहर्रमाते अब्दिया का बयान है कि किन रिश्तों में निकाह का मामला नहीं हो सकता। यानि एक मर्द अपनी किन-किन रिश्तेदार ख्वातीन से शादी नहीं कर सकता।

आयात 23 से 25 तक

حُرِّمَتۡ عَلَيۡكُمۡ اُمَّهٰتُكُمۡ وَبَنٰتُكُمۡ وَاَخَوٰتُكُمۡ وَعَمّٰتُكُمۡ وَخٰلٰتُكُمۡ وَبَنٰتُ الۡاَخِ وَبَنٰتُ الۡاُخۡتِ وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِىۡۤ
اَرۡضَعۡنَكُمۡ وَاَخَوٰتُكُمۡ مِّنَ الرَّضَاعَةِ وَاُمَّهٰتُ نِسَآٮِٕكُمۡ وَرَبَآٮِٕبُكُمُ الّٰتِىۡ فِىۡ حُجُوۡرِكُمۡ مِّنۡ نِّسَآٮِٕكُمُ الّٰتِىۡ دَخَلۡتُمۡ بِهِنَّ ۚ
فَاِنۡ لَّمۡ تَكُوۡنُوۡا دَخَلۡتُمۡ بِهِنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيۡكُمۡ ۚ وَحَلَاۤٮِٕلُ اَبۡنَآٮِٕكُمُ الَّذِيۡنَ مِنۡ اَصۡلَابِكُمۡ ۙ وَاَنۡ تَجۡمَعُوۡا بَيۡنَ الۡاُخۡتَيۡنِ
اِلَّا مَا قَدۡ سَلَفَ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوۡرًا رَّحِيۡمًا ﴿۲۳﴾ وَّالۡمُحۡصَنٰتُ مِنَ النِّسَآءِ اِلَّا مَا مَلَـكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ‌ ۚ كِتٰبَ اللّٰهِ عَلَيۡكُمۡ‌ ۚ
وَاُحِلَّ لَكُمۡ مَّا وَرَآءَ ذٰ لِكُمۡ اَنۡ تَبۡتَغُوۡا بِاَمۡوَالِكُمۡ مُّحۡصِنِيۡنَ غَيۡرَ مُسٰفِحِيۡنَ‌ ؕ فَمَا اسۡتَمۡتَعۡتُمۡ بِهٖ مِنۡهُنَّ فَاٰ تُوۡهُنَّ
اُجُوۡرَهُنَّ فَرِيۡضَةً‌ ؕ وَلَا جُنَاحَ عَلَيۡكُمۡ فِيۡمَا تَرٰضَيۡتُمۡ بِهٖ مِنۡۢ بَعۡدِ الۡـفَرِيۡضَةِ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا ﴿۲۴﴾ وَمَنۡ لَّمۡ
يَسۡتَطِعۡ مِنۡكُمۡ طَوۡلًا اَنۡ يَّنۡكِحَ الۡمُحۡصَنٰتِ الۡمُؤۡمِنٰتِ فَمِنۡ مَّا مَلَـكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ مِّنۡ فَتَيٰتِكُمُ الۡمُؤۡمِنٰتِ‌ ؕ وَاللّٰهُ اَعۡلَمُ

بِاِيْمَانِكُمْ ۚ بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۚ فَانْكِحُوْهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ وَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ مُحْصَنٰتٍ غَيْرَ مُسٰفِحٰتٍ وَّلَا
مُتَّخِذٰتِ اَخْدَانٍ ۚ فَاِذَآ اُحْصِنَّ فَاِنْ اَتَيْنَ بِفَاحِشَةٍ فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ ۚ ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ
الْعَنَتَ مِنْكُمْ ۚ وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٢٥﴾

आयत 23

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهٰتُكُمْ وَبَنٰتُكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ

"हराम कर दी गयीं तुम पर तुम्हारी माँएं और तुम्हारी बेटियाँ और तुम्हारी बहनें"

وَعَمّٰتُكُمْ وَخٰلٰتُكُمْ

"और तुम्हारी फूफियाँ और तुम्हारी खालाएँ"

وَبَنٰتُ الْاَخِ وَبَنٰتُ الْاُخْتِ

"और तुम्हारी भतीजियाँ और भन्जियाँ"

وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِيْٓ اَرْضَعْنَكُمْ

"और तुम्हारी वह माँएं जिन्होंने तुम्हें दूध पिलाया है"

وَاَخَوٰتُكُمْ مِّنَ الرَّضَاعَةِ

"और तुम्हारी दूध शरीक बहनें"

وَاُمَّهٰتُ نِسَآئِكُمْ

"और तुम्हारी बीवियों की माँएं"

जिनको हम सास या ख़ुशदामन कहते हैं।

وَرَبَآئِبُكُمُ الّٰتِيْ فِيْ حُجُوْرِكُمْ

"और तुम्हारी रबीबाएँ जो तुम्हारी गोदों में पली-बढ़ी हों"

مِّنْ نِّسَآئِكُمُ الّٰتِيْ دَخَلْتُمْ بِهِنَّ ۫

"तुम्हारी उन बीवियों से जिनके साथ तुमने मुक़ारबत की हो"

فَاِنْ لَّمْ تَكُوْنُوْا دَخَلْتُمْ بِهِنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ ۫

"और अगर तुमने उन बीवियों से मुक़ारबत ना की हो तो तुम पर कुछ गुनाह नहीं"

"रबीबा" बीवी की उस लड़की को कहा जाता है जो उसके साबिक़ शौहर से हो। अगर मौजूदा शौहर उस बीवी से ताल्लुक़ ज़नो शो क़ायम होने के बाद उसको तलाक़ दे दे तो रबीबा को अपने निकाह में नहीं ला सकता, यह उसके लिये हराम है। लेकिन अगर उस बीवी के साथ ताल्लुक़ ज़नो शो क़ायम नहीं हुआ और उसे तलाक़ दे दी तो फिर रबीबा के साथ निकाह हो सकता है। चुनाँचे फ़रमाया कि अगर तुमने उन बीवियों के साथ मुक़ारबत ना की हो तो फिर (उन्हें छोड़ कर उनकी लड़कियों से निकाह कर लेने में) तुम पर कोई गुनाह नहीं।

وَحَلَآئِلُ اَبْنَآئِكُمُ الَّذِيْنَ مِنْ اَصْلَابِكُمْ ۙ

"और तुम्हारे उन बेटों की बीवियाँ जो तुम्हारी सल्ब से हों"

जिनको हम बहुएँ कहते हैं। अपने सुल्बी बेटे की बीवी से निकाह हराम है। अलबत्ता मुँह बोले बेटे की मुतल्लक़ा बीवी से निकाह में कोई हर्ज नहीं।

وَاَنْ تَجْمَعُوْا بَيْنَ الْاُخْتَيْنِ

"और यह (भी तुम पर हराम कर दिया गया है) कि तुम बयक वक़्त दो बहनों को एक निकाह में जमा करो"

"सिवाय इसके कि जो गुज़र चुका।" اِلَّا مَا قَدۡ سَلَفَ ؕ

"यक़ीनन अल्लाह गफ़ूर और रहीम है।" اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوۡرًا رَّحِيۡمًا ۟

जो पहले हो गया सो हो गया। अब गड़े मुर्दे तो उखाड़े नहीं जा सकते। लेकिन आइन्दा के लिये यह मुहर्रामाते अब्दिया हैं। इसमें रसूल अल्लाह ﷺ ने इज़ाफ़ा किया है कि जिस तरह दो बहनों को बयक वक़्त निकाह में नहीं रख सकते इसी तरह खाला भांजी को और फूफी भतीजी को भी बयक वक़्त निकाह में नहीं रख सकते। यह मुहर्रामाते अब्दिया हैं कि जिनके साथ किसी हाल में, किसी वक़्त शादी नहीं हो सकती। अब वह मुहर्रामात बयान हो रहे हैं जो आरज़ी हैं।

आयत 24

"और वो औरतें (भी तुम पर हराम हैं) जो किसी और के निकाह में हों" وَّالۡمُحۡصَنٰتُ مِنَ النِّسَآءِ

चूँकि वह किसी और के निकाह में हैं इसलिये आप पर हराम हैं। एक औरत को अगर उसका शौहर तलाक़ दे दे तो आप उससे निकाह कर सकते हैं। चुनाँचे यह हुरमत अब्दी नौइयत की नहीं है। "مُحْصَنٰتُ" उन औरतों को कहा जाता है जो किसी की क़ैद निकाह में हों। "حِصن" क़िले को कहते हैं और "اِحصان" के मायने किसी शय को अपनी हिफ़ाज़त में लेने के भी और किसी के हिफ़ाज़त में होने के भी। चुनाँचे "مُحْصَنٰتُ" वह औरतें हैं जो एक ख़ानदान के क़िले के अंदर महफ़ूज़ हैं और शौहर वालियाँ हैं। नेज़ यह लफ़्ज़ लौंडियों के मुक़ाबले आज़ाद ख़ानदानी शरीफ़ ज़ादियों के लिये भी इस्तेमाल होता है।

"सिवाय उसके कि जो तुम्हारी मिल्के यमीन बन जायें।" اِلَّا مَا مَلَكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ ۚ

यानि जंग के नतीजे में तुम्हारे यहाँ कनीज़ें बन कर आ जायें। यह औरतें अगरचे मुशरिकों की बीवियाँ हैं लेकिन वह लौंडियों की हैसियत से आपके लिये जायज़ होंगी।

"यह तुम पर अल्लाह का लिखा हुआ फ़रीज़ा है।" كِتٰبَ اللّٰهِ عَلَيۡكُمۡ ۚ

यह अल्लाह का क़ानून है जिसकी पाबंदी तुम पर लाज़िम कर दी गई है।

"इनके सिवा जो औरतें हैं वह तुम्हारे लिये हलाल हैं।" وَاُحِلَّ لَكُمۡ مَّا وَرَآءَ ذٰ لِكُمۡ

आपने देखा कि कितनी थोड़ी सी तादाद में मुहर्रमात हैं, जिनसे निकाह हराम क़रार दे दिया गया है, बाक़ी कसीर तादाद हलाल है। यानि मुबाहात का दायरा बहुत वसीअ है जबकि मुहर्रमात का दायरा बहुत महदूद है।

"कि तुम अपने माल के ज़रिये उनके तालिब बनो" اَنۡ تَبۡتَغُوۡا بِاَمۡوَالِكُمۡ

यानि उनके महर अदा करके उनके साथ निकाह करो।

"बशर्ते कि हिसारे निकाह में उनको महफ़ूज़ करो, ना कि आज़ाद शहवतरानी करने लगो।" مُّحۡصِنِيۡنَ غَيۡرَ مُسٰفِحِيۡنَ ؕ

यानि नीयत घर बसाने की हो, सिर्फ़ मस्ती निकालने की नहीं। इसको महज़ एक खेल और मशग़ला ना बना लो।

"बस जो भी तुमने उनसे तमत्तो (भोग-विलास) किया हो तो उसके बदले उनके महर अदा करो, जो मुक़र्रर हुए थे।" فَمَا اسۡتَمۡتَعۡتُمۡ بِهٖ مِنۡهُنَّ فَاٰتُوۡهُنَّ اُجُوۡرَهُنَّ فَرِيۡضَةً ؕ

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا تَرٰضَيْتُمْ بِهٖ مِنْۢ بَعْدِ الْفَرِيْضَةِ

"अलबत्ता इसका तुम पर कोई गुनाह नहीं है कि महर मुक़र्रर होने के बाद बाहमी रज़ामंदी से कोई कमी पेशी कर लो।"

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿٢٤﴾

"यक़ीनन अल्लाह तआला अलीम और हकीम है।"

आयत 25

وَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا اَنْ يَّنْكِحَ الْمُحْصَنٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ

"और जो कोई तुममें से इतनी मुक़दरत ना रखता हो कि ख़ानदानी मुसलमान औरतों से शादी कर सकें"

فَمِنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ فَتَيٰتِكُمُ الْمُؤْمِنٰتِ

"तो वह तुम्हारी उन लौंडियों में से किसी के साथ निक़ाह कर ले जो तुम्हारे क़ब्ज़े में हों और मोमिना हों।"

यहाँ "**مُحْصَنٰت**" दूसरे मायने में आया है, यानि शरीफ़ ज़ादियाँ, आज़ाद मुसलमान औरतें। और ज़ाहिर है आज़ाद मुसलमान औरतों का तो महर अदा करना पड़ेगा। इस हवाले से अगर कोई बेचारा मुफ़लिस है, एक ख़ानदानी औरत का महर अदा नहीं कर सकता तो वह क्या करे? ऐसे लोगों को हिदायत की जा रही है कि वह मआशरे में मौजूद मुसलमान लौंडियों से निकाह कर लें।

وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاِيْمَانِكُمْ

"अल्लाह तुम्हारे ईमानों का हाल ख़ूब जानता है।"

यह अल्लाह बेहतर जानता है कि कौन मोमिन है और कौन नहीं है। मुराद यह है कि जो भी क़ानूनी ऐतबार से मुसलमान है दुनिया में वह मोमिन समझा जायेगा।

بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ

"तुम सब एक-दूसरे ही में से हो।"

فَانْكِحُوْهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ

"सो उनसे निकाह कर लो उनके मालिकों की इजाज़त से"

किसी लौंडी का मालिक उससे जिन्सी ताल्लुक़ क़ायम कर सकता है। लेकिन जब एक शख़्स उसकी इजाज़त से उसकी लौंडी से निकाह कर ले तो अब लौंडी के मालिक का यह ताल्लुक़ मुन्क़ता हो जायेगा। अब वह लौंडी इस ऐतबार से उसके काम में नहीं आ सकती, बल्कि अब वह एक मुसलमान की मन्कूहा हो जायेगी। इसी लिये उस निकाह के लिये "بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ" की हिदायत फ़रमाई गई है। वाज़ेह रहे की उस वक़्त के मआशरे में बिल् फ़अल यह शक्लें मौजूद थीं। यह नहीं कहा जा रहा कि यह शक्लें पैदा करो। गुलाम और लौंडियों का मामला उस वक़्त के बैनुल अक़्वामी हालात और असीराने जंग के मसले के एक हल के तौर पर पहले से मौजूद था। हमें यह देखना है कि जिस मआशरे में क़ुरान ने इस्लाह का अमल शुरू किया उसमें फ़िल वाक़ेअ क्या सूरते हाल थी और उसमें किस-किस ऐतबार से तदरीजन बेहतरी पैदा की गई।

وَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ

"और उन्हें उनके महर अदा करो मारूफ़ तरीक़े पर"

مُحْصَنٰتٍ غَيْرَ مُسٰفِحٰتٍ

"उनको हिसारे निकाह में लाकर, ना कि आज़ाद शहवतरानी करने वालियाँ हों"

उनसे निकाह का ताल्लुक़ होगा, जिसमें नीयत घर में बसाने की होनी चाहिये, महज़ मस्ती निकालने की और शहवतरानी की नीयत ना हो। यह हिसारे निकाह में महफ़ूज़ होकर रहें, आज़ाद शहवतरानी ना करती फिरें।

وَّلَا مُتَّخِذٰتِ اَخْدَانٍ

"और ना ही चोरी-छिपे आशनाइयाँ करें।"

किसी की लौंडी से किसी का निकाह हो तो ख़ुल्लम-खुल्ला हो। मालूम हो कि फलाँ की लौंडी अब फलाँ के निकाह में है। जैसे हज़रत सुमय्या रज़ि० से हज़रत यासिर रज़ि० ने निकाह किया था। हज़रत सुमय्या रज़ि० अबु जहल के चचा की लौंडी थीं, जो एक शरीफ़ इंसान था। हज़रत यासिर जब यमन से आकर मक्का में आबाद हुए तो उन्होंने अबु जहल के चचा से इजाज़त लेकर उनकी लौंडी सुमय्या रज़ि० से शादी कर ली। उनसे हज़रत अम्मार रज़ि० पैदा हुए। यह तीन अफ़राद का एक कुन्बा था। यासिर, अम्मार बिन यासर और अम्मार की वालिदा सुमय्या रज़ि०। अबु जहल का शरीफ़ुल नफ्स चचा जब फ़ौत हो गया तो अबु जहल को इस कुन्बे पर इख़्तियार हासिल हो गया और उसने इस ख़ानदान को बद्तरीन ईज़ाएँ दी।

فَاِذَآ اُحْصِنَّ فَاِنْ اَتَيْنَ بِفَاحِشَةٍ

"पस जब वह क़ैदे निकाह में आ जाएँ तो फिर अगर वह बेहयाई का काम करें"

فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ

"तो उन पर उस सज़ा की बनिस्बत आधी सज़ा है जो आज़ाद औरतों के लिये है।"

लौंडियाँ अगर क़ैदे निकाह में आने के बाद बदचलनी की मुरतकिब हों तो बदकारी की जो सज़ा आज़ाद औरतों को दी जायेगी उन्हें उसकी निस्फ़ सज़ा दी जायेगी। वाज़ेह रहे कि यह इब्तदाई अहकामात हैं। अभी तक ना तो सौ कोड़ों की सज़ा का हुक्म आया था और ना रजम का। चुनाँचे "**اٰذُوْهُمَا**" के हुक्म की तामील में बदकारी की जो सज़ा अभी आज़ाद ख़ानदानी औरतों को दी जाती थी एक मन्कूहा लौंडी को उससे निस्फ़ सज़ा देने का हुक्म दिया गया। इसलिये कि एक शरीफ़ ख़ानदान की औरत जिसे हर तरह का तहफ़्फ़ुज़ हासिल हो उसका मामला और है और एक बेचारी गरीब लौंडी का मामला और है।

ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ

"यह इजाज़त तुममें से उनके लिये है जिनको गुनाह में पड़ने का अंदेशा हो।"

मुसलमान लौंडियों से निकाह कर लेने की इजाज़त तुममें से उन लोगों के लिये है जो अपनी शहवत और जिन्सी जज़्बे को रोक ना सकते हों और उन्हें फ़ितने में मुब्तला हो जाने और गुनाहों में मुलव्विस हो जाने का अंदेशा हो।

وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ

"और अगर तुम सब्र करो तो यह तुम्हारे हक़ में बेहतर है।"

चूँकि आमतौर पर उस मआशरे में जो बांदियाँ थीं वह बुलन्द किरदार नहीं थीं, लिहाज़ा फ़रमाया कि बेहतर यह है कि तुम उनसे निकाह करने से बचो और तअफ़्फ़ुफ़ (संयम) इख़्तियार करो।

وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝۲۵

"और अल्लाह ग़फूर और रहीम है।"

आयात 26 से 28 तक

يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَيَتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝۲۶ وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ
يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۣ وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوٰتِ اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا عَظِيْمًا ۝۲۷ يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ ۚ وَخُلِقَ
الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا ۝۲۸

इन तीन आयात में अहकामे शरीअत के ज़िमन में फ़लसफ़ा व हिकमत का बयान हो रहा है। अहकामे शरीअत को इंसान अपने ऊपर बोझ समझने लगता है। उसे जब हुक्म दिया जाता है कि यह करो और यह मत करो तो आदमी की तबियत नागवारी महसूस करती है। यही वजह है कि ईसाईयों ने शरीअत का तौक़ अपने गले से उतार फेंका है। 1970 ईस्वी में क्रिसमस के मौक़े पर मैं लंदन में था। वहाँ मैने एक ईसाई दानिशवर की तक़रीर सुनी थी, जिसने कहा था कि शरीअत लानत है। ख़्वाह मख्वाह एक इंसान को यह बावर कराया जाता है कि यह हलाल है, यह हराम है। जब वह हराम से रुक नहीं सकता तो उसका दिल मैला हो जाता है। वह अपने आपको ख़ताकार समझने लगता है और मुजरिम ज़मीर (guilty conscience) हो जाता है। इस अहसास के तहत वह मन्फ़ी नफ़्सियात का शिकार हो जाता है। उनके नज़दीक इस सारी ख़राबी का सबब यह है कि आपने हराम और हलाल का फ़लसफ़ा छेड़ा। अगर सब काम हलाल समझ लिये जाएँ तो कोई हराम काम करते हुए ज़मीर पर कोई बोझ नहीं होगा। दुनिया में ऐसे-ऐसे फ़लसफ़े भी मौजूद हैं। लेकिन अल्लाह तआला के नज़दीक फ़लसफ़ा-ए-अहकाम यह है:

आयत 26

يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ

“अल्लाह चाहता है कि तुम्हारे लिये अपने अहकाम वाज़ेह कर दे”

وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ

“और तुम्हें हिदायत बख़्शे उन रास्तों की जो तुमसे पहले के लोगों के थे”

पहले गुज़रे हुए लोगों में नेकोकार भी थे और बदकार भी। अल्लाह तआला चाहता है कि तुम अम्बिया व सुल्हा और नेकोकारों का रास्ता इख़्तियार करो {صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ} और तुम दूसरे रास्तों से बच सको।

وَيَتُوْبَ عَلَيْكُمْ ط

“और तुम पर नज़रे इनायत फ़रमाये।”

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ﴿٢٦﴾

“और अल्लाह सब कुछ जानने वाला कमाले हिकमत वाला है।”

आयत 27

وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ قف

“अल्लाह तो यह चाहता है कि तुम पर रहमत के साथ तवज्जो फ़रमाये।”

وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوٰتِ اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا عَظِيْمًا ﴿٢٧﴾

“और वह लोग जो शहवात की पैरवी करते हैं वह चाहते हैं कि तुम राहे हक़ से भटक कर दूर निकल जाओ।”

वह चाहते हैं कि तुम्हारा रुझान सिराते मुस्तक़ीम के बजाय ग़लत रास्तों की तरफ़ हो जाये और उधर ही तुम भटकते चले जाओ। आज भी औरत की आज़ादी (Women Lib) की बुनियाद पर और हुक़ूके निसवाँ के नाम पर दुनिया में जो तहरीकें बरपा हैं यह दरहक़ीक़त अल्लाह तआला की आयद करदा हुदूद व क़ुयूद को तोड़ कर जिन्सी बेराहरवी फैलाने की एक अज़ीम साज़िश है जो दुनिया में चल रही है।

आयत 28

يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ ج

“अल्लाह चाहता है कि तुम पर से बोझ को हल्का करे।”

तुम यह ना समझो कि अल्लाह तुम पर बोझ डाल रहा है। अल्लाह तो तुम पर तख़फ़ीफ़ चाहता है, तुमसे बोझ को हल्का करना चाहता है। अगर तुम इन चीज़ों पर अमल नहीं करोगे तो मआशरे में गंदगियाँ फैलेंगी, फ़साद बरपा होगा, झगड़े होंगे, बद्गुमानियाँ होंगी। अल्लाह तआला इस सबकी रोकथाम चाहता है, वह तुम्हारे लिये आसानी चाहता है।

وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا ﴿۲۸﴾

"और इंसान कमज़ोर पैदा किया गया है।"

उसके अंदर कमज़ोरी के पहलु भी मौजूद हैं। जहाँ एक बहुत ऊँचा पहलु है कि उसमें रूहे रब्बानी फूँकी गई है, वहाँ उसके अंदर नफ़्स भी तो है, जिसमें ज़ौफ़ के पहलु मौजूद हैं।

आयात 29 से 35 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْۤا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّاۤ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۟ وَلَا تَقْتُلُوْۤا
اَنْفُسَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا ﴿۲۹﴾ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا فَسَوْفَ نُصْلِيْهِ نَارًا ؕ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ
يَسِيْرًا ﴿۳۰﴾ اِنْ تَجْتَنِبُوْا كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا كَرِيْمًا ﴿۳۱﴾ وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا
فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ ؕ لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبُوْا ؕ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ ؕ وَسْـَٔلُوا اللّٰهَ مِنْ
فَضْلِهٖ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمًا ﴿۳۲﴾ وَلِكُلٍّ جَعَلْنَا مَوَالِيَ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ؕ وَالَّذِيْنَ عَقَدَتْ
اَيْمَانُكُمْ فَاٰتُوْهُمْ نَصِيْبَهُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدًا ﴿۳۳﴾ اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوْنَ عَلَى النِّسَآءِ بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ
بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ وَّبِمَاۤ اَنْفَقُوْا مِنْ اَمْوَالِهِمْ ؕ فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ ؕ وَالّٰتِيْ تَخَافُوْنَ
نُشُوْزَهُنَّ فَعِظُوْهُنَّ وَاهْجُرُوْهُنَّ فِي الْمَضَاجِعِ وَاضْرِبُوْهُنَّ ۚ فَاِنْ اَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوْا عَلَيْهِنَّ سَبِيْلًا ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ
عَلِيًّا كَبِيْرًا ﴿۳۴﴾ وَاِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوْا حَكَمًا مِّنْ اَهْلِهٖ وَحَكَمًا مِّنْ اَهْلِهَا ۚ اِنْ يُّرِيْدَاۤ اِصْلَاحًا يُّوَفِّقِ اللّٰهُ
بَيْنَهُمَا ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا خَبِيْرًا ﴿۳۵﴾

आयत 29

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْۤا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ

"ऐ अहले ईमान, अपने माल आपस में बातिल तरीक़े पर हड़प ना करो"

اِلَّاۤ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۟

"सिवाय इसके कि तिजारत हो तुम्हारी बाहमी रज़ामंदी से।"

तिजारत और लेन-देन की बुनियाद जब हक़ीक़ी बाहमी रज़ामंदी पर हो तो उससे होने वाला मुनाफ़ा जायज़ और हलाल है। फ़र्ज़ कीजिये कि आपकी जूतों की दुकान है। आपने ग्राहक को एक जूता दिखाया और उसके दाम दो सौ रुपये बताये। उसने जूता पसंद किया और दो सौ रुपये में ख़रीद लिया। यह बाहमी रजामंदी से सौदा है जो सीधे-साधे और सही तरीक़े पर हो गया। ज़ाहिर बात है कि इसमें से कुछ ना कुछ नफ़ा तो आपने कमाया है। आपने इसके लिये मेहनत की है, कहीं से ख़रीद कर लाये हैं, उसे स्टोर में महफ़ूज़ किया है, दुकान का किराया दिया है, लिहाज़ा यह मुनाफ़ा आपका हक़ है और

ग्राहक को इसमें तायल नहीं होगा। लेकिन अगर आपने यही जूता झूठ बोल कर या झूठी क़सम खाकर फ़रोख़्त किया कि मैंने तो ख़ुद इतने का लिया है तो इस तरह आपने अपनी सारी मेहनत भी ज़ाया की और आपने हराम कमा लिया। इसी तरह मामलात और लेन-देन के वह तमाम तरीक़े जिनकी बुनियाद झूठ और धोखाधड़ी पर हो नाजायज़ और हराम हैं।

وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ

"और ना अपने आपको क़त्ल करो।"

यानि एक-दूसरे को क़त्ल ना करो। तमद्दुन की बुनियाद दो चीज़ों पर है, एहतरामे जान और एहतरामे माल। मेरे लिये आपका माल और आपकी जान मोहतरम है, मैं उसे कोई गज़ंद (चोट) ना पहुँचाऊँ, और आपके लिये मेरा माल और मेरी जान मोहतरम है, इसे आप गज़ंद ना पहुँचाए। अगर हमारे माबैन यह शरीफ़ाना मुआहिदा (Gentleman's agreemenet) क़ायम रहे तब तो हम एक मआशरे और एक मुल्क में रह सकते हैं, जहाँ इत्मिनान, अमन व सुकून और चैन होगा। और जहाँ यह दोनों एहतराम ख़त्म हो गए, जान का और माल का, तो ज़ाहिर बात है कि फिर वहाँ अमन व सुकून, चैन और इत्मिनान कहाँ से आएगा? इस आयत में बातिल तरीक़े से एक-दूसरे का माल खाने और क़त्ल नफ़्स दोनों को हराम क़रार देकर इन दोनों हुरमतों को एक साथ जमा कर दिया गया है।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا ۝۲۹

"यक़ीक़न अल्लाह तआला तुम पर बहुत मेहरबान है।"

आयत 30

وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا

"और जो कोई भी यह काम करेगा ताअद्दी और ज़ुल्म के साथ"

यानि यह दोनों काम--- बातिल तरीक़े से एक-दूसरे का माल खाना और क़त्ले नफ़्स।

فَسَوْفَ نُصْلِيْهِ نَارًا ۭ

"तो हम जल्द उसको झोंक देंगे आग में।"

وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَي اللّٰهِ يَسِيْرًا ۝۳۰

"और यह चीज़ अल्लाह पर बहुत आसान है।"

यह मत समझना कि अल्लाह तआला नौए इंसानी के बहुत बड़े हिस्से को जहन्नम में कैसे झोंक देगा? यह अल्लाह के लिये कोई मुश्किल नहीं है।

अगली दो आयात में इंसानी तमद्दुन के दो बहुत अहम मसाइल बयान हो रहे हैं, जो बड़े गहरे और फ़लसफ़ियाना अहमियत के हामिल हैं। पहला मसला गुनाहों के बारे में है, जिनमें कबाइर और सग़ाइर की तक़सीम है। बड़े गुनाहों में सबसे बड़ा गुनाह शिर्क और कुफ़्र है। फिर यह कि जो फ़राइज़ हैं उनका तर्क करना और जो हराम चीज़ें हैं उनका इरत्काब कबाइर में शामिल होगा। एक हैं छोटी-छोटी कोताहियाँ जो इंसान से अक्सर हो जाती हैं, मसलन आदाब में या अहकाम की जुज़ायात (विवरण) में कोई कोताही हो गई, या बग़ैर किसी इरादे के कहीं किसी को ऐसी बात कह बैठे कि जो ग़ीबत के हुक्म में आ गई, वग़ैरह-वग़ैरह। इस ज़िमन में सेहतमंदाना रवैय्या यह है कि कबाइर से पूरे अहतमाम के साथ बचा जाये कि इससे इंसान बिल्कुल पाक हो जाये। फ़राइज़ की पूरी अदायगी हो, मुहर्ररमात से मुताल्लिक़ इज्तनाब (बचाव) हो, और यह जो छोटी-छोटी चीज़ें हैं इनके बारे में ना तो एक-दूसरे पर ज़्यादा गिरफ़्त और नकीर की जाये और ना ही ख़ुद ज़्यादा दिल गिरफ़्ता हुआ जाये, बल्कि इनके बारे में तवक़्क़ो रखी जाये कि अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा देगा। इनके बारे में इस्तग़फ़ार भी किया जाये और यही सग़ाइर हैं जो नेकियों के ज़रिये से ख़ुद ब ख़ुद भी ख़त्म होते रहते हैं। जैसे हदीस में आता है कि आज़ा-ए-वुज़ू धोते हुए इन आज़ा के गुनाह धुल जाते हैं। रसूल अल्लाह ﷺ का इर्शाद है कि जो शख़्स वुज़ू करता है तो जब वह कुल्ली करता है और नाक में पानी डालता है तो उसके मुँह और नाक से उसके गुनाह निकल जाते हैं। जब वह चेहरा धोता है तो उसके चेहरे और उसकी आँखों से उसके गुनाह निकल जाते हैं। जब वह हाथ धोता है तो उसके हाथों से गुनाह निकल जाते हैं, यहाँ तक कि उसके हाथों के नाख़ूनों के नीचे से भी गुनाह धुल जाते हैं। जब वह सर का मसह करता है तो उसके सर और कानों से गुनाह झड़ जाते हैं। फिर जब वह पाँव धोता है तो उसके पाँवों से गुनाह निकल

जाते हैं, यहाँ तक कि उसके पाँवों के नाखूनों के नीचे से भी गुनाह निकल जाते हैं। फिर उसका मस्जिद की तरफ़ चलना और नमाज़ पढ़ना उसकी नेकियों में इज़ाफ़ा बनता है।(1)

यह सग़ीरा गुनाह हैं जो नेकियों के असर से माफ़ होते रहते हैं, अज़रुए अल्फ़ाज़े क़ुरानी: {إِنَّ الْحَسَنٰتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّاٰتِ} (हूद:114) "यक़ीनन नेकियाँ बुराईयों को दूर कर देती हैं।" इन बुराईयों से मुराद कबाइर नहीं, सग़ाइर हैं। कबाइर तौबा के बग़ैर माफ़ नहीं होते (इल्ला माशा अल्लाह) उनके लिये तौबा करनी होगी। और जो अकबरुल कबाइर यानि शिर्क है उसके बारे में तो इस सूरत (आयत 48 और 116) में दो मर्तबा यह अल्फ़ाज़ आये हैं: {إِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ} "बिला शुबह अल्लाह तआला यह बात तो कभी माफ़ नहीं करेगा कि उसके साथ किसी को शरीक ठहराया जाये, और इसके मा-सिवा जिस क़दर गुनाह हैं वह जिसके लिये चाहेगा माफ़ कर देगा।" लेकिन हमारे यहाँ जो मज़हब का मस्ख़शुदा (perverted) तसव्वुर मौजूद है उससे एक ऐसा मज़हबी मिज़ाज वुजूद में आता है कि जो कबाइर हैं वह तो हो रहे हैं, सूदख़ोरी हो रही है, हरामख़ोरी हो रही है, मगर छोटी-छोटी बातों पर नकीर हो रही है। सारी गिरफ़्त इन बातों पर हो रही है कि तुम्हारी दाढ़ी क्यों शरई नहीं है, और तुम्हारा पाहुँचा टखनों से नीचे क्यों है? क़ुरान मजीद में इस मामले को तीन जगह नक़्ल किया गया है कि छोटी-छोटी चीजों के बारे में दरगुज़र से भी काम लो और यह कि बहुत ज़्यादा मुतफ़क्किर भी ना हो। इस मामले में बाहमी निस्बत व तनासब (अनुपात) पेशे नज़र रहनी चाहिये। फ़रमाया:

आयत 31

إِنْ تَجْتَنِبُوْا كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ

"अग़र तुम इज्तनाब करते रहोगे उन बड़े-बड़े गुनाहों से जिनसे तुम्हें रोका जा रहा है"

نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ

"तो हम तुम्हारी छोटी बुराईयों को तुमसे दूर कर देंगे।"

हम तुम्हें इनसे पाक साफ़ करते रहेंगे। तुम जो भी नेक काम करोगे उनके हवाले से तुम्हारी सय्यिआत ख़ुद ब ख़ुद धुलती रहेगी।

وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا كَرِيْمًا ﴿٣١﴾

"और तुम्हें दाखिल करेंगे बहुत बाइज़्ज़त जगह पर।"

यह मज़मून सूरह अल शौरा में भी आया है और फिर सूरह अल् नज्म में भी। वाज़ेह रहे कि क़ुरान हकीम में अहम मज़ामीन कम से कम दो मर्तबा ज़रूर आते हैं और यह मज़मून क़ुरान में तीन बार आया है।

दूसरा मसला इंसानी मआशरे में फ़ज़ीलत का है। ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला ने तमाम इंसानों को एक जैसा तो नहीं बनाया है। किसी को ख़ूबसूरत बना दिया तो किसी को बदसूरत। कोई सही सालिम है तो कोई नाक़िसुल आज़ा है। किसी का क़द ऊँचा है तो कोई ठिगने क़द का है और लोग उस पर हँसते हैं। किसी को मर्द बना दिया, किसी को औरत। अब कोई औरत अंदर ही अंदर कुढती रहे कि मुझे अल्लाह ने औरत क्यों बनाया तो इसका हासिल क्या होगा? इसी तरह कोई बदसूरत इंसान है या ठिगना है या किसी और ऐतबार से कमतर है और वह दूसरे शख़्स को देखता है कि वह तो बड़ा अच्छा है, तो अब उस पर कुढने के बजाय यह होना चाहिये कि अल्लाह तआला ने उसे जो कुछ दिया है उस पर सब्र और शुक्र करे। अल्लाह का फ़ज़ल किसी और पहलु से भी हो सकता है। लिहाज़ा वह इरादा करे कि मैं नेकी और ख़ैर के कामों में आगे बढ़ जाऊँ, मैं इल्म में आगे बढ़ जाऊँ। इस तरह इंसान दूसरी चीज़ों से इन चीज़ों की तलाफ़ी करले जो उसे मयस्सर नहीं है, बजाय इसके कि एक मन्फ़ी नफ़्सियात परवान चढ़ती चली जाये। इस तरह इंसान अहसासे कमतरी का शिकार हो जाता है और अंदर ही अंदर कुढते रहने से तरह-तरह की ज़हनी बीमारियाँ पैदा होती है। ज़हनी उलझनों, महरूमियों और नाकामियों के अहसासात के तहत इंसान अपना ज़हनी तवाज़ुन तक खो बैठता है। चुनाँचे देखिये इस ज़िमन में किस क़दर उम्दा तालीम दी जा रही है:

आयत 32

وَلَا تَتَمَنَّوۡا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعۡضَكُمۡ عَلٰى بَعۡضٍ‌ؕ *"और तमन्ना ना किया करो उस शय की जिसके ज़रिये से अल्लाह ने तुममें से बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दे दी है।"*

अल्लाह तआला ने बाज़ लोगों को उनकी ख़ल्क़ी सिफ़ात के ऐतबार से दूसरों पर फ़ज़ीलत दी है। आदमी की यह ज़हनियत कि जहाँ किसी दूसरे को अपने मुक़ाबले में किसी हैसियत से बढ़ा हुआ देखे बेचैन हो जाये, उसके अंदर हसद, रक़ाबत (विरोध) और अदावत (शत्रुता) के जज़्बात पैदा कर देती है। इस आयत में इसी ज़हनियत से बचने की हिदायत फ़रमाई जा रही है। फ़ज़ीलत का एक पहलु यह भी है कि अल्लाह तआला ने किसी को मर्द बनाया, किसी को औरत। यह चीज़ भी ख़ल्क़ी है और किसी औरत की मर्द बनने या किसी मर्द की औरत बनने की तमन्ना नरी (बिल्कुल) हिमाक़त है। अलबत्ता दुनिया में क़िस्मत आज़माई और जद्दो-जहद के मौक़े सबके लिये मौजूद हैं। चुनाँचे पहली बात यह बताई जा रही है:

لِلرِّجَالِ نَصِيۡبٌ مِّمَّا اكۡتَسَبُوۡا‌ؕ *"मर्दों के लिये हिस्सा है उसमें से जो वह कमाएँगे।"*

وَلِلنِّسَآءِ نَصِيۡبٌ مِّمَّا اكۡتَسَبۡنَ‌ؕ *"और औरतों के लिये हिस्सा है उसमें से जो वह कमाएँगी।"*

यानि जहाँ तक नेकियों, ख़ैरात और हसनात का मामला है, या सय्यिआत व मुन्करात का मामला है, मर्द व ज़न मे बिल्कुल मुसावात है। मर्द ने जो नेकी कमाई वह उसके लिये है और औरत ने जो नेकी कमाई वह उसके लिये है। मुसाबक़त का यह मैदान दोनों के लिये ख़ुला है। औरत नेकी में मर्द से आगे निकल सकती है। करोड़ों मर्द होंगे जो क़यामत के दिन हज़रत ख़दीजा, हज़रत आयशा और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के मक़ाम पर रश्क करेंगे और उनकी ख़ाक को भी नहीं पहुँच सकेगें। चुनाँचे आदमी का तर्ज़े अमल तस्लीम व रज़ा का होना चाहिये कि जो भी अल्लाह ने मुझे बना दिया और जो कुछ मुझे अता फ़रमाया उस हवाले से मुझे बेहतर से बेहतर करना है। मेरा "शकिला" तो अल्लाह की तरफ़ से आ गया है, जिससे मैं तजावुज़ नहीं कर सकता: { قُلۡ كُلٌّ يَّعۡمَلُ عَلٰى شَاكِلَتِهٖ } (बनी इस्राईल:84) और हम सूरतुल बक़रह में पढ़ चुके हैं कि { لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفۡسًا اِلَّا وُسۡعَهَا‌ ؕ} (आयत:286) लिहाज़ा मेरी वुसअत जो है वह अल्लाह ने बना दी है।

सूरह निसा की ज़ेरे मुताअला आयत से बाज़ लोग यह मतलब निकालने की कोशिश करते हैं कि औरतें भी माल कमा सकती हैं। यह बात समझ लीजिये कि क़ुरान मजीद में सिर्फ़ एक मक़ाम पर "كسب" का लफ़्ज़ मआशी जद्दो-जहद और मआशी कमाई के लिये आया है: { اَنۡفِقُوۡا مِنۡ طَيِّبٰتِ مَا كَسَبۡتُمۡ } (अल् बक़रह:267)। बाक़ी पूरे क़ुरान में "कसब" जहाँ भी आया है आमाल के लिये आया है। कसब-ए-हसनात नेकियाँ कमाना है और कसब-ए-सय्यिआत बदियाँ कमाना। आप इस आयत के अल्फ़ाज़ पर दोबारा ग़ौर कीजिये: {لِلرِّجَالِ نَصِيۡبٌ مِّمَّا اكۡتَسَبُوۡا‌ؕ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيۡبٌ مِّمَّا اكۡتَسَبۡنَ‌ؕ} "मर्दों के लिये हिस्सा है उसमें से जो उन्होंने कमाया, और औरतों के लिये हिस्सा है उसमें से जो उन्होंने कमाया।" तो क्या एक औरत की तनख़्वाह अगर दस हज़ार है तो उसे उसमें से पाँच हज़ार मिलेंगे? नहीं, बल्कि उसे पूरी तनख़्वाह मिलेगी। लिहाज़ा इस आयत में "कसब" का इत्लाक़ दुनयवी कमाई पर नहीं किया जा सकता। एक ख़ातून कोई काम करती है या कहीं मुलाज़मत करती है तो अगर उसमें कोई हराम पहलु नहीं है, शरीफ़ाना जॉब है, और वह सतर-ए-हिजाब के आदाब भी मल्हूज़ रखती है तो इसमें कोई हर्ज नहीं। लेकिन ज़ाहिर है कि जो भी कमाई होगी वह पूरी उसकी होगी, उसमें उसका हिस्सा तो नहीं होगा। अलबत्ता यह अस्लूब ज़जा-ए-आमाल के लिये आता है कि उन्हें उनकी कमाई में से हिस्सा मिलेगा। इसलिये कि आमाल के मुख़्तलिफ़ मरातिब होते हैं। अल्लाह तआला के यहाँ यह देखा जाता है कि इस अमल में ख़ुलूसे नीयत कितना था और आदाब कितने मल्हूज़ रखे गये। हम सूरतुल बक़रह में हज के ज़िक्र में भी पढ़ चुके हैं कि: {اُولٰٓـئِكَ لَهُمۡ نَصِيۡبٌ مِّمَّا كَسَبُوۡا ‌ؕ} (आयत:202) यानि जो उन्होंने कमाया होगा उसमें से उन्हें हिस्सा मिलेगा। इस तरह यहाँ पर भी इकतसाब से मुराद अच्छे या बुरे आमाल कमाना है। यानि अख़्लाक़ी सतह पर और इंसानी इज़्ज़त व तकरीम के लिहाज़ से औरत और मर्द बराबर है, लेकिन मआशरती ज़िम्मेदारियों के हवाले से अल्लाह तआला ने जो तक़सीम कर रखी है उसके ऐतबार से फ़र्क़ है। अब अगर औरत इस फ़र्क़ को क़ुबूल करने पर तैयार ना हो, मुफ़ाहमत पर रज़ामन्द ना हो, और वह इस पर कुढ़ती रहे और मर्द के बिल्कुल बराबर होने की कोशिश करे तो ज़ाहिर है कि मआशरे में फ़साद और बिगाड़ पैदा हो जायेगा।

وَسۡـَٔلُوا اللّٰهَ مِنۡ فَضۡلِهٖ

"और अल्लाह से उसका फ़ज़ल तलब करो।"

यानि जो फ़ज़ीलत अल्लाह ने दूसरों को दे रखी है उसकी तमन्ना ना करो, अलबत्ता उससे फ़ज़ल की दुआ करो कि ऐ अल्लाह! तूने इस मामले में मुझे कमतर रखा है, तू मुझे दूसरे मामलात के अंदर हिम्मत दे कि मैं तरक्क़ी करूँ। अल्लाह तआला जिस पहलु से मुनासिब समझेगा अपना फ़ज़ल तुम्हें अता फ़रमा देगा। वह बहुत से लोगों को किसी और पहलु से नुमाया कर देता है।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمًا ۝٣٢

"यक़ीनन अल्लाह तआला हर शय का इल्म रखता है।"

आयत 33

وَلِكُلٍّ جَعَلۡنَا مَوَالِىَ مِمَّا تَرَكَ الۡوَالِدٰنِ وَالۡاَقۡرَبُوۡنَ

"और हर एक के लिये हमने वारिस मुक़र्रर कर दिये हैं जो भी वालिदैन और रिश्तेदार छोड़ें।"

क़ानूने विरासत की अहमियत को देखिये कि अब आख़िर में एक मर्तबा फिर इसका ज़िक्र फ़रमाया।

وَالَّذِيۡنَ عَقَدَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ فَاٰتُوۡهُمۡ نَصِيۡبَهُمۡ

"और जिनके साथ तुम्हारे अहद व पैमान हों तो उनको उनका हिस्सा दो।"

एक नया मसला यह पैदा हो गया था कि जिन लोगों के साथ दोस्ती और भाईचारा है या मुआख़ात का रिश्ता है (मदीना मुनव्वरा में रसूल अल्लाह ﷺ ने एक अंसारी और एक मुहाजिर को भाई-भाई बना दिया था) तो क्या उनका विरासत में भी हिस्सा है? इस आयत में फ़रमाया गया है कि विरासत तो उसी क़ायदे के मुताबिक़ वुरसा में तक़सीम होनी चाहिये जो हमने मुक़र्रर कर दिया है। जिन लोगों के साथ तुम्हारे दोस्ती और भाईचारे के अहद व पैमाने हैं, या जो मुँह बोले भाई या बेटे हैं उनका विरासत में कोई हिस्सा नहीं है, अलबत्ता अपनी ज़िन्दगी में उनके साथ जो भलाई करना चाहो कर सकते हो, उन्हें जो कुछ देना चाहो दे सकते हो, अपनी विरासत में से भी कुछ वसीयत करना चाहो तो कर सकते हो। लेकिन जो क़ानूने विरासत तय हो गया है उसमें किसी तरमीम व तब्दीली की गुँजाईश नही। विरासत में हक़दार कोई और नहीं होगा सिवाय उसके जिसको अल्लाह ने मुक़र्रर कर दिया है।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَىۡءٍ شَهِيۡدًا ۝٣٣

"यक़ीनन अल्लाह तआला हर चीज़ पर गवाह है।"

अब आ रही है असल में वह काँटेदार आयत जो औरतों के हलक़ से बहुत मुश्किल से उतरती है, काँटा बन कर अटक जाती है। अब तक इस ज़िमन में जो बाते आईं वह दरअसल उसकी तम्हीद की हैसियत रखती हैं। पहली तम्हीद सूरतुल बक़रह में आ चुकी है: {وَلَهُنَّ مِثۡلُ الَّذِىۡ عَلَيۡهِنَّ بِالۡمَعۡرُوۡفِ وَلِلرِّجَالِ عَلَيۡهِنَّ دَرَجَةٌ} (आयत:228) "औरतों के लिये इसी तरह हुक़ूक़ हैं जिस तरह उन पर जिम्मेदारियाँ हैं दस्तूर के मुताबिक़, अलबत्ता मर्दों के लिये उन पर एक दर्जा फ़ौक़ियत है।" यह कह कर बात छोड़ दी गई। इसके बाद अभी हमने पढ़ा: {وَلَا تَتَمَنَّوۡا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعۡضَكُمۡ عَلٰى بَعۡضٍ} यह हिदायत औरतों के लिये मज़ीद ज़हनी तैयारी की गर्ज़ से दी गई। और अब दो टूक अंदाज़ में इर्शाद हो रहा है:

आयत 34

اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوۡنَ عَلَى النِّسَآءِ

"मर्द औरतों पर हाकिम हैं"

यह तर्जुमा मैं ज़ोर देकर कर रहा हूँ। इसलिये कि यहाँ 'قَامَ' 'عَلٰى' के सिला के साथ आ रहा है। 'قَامَ' 'بِ' के साथ आयेगा तो मायने होंगे "किसी शय को क़ायम करना।" इसी सूरह मुबारका में आगे चल कर यह अल्फ़ाज़ आएँगे: {كُوۡنُوۡا قَوّٰمِيۡنَ بِالۡقِسۡطِ}

अदल को क़ायम करने वाले बन कर खड़े हो जाओ!" जबकि قَامَ عَلٰی का मफ़हूम है कि किसी के ऊपर मुसल्लत होना। यानि हाकिम और मुन्तज़िम होना। चुनाँचे आयत ज़ेरे मुताअला से यह वाज़ेह हिदायत मिलती है कि घर के इदारे में हाकिम होने की हैसियत मर्द को हासिल है, सरबराहे ख़ानदान मर्द है, औरत नहीं है। औरत को बहरहाल उसके साथ एक वज़ीर की हैसियत से काम करना है। यूँ तो हर इंसान यह चाहता है कि मेरी बात मानी जाये। घर के अंदर मर्द भी यह चाहता है और औरत भी। लेकिन आख़िरकार किसकी बात चलेगी? या तो दोनों बाहमी रज़ामंदी से किसी मसले पर मुत्तफ़िक़ हो जायें, बीवी अपने शौहर को दलील से, अपील से, जिस तरह हो सके क़ायल करले तो मामला ठीक हो गया। लेकिन अग़र मामला तय नहीं हो रहा तो अब किसकी राय फ़ैसलाकुन होगी? मर्द की! औरत की राय जब मुस्तरद (रद्द) होगी तो उसे इससे एक सदमा तो पहुँचेगा। इसी सदमे का असर कम करने के लिये अल्लाह तआला ने औरत में निस्यान का माद्दा ज़्यादा रख दिया है, जो एक safety valve का काम देता है। यही वज़ह है कि क़ानूने शहादत में एक मर्द की जगह दो औरतों का निसाब रखा गया है "ताकि उनमें से कोई एक भूल जाए तो दूसरी याद करा दे।" इस पर हम सूरतुल बक़रह (आयत:282) में भी गुफ़्तगू कर चुके हैं। बहरहाल अल्लाह तआला ने घर के इदारे का सरबराह मर्द को बनाया है। अब यह दूसरी बात है कि मर्द अपनी इस हैसियत का ग़लत इस्तेमाल करता है, औरत पर ज़ुल्म करता है और उसके हुक़ूक अदा नहीं करता तो अल्लाह के यहाँ बड़ी सख़्त पकड़ होगी। आपको एक इख़्तियार दिया गया है और आप उसका ग़लत इस्तेमाल कर रहे हैं, उसको ज़ुल्म का ज़रिया बना रहे हैं तो इसकी सज़ा अल्लाह तआला के यहाँ मिल जायेगी।

بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ

"बसबब उस फ़ज़ीलत के जो अल्लाह ने बाज़ को बाज़ पर दी है"

मर्द को बाज़ सिफ़ात में औरत पर नुमाया तफ़व्वुक़ (सर्वोच्चता) हासिल है, जिनकी बिना पर क़व्वामियत की ज़िम्मेदारी उस पर डाली गई है।

وَّبِمَآ اَنْفَقُوْا مِنْ اَمْوَالِهِمْ ؕ

"और बसबब इसके कि जो वह ख़र्च करते हैं अपने माल।"

इस्लाम के मआशरती निज़ाम में किफ़ालती ज़िम्मेदारी तमामतर मर्द के ऊपर है। शादी के आग़ाज़ ही से मर्द अपना माल ख़र्च करता है। शादी अग़रचे मर्द की भी ज़रूरत है और औरत की भी, लेकिन मर्द महर देता है, औरत महर वसूल करती है। फिर घर में औरत का नान नफ़्क़ा मर्द के ज़िम्मे है।

فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ

"पस जो नेक बीवियाँ हैं वह इताअत शआर होती हैं"

मर्द को क़व्वामियत के मन्सब पर फ़ाइज़ करने के बाद अब नेक बीवियों का रवैय्या बताया जा रहा है। यूँ समझिये कि क़ुरान के नज़दीक एक ख़ातूने ख़ाना की जो बेहतरीन रविश होनी चाहिये वह यहाँ तीन अल्फ़ाज़ में बयान कर दी गई है: {فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ}

حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ

"ग़ैब में हिफ़ाज़त करने वालियाँ"

वह मर्दों की ग़ैरमौजूदगी में उनके अमवाल और हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करती हैं। ज़ाहिर है मर्द का माल तो घर में ही होता है, वह काम पर चला गया तो अब वह बीवी की हिफ़ाज़त में है। इसी तरह बीवी की अस्मत दरहक़ीकत मर्द की इज़्ज़त है। वह उसकी ग़ैरमौजूदगी में उसकी इज़्जत की हिफ़ाज़त करती है। इसी तरह मर्द के राज़ होते हैं, जिनकी सबसे ज़्यादा बढ़ कर राज़दान बीवी होती है। तो यह हिफ़ाज़त तीन ऐतबारात से है, शौहर के माल की, शौहर की इज़्ज़त व नामूस की, और शौहर के राज़ों की।

بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ ؕ

"अल्लाह की हिफ़ाज़त से।"

असल हिफ़ाज़त व निगरानी तो अल्लाह की है, लेकिन इंसान को अपनी ज़िम्मेदारी अदा करनी पड़ती है। जैसे राज़िक़ तो अल्लाह है, लेकिन इंसान को काम करके रिज़्क़ कमाना पड़ता है।

وَالّٰتِیۡ تَخَافُوۡنَ نُشُوۡزَهُنَّ

"और वह ख्वातीन जिनके बारे में तुम्हें शरकशी का अंदेशा हो"

अगर किसी औरत के रवैये से ज़ाहिर हो रहा है कि यह सरकशी, सरताबी, ज़िद और हठधर्मी की रविश पर चल रही पड़ी है, शौहर की बात नहीं मान रही बल्कि हर सूरत पर अपनी बात मनवाने पर मसर (ज़िद्दी) है और इस तरह घर की फ़िज़ा ख़राब की हुई है तो यह नशूज़ है। अगर औरत अपनी इस हैसियत को ज़हनन तस्लीम ना करे कि वह शौहर के ताबेअ है तो ज़ाहिर बात है कि मज़ाहमत (friction) होगी और उसके नतीजे में घर के अंदर एक फ़साद पैदा होगा। ऐसी सूरते हाल में मर्द को क़व्वाम होने की हैसियत से बाज़ तादीबी (अनुशासनात्मक) इख़्तियारात दिये गये हैं, जिनके तीन मराहिल हैं:

فَعِظُوۡهُنَّ

"पस उनको नसीहत करो"

पहला मरहला समझाने-बुझाने का है, जिसमें डाँट-डपट भी शामिल है।

وَاهۡجُرُوۡهُنَّ فِی الۡمَضَاجِعِ

"और उनको उनके बिस्तरों में तन्हा छोड़ दो"

अगर नसीहत व मलामत से काम ना चले तो दूसरा मरहला यह है कि उनसे अपने बिस्तर अलैहदा कर लो और उनके साथ ताल्लुक़ ज़नो-शो कुछ अरसे के लिये मुन्क़तअ कर लो।

وَاضۡرِبُوۡهُنَّ

"और उनको मारो।"

अगर अब भी वह अपनी रविश ना बदलें तो मर्द को जिस्मानी सज़ा देने का भी इख़्तियार है। इस ज़िमन में आँहुज़ूर ﷺ ने हिदायत फ़रमाई है कि चेहरे पर ना मारा जाये और कोई ऐसी मार ना हो जिसका मुस्तक़िल निशान जिस्म पर पड़े। मज़कूरा बाला तादीबी हिदायात अल्लाह के कलाम के अंदर बयान फ़रमाई गई हैं और इन्हें बयान करने में हमारे लिये कोई झिझक नहीं होनी चाहिये। मआशरती ज़िन्दगी को दुरुस्त रखने के लिये इनकी ज़रुरत पेश आये तो इन्हें इख़्तियार करना होगा।

فَاِنۡ اَطَعۡنَكُمۡ فَلَا تَبۡغُوۡا عَلَيۡهِنَّ سَبِيۡلًا

"फिर अग़र वह तुम्हारी इताअत करें तो उनके ख़िलाफ़ (ख़्वाह मा ख़्वाह ज़्यादती की) राह मत तलाश करो।"

अगर औरत सरकशी व सरताबी की रविश छोड़ कर इताअत की राह पर आ जाये तो पिछली कदूरतें (नफ़रतें) भुला देनी चाहिये उससे इन्तक़ाम लेने के बहाने तलाश नहीं करनी चाहिये।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيۡرًا ۝

"यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत बुलंद है, बहुत बड़ा है।"

आयत 35

وَاِنۡ خِفۡتُمۡ شِقَاقَ بَيۡنِهِمَا

"और अग़र तुमको मियाँ-बीवी के दरमियान इफ़तराक़ (विभाजन) का अंदेशा हो"

अब अगर कोई तदबीर नतीजाखेज़ ना हो और उन दोनों के माबैन ज़िद्दम-ज़िद्दा की कैफ़ियत पैदा हो चुकी हो कि औरत भी अकड़ गई है, मर्द भी अकड़ा हुआ है, और अब उनका साथ चलना मुश्किल नज़र आता हो तो इस्लाहे अहवाल के लिये एक दूसरी तदबीर इख़्तियार करने की हिदायत फ़रमाई गई है।

فَابۡعَثُوۡا حَكَمًا مِّنۡ اَهۡلِهٖ وَحَكَمًا مِّنۡ اَهۡلِهَا

"तो एक हकम मर्द के ख़ानदान से मुक़र्रर करो और एक हकम औरत के ख़ानदान से।"

اِنۡ يُّرِيۡدَاۤ اِصۡلَاحًا يُّوَفِّقِ اللّٰهُ بَيۡنَهُمَا

"अग़र वह दोनों इस्लाह चाहेंगे तो अल्लाह तआला उनके दरमियान मुवाफ़क़त (समझौता) पैदा कर देगा।"

"اِنۡ یُّرِیۡدَاۤ اِصۡلَاحًا" में मुराद ज़वजैन भी हो सकते हैं और हकमैन भी। यानि एक तो यह कि अगर वाक़िअतन शौहर और बीवी मुवाफ़क़त चाहते हैं तो अल्लाह उनके दरमियान साज़गारी पैदा फ़रमा देगा। बाज़ अवक़ात ऐसा होता है कि शौहर और बीवी दोनों की ख़्वाहिश होती है कि मामला दुरुस्त हो जाये, लेकिन कोई नफ़्सियाती गिरह ऐसी बंध जाती है जिसे खोलना उनके बस में नहीं होता। अब अगर दोनों के ख़ानदानों में से एक एक सालिस आ जायेगा और वह दोनों मिल बैठ कर ख़ैर-ख़्वाही के जज़्बे से इस्लाहे अहवाल की कोशिश करेंगे तो इस ग़िरह को खोल सकेगें। यह दोनों अस्बाबे इख़्तलाफ़ की तहक़ीक़ करेंगे, मियाँ-बीवी दोनों के गिले-शिकवे और वज़ाहतें सुनेंगे और दोनों को समझा-बुझा कर तस्फ़ीह (समझौते) की कोई सूरत निकालेंगे। "اِنۡ یُّرِیۡدَاۤ اِصۡلَاحًا" में मुराद हकमैन भी हो सकते हैं कि अगर वह इस्लाह की पूरी कोशिश करेंगे तो अल्लाह तआला उनके माबैन मुवाफ़क़त पैदा फ़रमा देगा। लेकिन मेरा रुझान पहली राय की तरफ़ ज़्यादा है कि इससे मुराद मियाँ-बीवी हैं।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيۡمًا خَبِيۡرًا ۝۳۵

"यक़ीनन अल्लाह तआला सब कुछ जानता है और बा ख़बर है।""

आयात 36 से 43 तक

وَاعۡبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشۡرِكُوۡا بِهٖ شَيۡـًٔـا وَّبِالۡوَالِدَيۡنِ اِحۡسَانًا وَّبِذِى الۡقُرۡبٰى وَالۡيَتٰمٰى وَالۡمَسٰكِيۡنِ وَالۡجَارِ ذِى الۡقُرۡبٰى وَالۡجَارِ
الۡجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالۡجَـنۡۢبِ وَابۡنِ السَّبِيۡلِ ۙ وَمَا مَلَـكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنۡ كَانَ مُخۡتَالًا فَخُوۡرَا ۝۳۶ الَّذِيۡنَ
يَبۡخَلُوۡنَ وَيَاۡمُرُوۡنَ النَّاسَ بِالۡبُخۡلِ وَيَكۡتُمُوۡنَ مَاۤ اٰتٰٮهُمُ اللّٰهُ مِنۡ فَضۡلِهٖ‌ ؕ وَاَعۡتَدۡنَا لِلۡكٰفِرِيۡنَ عَذَابًا مُّهِيۡنًا ۝۳۷
وَالَّذِيۡنَ يُنۡفِقُوۡنَ اَمۡوَالَهُمۡ رِئَآءَ النَّاسِ وَلَا يُؤۡمِنُوۡنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ‌ ؕ وَمَنۡ يَّكُنِ الشَّيۡطٰنُ لَهٗ قَرِيۡنًا فَسَآءَ
قَرِيۡنًا ۝۳۸ وَمَاذَا عَلَيۡهِمۡ لَوۡ اٰمَنُوۡا بِاللّٰهِ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ وَاَنۡفَقُوۡا مِمَّا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ‌ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ بِهِمۡ عَلِيۡمًا ۝۳۹ اِنَّ اللّٰهَ لَا
يَظۡلِمُ مِثۡقَالَ ذَرَّةٍ‌ ۚ وَاِنۡ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفۡهَا وَيُؤۡتِ مِنۡ لَّدُنۡهُ اَجۡرًا عَظِيۡمًا ۝۴۰ فَكَيۡفَ اِذَا جِئۡنَا مِنۡ كُلِّ اُمَّةٍ ۢ بِشَهِيۡدٍ
وَّجِئۡنَا بِكَ عَلٰى هٰٓؤُلَۤاءِ شَهِيۡدًا ۝۴۱ يَوۡمَـئِذٍ يَّوَدُّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا وَعَصَوُا الرَّسُوۡلَ لَوۡ تُسَوّٰى بِهِمُ الۡاَرۡضُ ؕ وَلَا يَكۡتُمُوۡنَ
اللّٰهَ حَدِيۡثًا ۝۴۲ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَقۡرَبُوا الصَّلٰوةَ وَاَنۡتُمۡ سُكٰرٰى حَتّٰى تَعۡلَمُوۡا مَا تَقُوۡلُوۡنَ وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِىۡ
سَبِيۡلٍ حَتّٰى تَغۡتَسِلُوۡا‌ ؕ وَاِنۡ كُنۡتُمۡ مَّرۡضٰۤى اَوۡ عَلٰى سَفَرٍ اَوۡ جَآءَ اَحَدٌ مِّنۡكُمۡ مِّنَ الۡغَآئِطِ اَوۡ لٰمَسۡتُمُ النِّسَآءَ فَلَمۡ تَجِدُوۡا
مَآءً فَتَيَمَّمُوۡا صَعِيۡدًا طَيِّبًا فَامۡسَحُوۡا بِوُجُوۡهِكُمۡ وَاَيۡدِيۡكُمۡ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُوۡرًا ۝۴۳

इससे क़ब्ल सूरतुल बक़रह आयत 83 में बनी इस्राईल से लिये जाने वाले मीसाक़ का ज़िक्र आया था। इस मीसाक़ में जो बातें मज़कूर थीं वह गोया उम्मेहाते शरीअत या दीन की बुनियादें हैं। इर्शाद हुआ: "और याद करो जब हमने बनी इस्राईल से अहद लिया था कि तुम नहीं इबादत करोगे किसी की सिवाये अल्लाह के, और वालिदैन के साथ नेक सुलूक करोगे और क़राबत-दारों, यतीमों और मोहताजों के साथ भी, और लोगों से अच्छी बात कहो, और नमाज़ क़ायम रखो और ज़कात अदा करो।" अब यह दूसरा मक़ाम आ रहा है कि शरीअत के अंदर जो चीज़ें अहमतर हैं और जिन्हें मआशरती सतह पर मुक़द्दम रखना चाहिये वह बयान की जा रही हैं। फ़रमाया:

आयत 36

وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـًٔا

"और अल्लाह ही की बंदगी करो और किसी चीज़ को भी उसके साथ शरीक ना ठहराओ"

सबसे पहला हक़ अल्लाह का है कि उसी की बंदगी और परस्तिश करो, और उसके साथ किसी को शरीक ना ठहराओ।

وَّبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا

"और वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक करो।"

क़ुरान हकीम में ऐसे चार मक़ामात हैं जहाँ अल्लाह के हक़ के फ़ौरन बाद वालिदैन के हक़ का तज़किरा है। यह भी हमारे ख़ानदानी निज़ाम के लिये बहुत अहम बुनियाद है कि वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक हो, उनका अदब व अहतराम हो, उनकी ख़िदमत की जाये, उनके सामने आवाज़ पस्त रखी जाये। यह बात सूरह बनी इस्राईल में बड़ी तफ़सील से आयेगी। हमारे मआशरे में ख़ानदान के इस्तेहकाम (स्थिरता) की यह एक बहुत अहम बुनियाद है।

وَّبِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ

"और क़राबतदारों, यतीमों और मोहताजों के साथ"

وَالْجَارِ ذِي الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ

"और क़राबतदार हमसाये और अजनबी हमसाये के साथ"

पहले आमतौर पर मुहल्ले ऐसे ही होते थे कि एक क़बीला एक ही जगह रह रहा है, रिश्तेदारी भी है और हमसायगी भी। लेकिन कोई अजनबी हमसाया भी हो सकता है। जैसे आज-कल शहरों में हमसाये अजनबी होते हैं।

وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْۢبِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۙ

"और हमनशीन साथी और मुसाफ़िर के साथ"

एक हमसायगी आरज़ी नौइयत की भी होती है। मसलन आप बस में बैठे हुए हैं, आपके बराबर बैठा हुआ शख़्स आपका हमसाया है। नेज़ जो लोग किसी भी ऐतबार से आपके साथी हैं, आपके पास बैठने वालें हैं, वह सब आपके हुस्ने सुलूक के मुस्तहिक़ हैं।

وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۭ

"और वह लौंडी गुलाम जो तुम्हारे मिल्के यमीन हैं (उनके साथ भी नेक सुलूक करो)।"

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُوْرَا ۙ (36)

"अल्लाह बिल्कुल पसंद नहीं करता उन लोगों को जो शेख़ीख़ोर और अकड़ने वाले हों।"

आयत 37

الَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ وَيَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ

"जो ख़ुद भी बुख्ल (कंजूसी) करते हैं और दूसरे लोगों को भी बुख्ल का मशवरा देते हैं"

जिनमें यह शेख़ीखोरी और अकड़ होती है फिर वह बखील (कंजूस) भी होते हैं। इसलिये की ग़ुरूर व तकब्बुर आमतौर पर दौलत की बिना (बुनियाद) पर होता है। उन्हें मालूम है कि हमारे पास जो दौलत है अगर यह ख़र्च हो गई तो हमारा वह मक़ाम नहीं रहेगा, लोगों की नज़रों में हमारी इज़्ज़त नहीं रहेगी। लिहाज़ा वह अपना माल ख़र्च करने में कंजूसी से काम लेते हैं। इस पर उन्हें यह अंदेशा भी होता है कि लोग हमें मलामत करेंगे कि तुम बड़े बखील हो, चुनाँचे वह ख़ुद लोगों को इस तरह के मशवरे देने लगते हैं कि बाबा इस तरह ख़ुला ख़र्च ना किया करो, तुम ख़्वाह माख़्वाह पैसे उड़ाते हो, अक़्ल के नाख़ुन लो, कुछ ना कुछ बचा कर रखा करो, वक़्त पर काम आयेगा। इस तरह वह लोगों को भी बुख्ल का ही मशवरा देते हैं।

وَيَكْتُمُوْنَ مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۭ

"और वह छुपाते हैं उसको जो अल्लाह ने उन्हें अपने फ़ज़ल में से दिया है।"

अपनी दौलत को छुपा-छुपा कर रखते हैं। उन्हें यह अंदेशा लाहक़ रहता है कि दौलत ज़ाहिर होगी तो कोई साइल सवाल कर बैठेगा। लिहाज़ा ख़ुद ही मिस्कीन सूरत बनाये रखते हैं कि कोई उनके सामने दस्ते सवाल दराज़ ना करे।

وَاَعۡتَدۡنَا لِلۡكٰفِرِيۡنَ عَذَابًا مُّهِيۡنًا ۝٣٧	*"और ऐसे नाशुक्रों के लिये हमने बड़ा अहानत आमेज़ आज़ाब तैयार कर रखा है।"*

आयत 38

وَالَّذِيۡنَ يُنۡفِقُوۡنَ اَمۡوَالَهُمۡ رِئَآءَ النَّاسِ	*"और वह लोग (भी अल्लाह को नापसंद हैं) जो अपने माल ख़र्च करते हैं लोगों को दिखाने के लिये"*
وَلَا يُؤۡمِنُوۡنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِؕ	*"और वह हक़ीक़त में ईमान नहीं रखते ना अल्लाह पर ना यौमे आख़िर पर।"*
وَمَنۡ يَّكُنِ الشَّيۡطٰنُ لَهٗ قَرِيۡنًا فَسَآءَ قَرِيۡنًا ۝٣٨	*"(ऐसे लोग गोया शैतान के साथी हैं) और जिसका साथी शैतान हो जाये तो वह बहुत ही बुरा साथी है।"*

आयत 39

وَمَاذَا عَلَيۡهِمۡ لَوۡ اٰمَنُوۡا بِاللّٰهِ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ	*"इन लोगों पर क्या आफ़त आ जाती अगर यह अल्लाह और यौमे आख़िर पर (सदक़े दिल से) ईमान ले आते"*
وَاَنۡفَقُوۡا مِمَّا رَزَقَهُمُ اللّٰهُؕ	*"और ख़र्च करते (खुले दिल के साथ) उसमें से जो अल्लाह ने उन्हें दिया है।"*
وَكَانَ اللّٰهُ بِهِمۡ عَلِيۡمًا ۝٣٩	*"और अल्लाह तआला इनसे अच्छी तरह वाक़िफ़ है।"*

आयत 40

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظۡلِمُ مِثۡقَالَ ذَرَّةٍۚ	*"यक़ीनन अल्लाह किसी पर ज़र्रे के हमवज़न (बराबर) भी ज़ुल्म नहीं करेगा।"*
وَاِنۡ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفۡهَا	*"अगर एक नेकी होगी तो उसको कई गुना बढ़ाएगा"*
وَيُؤۡتِ مِنۡ لَّدُنۡهُ اَجۡرًا عَظِيۡمًا ۝٤٠	*"और ख़ास अपने ख़ज़ाना-ए-फ़ज़ल से मज़ीद बहुत बड़ा अजर देगा।"*

इस सूरह मुबारका की अगली आयत बड़ी अहम है। यह उस शहादत अलन्नास से मुताल्लिक़ है जो मज़मून सूरतुल बक़रह (आयत:143) में आया था कि ऐ मुसलमानों! तुम्हें अब शोहदा अलन्नास बनाया गया है, जैसे कि नबी ﷺ ने तुम पर शहादत दी है। नबी अकरम ﷺ क़यामत के दिन खड़े होकर कहेंगे कि ऐ अल्लाह मेरे पास जो दीन आया था मैंने इन्हें पहुँचा दिया था, अब यह अपने तर्ज़े अमल के ख़ुद ज़िम्मेदार हैं। यही बात क़यामत के दिन खड़े होकर तुम्हें कहनी है कि ऐ अल्लाह हमने अपने ज़माने के लोगों तक तेरा दीन पहुँचा दिया था, अब इसके बाद अपने तर्ज़े अमल के यह ख़ुद जवाबदेह हैं। ऐसा ना हो कि उल्टा वह हमारे ऊपर मुक़दमा करें कि ऐ अल्लाह इन बदबख्तों ने हमें तेरा दीन नहीं पहुँचाया, यह ख़ज़ाने के साँप बन कर बैठे रहे। यह तो शहादत का एक रुख़ है, लेकिन जिनके काँधों पर यह ज़िम्मेदारी डाल दी गई हो, वाक़्या यह है कि उसके लिये तो यह एक बहुत भारी बोझ है। यहाँ इसका नुक़्शा खींचा जा रहा है कि क़यामत के दिन क्या होगा।

आयत 41

فَكَيْفَ إِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ أُمَّةٍ بِشَهِيدٍ

"तो उस दिन क्या सूरते हाल होगी जब हम हर उम्मत में से एक गवाह खड़ा करेंगे"

यानि उस नबी और रसूल को गवाह बना कर खड़ा करेंगे जिसने उस उम्मत को दावत पहुँचाई होगी।

وَجِئْنَا بِكَ عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا ﴿٤١﴾

"और (ऐ नबी) आपको लाएँगे हम इन पर गवाह बना कर।"

यानि आप ﷺ को खड़े होकर कहना पड़ेगा कि ऐ अल्लाह! मैंने इन तक तेरा पैगाम पहुँचा दिया था। हमारी अदालती इस्तलाह में इसे इस्तग़ाशा का गवाह (prosecution witness) कहा जाता है। गोया अदालत-ए-ख़ुदावंदी में नबी अकरम ﷺ इस्तग़ाशा के गवाह की हैसियत से पेश होकर कहेंगे कि ऐ अल्लाह, तेरा पैग़ाम जो मुझ तक पहुँचा था मैंने इन्हें पहुँचा दिया था, अब यह ख़ुद ज़िम्मेदार और जवाबदेह हैं। चुनाँचे अपनी ही क़ौम के ख़िलाफ़ गवाही आ गई ना? यहाँ अल्फ़ाज़ नोट कर लीजिये: عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا और عَلَىٰ हमेशा मुख़ालफ़त के लिये आता है। हम तो हाथ पर हाथ धरे शफ़ाअत की उम्मीद में हैं और यहाँ हमारे ख़िलाफ मुक़दमा क़ायम होने चला है। अल्लाह के रसूल ﷺ दरबारे ख़ुदावंदी में हमारे ख़िलाफ़ गवाही देंगे कि ऐ अल्लाह! मैंने तेरा दीन इनके सुपुर्द किया था, अब इसे दुनिया में फैलाना इनका काम था, लेकिन इन्होंने ख़ुद दीन को छोड़ दिया। सूरतुल फ़ुरक़ान में अल्फ़ाज़ आये हैं: {وَقَالَ الرَّسُولُ يَا رَبِّ إِنَّ قَوْمِي اتَّخَذُوا هَٰذَا الْقُرْآنَ مَهْجُورًا} (आयत:30) "और रसूल ﷺ कहेंगे कि परवरदिग़ार, मेरी क़ौम ने इस क़ुरान को तर्क कर दिया था।" सूरतुन्निसा की आयत ज़ेरे मुताअला के बारे में एक वाक़िया भी है। एक मर्तबा रसूल ﷺ ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि० से इर्शाद फ़रमाया कि मुझे क़ुरान सुनाओ! उन्होंने अर्ज़ किया हुज़ूर आपको सुनाऊँ? आप ﷺ पर तो नाज़िल हुआ है। फ़रमाया: हाँ, लेकिन मुझे किसी दूसरे से सुन कर कुछ और हज़ (आनंद) हासिल होता है। हज़रत अब्दुल्लाह रज़ि० ने सूरतुन्निसा पढ़नी शुरू की। हुज़ूर ﷺ भी सुन रहे थे, बाक़ी और सहाबा रज़ि० भी होंगे और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि० गर्दन झुकाए पढ़ते जा रहे थे। जब इस आयत पर पहुँचे {فَكَيْفَ إِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ أُمَّةٍ بِشَهِيدٍ وَجِئْنَا بِكَ عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا} तो हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया حَسْبُكَ، حَسْبُكَ (बस करो, बस करो!) अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि० ने सर उठा कर देखा तो हुज़ूर ﷺ की आँखों में आँसू रवाँ थे। इस वजह से कि मुझे अपनी क़ौम के ख़िलाफ़ गवाही देनी होगी।

आयत 42

يَوْمَئِذٍ يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَعَصَوُا الرَّسُولَ لَوْ تُسَوَّىٰ بِهِمُ الْأَرْضُ

"उस दिन तमन्ना करेंगे वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया था और रसूल की नाफ़रमानी की थी कि काश उनके समेत ज़मीन बराबर कर दी जाये।"

यानि किसी तरह ज़मीन फट जाये और हम इसमें दफ़न हो जायें, हमें नसयम मन्सिया कर दिया जाये।

وَلَا يَكْتُمُونَ اللَّهَ حَدِيثًا ﴿٤٢﴾

"और वह अल्लाह से कोई बात भी छुपा नहीं सकेगें।"

आयत 43

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقْرَبُوا الصَّلَاةَ وَأَنْتُمْ سُكَارَىٰ

"ऐ अहले ईमान, नमाज़ के क़रीब ना जाओ इस हाल में कि तुम नशे की हालत में हो"

حَتَّىٰ تَعْلَمُوا مَا تَقُولُونَ

"यहाँ तक कि तुम्हें मालूम हो जो कुछ तुम कह रहे हो"

सूरतुल बक़रह (आयत:219) में शराब और जुए के बारे में महज़ इज़हारे नाराज़गी फ़रमाया था कि {وَاِثْمُهُمَآ اَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا} "उनके गुनाह का पहलु नफ़े के पहलु से बड़ा है।" अब अगले क़दम के तौर पर शराब के अंदर जो ख़बासत, शनाअत और बुराई का पहलु है उसे एक मर्बता और उजागर किया गया कि नशे की हालत में नमाज़ के क़रीब ना जाया करो। जब तक नशा उतर ना जाये और तुम्हें मालूम हो कि तुम क्या कह रहे हो उस वक़्त तक नमाज़ ना पढ़ा करो। चूँकि शराब की हुरमत का हुक्म अभी नहीं आया था लिहाज़ा बाज़ अवक़ात लोग नशे की हालत ही में नमाज़ पढ़ने खड़े हो जाते और कुछ का कुछ पढ़ जाते। ऐसे अवक़ात भी बयान हुए हैं कि किसी ने नशे मे नमाज़ पढ़ाई और "لَآ اَعْبُدُ مَا تَعْبُدُوْنَ" के बजाय "اَعْبُدُ مَا تَعْبُدُوْنَ" पढ़ दिया। इस पर ख़ास तौर पर यह आयत नाज़िल हुई। {حَتّٰى تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ} के अल्फ़ाज़ क़ाबिले ग़ौर हैं कि जब तक कि तुम शऊर के साथ समझ ना रहे हो कि तुम क्या कह रहे हो! इसमें एक इशारा इधर भी हो गया कि बे समझ नमाज़ ना पढ़ा करो! यानि एक तो मदहोशी की वजह से समझ में नहीं आ रहा और ग़लत-सलत पढ़ रहे हैं तो इससे रोका जा रहा है, और एक समझ ही नहीं कि नमाज़ में क्या पढ़ रहे हैं। क़ुरान कह रहा है कि तुम्हें मालूम होना चाहिये कि तुम कह क्या रहे हो। अब जिन्हें क़ुरान मजीद के मायने नहीं आते, नमाज़ के मायने नहीं आते, उन्हें क्या पता कि वह नमाज़ में क्या कह रहे हैं!

وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِيْ سَبِيْلٍ حَتّٰى تَغْتَسِلُوْا ۭ

"और इसी तरह जनाबत की हालत में भी (नमाज़ के क़रीब ना जाओ) जब तक ग़ुस्ल ना कर लो, इल्ला यह कि रास्ते से गुज़रते हुए।"

अग़र तुमने अपनी बीवियों से मुबाशरत (संभोग) की हो या अहतलाम वग़ैरह की शक्ल हो गई हो तब भी तुम नमाज़ के क़रीब मत जाओ जब तक कि ग़ुस्ल न कर लो। "اِلَّا عَابِرِيْ سَبِيْلٍ" के बारे में बहुत से क़ौल हैं। बाज़ फ़ुक़हा और मुफ़स्सिरीन ने इसका यह मफ़हूम समझा है कि हालते जनाबत में मस्जिद में ना जाना चाहिये, इल्ला यह कि किसी काम के लिये मस्जिद में से गुज़रना हो, जबकि बाज़ ने इससे मुराद सफ़र लिया है।

وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰي سَفَرٍ

"और अगर तुम बीमार हो या सफ़र में हो"

आदमी को तेज़ बुख़ार है या कोई और तकलीफ़ है जिसमें ग़ुस्ल करना मज़र (ख़तरनाक) साबित हो सकता है तो तयम्मुम की इजाज़त है। इसी तरह कोई शख़्स सफ़र में है और उसे पानी दस्तयाब नहीं है तो वह तयम्मुम कर ले।

اَوْ جَاۗءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَاۗىِٕطِ

"या तुममें से कोई क़ज़ा-ए-हाजत (शौच) के बाद आया हो"

اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَاۗءَ

"या तुमने औरतों के साथ मुबाशरत की हो"

فَلَمْ تَجِدُوْا مَاۗءً

"फिर तुम पानी ना पाओ"

فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا

"तो पाक मिट्टी का क़सद करो"

यानि वो तमाम सूरतें जिनमें ग़ुस्ल या वुज़ू वाज़िब है, इनमें अगर बीमारी ग़ुस्ल से मना हो, हालते सफ़र में नहाना मुमकिन ना हो, क़ज़ा-ए-हाजत या औरतों से मुबाशरत के बाद पानी दस्तयाब ना हो तो पाक मिट्टी से तयम्मुम कर लिया जाये।

فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ ۭ

"और इससे अपने चेहरों और हाथों पर मसह कर लो।"

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُوْرًا ۝۴۳

"यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत माफ़ करने वाला, बख़्शने वाला है।"

हज़रत आयशा रज़ि० से लैलतुलक़द्र की जो दुआ मरवी है उसमें यही लफ़्ज़ आया है: ((اَللّٰھُمَّ اِنَّكَ عَفُوٌّ تُحِبُّ الْعَفْوَ فَاعْفُ عَنِّیْ)) "ऐ अल्लाह, तू माफ़ फ़रमाने वाला है, माफ़ी को पसंद करता है, पस तू मुझे माफ़ फ़रमा दे!"

सूरतुन्निसा की इन तैंतालीस आयात में वही सूरतुल बक़रह का अंदाज़ है कि शरीअत के अहकाम मुख़्तलिफ़ गोशों में, मुख़्तलिफ़ पहलुओं से बयान हुए। इबादात के ज़िमन में तयम्मुम का ज़िक्र आ गया, विरासत का क़ानून पूरी तफ़सील से बयान हो गया और मआशरे में जिन्सी बेराहरवी की रोकथाम के लिये अहकाम आ गये, ताकि एक पाकीज़ा और सालेह मआशरा वुजूद में आये जहाँ एक मुस्तहकम ख़ानदानी निज़ाम हो। अब यहाँ एक मुख़्तसर सा ख़िताब अहले किताब के बारे में आ रहा है।

आयात 44 से 57 तक

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يَشْتَرُوْنَ الضَّلٰلَةَ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ تَضِلُّوا السَّبِيْلَ ﴿٤٤﴾ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ
بِاَعْدَآئِكُمْ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَلِيًّا ۡ وَّكَفٰى بِاللّٰهِ نَصِيْرًا ﴿٤٥﴾ مِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ وَيَقُوْلُوْنَ
سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ وَّرَاعِنَا لَيًّۢا بِاَلْسِنَتِهِمْ وَطَعْنًا فِي الدِّيْنِ ۭ وَلَوْ اَنَّھُمْ قَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاسْمَعْ
وَانْظُرْنَا لَكَانَ خَيْرًا لَّھُمْ وَاَقْوَمَ ۙ وَلٰكِنْ لَّعَنَھُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٤٦﴾ يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ
اٰمِنُوْا بِمَا نَزَّلْنَا مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ مِّنْ قَبْلِ اَنْ نَّطْمِسَ وُجُوْهًا فَنَرُدَّهَا عَلٰٓي اَدْبَارِهَآ اَوْ نَلْعَنَھُمْ كَمَا لَعَنَّآ اَصْحٰبَ
السَّبْتِ ۭ وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُوْلًا ﴿٤٧﴾ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَاۗءُ ۚ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ
فَقَدِ افْتَرٰٓى اِثْمًا عَظِيْمًا ﴿٤٨﴾ اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يُزَكُّوْنَ اَنْفُسَھُمْ ۭ بَلِ اللّٰهُ يُزَكِّيْ مَنْ يَّشَاۗءُ وَلَا يُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا ﴿٤٩﴾ اُنْظُرْ
كَيْفَ يَفْتَرُوْنَ عَلَي اللّٰهِ الْكَذِبَ ۭ وَكَفٰى بِهٖٓ اِثْمًا مُّبِيْنًا ﴿٥٠﴾ اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يُؤْمِنُوْنَ
بِالْجِبْتِ وَالطَّاغُوْتِ وَيَقُوْلُوْنَ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا هٰٓؤُلَاۗءِ اَهْدٰى مِنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا سَبِيْلًا ﴿٥١﴾ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ لَعَنَھُمُ اللّٰهُ ۭ
وَمَنْ يَّلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ نَصِيْرًا ﴿٥٢﴾ اَمْ لَھُمْ نَصِيْبٌ مِّنَ الْمُلْكِ فَاِذًا لَّا يُؤْتُوْنَ النَّاسَ نَقِيْرًا ﴿٥٣﴾ اَمْ يَحْسُدُوْنَ
النَّاسَ عَلٰي مَآ اٰتٰىھُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۚ فَقَدْ اٰتَيْنَآ اٰلَ اِبْرٰهِيْمَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنٰھُمْ مُّلْكًا عَظِيْمًا ﴿٥٤﴾ فَمِنْھُمْ مَّنْ
اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْھُمْ مَّنْ صَدَّ عَنْهُ ۭ وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعِيْرًا ﴿٥٥﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا سَوْفَ نُصْلِيْهِمْ نَارًا ۭ كُلَّمَا نَضِجَتْ
جُلُوْدُھُمْ بَدَّلْنٰھُمْ جُلُوْدًا غَيْرَھَا لِيَذُوْقُوا الْعَذَابَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ﴿٥٦﴾ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ
سَنُدْخِلُھُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْھٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ لَھُمْ فِيْهَآ اَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ ۡ وَّنُدْخِلُھُمْ ظِلًّا ظَلِيْلًا ﴿٥٧﴾

आयत 44

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ

"क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिन्हें किताब में से एक हिस्सा दिया गया था"

वह "अल किताब" एक हक़ीक़त है जिसमें से एक हिस्सा तौरात और एक हिस्सा इन्जील के नाम से नाज़िल हुआ और फिर वह किताब हर ऐतबार से कामिल होकर क़ुरान की शक्ल में नाज़िल हुई।

يَشْتَرُوْنَ الضَّلٰلَةَ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ تَضِلُّوا السَّبِيْلَ ﴿٤٤﴾

"वह गुमराही ख़रीदते हैं और चाहते हैं कि तुम भी गुमराह हो जाओ।"

मुशरिकीने मक्का भी यही कुछ किया करते थे कि लोग लहव व लअब (खेल-तमाशे) में मशग़ूल रहें और क़ुरान ना सुनें। उन्होंने ईरान से रुस्तम व असफंदयार के क़िस्से मँगवा कर दास्तान गोई का सिलसिला शुरू किया और गाने-बजाने वाली लौंड़ियों और आलाते मौसीक़ी का इन्तेज़ाम किया ताकि लोग इन्हीं चीजों में मशग़ूल रहें और हुज़ूर ﷺ की बात कोई ना सुने। इसी तरह मदीना में यहूद का भी यही मामला था कि वह ख़ुद भी गुमराहकुन मशागुल इख़्तियार करते और दूसरों को भी उसमें मशग़ूल करने की कोशिश करते। हमारे ज़माने में इस क़िस्म के मशागुल की बहुत सी सूरतें हैं। हमारे यहाँ जब किक्रेट मैच हो रहे होते हैं और टीवी पर दिखाये जाते हैं तो पूरी क़ौम का यह हाल होता है गोया कि दुनिया की अहमतरीन शय किक्रेट ही है। इसी तरह दुनिया में दूसरे खेल-तमाशे देखे जाते हैं कि दुनिया उनके पीछे पागल हो जाती है। शैतान को और क्या चाहिये? वह तो यही चाहता है ना कि लोगों की हक़ाइक़ की तरफ़ निगाह ही ना हो। किसी को यह सोचने की ज़रूरत ही महसूस ना हो कि ज़िन्दगी किस लिये है? जीना काहे के लिये है? मौत है तो उसके बाद क्या होना है? इंसान या तो हैवानी सतह पर ज़िन्दगी गुज़ारे दे कि उसे हलाल व हराम की तमीज़ ही ना रहे कि वह क्या कमा रहा है और क्या खा रहा है, और या फिर इस तरह के लहव व लअब के अंदर ज़िन्दगी गुज़ार दे। इन चीज़ों के फ़रोग़ के लिये बड़े मुस्तहकम निज़ाम हैं और इन खिलाड़ियों वग़ैरह के लिये बहुत बड़े-बड़े ईनामात होते हैं। फ़रमाया: यह चाहते हैं कि तुम्हें भी सीधे रास्ते से भटका दें, राहे हक़ से मुनहरिफ़ कर दें।

आयत 45

وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاَعْدَآىِٕكُمْ

"अल्लाह तुम्हारे दुश्मनों से ख़ूब वाक़िफ़ है।"

وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَلِيًّا ۙ وَّكَفٰى بِاللّٰهِ نَصِيْرًا ۝۴۵

"और अल्लाह काफ़ी है तुम्हारे वली और पुश्तपनाह होने की हैसियत से और काफ़ी है तुम्हारे मददगार होने के ऐतबार से।"

आयत 46

مِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ

"इन यहूदियों में से कुछ लोग हैं जो कलाम को उसके असल मक़ाम व महल (जगह) से फेरते हैं।"

وَيَقُوْلُوْنَ سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا

"वह कहते हैं हमने सुना और हमने नहीं माना"

यहूद अपनी ज़बानों को तोड़-मरोड़ कर अल्फ़ाज़ को कुछ का कुछ बना देते। रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर होते तो अहकामे इलाही सुन कर कहते سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا । बज़ाहिर वह अहले ईमान की तरह سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا (हमने सुना और हमने क़ुबूल किया) कह रहे होते लेकिन ज़बान को मरोड़ कर हक़ीक़त में سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا कहते।

وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ

"और (कहते हैं) सुनिये, ना सुना जाये।"

वह हुज़ूर ﷺ की मजलिस में आप ﷺ को मुख़ातिब करके कहते ज़रा हमारी बात सुनिये! साथ ही चुपके से कह देते कि आपसे सुना ना जाये, हमें आपको सुनाना मतलूब नहीं है। इस तरह वह शाने रिसालत में गुस्ताख़ी के मुरतकिब होते।

وَّرَاعِنَا لَيًّا بِاَلْسِنَتِهِمْ

"और (कहते हैं) राइना अपनी ज़बानों को मोड़ कर"

राइना का मफ़हूम तो है "हमारी रियायत कीजिये" लेकिन वह इसे खींच कर राईना बना देते। यानि ऐ हमारे चरवाहे!

وَطَعْنًا فِي الدِّيْنِ

"और दीन में तअन करने के लिये।"

यहूद अपनी ज़बानों को तोड़-मरोड़ कर ऐसे कलिमात कहते और फिर दीन में यह ऐब लगाते कि अगर यह शख़्स वाक़ई नबी होता तो हमारा फ़रेब इस पर ज़ाहिर हो जाता। चुनाँचे अल्लाह तआला ने उनके फ़रेब को ज़ाहिर कर दिया।

وَلَوْ اَنَّهُمْ قَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاسْمَعْ وَانْظُرْنَا لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَقْوَمَ

"और अगर वह यह कहते कि हमने सुना और इताअत क़ुबूल की, और आप हमारी बात सुन लीजिये, और ज़रा हमें मोहलत दीजिये, तो यह उनके हक़ में कहीं बेहतर होता और बहुत दुरुस्त और सीधी बात होती"

وَلٰكِنْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ

"लेकिन अल्लाह ने तो उनके कुफ़्र की वजह से उन पर लानत कर दी है"

فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝٤٦

"तो अब वह ईमान लाने वाले नहीं हैं मगर शाज़ ही कोई।"

आयत 47

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ اٰمِنُوْا بِمَا نَزَّلْنَا

"ऐ वह लोगो जिनको किताब दी गई थी! ईमान लाओ उस पर जो हमने नाज़िल किया है"

यहूद की शरारतों पर लानत व मलामत के साथ ही उन्हें क़ुरान करीम पर ईमान की दावत भी दी जा रही है।

مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ

"जो उसकी तस्दीक़ करते हुए आया है जो तुम्हारे पास है"

مِّنْ قَبْلِ اَنْ نَّطْمِسَ وُجُوْهًا فَنَرُدَّهَا عَلٰٓى اَدْبَارِهَآ

"इससे क़ब्ल कि हम चेहरों को मिटा डालें, फिर उनको उनकी पीठों की तरफ़ मोड़ दें"

यानि चेहरे इस तरह मस्ख़ कर दिये जायें कि बिल्कुल सपाट हो जायें, उन पर कोई निशान बाक़ी ना रहे और फिर उन्हें पुश्त की तरफ़ मोड़ दिया जाये कि चेहरा पीछे और गुद्दी सामने।

اَوْ نَلْعَنَهُمْ كَمَا لَعَنَّآ اَصْحٰبَ السَّبْتِ

"या हम उन पर भी इसी तरह लानत कर दें जिस तरह हमने अपने अस्हाबे सब्त पर लानत की थी।"

अस्हाबे सब्त के वाक़िये की तफ़सील सूरतुल आराफ़ में आयेगी, लेकिन इज्मालन यह वाक़िया सूरतुल बक़रह में आ चुका है।

وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُوْلًا ۝٤٧

"और अल्लाह का हुक्म तो नाफ़िज़ (लागू) होकर रहना है।"

आयत 48

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ

"यक़ीनन अल्लाह इस बात को हरगिज़ नहीं बख़्शेगा कि उसके साथ शिर्क किया जाये"

وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَاۗءُ

"इससे कमतर जो कुछ है वह जिसके लिये चाहेगा बख़्श देगा।"

गोया यह भी खुला लाइसेंस नहीं है कि आप समझ लें कि बाक़ी सब गुनाह तो माफ़ हो ही जायेंगे। इसकी उम्मीद दिलाई गई है कि अल्लाह तआला बाक़ी तमाम गुनाहों को बग़ैर तौबा के भी माफ़ कर सकता है, लेकिन शिर्क के माफ़ होने का कोई इम्कान नहीं।

وَمَنۡ يُّشۡرِكۡ بِاللّٰهِ فَقَدِ افۡتَرٰٓى اِثۡمًا عَظِيۡمًا ۝٤٨

"और जो अल्लाह तआला के साथ शिर्क करता है उसने तो बहुत बड़े गुनाह का इफ़तरा (बोहतान) किया।"

अल्लाह तआला तो वाहिद व यक्ता है। उसकी ज़ात व सिफ़ात में किसी और को शरीक करना बहुत बड़ा झूठ, इफ़तरा और बोहतान है, और अज़ीम-तरीन गुनाह है।

आयत 49

اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ يُزَكُّوۡنَ اَنۡفُسَهُمۡ‌ؕ

"क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जो अपने आपको बड़ा पाकीज़ा ठहराते हैं?"

यहाँ यहूद के उसी फ़लसफ़े की तरफ़ इशारा है कि वह अपने आपको बहुत पाकबाज़ और आला व अरफ़ा समझते हैं। उनका दावा है कि "We are the chosen people of the Lord"। सूरतुल मायदा में उनका यह क़ौल नक़्ल हुआ है: {نَحۡنُ اَبۡنٰٓؤُا اللّٰهِ وَاَحِبَّآؤُهٗ} (आयत:18) यानि हम तो अल्लाह के बेटों की तरह हैं बल्कि उसके बहुत ही चहेते और लाड़ले हैं। उनके नज़दीक दूसरे तमाम लोग Gentiles और Goyems हैं, जो देखने में इंसान नज़र आते हैं, हक़ीकत में हैवान हैं। उनको तो जिस तरह चाहो लूट कर खा जाओ, जिस तरह चाहो उनको धोखा दो, उनका इस्तहसाल (शोषण) करो, हम पर कोई गिरफ्त नहीं है। सूरह आले इमरान (आयत:75) में हम उनका क़ौल पढ़ चुके हैं: {لَيۡسَ عَلَيۡنَا فِى الۡاُمِّيّٖنَ سَبِيۡلٌ‌ۚ} "इन उम्मियों के मामले में हम पर कोई गिरफ़्त नहीं है।" हमसे इनके बारे में कोई मुहासबा और कोई मुआख़जा नहीं होगा। जैसे आपने घोड़े को तांगे में जोत लिया या हिरन का शिकार करके खा लिया तो आपसे इस पर कौन मुआख़जा करेगा?

بَلِ اللّٰهُ يُزَكِّىۡ مَنۡ يَّشَآءُ

"बल्कि अल्लाह तआला ही है जो पाक करता है जिसको चाहता है"

وَلَا يُظۡلَمُوۡنَ فَتِيۡلًا ۝٤٩

"और उन पर ज़रा भी ज़ुल्म नहीं किया जायेगा।"

उनको अगर पाकीज़गी नहीं मिलती तो इसका सबब उनके अपने करतूत हैं, अल्लाह तआला की तरफ़ से तो उन पर ज़रा भी ज़ुल्म नहीं किया जाता। फ़तील दरअसल उस धागे को कहते हैं जो ख़जूर के अंदर गुठली के साथ लगा हुआ होता है। नुज़ूले क़ुरान के ज़माने में जो छोटी से छोटी चीज़ें लोगों के मुशाहिदे में आती थीं ज़ाहिर है कि वहीं से किसी चीज़ के छोटा होने के लिये मिसाल पेश की जा सकती थी।

आयत 50

اُنۡظُرۡ كَيۡفَ يَفۡتَرُوۡنَ عَلَى اللّٰهِ الۡكَذِبَ‌ؕ

"देखो ये लोग अल्लाह पर कैसे झूठ बाँध रहे हैं?"

وَكَفٰى بِهٖۤ اِثۡمًا مُّبِيۡنًا ۝٥٠

"और सरीह गुनाह होने के लिये तो यही काफ़ी है।"

यानि इनकी गिरफ़्त के लिये और इनको अज़ाब देने के लिये यही एक बात काफ़ी है जो इन्होंने गढ़ी है।

आयत 51

اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ اُوۡتُوۡا نَصِيۡبًا مِّنَ الۡكِتٰبِ

"क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिन्हें किताब में से एक हिस्सा दिया गया था"

يُؤْمِنُوْنَ بِالْجِبْتِ وَالطَّاغُوْتِ

"वह ईमान लातें हैं बुतों पर और शैतान पर"

وَيَقُوْلُوْنَ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا هٰٓؤُلَآءِ اَهْدٰى مِنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا سَبِيْلًا ﴿٥١﴾

"और कहते हैं उन लोगों के मुताल्लिक़ जिन्होंने कुफ़्र किया (यानि मुशरिकीन) कि इन अहले ईमान से ज़्यादा हिदायत पर तो यह हैं।"

यहूद अपनी ज़िद और हठधर्मी में इस हद तक पहुँच गये थे। उन्हें ख़ूब मालूम था कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और उनके साथी रज़ि० ईमान बिल् अल्लाह और ईमान बिल् आख़िरत में उनसे मुशाबेह थे, फिर वह हज़रत मूसा अलै० पर भी ईमान रखते थे और तौरात को अल्लाह की किताब मानते थे। लेकिन अहले ईमान के साथ ज़िद्दम-ज़िद्दा और अदावत में वह इस हद तक आगे बढ़ गये कि मुशरीकीने मक्का से मिल कर उनके बुतों की ताज़ीम की और कहा कि यह मुशरिक मुसलमानों से ज़्यादा हिदायत याफ़्ता हैं और इनका दीन मुसलमानों के दीन से बेहतर है।

आयत 52

اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ

"यह वह लोग हैं जिन पर अल्लाह ने लानत फ़रमा दी है।"

وَمَنْ يَّلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ نَصِيْرًا ﴿٥٢﴾

"और जिस पर अल्लाह लानत कर दे फिर तुम उसके लिये कोई मददगार नहीं पाओगे।"

आयत 53

اَمْ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّنَ الْمُلْكِ

"क्या इनका कोई हिस्सा है इक़तदार में?"

इन्होंने यह जो तक़सीम कर ली है कि दुनिया में यह सब कुछ हमारे लिये है, बाक़ी तमाम इंसान Gentiles और Goyems हैं, तो इंसानों में यह तक़सीम और तफ़रीक़ का इख़्तियार इन्हें किसने दिया है? क्या इनका अल्लाह की हुकूमत में कोई हिस्सा है? ज़मीन व आसमान की बादशाही तो अल्लाह की है, मालिकुल मुल्क अल्लाह है। तो क्या इनको उसके पास से कोई इख़्तियार मिला हुआ है?

فَاِذًا لَّا يُؤْتُوْنَ النَّاسَ نَقِيْرًا ﴿٥٣﴾

"अग़र ऐसा कहीं होता तो यह दूसरे लोगों को तिल के बराबर भी कोई शय देने को तैयार ना होते।"

आयत 54

اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰى مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ

"क्या यह हसद कर रहे हैं लोगों से उस पर कि जो अल्लाह ने उनको अपने फ़ज़ल में से अता कर दिया है?"

दरअसल यह सब उस हसद का नतीजा है जो यह मुसलमानों से रखते हैं कि अल्लाह ने इन उम्मियों में अपना आख़री नबी भेज दिया और इन्हें अपनी आख़री किताब अता फ़रमा दी जिन्हें यह हक़ीर समझते थे। अब यह इस हसद की आग में जल रहे हैं।

فَقَدْ اٰتَيْنَآ اٰلَ اِبْرٰهِيْمَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنٰهُمْ مُّلْكًا عَظِيْمًا ﴿٥٤﴾

"तो हमने आले इब्राहीम अलै० को किताब और हिकमत अता फ़रमाई और उन्हें बहुत बड़ी हुकूमतें भी दीं।"

यानि तुम्हें भी अगर तौरात और इंजील मिली थी तो इब्राहीम अलै० की नस्ल होने के नाते से मिली थी, तो यह जो इस्माईल अलै० की नस्ल है यह भी तो इब्राहीम अलै० ही की नस्ल है। यहाँ बनी इस्राईल को किताब और हिकमत अलैहदा-अलैहदा मिली। तौरात किताब थी और इंजील हिकमत थी, जबकि यहाँ किताब और हिकमत अल्लाह तआला ने एक ही जगह पर क़ुरान में ब-तमाम व कमाल जमा कर दी हैं। मज़ीद बराँ जैसे उनको मुल्के अज़ीम दिया था, अब हम इन मुसलमानों को उससे बड़ा मुल्क देंगे। यह मज़मून सूरतुन्नूर में आयेगा: {لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي الْأَرْضِ كَمَا اسْتَخْلَفَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ} (आयत:55) "हम लाज़िमन अहले ईमान को दुनिया में हुकूमत और ख़िलाफ़त अता करेंगे जैसे इनसे पहलों को अता की थी।"

आयत 55

فَمِنْهُمْ مَّنْ اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَّنْ صَدَّ عَنْهُ

"पस इनमें से वह भी हैं जो इस पर ईमान ले आये हैं और वह भी हैं जो इससे रुक गये हैं।"

وَ كَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعِيْرًا ۝٥٥

"और ऐसे लोगों के लिये तो जहन्नम की भड़कती हुई आग ही काफ़ी है।"

आयत 56

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا سَوْفَ نُصْلِيْهِمْ نَارًا

"यक़ीनन जो लोग हमारी आयात का कुफ़्र करेंगे एक वक़्त आयेगा कि हम उन्हें आग में झोंक देगें।"

كُلَّمَا نَضِجَتْ جُلُوْدُهُمْ بَدَّلْنٰهُمْ جُلُوْدًا غَيْرَهَا

"और जब भी उनकी खालें जल जाएँगी हम उनको दूसरी खालें में बदल देंगे"

لِيَذُوْقُوا الْعَذَابَ

"ताकि वह अज़ाब का मज़ा चखते रहें।"

यह भी एक बहुत बड़ी हक़ीक़त है जिसे मेडिकल साइंस ने दरयाफ़्त किया है कि दर्द का अहसास इंसान की खाल (skin) ही में है। इसके नीचे गोश्त व अज़लात (मांसपेशियों) वग़ैरह में दर्द का अहसास नहीं है। किसी को चुटकी काटी जाये, काँटा चुभे, चोट लगे या कोई हिस्सा जल जाये तो तकलीफ़ और दर्द का सारा अहसास जिल्द ही में होता है। चुनाँचे इन जहन्नमियों के बारे में फ़रमाया गया कि जब भी इनकी खाल आतिशे जहन्नम से जल जायेगी तो इसकी जगह नई खाल दे दी जायेगी ताकि उनकी तकलीफ़ और सोज़श (सूजन) मुसलसल रहे, जलन का अहसास बरक़रार रहे, इसमें कमी ना हो।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ۝٥٦

"यक़ीनन अल्लाह ज़बरदस्त है, कमाले हिकमत वाला है।"

आयत 57

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ

"और वह लोग जो ईमान लाये और उन्होंने नेक अमल किये"

यहाँ भी वही फ़ौरी तक़ाबुल (simultaneous contrast) है कि अहले जहन्नम के तज़किरे के फ़ौरन बाद अहले जन्नत का तज़किरा है।

سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ

"अनक़रीब उन्हें हम दाख़िल करेंगे उन बाग़ात में जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी"

خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ أَبَدًا ۭ

"वह रहेंगे उनमें हमेशा-हमेशा।"

لَهُمْ فِيْهَآ أَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ ۡ

"उनके लिये उसमें होंगी बड़ी पाक-बाज़ बीवियाँ"

وَّنُدْخِلُهُمْ ظِلًّا ظَلِيْلًا ﴿٥٧﴾

"और हम उन्हें दाख़िल करेंगे घनी छावों में।"

उन्हें ऐसी गहरी और ठंडी छाँव में रखा जायेगा जो धूप की हदत (warming) और तमाज़त (शदीद गर्मी) से बिल्कुल महफ़ूज़ होगी।

यहाँ वह हिस्सा ख़त्म हुआ जिसमें अहले किताब की तरफ़ रुए सुख़न था। अब फिर मुसलमानों से ख़िताब है।

आयात 58 से 70 तक

إِنَّ اللّٰهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تُؤَدُّوا الْأَمٰنٰتِ إِلٰٓى أَهْلِهَا ۙ وَإِذَا حَكَمْتُمْ بَيْنَ النَّاسِ أَنْ تَحْكُمُوْا بِالْعَدْلِ ۭ إِنَّ اللّٰهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهٖ ۭ
إِنَّ اللّٰهَ كَانَ سَمِيْعًا بَصِيْرًا ﴿٥٨﴾ يٰٓأَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا أَطِيْعُوا اللّٰهَ وَأَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَأُولِي الْأَمْرِ مِنْكُمْ ۚ فَإِنْ تَنَازَعْتُمْ
فِيْ شَيْءٍ فَرُدُّوْهُ إِلَى اللّٰهِ وَالرَّسُوْلِ إِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ ذٰلِكَ خَيْرٌ وَّأَحْسَنُ تَأْوِيْلًا ﴿٥٩﴾ أَلَمْ تَرَ إِلَى
الَّذِيْنَ يَزْعُمُوْنَ أَنَّهُمْ اٰمَنُوْا بِمَآ أُنْزِلَ إِلَيْكَ وَمَآ أُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ يُرِيْدُوْنَ أَنْ يَّتَحَاكَمُوْٓا إِلَى الطَّاغُوْتِ وَقَدْ أُمِرُوْٓا
أَنْ يَّكْفُرُوْا بِهٖ ۭ وَيُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ أَنْ يُّضِلَّهُمْ ضَلٰلًۢا بَعِيْدًا ﴿٦٠﴾ وَإِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا إِلٰى مَآ أَنْزَلَ اللّٰهُ وَإِلَى الرَّسُوْلِ
رَأَيْتَ الْمُنٰفِقِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْكَ صُدُوْدًا ﴿٦١﴾ فَكَيْفَ إِذَآ أَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌۢ بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيْهِمْ ثُمَّ جَاۗءُوْكَ يَحْلِفُوْنَ
بِاللّٰهِ إِنْ أَرَدْنَآ إِلَّآ إِحْسَانًا وَّتَوْفِيْقًا ﴿٦٢﴾ أُولٰۗئِكَ الَّذِيْنَ يَعْلَمُ اللّٰهُ مَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۤ فَأَعْرِضْ عَنْهُمْ وَعِظْهُمْ وَقُلْ لَّهُمْ
فِيْٓ أَنْفُسِهِمْ قَوْلًۢا بَلِيْغًا ﴿٦٣﴾ وَمَآ أَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ إِلَّا لِيُطَاعَ بِإِذْنِ اللّٰهِ ۭ وَلَوْ أَنَّهُمْ إِذْ ظَّلَمُوْٓا أَنْفُسَهُمْ جَاۗءُوْكَ
فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُوْلُ لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ﴿٦٤﴾ فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ حَتّٰى يُحَكِّمُوْكَ فِيْمَا
شَجَرَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ لَا يَجِدُوْا فِيْٓ أَنْفُسِهِمْ حَرَجًا مِّمَّا قَضَيْتَ وَيُسَلِّمُوْا تَسْلِيْمًا ﴿٦٥﴾ وَلَوْ أَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ أَنِ اقْتُلُوْٓا
أَنْفُسَكُمْ أَوِ اخْرُجُوْا مِنْ دِيَارِكُمْ مَّا فَعَلُوْهُ إِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ ۭ وَلَوْ أَنَّهُمْ فَعَلُوْا مَا يُوْعَظُوْنَ بِهٖ لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَأَشَدَّ
تَثْبِيْتًا ﴿٦٦﴾ وَّإِذًا لَّاٰتَيْنٰهُمْ مِّنْ لَّدُنَّآ أَجْرًا عَظِيْمًا ﴿٦٧﴾ وَّلَهَدَيْنٰهُمْ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ﴿٦٨﴾ وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ
فَأُولٰۗئِكَ مَعَ الَّذِيْنَ أَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِّنَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَاۗءِ وَالصّٰلِحِيْنَ ۚ وَحَسُنَ أُولٰۗئِكَ رَفِيْقًا ﴿٦٩﴾
ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَلِيْمًا ﴿٧٠﴾

यह दो आयात (58, 59) क़ुरान मजीद की निहायत अहम आयात हैं, जिनमें इस्लाम का सारा सियासी, क़ानूनी और दस्तूरी निज़ाम मौजूद है। फ़रमाया:

आयत 58

إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تُؤَدُّوا الْأَمَانَاتِ إِلَىٰ أَهْلِهَا

"अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अमानतें अहले अमानत के सुपुर्द करो"

أَهْلِهَا وَإِذَا حَكَمْتُمْ بَيْنَ النَّاسِ أَنْ تَحْكُمُوا بِالْعَدْلِ

"और जब लोगों के दरमियान फ़ैसला करो तो अदल के साथ फ़ैसला करो।"

पहली बात तो यह है कि आप जो भी सियासी निज़ाम बनाते हैं उसमें मनासिब (पद) होते हैं, जिनकी ज़िम्मेदारियाँ भी होती हैं और इख़्तियारात भी। लिहाज़ा इन मनासिब के इन्तख़ाब में आपकी राय की हैसियत अमानत की है। आप अपनी राय देख-भाल कर दें कि कौन इसका अहल है। अगर आपने ज़ात बिरादरी, रिश्तेदारी वग़ैरह की बिना पर या मफ़ादात के लालच में या किसी की धौंस की वजह से किसी के हक़ में राय दी तो यह सरीह ख़यानत है। हक़ राय वही एक अमानत है और उस अमानत का इस्तेमाल सही-सही होना चाहिये। आम मायने में भी अमानत की हिफ़ाज़त ज़रूरी है और जो भी अमानत किसी ने रखवाई है उसे वापस लौटाना आपकी शरई ज़िम्मेदारी है। लेकिन यहाँ यह बात इज्तमाई ज़िन्दगी के अहम उसूलों की हैसियत से आ रही है। दूसरी बात यह है कि जब लोगों के दरमियान फ़ैसला करो तो अदल के साथ फ़ैसला करो। गोया पहली हिदायत सियासी निज़ाम से मुताल्लिक़ है कि अमीरुल मोमिनीन या सरबराहे रियासत का इन्तख़ाब अहलियत (क्षमता) की बुनियाद पर होगा, जबकि दूसरी हिदायत अदलिया (Judiciary) के इस्तहकाम के बारे में है कि वहाँ बिला इम्तियाज़ हर एक को अदल व इंसाफ़ मयस्सर आये।

إِنَّ اللَّهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهِ

"यक़ीनन यह बहुत ही अच्छी नसीहतें हैं जो अल्लाह तुम्हें कर रहा है।"

إِنَّ اللَّهَ كَانَ سَمِيعًا بَصِيرًا ﴿٥٨﴾

"यक़ीनन अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला देखने वाला है।"

अगली आयत में तीसरी हिदायत मुक़न्नाह (Legislature) के बारे में आ रही है कि इस्लामी रियासत की दस्तूरी बुनियाद क्या होगी। जदीद रियासत के तीन सुतून इन्तज़ामिया (Executive), अदलिया (Judiciary), और मुक़न्नाह (Legislature) गिने जाते हैं। पहली आयत में इन्तज़ामिया और अदलिया के ज़िक्र के बाद अब दूसरी आयत में मुक़न्नाह का ज़िक्र है कि क़ानून साजी के उसूल क्या होंगे। फ़रमाया:

आयत 59

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَطِيعُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا الرَّسُولَ

"ऐ अहल ईमान! इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल की"

यानि कोई क़ानून अल्लाह और उसके रसूल की मन्शा के ख़िलाफ़ नहीं बनाया जा सकता। उसूली तौर पर यह बात पाकिस्तान के दस्तूर में भी तस्लीम की गई है।

"No Legislation will be done repugnant to the Quran and the Sunnah."

लेकिन इसकी तन्फ़ीज़ व तामील की कोई ज़मानत मौजूद नहीं है, लिहाज़ा इस वक़्त हमारा दस्तूर मुनाफ़क़त का पुलंदा है। इस आयत की रू से अल्लाह के अहकाम और अल्लाह के रसूल ﷺ के अहकाम क़ानून साज़ी के दो मुस्तक़िल ज़राय (sources) हैं। इस तरह यहाँ मुन्करीने सुन्नत की नफ़ी होती है जो मुअख़र अल ज़िक्र का इंकार करते हैं। इसके साथ ही फ़रमाया:

وَأُولِي الْأَمْرِ مِنْكُمْ

"और अपने में से ऊलुल अम्र की भी (इताअत करो)"

यहाँ बहुत अजीब अस्लूब है कि तीन हस्तियों की इताअत का हुक्म दिया गया है: अल्लाह की, रसूल की और ऊलुल अम्र की, लेकिन पहले दो के लिये "أَطِيعُوا" का लफ़्ज़ आया है, जबकि तीसरे के लिये नहीं है। एक अस्लूब यह भी हो सकता था कि "أَطِيعُوا" एक मर्तबा आ जाता और इसका इतलाक़ तीनों पर हो जाता: "يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَطِيعُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا الرَّسُولَ

"وَاُولِی الْاَمْرِ مِنْکُمْ" इस तरह तीनों बराबर हो जाते। दूसरा अस्लूब यह हो सकता था कि "اَطِیْعُوا" तीसरी मर्तबा भी आता: "یٰٓاَیُّھَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِیْعُوا اللّٰہَ وَاَطِیْعُوا الرَّسُوْلَ وَاَطِیْعُوا اُولِی الْاَمْرِ مِنْکُمْ"। लेकिन क़ुरान ने जो अस्लूब इख़्तियार किया है कि "اَطِیْعُوا" दो के साथ है, तीसरे के साथ नहीं है, इससे ऊलुल अम्र की इताअत का मरतबा (status) मत्ईन (निर्धारित) हो जाता है। एक तो "مِنْکُمْ" की शर्त से वाज़ेह हो गया कि ऊलुल अम्र तुम ही में से होने चाहिये, यानि मुसलमान हों। ग़ैर मुस्लिम की हुकूमत को ज़हनन तस्लीम करना अल्लाह से बग़ावत है। वह कम से कम मुसलमान तो हों। फिर यह कि मुत्ज़क्किर बाला अस्लूब से वाज़ेह हो गया कि उनकी इताअत मुत्लक़, दायम और ग़ैर मशरूत नहीं। अल्लाह और रसूल ﷺ की इताअत मुत्लक़, दायम, ग़ैर मशरूत और ग़ैर महदूद है, लेकिन साहिबे अम्र की इताअत अल्लाह और उसके रसूल की इताअत के ताबेअ होगी। वह जो हुक्म भी लाये उसे बताना होगा कि मैं किताब व सुन्नत से कैसे इसका इसतन्बात (अनुमान) कर रहा हूँ। गोया उसे कम से कम यह साबित करना होगा कि यह हुक्म किताब व सुन्नत के ख़िलाफ़ नहीं है। एक मुसलमान रियासत में क़ानून साज़ी इसी बुनियाद पर हो सकती है। दौरे जदीद में क़ानून साज़ इदारा कोई भी हो, कांग्रेस हो, पार्लियामेंट हो या मजलिस मिल्ली हो, वह क़ानून साज़ी करेगी, लेकिन एक शर्त के साथ कि यह क़ानून साज़ी क़ुरान व सुन्नत से मुतसादिम (विरोध) ना हो।

فَاِنْ تَنَازَعْتُمْ فِیْ شَیْءٍ

"फिर अग़र तुम्हारे दरमियान किसी मामले में इख़्तलाफ़े राय हो जाये"

ऐसी सूरत पैदा हो जाये कि उलुल अम्र कहे कि मैं तो इसे ऐन इस्लाम के मुताबिक़ समझता हूँ, लेकिन आप कहें कि नहीं, यह बात ख़िलाफ़े इस्लाम है, तो अब कहाँ जायें? फ़रमाया:

فَرُدُّوْہُ اِلَی اللّٰہِ وَالرَّسُوْلِ

"तो उसे लौटा दो अल्लाह और रसूल की तरफ़"

यानि अब जो भी अपनी बात साबित करना चाहता है उसे अल्लाह और उसके रसूल से यानि क़ुरान व सुन्नत से दलील लानी पड़ेगी। मेरी पसंद, मेरा ख़्याल, मेरा नज़रिया वाला इस्तदलाल क़ाबिले क़ुबूल नहीं होगा। इस्तदलाल की बुनियाद अल्लाह और उसके रसूल की मर्ज़ी होगी। यह बात माननी पड़ेगी कि अभी यहाँ एक ख़ला है। वह ख़ला यह है कि यह फ़ैसला कौन करेगा कि फ़रीक़ैन में से किसकी राय सही है। और आज के रियासती निज़ाम में आकर वह ख़ला पुर हो चुका है कि यह अदलिया (Judiciary) का काम है। रसूल अल्लाह ﷺ के ज़माने में जब अरब में इस्लामी रियासत क़ायम हुई तो इस तरह अलैहदा-अलैहदा रियासती इदारे अभी पूरी तरह वुजूद में नहीं आये थे और इनकी अलग-अलग शिनाख्त नहीं थी कि यह मुक़न्नाह (Legislature) है, यह अदलिया (Judiciary) है और यह इन्तज़ामिया (Executive) है। हज़रत अबु बकर रज़ि० के ज़माने में तो कोई क़ाज़ी थे ही नहीं। सबसे पहले हज़रत उमर रज़ि० ने शोबा-ए-क़ज़ा शुरू किया। तो रफ़्ता-रफ़्ता यह रियासती इदारे परवान चढ़े। जदीद दौर में इन तनाज़आत के हल का इदारा अदलिया है। वहाँ हर शख़्स जाये और अपनी दलील पेश करे। उल्मा जायें, क़ानूनदान जायें और सब जाकर दलीलें दें। वहाँ से फ़ैसला हो जायेगा कि यह बात वाक़िअतन क़ुरान व सुन्नत से मुतसादिम है या नहीं।

اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰہِ وَالْیَوْمِ الْاٰخِرِ

"अग़र तुम वाक़िअतन अल्लाह पर और यौमे आख़िर पर ईमान रखते हो।"

ذٰلِكَ خَیْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِیْلًا ﴿٥٩﴾

"यही तरीक़ा बेहतर भी है और नताइज के ऐतबार से भी बहुत मुफ़ीद है।"

आगे फिर मुनाफ़िक़ीन का तज़किरा शुरू हो रहा है। याद रहे कि मैंने आग़ाज़ में अर्ज़ किया था कि इस सूरह मुबारका का सबसे बड़ा हिस्सा मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब और उनके तज़किरे पर मुश्तमिल है।

आयत 60

اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ يَزۡعُمُوۡنَ اَنَّهُمۡ اٰمَنُوۡا بِمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡكَ وَمَاۤ اُنۡزِلَ مِنۡ قَبۡلِكَ

"क्या तुमने ग़ौर नहीं किया उन लोगों की तरफ़ जिनका दावा तो यह है कि वह ईमान ले आये हैं उस पर भी जो (ऐ नबी ﷺ!) आप ﷺ पर नाज़िल किया गया और उस पर भी जो आपसे पहले नाज़िल किया गया"

लेकिन उनका तर्ज़े अमल यह है कि:

يُرِيۡدُوۡنَ اَنۡ يَّتَحَاكَمُوۡۤا اِلَى الطَّاغُوۡتِ

"वह चाहते हैं कि अपने मुक़दमात के फ़ैसले तागूत से करवाएँ"

यहाँ वाज़ेह तौर पर "तागूत" से मुराद वह हाकिम या वह इदारे हैं जो अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के अहकाम के मुताबिक़ फ़ैसला नहीं करता। पिछली आयत में अल्लाह और उसके रसूल की इताअत का हुक्म दिया गया था। गोया जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत पर कारबंद हो गया वह तागूत से ख़ारिज हो गया और जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत को क़ुबूल नहीं करता वह तागूत है, इसलिये कि वह अपनी हद से तजावुज़ कर गया। चुनाँचे ग़ैर मुस्लिम हाकिम या मुन्सिफ़ जो अल्लाह और उसके रसूल के अहकाम का पाबंद नहीं वह तागूत है।

وَقَدۡ اُمِرُوۡۤا اَنۡ يَّكۡفُرُوۡا بِهٖ

"हालाँकि उन्हें हुक्म दिया गया है कि तागूत का कुफ़्र करें।"

मुनाफ़िक़ीने मदीना की आम रविश यह थी जिस मुक़दमे में उन्हें अंदेशा होता कि फ़ैसला उनके ख़िलाफ़ होगा उसे नबी अकरम ﷺ की ख़िदमत में लाने के बजाय यहूदी आलिमों के पास ले जाते। वह जानते थे कि हुज़ूर ﷺ के पास जायेंगे तो हक़ और इंसाफ़ की बात होगी। एक यहूदी और एक मुसलमान जो मुनाफ़िक़ था, उनका आपस में झगड़ा हो गया। यहूदी कहने लगा कि चलो मुहम्मद (ﷺ) के पास चलते हैं। इसलिये कि उसे यक़ीन था कि मैं हक़ पर हूँ। लेकिन वह मुनाफ़िक़ कहने लगा कि काअब बिन अशरफ़ के पास चलते हैं जो एक यहूदी आलिम था। बहरहाल वह यहूदी उस मुनाफ़िक़ को रसूल ﷺ के पास ले आया। आप ﷺ ने दोनों की दलीलें सुनने के बाद फ़ैसला यहूदी के हक़ में कर दिया। वहाँ से बाहर निकले तो मुनाफ़िक़ ने कहा कि चलो अब हज़रत उमर रज़ि० के पास चलते हैं, वह जो फ़ैसला कर दें वह मुझे मंज़ूर होगा। वह दोनों हज़रत उमर रज़ि० के पास आये। मुनाफ़िक़ को यह उम्मीद थी कि हज़रत उमर रज़ि० मेरा ज़्यादा लिहाज़ करेंगे, क्योंकि मैं मुसलमान हूँ। जब यहूदी ने यह बताया कि इस मुक़दमें का फ़ैसला रसूल अल्लाह ﷺ मेरे हक़ में कर चुके हैं तो हज़रत उमर रज़ि० ने आव देखा ना ताव, तलवार ली और उस मुनाफ़िक़ की गर्दन उड़ा दी कि जो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के फ़ैसले पर राज़ी नहीं है और उसके बाद मुझसे फ़ैसला करवाना चाहता है उसके हक़ में मेरा यह फ़ैसला है! इस पर उस मुनाफ़िक़ के खानदान वालों ने बड़ा बवाल मचाया वह चीखते-चिल्लाते हुए रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए और हज़रत उमर रज़ि० पर क़त्ल का दावा किया। उनका कहना था कि मक़तूल हज़रत उमर रज़ि० के पास यहूदी को लेकर इस वजह से गया था कि वह इस मामले में बाहम मसालिहत करा दें, उसके पेशे नज़र रसूल अल्लाह ﷺ के फ़ैसले से इंकार नहीं था। इस पर यह आयात नाज़िल हुईं जिनमें असल हक़ीक़त ज़ाहिर फ़रमा दी गई।

وَيُرِيۡدُ الشَّيۡطٰنُ اَنۡ يُّضِلَّهُمۡ ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا ۞

"और शैतान चाहता है कि उन्हें बहुत दूर की गुमराही में डाल दे।"

आयत 61

وَاِذَا قِيۡلَ لَهُمۡ تَعَالَوۡا اِلٰى مَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوۡلِ

"और जब उनसे कहा जाता है कि आओ उस चीज़ की तरफ़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाई है और आओ रसूल की तरफ़"

अपने मुक़दमात के फ़ैसले अल्लाह के रसूल ﷺ ले कराओ।

رَاَيْتَ الْمُنٰفِقِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْكَ صُدُوْدًا ۝٦١

"तो (ऐ नबी ﷺ!) आप देखते हैं कि यह मुनाफ़िक़ आपके पास आने से कन्नी कतराते हैं।"

يَصُدُّ صَدَّ के बारे में मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि यह रुकने के मायने में भी आता है और रोकने के भी मायने में भी।

आयत 62

فَكَيْفَ اِذَآ اَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌۢ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ

"फिर उस वक़्त क्या हुआ जब उन पर कोई मुसीबत आ गयी उनके अपने हाथों के करतूतों की वजह से"

वह चीखते-चिल्लाते आये कि उमर ने हमारा आदमी मार डाला, हमें उसका क़िसास दिलाया जाये।

ثُمَّ جَاۗءُوْكَ يَحْلِفُوْنَ ڰ بِاللّٰهِ

"फिर वह आपके पास आये अल्लाह की क़समें खाते हुए"

اِنْ اَرَدْنَآ اِلَّآ اِحْسَانًا وَّتَوْفِيْقًا ۝٦٢

"कि हम तो सिर्फ़ भलाई और मुवाफ़क़त (अनुकूलन) चाहते थे।"

हम तो उमर रज़ि० के पास महज़ इसलिये गये थे कि कोई मसालिहत और राज़ीनामा हो जाये।

आयत 63

اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ يَعْلَمُ اللّٰهُ مَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۤ

"यह वह लोग हैं कि जो कुछ इनके दिलों में है अल्लाह उसे जानता है।"

فَاَعْرِضْ عَنْھُمْ

"तो (ऐ नबी ﷺ!) आप इनसे चश्मपोशी कीजिये"

وَعِظْھُمْ

"और इनको ज़रा नसीहत कीजिये"

وَقُلْ لَّھُمْ فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ قَوْلًۢا بَلِيْغًا ۝٦٣

"और इनसे ख़ुद इनके बारे में ऐसी बात कहिये जो उनके दिलों में उतर जाये।"

यह आयात नाज़िल होने के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत उमर रज़ि० को बरी क़रार दिया कि अल्लाह की तरफ़ से उनकी बराअत आ गई है, और उसी दिन से उनका लक़ब "फ़ारूक़" क़रार पाया, यानि हक़ और बातिल में फ़र्क़ कर देने वाला।

अब एक बात नोट कर लीजिये कि इस सूरह मुबारका में मुनाफ़क़त जो ज़ेरे बहस आई है वह तीन उन्वानात के तहत है। मुनाफ़िक़ों पर तीन चीजें बहुत भारी थीं, जिनमें से अव्वलीन रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत थी। और यह बड़ी नफ़्सियाती बात है। एक इंसान के लिये दूसरे इंसान की इताअत बड़ा मुश्किल काम है। हम जो रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत करते हैं तो रसूल अल्लाह ﷺ हमारे लिये एक इदारे (institution) की हैसियत रखते हैं, रसूल ﷺ शख़्सन हमारे सामने मौजूद नहीं है। जबकि उनके सामने रसूल अल्लाह ﷺ शख़्सन मौजूद थे। वह देखते थे कि उनके भी दो हाथ हैं, दो पाँव हैं, दो आँखें हैं, लिहाज़ा बज़ाहिर अपने जैसे एक इंसान की इताअत उन पर बहुत शाक़ थी। जैसा कि जमातों में होता है कि अमीर की इताअत बहुत शाक़ गुज़रती है, यह बड़ा मुश्किल काम है। अमीर की राय पर चलने के लिये अपनी राय को पीछे डालना पड़ता है। जो सादिक़ुल ईमान मुसलमान थे उन्हें तो यह यक़ीन था कि यह मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह जिन्हें हम देख रहे हैं, हक़ीक़त में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ हैं और हम उनकी इसी हैसियत में उन पर ईमान लाये हैं। लेकिन जिनके दिलों में यह यक़ीन नहीं था या कमज़ोर था उनके लिये हुज़ूर ﷺ की शख़्सी इताअत बड़ी भारी और बड़ी कठिन थी। यही वजह है कि बाज़ मौक़े पर वह कहते थे कि यह जो कुछ कह रहे हैं अपने पास से कह रहे हैं। क्यों

नहीं कोई सूरत नाज़िल हो जाती? क्यों नहीं कोई आयत नाज़िल हो जाती? और सूरह मुहम्मद ﷺ इसी अंदाज़ में नाज़िल हो हुई है। वह यह कहते थे कि मुहम्मद ﷺ ने ख़ुद अपनी तरफ़ से इक़दाम कर दिया है। इस पर अल्लाह ने कहा कि लो फिर हम क़िताल की आयत नाज़िल कर देते हैं। दूसरी चीज़ जो उन पर कठिन थी वह है क़िताल, यानि अल्लाह की राह में जंग के लिये निकलना। उनका हाल यह था कि *"मरहले सख़्त हैं और जान अज़ीज़!"* तीसरी कठिन चीज़ हिजरत थी। इसका इतलाक़ मुनाफ़िक़ीने मदीना पर नहीं होता था बल्कि मक्का और इर्द-गिर्द के जो मुनाफ़िक़ थे उन पर होता था। उनका ज़िक्र भी आगे आयेगा। ज़ाहिर है घर-बार और ख़ानदान वालों को छोड़ कर निकल जाना कोई आसान काम नहीं है। अब सबसे पहले इताअते रसूल ﷺ की अहमियत बयान की जा रही है:

आयत 64

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذْنِ اللّٰهِ ۭ

"हमने नहीं भेजा किसी रसूल को मगर इसलिये कि उसकी इताअत की जाये अल्लाह के हुक्म से।"

وَلَوْ اَنَّھُمْ اِذْ ظَّلَمُوْٓا اَنْفُسَھُمْ جَاۗءُوْكَ

"और अगर वह, जबकि उन्होंने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया था, आपकी ख़िदमत में हाज़िर हो जाते"

فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ وَاسْتَغْفَرَ لَھُمُ الرَّسُوْلُ

"और अल्लाह से इस्तग़फ़ार करते और रसूल भी उनके लिये इस्तग़फ़ार करते"

لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِـيْمًا ﴿٦٤﴾

"तो वह यक़ीनन अल्लाह को बड़ा तौबा क़ुबूल फ़रमाने वाला और रहम करने वाला पाते।"

आयत 65

فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ حَتّٰي يُحَكِّمُوْكَ فِيْمَا شَجَــرَ بَيْنَھُمْ

"पस नहीं, आपके रब की क़सम! यह हरग़िज़ मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि यह आपको हकम (chief) ना मानें उन तमाम मामलात में जो उनके माबैन पैदा हो जायें"

इसमें उन्हें कोई इख़्तियार (choice) हासिल नहीं है। उनके माबैन जो भी नज़ाआत (विवाद) और इख़्तलाफ़ात हों उनमें अगर यह आपको हकम नहीं मानते तो आपके रब की क़सम यह मोमिन नहीं हैं। कलामे इलाही का दो टूक और पुरजलाल अंदाज़ मुलाहिज़ा कीजिये।

ثُمَّ لَا يَجِدُوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ حَرَجًا مِّمَّا قَضَيْتَ

"फिर जो कुछ आप फ़ैसला कर दें उस पर अपने दिलों में भी कोई तंगी महसूस ना करें"

अगर आप ﷺ का फ़ैसला क़ुबूल भी कर लिया, लेकिन दिल की तंगी और कदूरत के साथ किया तब भी यह मोमिन नहीं हैं।

وَيُسَلِّمُوْا تَسْلِــيْمًا ﴿٦٥﴾

"और सरे तस्लीम ख़म करें, जैसे कि सरे तस्लीम ख़म करने का हक़ है।"

वाज़ेह रहे कि यह हुक्म सिर्फ़ रसूल अल्लाह ﷺ की ज़िन्दगी तक महदूद नहीं था, बल्कि यह क़यामत तक के लिये है।

आयत 66

وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ

"और अगर हमने उन पर यह फ़र्ज़ कर दिया होता कि क़त्ल करो अपने आपको"

اَوِ اخْرُجُوْا مِنْ دِيَارِكُمْ

"या निकलो अपने घरों से"

مَّا فَعَلُوْهُ اِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ

"तो यह इसकी तामील ना करते सिवाय इनमें से चंद एक के।"

وَلَوْ اَنَّهُمْ فَعَلُوْا مَا يُوْعَظُوْنَ بِهٖ

"और अगर यह लोग वह करते जिसकी इनको नसीहत की जा रही है"

इसका तर्जुमा इस तरह भी किया गया है: "और अगर यह लोग वह करते जिसकी इन्हें हिदायत की जाती" यानि अपने आपको क़त्ल करना और अपने घरों से निकल खड़े होना।

لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيْتًا ۝٦٦

"तो यही इनके लिये बेहतर होता और इन्हें दीन पर साबित क़दम रखने वाला होता।"

आयत 67

وَّاِذًا لَّاٰتَيْنٰهُمْ مِّنْ لَّدُنَّآ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝٦٧

"और इस सूरत में हम इन्हें अपने पास से बहुत बड़ा अजर देते।"

आयत 68

وَّلَهَدَيْنٰهُمْ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ۝٦٨

"और इन्हें हिदायत फ़रमा देते सीधी राह की तरफ़।"

अक्सर मुफ़स्सरीन ने इस आयत के अल्फ़ाज़ को इनके ज़ाहिरी मायने पर महमूल किया (समझा) है। यानि अगर अल्लाह तआला हुक्म दे कि अपने आपको क़त्ल करो, ख़ुदकुशी करो, तो हमें यह करना होगा। अगर अल्लाह तआला हुक्म दे कि अपने घरों से निकल जाओ तो निकलना होगा। अल्लाह तआला हमारा ख़ालिक़ व मालिक है। उसकी तरफ़ से दिया गया हर हुक्म वाजिबुल तामील है। अलबत्ता {اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ} के अल्फ़ाज़ में एक मज़ीद इशारा भी मालूम होता है। सूरतुल बक़रह (आयत:54) में हम तारीख़ बनी इस्राईल के हवाले से पढ़ आये हैं कि बनी इस्राईल में से जिन लोगों ने बछड़े की परस्तिश की थी उनको मुर्तद होने की जो सज़ा दी गई थी उसके लिये यही अल्फ़ाज़ आये थे: {فَاقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ} "पस क़त्ल करो अपने आपको।" इससे मुराद यह है कि तुम अपने-अपने क़बीले के उन लोगों को क़त्ल करो जिन्होंने कुफ़्र व शिर्क का इरतकाब किया है। मुनाफ़िक़ीन का मामला यह था कि उनकी हिमायत में अक्सरो बेशतर उनके ख़ानदान वाले, रिश्तेदार, उनके घराने वाले उनके साथ शामिल हो जाते थे। तो यहाँ शायद यह बताया जा रहा है कि बजाय इसके कि तुम उनकी हिमायत करो, तुम्हारा तर्ज़े अमल इसके बिल्कुल बरअक्स होना चाहिये, कि तुम अपने अंदर से ख़ुद देखो कि कौन मुनाफ़िक़ हैं जो असल में आस्तीन के साँप हैं। अगरचे अल्लाह तआला ने तुम्हें यह हुक्म नहीं दिया, मगर वह यह हुक्म भी दे सकता था कि हर घराना अपने यहाँ के मुनाफ़िक़ीन को ख़ुद क़त्ल करे। यह तो हज़रत उमर रज़ि० ने अपनी ग़ैरते ईमानी की वजह से उस मुनाफ़िक़ को क़त्ल किया था, जबकि उस मुनाफ़िक़ के ख़ानदान के लोग हज़रत उमर रज़ि० पर क़त्ल का दावा कर रहे थे। अगर अल्लाह तआला यह हुक्म देता तो यह भी तुम्हें करना चाहिये था, लेकिन यह अल्लाह के इल्म में है कि तुममें से बहुत कम लोग होते जो इस हुक्म की तामील करते। और अगर वह यह कर गुज़रते तो यह उनके हक़ में बेहतर होता है और उनके सबाते क़ल्बी (स्थिर दिल) और सबाते ईमानी (स्थिर ईमान) का बाइस होता। इस सूरत में अल्लाह तआला उन्हें ख़ास अपने पास से अजरे अज़ीम अता फ़रमाता और उन्हें सिराते मुस्तक़ीम की हिदायत अता फ़रमाता।

अब जो आयत आ रही है यह इताअते रसूल ﷺ के मौज़ू पर क़ुरान हकीम की अज़ीम तरीन आयत है। फ़रमाया:

आयत 69

وَمَنۡ يُّطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوۡلَ فَاُولٰۤٮِٕكَ مَعَ الَّذِيۡنَ اَنۡعَمَ اللّٰهُ عَلَيۡهِمۡ

"और जो कोई इताअत करेगा अल्लाह की और रसूल ﷺ की तो यह वह लोग होंगे जिन्हें मईयत (साथ) हासिल होगी उनकी जिन पर अल्लाह का ईनाम हुआ"

مِّنَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيۡقِيۡنَ وَالشُّهَدَآءِ وَالصّٰلِحِيۡنَ‌ۚ

"यानि अम्बिया किराम, सिद्दीक़ीन, शोहदा और सालेहीन।"

وَحَسُنَ اُولٰۤٮِٕكَ رَفِيۡقًا ؕ‏ ۶۹

"और क्या ही अच्छे हैं यह लोग रफ़ाक़त के लिये।"

यानि अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की इताअत करने वालों का शुमार उन लोगों के ज़ुमरे में होगा जिन पर अल्लाह ने ईनाम फ़रमाया है। सूरह फ़ातिहा में हमने यह अल्फ़ाज़ पढ़े थे: {اِهۡدِنَا الصِّرَاطَ الۡمُسۡتَقِيۡمَ} {صِرَاطَ الَّذِيۡنَ اَنۡعَمۡتَ عَلَيۡهِمۡ} आयत ज़ेरे मुताअला "اَنۡعَمۡتَ عَلَيۡهِمۡ" की तफ़सीर है। इन मरातिब को ज़रा समझ लीजिये। सालेह मुसलमान गोया baseline पर है। वह एक नेक नीयत मुसलमान है जिसके दिल में ख़ुलूस के साथ ईमान है। वह अल्लाह और रसूल ﷺ के अहकाम पर अमल कर रहा है, मुहर्रमात से बचा हुआ है। वह इससे ऊपर उठेगा तो एक ऊँचा दर्जा शोहदा का है, इससे बुलंदतर दर्जा सिद्दीक़ीन का है और बुलंद तरीन दर्जा अम्बिया का है। इस बुलंद तरीन दर्जे पर तो कोई नहीं पहुँच सकता, इसलिये की वह कोई कस्बी चीज़ नहीं है, वह तो एक वहबी चीज़ थी, जिसका दरवाज़ा भी बंद हो चुका है। अलबत्ता मर्तबा सालेहात से बुलंदतर दर्जे अभी मौजूद हैं कि इंसान अपनी हिम्मत, मेहनत और कोशिश से शहादत और सिद्दीक़ियत के मरातिब पर फ़ाइज़ हो सकता है। यह मज़मून इन्शा अल्लाह सूरतुल हदीद में पूरी वज़ाहत के साथ बयान होगा।

आयत 70

ذٰلِكَ الۡفَضۡلُ مِنَ اللّٰهِ‌ؕ

"यह फ़ज़्ल है अल्लाह की तरफ़ से"

यह अल्लाह तआला का बड़ा फ़ज़्ल है उन पर कि जिन्हें आख़िरत में अम्बिया किराम, सिद्दीक़ीन अज़ाम, शोहदा और सालेहीन की मईयत हासिल हो जाये। इसके लिये दुआ करनी चाहिये: وَتَوَفَّنَا مَعَ الۡاَبۡرَارِ ऐ अल्लाह हमें मौत दीजियो अपने वफ़ादार नेकोकार बंदों के साथ!

وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَلِيۡمًا ۷۰

"और अल्लाह काफ़ी है हर शय के जानने के लिये।"

यानि कौन किस इस्तअदाद (क्षमता) का हामिल है और किस क़दर व मन्ज़िलत का मुस्तहिक़ है, अल्लाह ख़ूब जानता है। हक़ीक़त जानने के लिये बस अल्लाह ही का इल्म काफ़ी है।

आयात 71 से 76 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا خُذُوۡا حِذۡرَكُمۡ فَانۡفِرُوۡا ثُبَاتٍ اَوِ انۡفِرُوۡا جَمِيۡعًا‏ ۷۱ وَاِنَّ مِنۡكُمۡ لَمَنۡ لَّيُبَطِّئَنَّ‌ ۚ فَاِنۡ اَصَابَتۡكُمۡ
مُّصِيۡبَةٌ قَالَ قَدۡ اَنۡعَمَ اللّٰهُ عَلَىَّ اِذۡ لَمۡ اَكُنۡ مَّعَهُمۡ شَهِيۡدًا‏ ۷۲ وَلَٮِٕنۡ اَصَابَكُمۡ فَضۡلٌ مِّنَ اللّٰهِ لَيَقُوۡلَنَّ كَاَنۡ لَّمۡ تَكُنۡۢ
بَيۡنَكُمۡ وَبَيۡنَهٗ مَوَدَّةٌ يّٰلَيۡتَنِىۡ كُنۡتُ مَعَهُمۡ فَاَفُوۡزَ فَوۡزًا عَظِيۡمًا‏ ۷۳ فَلۡيُقَاتِلۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ الَّذِيۡنَ يَشۡرُوۡنَ الۡحَيٰوةَ
الدُّنۡيَا بِالۡاٰخِرَةِ‌ ؕ وَمَنۡ يُّقَاتِلۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ فَيُقۡتَلۡ اَوۡ يَغۡلِبۡ فَسَوۡفَ نُـؤۡتِيۡهِ اَجۡرًا عَظِيۡمًا‏ ۷۴ وَمَا لَـكُمۡ لَا تُقَاتِلُوۡنَ

فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اَخْرِجْنَا مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا ۚ وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا ۚ وَّاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ نَصِيْرًا ﴿٧٥﴾ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ فَقَاتِلُوْٓا اَوْلِيَآءَ الشَّيْطٰنِ ۚ اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا ﴿٧٦﴾

अब ज़िक्र आ रहा है क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह का। यह दूसरी चीज़ थी जो मुनाफ़िक़ीन पर बहुत भारी थी। माद्दी ऐतबार से यह बड़ा सख़्त इम्तिहान था। इताअते रसूल ﷺ ज़्यादातर एक नफ़्सियाती मरहला था, एक नफ़्सियाती उलझन थी, लेकिन अपना माल ख़र्च करना और अपनी जान को ख़तरे में डालना एक ख़ालिस महसूस माद्दी शय थी।

आयत 71

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا خُذُوْا حِذْرَكُمْ

"ऐ अहले ईमान, अपने तहफ़्फ़ुज़ का सामान (और अपने हथियार) संभालो"

فَانْفِرُوْا ثُبَاتٍ اَوِ انْفِرُوْا جَمِيْعًا ﴿٧١﴾

"और (जिहाद) के लिये) निकलो, ख़्वाह टुकड़ियों की सूरत में ख़्वाह फ़ौज की शक्ल में।"

यानि जैसा मौका हो उसके मुताबिक़ अलग-अलग दस्तों की शक्ल में या इकठ्ठे फ़ौज की सूरत में निकलो। रसूल अल्लाह ﷺ मौक़े की मुनास्बत से कभी छोटे-छोटे ग्रुप भेजते थे। जैसे ग़जवा-ए-बद्र से क़ब्ल आप ﷺ ने आठ मुहिमें रवाना फ़रमाईं, जबकि ग़ज़वा-ए-बद्र और ग़ज़वा-ए-ओहद में आप ﷺ पूरी फ़ौज लेकर निकले।

وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَّيُبَطِّئَنَّ ۚ

"और तुममें से कुछ लोग ऐसे हैं जो देर लगा देते हैं"

हुक्म हो गया है कि जिहाद के लिये निकलना है, फ़लाँ वक्त कूच होगा, लेकिन वह तैयारी में ढ़ील बरत रहे हैं और फिर बहाना बना देगें कि बस हम तो तैयारी कर ही रहे थे अब निकलने ही वाले थे। और वह मुन्तज़िर रहते हैं कि जंग का फ़ैसला हो जाये तो उस वक़्त हम कहेंगे कि हम बस निकलने ही वाले थे कि यह फ़ैसला हमको पहुँच गया।

فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ

"फ़िर अगर तुम्हें कोई मुसीबत पेश आ जाये"

अग़र जंग के लिये निकलने वाले मुसलमानों को कोई तकलीफ़ पेश आ जाये, कोई गज़न्द पहुँच जाये, वक़्ती तौर पर कोई हज़ीमत (हार) हो जाये।

قَالَ قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ مَّعَهُمْ شَهِيْدًا ﴿٧٢﴾

"तो वह कहेगा कि मुझ पर तो अल्लाह ने बड़ा ईनाम किया कि मैं उनके साथ शरीक नहीं हुआ।"

आयत 73

وَلَىِٕنْ اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِّنَ اللّٰهِ

"और अग़र तुम्हें कोई फ़ज़ल पहुँच जाये अल्लाह की तरफ़ से"

यानि तुम्हें फ़तह हो जाये और तुम कामरानी के साथ माले ग़नीमत लेकर वापस आओ।

لَيَقُوْلَنَّ كَاَنْ لَّمْ تَكُنْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهٗ مَوَدَّةٌ

"तो उस वक़्त वह फिर (हसरत के साथ) कहेगा, जैसे तुम्हारे और उसके दरमियान मोहब्बत का कोई ताल्लुक़ था ही नहीं"

يٰلَيۡتَنِيۡ كُنۡتُ مَعَهُمۡ فَاَفُوۡزَ فَوۡزًا عَظِيۡمًا ﴿۷۳﴾

ऐ काश कि मैं भी इनके साथ गया होता तो यह बड़ी कामयाबी मुझे भी हासिल हो जाती।"

यह मुनाफ़िक़ीन का किरदार था जिसका यहाँ नक़्शा खींच दिया गया है।

आयत 74

فَلۡيُقَاتِلۡ فِيۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ الَّذِيۡنَ يَشۡرُوۡنَ الۡحَيٰوةَ الدُّنۡيَا بِالۡاٰخِرَةِ ؕ

"पस अल्लाह की राह में क़िताल करना चाहिये उन लोगों को जो दुनिया की ज़िन्दगी को आख़िरत के एवज़ फ़रोख़्त करने के लिये तैयार हैं।"

जो लोग यह तय कर चुके हों कि हमने दुनिया की ज़िन्दगी के बदले में आख़िरत क़ुबूल की, उनके लिये तो क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिये। अगर उन्होंने वाक़ई यह सौदा अल्लाह से किया है तो फिर उन्हें अल्लाह की राह में जंग के लिये निकलना चाहिये।

وَمَنۡ يُّقَاتِلۡ فِيۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ فَيُقۡتَلۡ اَوۡ يَغۡلِبۡ

"और जो कोई भी अल्लाह की राह में क़िताल करेगा, तो ख़्वाह वह मारा जाये या ग़ालिब हो"

अल्लाह की राह में क़िताल करने वाले के लिये दो ही इम्कानात हैं, एक यह कि वह क़त्ल होकर मर्तबा-ए-शहादत पर फ़ाइज़ हो जाये और दूसरे यह कि वह दुश्मन पर ग़ालिब रहे और फ़तहमंद होकर वापस आये।

فَسَوۡفَ نُؤۡتِيۡهِ اَجۡرًا عَظِيۡمًا ﴿۷۴﴾

"हम उसे (दोनों हालतों में) बहुत बड़ा अजर अता फ़रमायेंगे।"

अगली आयत में ख़ासतौर पर उन मुसलमानों की नुसरत व हिमायत के लिये क़िताल के लिये तरग़ीब दिलाई जा रही है जो मुख्तलिफ़ इलाक़ों में फँसे हुए थे। उनमें कमज़ोर भी थे, बीमार और बूढ़े भी थे, ख्वातीन और बच्चे भी थे। यह लोग ईमान तो ले आये थे लेकिन हिजरत के क़ाबिल नहीं थे। यह अपने-अपने इलाक़ों में और अपने-अपने क़बीलों में थे और वहाँ उन पर ज़ुल्म हो रहा था, उन्हें सताया जा रहा था, उन्हें तशद्दुद व ताज़ीब का निशाना बनाया जा रहा था। तो ख़ासतौर से उनकी मदद के लिये निकलना उनकी जान छुड़ाना और उनको बचा कर ले आना, ग़ैरते ईमानी का बहुत ही शदीद तक़ाज़ा है, बल्कि यह ग़ैरते इंसानी का भी तक़ाज़ा है। चुनाँचे फ़रमाया:

आयत 75

وَمَا لَكُمۡ لَا تُقَاتِلُوۡنَ فِيۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ

"और तुम्हें क्या हो गया है कि तुम क़िताल नहीं करते अल्लाह की राह में"

وَالۡمُسۡتَضۡعَفِيۡنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَالۡوِلۡدَانِ

"और उन बेबस मर्दों, औरतों और बच्चों की ख़ातिर जो मग़लूब बना दिये गये हैं"

الَّذِيۡنَ يَقُوۡلُوۡنَ رَبَّنَاۤ اَخۡرِجۡنَا مِنۡ هٰذِهِ الۡقَرۡيَةِ الظَّالِمِ اَهۡلُهَا ۚ

"जो दुआ कर रहे हैं कि ऐ हमारे परवरदिग़ार, हमें निकाल इस बस्ती से जिसके रहने वाले लोग ज़ालिम हैं"

وَاجۡعَلۡ لَّنَا مِنۡ لَّدُنۡكَ وَلِيًّا ۚ وَّاجۡعَلۡ لَّنَا مِنۡ لَّدُنۡكَ نَصِيۡرًا ﴿۷۵﴾

"और हमारे लिये अपने पास से कोई हिमायती बना दे और हमारे लिये ख़ास अपने फ़ज़्ल से कोई मददगार भेज दे।"

उनकी यह आह व बका तुम्हें आमादा पैकार क्यों नहीं कर रही? उन पर ज़ुल्म हो रहा है, उन पर सितम ढाये जा रहे हैं और तुम्हारा हाल यह है कि तुम अपने घरों से निकलने को तैयार नहीं हो? बाज़ लोग इस आयत का इन्तबाक़ उन मुख्तलिफ़ क़िस्म के सियासी जिहादों पर भी कर देते हैं जो कि आज-कल हमारे यहाँ जारी हैं और उन पर "जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह" का लेबल लगाया जा रहा है। लेकिन यह बात बिल्कुल ही क़यास मअल फ़ारुक़ है। वाज़ेह रहे कि यह ख़िताब उन अहले ईमान से हो रहा है जिनके यहाँ इस्लाम क़ायम हो चुका था। हम अपने मुल्क में इस्लाम क़ायम कर नहीं सकते। यहाँ पर दीन के ग़ल्बे व इक़ामत की कोई जद्दो-जहद नहीं कर रहे। हमारे यहाँ कुफ़्र का निज़ाम चल रहा है। इसके मुख़ातिब अहले ईमान हैं, और अहले ईमान का फ़र्ज़ यह है कि पहले अपने घर को दुरुस्त करो, पहले अपने मुल्क के अंदर इस्लाम क़ायम करो लिहाज़ा जिहाद करना है तो यहाँ करो, जानें देनी है तो यहाँ दो। यहाँ पर तागूत की हुकूमत है, ग़ैरुल्लाह की हुकूमत है, क़ुरान के सिवा कोई और क़ानून चल रहा है, जबकि अल्लाह तआला का (सूरतुल मायदा, आयत 44, 45 व 47 में) यह फ़रमान है:

ۚوَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ۝٤٤... فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝٤٥... فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝٤٧

"और जो लोग अल्लाह के नाज़िल करदा क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसले नहीं करते वही तो काफिर हैं, ...वही तो ज़ालिम हैं, ...वही तो फासिक़ हैं।"

चुनाँचे काफ़िर, ज़ालिम और फ़ासिक़ तो हम ख़ुद हैं। हमें पहले अपने घर की हालत दुरुस्त करनी होगी। इसके बाद एक जामियत क़ायम होगी। हमारी हुकूमत तो उन लोगों से दोस्तियाँ करती फिरती है जिनके ख़िलाफ़ यहाँ जिहाद का नारा बुलंद हो रहा है, जिसमें जाने दी जा रहीं हैं। तो यह आयत अपनी जगह है। हर चीज़ को उसके सयाक़ व सबाक़ (सन्दर्भ) के अंदर रखनी चाहिये।

आयत 76

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ

"जो लोग ईमान वाले हैं वह क़िताल करते हैं अल्लाह की राह में"

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ

"और जो लोग काफ़िर हैं वह तागूत की राह में क़िताल कर रहे हैं"

जंग तो वह भी कर रहे हैं, जानें वह भी दे रहे हैं। अबु जहल भी तो लश्कर लेकर आया था। उनकी सारी जद्दो-जहद तागूत की राह में है।

فَقَاتِلُوْٓا اَوْلِيَاۗءَ الشَّيْطٰنِ ۚ

"तो तुम जंग करो शैतान के साथियों से"

तुम शैतान के हिमायतियों से, हिज़्बुल शैतान से क़िताल करो।

اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا ۝٧٦ۧ

"यक़ीनन शैतान की चाल बड़ी कमज़ोर है।"

शैतान की चाल बज़ाहिर बड़ी ज़ोरदार बड़ी बारौब दिखाई देती है, लेकिन जब मर्दे मोमिन उसके मुक़ाबिल खड़े हो जायें तो फिर मालूम हो जाता है कि बड़ी बोदी और फुसफुसी चाल है।

आयात 77 से 87 तक

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ قِيْلَ لَهُمْ كُفُّوْٓا اَيْدِيَكُمْ وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ ۚ فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ اِذَا فَرِيْقٌ
مِّنْهُمْ يَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْيَةِ اللّٰهِ اَوْ اَشَدَّ خَشْيَةً ۚ وَقَالُوْا رَبَّنَا لِمَ كَتَبْتَ عَلَيْنَا الْقِتَالَ ۚ لَوْلَآ اَخَّرْتَنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ
قَرِيْبٍ ۭ قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيْلٌ ۚ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّمَنِ اتَّقٰى ۣ وَلَا تُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا ﴿٧٧﴾ اَيْنَ مَا تَكُوْنُوْا يُدْرِكْكُّمُ الْمَوْتُ
وَلَوْ كُنْتُمْ فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ ۭ وَاِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۚ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ
عِنْدِكَ ۭ قُلْ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۭ فَمَالِ هٰٓؤُلَاۗءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُوْنَ يَفْقَهُوْنَ حَدِيْثًا ﴿٧٨﴾ مَآ اَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ ۡ
وَمَآ اَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَّفْسِكَ ۭ وَاَرْسَلْنٰكَ لِلنَّاسِ رَسُوْلًا ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ﴿٧٩﴾ مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ
اَطَاعَ اللّٰهَ ۚ وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ﴿٨٠﴾ وَيَقُوْلُوْنَ طَاعَةٌ ۡ فَاِذَا بَرَزُوْا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ طَاۗىِٕفَةٌ مِّنْهُمْ
غَيْرَ الَّذِيْ تَقُوْلُ ۭ وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُوْنَ ۚ فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَتَوَكَّلْ عَلَي اللّٰهِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ﴿٨١﴾ اَفَلَا يَتَدَبَّرُوْنَ
الْقُرْاٰنَ ۭ وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ غَيْرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوْا فِيْهِ اخْتِلَافًا كَثِيْرًا ﴿٨٢﴾ وَاِذَا جَاۗءَھُمْ اَمْرٌ مِّنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ اَذَاعُوْا
بِهٖ ۭ وَلَوْ رَدُّوْهُ اِلَى الرَّسُوْلِ وَاِلٰٓى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ مِنْهُمْ ۭ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ
وَرَحْمَتُهٗ لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطٰنَ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٨٣﴾ فَقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ عَسَى اللّٰهُ
اَنْ يَّكُفَّ بَاْسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَاللّٰهُ اَشَدُّ بَاْسًا وَّاَشَدُّ تَنْكِيْلًا ﴿٨٤﴾ مَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا ۚ
وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ مُّقِيْتًا ﴿٨٥﴾ وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوْا بِاَحْسَنَ
مِنْهَآ اَوْ رُدُّوْهَا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ حَسِيْبًا ﴿٨٦﴾ اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا ھُوَ ۭ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ۭ
وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ حَدِيْثًا ﴿٨٧﴾

आयत 77

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ قِيْلَ لَهُمْ كُفُّوْٓا اَيْدِيَكُمْ وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ ۚ

"तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिनसे कहा गया था कि अपने हाथ रोके रखो और नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो?"

मक्का मुकर्रमा में बारह बरस तक मुसलमानों को यही हुक्म था कि अपने हाथ बंधे रखो। उस दौर में मुसलमानों पर ज़ुल्मो सितम के पहाड़ तोड़े जा रहे थे, उन्हें बहुत बुरी तरह सताया जा रहा था, तशद्दुत व ताज़ीब की नई तारीख़ रक़म की जा रही थी। इस पर मुसलमान का ख़ून खौलता था और बहुत से मुसलमान यह चाहते थे कि हमें इजाज़त दी जाये तो हम अपने भाईयों पर होने वाले इस ज़ुल्म व सितम का बदला लें, आख़िर हम नामर्द नहीं हैं, बेग़ैरत नहीं हैं, बुज़दिल नहीं हैं। लेकिन उन्हें हाथ उठाने की इजाज़त नहीं थी। यह मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ का "सब्रे महज़" का मरहला था उस वक़्त हुक्म यह था कि अपने हाथ रोके रखो।

नग़मा है बुलबुल शौरीदा तेरा ख़ाम अभी
अपने सीने में इसे और ज़रा थाम अभी

एक वक़्त आयेगा कि तुम्हारे हाथ खोल दिये जायेंगे।

यहाँ सवाल पैदा होता है कि {اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ قِيۡلَ لَهُمۡ كُفُّوۡۤا اَيۡدِيَكُمۡ} फ़अल मजहूल है। यह कहा किसने था? मक्की क़ुरान में तो "كُفُّوۡۤا اَيۡدِيَكُمۡ" का हुक्म मौजूद नहीं है। यह हुक्म था मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का। हुज़ूर ﷺ ने अहले ईमान को हाथ उठाने से रोका था। यह आयत सूरतुन्निसा में नाज़िल हो रही है जो मदनी है। कि उस वक़्त भी वह रसूल अल्लाह ﷺ का हुक्म था, जिसको अल्लाह ने अपना हुक्म क़रार दिया। गोया यह अल्लाह ही की तरफ़ से था। वहिये जली तो यह क़ुरान है। इसके अलावा नबी अकरम ﷺ पर वहिये ख़फ़ी भी नाज़िल होती थी। तो यह भी हो सकता है कि अल्लाह ने मक्की दौर में वहिये ख़फ़ी के ज़रिये रसूल अल्लाह ﷺ को यह हुक्म दिया हो जो यहाँ नक़्ल हुआ है और यह भी हो सकता है कि यह हुज़ूर ﷺ का अपना इज्तेहाद हो जिसे अल्लाह ने बरक़रार रखा हो, उसे क़ुबूल (own) किया हो।

अब यह बात यहाँ महज़ूफ़ है कि उस वक़्त तो कुछ लोग बड़ जोश व जज़्बे से और बड़े ज़ोर-शोर से कहते थे कि हमें इजाज़त होनी चाहिये कि हम जंग करें, लेकिन अब क्या हाल हुआ:

فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيۡهِمُ الۡقِتَالُ اِذَا فَرِيۡقٌ مِّنۡهُمۡ يَخۡشَوۡنَ النَّاسَ كَخَشۡيَةِ اللّٰهِ اَوۡ اَشَدَّ خَشۡيَةً

"तो उनमें से एक फ़रीक़ का हाल यह है कि वह लोगों से इस तरह डर रहे हैं जैसे अल्लाह से डरना चाहिये, बल्कि उससे भी ज़्यादा डर रहे हैं।"

ज़ाहिर बात है कि यह मक्के के मुहाजरीन नहीं थे, बल्कि यह हाल मुनाफ़िक़ीने मदीना का था, लेकिन फ़र्क़ व तफ़ावुत वाज़ेह करने के लिये मक्की दौर की कैफ़ियत से तक़ाबुल किया गया कि असल ईमान तो वह था, और यह जो सूरते हाल है यह कमज़ोरी-ए-ईमान और निफ़ाक़ की अलामत है।

وَقَالُوۡا رَبَّنَا لِمَ كَتَبۡتَ عَلَيۡنَا الۡقِتَالَ

"और वह कहते हैं परवरदिग़ार! तूने हम पर जंग क्यों फ़र्ज़ कर दी?"

لَوۡلَاۤ اَخَّرۡتَنَاۤ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِيۡبٍ

"क्यों ना अभी हमें कुछ और मोहलत दी?"

इस हुक्म को कुछ देर के लिये मज़ीद मुअख़र क्यों ना किया?

قُلۡ مَتَاعُ الدُّنۡيَا قَلِيۡلٌ

"(ऐ नबी ﷺ!) कह दीजिये दुनिया का साज़ो सामान बहुत थोड़ा है।"

وَالۡاٰخِرَةُ خَيۡرٌ لِّمَنِ اتَّقٰى

"और आख़िरत बहुत बेहतर है उसके लिये जो तक़्वा की रविश इख़्तियार करे"

وَلَا تُظۡلَمُوۡنَ فَتِيۡلًا ﴿۷۷﴾

"और तुम पर एक धागे के बराबर भी ज़ुल्म नहीं होगा।"

तुम्हारी हक़ तल्फ़ी क़तअन नहीं होगी और तुम्हारे जो भी आमाल हैं, इन्फ़ाक़ है, क़िताल है, अल्लाह की राह में ईसार (त्याग) है, उसका तुम्हें भरपूर अजर व सवाब दे दिया जायेगा।

आयत 78

اَيۡنَ مَا تَكُوۡنُوۡا يُدۡرِكْكُّمُ الۡمَوۡتُ

"तुम जहाँ कहीं भी होगे मौत तुमको पा लेगी"

ज़ाहिर है जिहाद से जी चुराने का असल सबब मौत का ख़ौफ़ था। चुनाँचे उनके दिलों के अंदर जो ख़ौफ़ था उसे ज़ाहिर किया जा रहा है। उन पर वाज़ेह किया जा रहा है कि मौत से कोई मफ़र (शरण) नहीं, तुम जहाँ कहीं भी होगे मौत तुम्हें पा लेगी।

وَلَوْ كُنْتُمْ فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ

"ख़्वाह तुम बड़े मज़बूत क़िलों के अंदर ही हो।"

अग़रचे तुम बहुत मज़बूत (fortified) क़िलों के अंदर अपने आप को महसूर (क़ैद) कर लो। फिर भी मौत से नहीं बच सकते।

وَإِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ

"और अगर उन्हें कोई भलाई पहुँचती है तो कहते हैं यह अल्लाह की तरफ़ से है।"

मुनाफ़िक़ीन का एक तर्ज़े अमल यह भी था कि अगर मुसलमानों को कोई कामयाबी हासिल हो जाती, फ़तह नसीब हो जाती, कोई और भलाई पहुँच जाती, हुज़ूर ﷺ की तदबीर के अच्छे नतीजे निकल आते तो उसे हुज़ूर ﷺ की तरफ़ मन्सूब नहीं करते थे, बल्कि कहते थे कि यह अल्लाह का फ़ज़ल व करम हुआ है, यह सब अल्लाह की तरफ़ से है।

وَإِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِكَ

"और अगर उन्हें कोई तकलीफ़ पहुँच जाये तो कहते हैं कि (ऐ मुहम्मद ﷺ) यह आपकी वजह से है।"

आप ﷺ ने यह गलत इक़दाम (अंदाज़ा) किया तो उसके नतीजे में हम पर यह मुसीबत आ गई। यह आपका फ़ैसला था कि खुले मैदान में जाकर जंग करेंगे, हमने तो आपको मशवरा दिया था कि मदीने के महसूर होकर जंग करें।

قُلْ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ

"कह दीजिये सब कुछ अल्लाह ही की तरफ़ से है।"

यह सब चीजें, ख़ैर हो, शर हो, तकलीफ़ हो, आसानी हो, मुश्किल हो, जो भी सूरतें हैं सब अल्लाह की तरफ़ से हैं।

فَمَالِ هٰٓؤُلَآءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُوْنَ يَفْقَهُوْنَ حَدِيْثًا ۝٧٨

"तो इन लोगों को क्या हो गया है कि यह कोई बात भी नहीं समझते!"

आयत 79

مَآ أَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ وَمَآ أَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَّفْسِكَ

"(ऐ मुसलमान!) तुझे जो भलाई भी पहुँचती है वह अल्लाह की तरफ़ से पहुँचती है, और जो मुसीबत तुझ पर आती है वह ख़ुद तेरे नफ़्स की तरफ़ से है।"

इस आयत के बारे में मुफ़स्सिरीन ने मुख़्तलिफ़ अक़वाल नक़ल किये हैं। मेरे नज़दीक राजेह (सबसे सही) क़ौल यह है कि यहाँ तहवीले ख़िताब है। पहली आयत में ख़िताब उन मुसलमानों को जिनकी तरफ़ से कमज़ोरी या निफ़ाक़ का इज़हार हो रहा था, लेकिन इस आयत में बहैसियते मज्मुई ख़िताब है कि देखो ऐ मुसलमानों! जो भी कोई ख़ैर तुम्हें मिलता है उस पर तुम्हें यही कहना चाहिये कि यह अल्लाह की तरफ़ से है और कोई शर पहुँच जाये तो उसे अपने कसब (कमाई) व अमल का नतीजा समझना चाहिये। अग़रचे हमारा ईमान है कि ख़ैर भी अल्लाह की तरफ़ से है और शर भी। "ईमाने मुफ़स्सल" में अल्फ़ाज़ आते हैं: "وَالْقَدْرِ خَيْرِهٖ وَشَرِّهٖ مِنَ اللّٰهِ تَعَالٰى" लेकिन एक मुसलमान के लिये सही तर्ज़े अमल यह है कि ख़ैर मिले तो उसे अल्लाह का फ़ज़ल समझे। और अगर कोई ख़राबी हो जाये तो समझे कि यह मेरी किसी ग़लती के सबब हुई है, मुझसे कोई कोताही हुई है, जिस पर अल्लाह तआला ने कोई तादीब (correction) फ़रमानी चाही है।

وَأَرْسَلْنٰكَ لِلنَّاسِ رَسُوْلًا

"और (ऐ नबी ﷺ) हमने आपको तो लोगों के लिये रसूल बना कर भेजा है।"

इस मक़ाम के बारे में एक क़ौल यह भी है कि दरमियानी टुकड़े में भी ख़िताब तो रसूल अल्लाह ﷺ ही से है, लेकिन इस्तजाब के अंदाज़ में कि अच्छा! जो कुछ उन्हें ख़ैर मिल जाये वह तो अल्लाह की तरफ़ से है और जो कोई बुराई आ जाये तो वह आपकी तरफ़ से है! यानि क्या बात यह कह रहे हैं! जबकि अल्लाह ने तो आपको रसूल बना कर भेजा है। इसकी यह दो ताबीरें हैं। मेरे नज़दीक पहली ताबीर राजेह है।

وَ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ۝٧٩

"और अल्लाह तआला काफ़ी है ग़वाह के तौर पर।"

आयत 80

مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ ۚ

"जिसने इताअत की रसूल की उसने इताअत की अल्लाह की।"

यह टुकड़ा बहुत अहम है। इसलिये कि यह दो टूक अंदाज़ में वाज़ेह कर रहा है कि रसूल ﷺ की इताअत दरहक़ीक़त अल्लाह की इताअत है। इसकी मज़ीद वज़ाहत के लिये यह हदीस मुलाहिज़ा कीजिये। हज़रत अबु हुरैरा रज़ि० से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया:

مَنْ اَطَاعَنِيْ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ، وَمَنْ عَصَانِيْ فَقَدْ عَصَى اللّٰهَ، وَمَنْ اَطَاعَ اَمِيْرِيْ فَقَدْ اَطَاعَنِيْ، وَمَنْ عَصٰى اَمِيْرِيْ فَقَدْ عَصَانِيْ

"जिसने मेरी इताअत की उसने अल्लाह की इताअत की और जिसने मेरी नाफ़रमानी की उसने अल्लाह की नाफ़रमानी की। और जिसने मेरे (मुक़र्रर करदा) अमीर की इताअत की उसने मेरी इताअत की और जिसने मेरे (मुक़र्रर करदा) अमीर की नाफ़रमानी की उसने मेरी नाफ़रमानी की।"

रसूल अल्लाह ﷺ की सारी जद्दो-जहद जमाअती नज़्म के तहत हो रही थी। जिहाद व क़िताल के लिये फ़ौज तैयार होती तो इसमें ऊपर से नीचे तक समअ व इताअत की एक ज़ंजीर बनती चली जाती। रसूल अल्लाह ﷺ कमांडर एंड चीफ़ थे, आप ﷺ लश्कर के मैमना, मैसरह, क़ल्ब और अक़ब वगैरह पर, हरावल दस्ते पर अलग-अलग कमांडर मुक़र्रर फ़रमाते। उन अमीरों (कमांडरों) के बारे में आप ﷺ ने फ़रमाया कि जिसने मेरे मुक़र्रर करदा अमीर की इताअत की उसने मेरी इताअत की, और जिसने मेरे मुक़र्रर करदा अमीर की नाफ़रमानी की उसने मेरी नाफ़रमानी की।

وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ۝٨٠

"और जिसने रूगरदानी की तो हमने आपको उन पर निगरान बना कर नहीं भेजा है।"

ऐ नबी ﷺ! हमने आपको इन पर दरोगा मुक़र्रर नहीं किया। अपने तर्ज़े अमल के यह खुद ज़िम्मेदार और जवाबदेह हैं और अल्लाह तआला के हुज़ूर पेश होकर यह उसके मुहासबे का खुद सामना कर लेंगे।

आयत 81

وَيَقُوْلُوْنَ طَاعَةٌ ۡ

"और कहते हैं कि सरे तस्लीम ख़म है"

इन मुनाफ़िकों का यह हाल है कि आपके सामने तो कहते हैं कि हम मुतीअ फ़रमान हैं, आप ﷺ ने जो फ़रमाया क़ुबूल है, हम उस पर अमल करेंगे।

فَاِذَا بَرَزُوْا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ طَآئِفَةٌ مِّنْهُمْ غَيْرَ الَّذِيْ تَقُوْلُ ۭ

"फिर जब आपके पास से हटते हैं तो उनमें से एक गिरोह आपस में ऐसे मशवरे करता है जो उनको अपने क़ौल के ख़िलाफ़ है।"

जाकर ऐसे मशवरे आपस में शुरू कर देता है जो ख़िलाफ़ है इसके जो वह वहाँ कह कर गये हैं। सामने वह हो गई बाद में जाकर जो है रेशादवानी, साज़िश।

وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُوْنَ ۚ

"और अल्लाह लिख रहा है जो भी वह मशवरे करते हैं"

فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ

"तो (ऐ नबी ﷺ) आप इनसे चश्मपोशी कीजिये"

आप इनकी परवाह ना कीजिये, यह आपको कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगे। अभी इनके ख़िलाफ़ इक़दाम करना ख़िलाफ़े मस्लहत है। जैसे एक दौर में फ़रमाया गया: {فَاعۡفُوۡا وَاصۡفَحُوۡا} (अल् बक़रह:109) यानि इन यहूदियों को ज़रा नज़रअंदाज़ कीजिये, अभी इनकी शरारतों पर तकफ़ीर ना कीजिये, जो कुछ यह कह रहे हैं उस पर सब्र कीजिये, इसलिये कि मस्लहत का तक़ाज़ा है कि अभी यह महाज़ ना खोला जाये। इसी तरह यहाँ मुनाफ़िक़ीन के बारे में कहा गया कि अभी इनसे ऐराज़ कीजिये। चुनाँचे उनकी रेशादवानियों से कुछ अरसे तक चश्मपोशी की गई और फिर ग़ज़वा-ए-तबूक के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने उन पर गिरफ़्त शुरू की। फिर वह वक़्त आ गया कि अब तक उनकी शरारतों पर जो पर्दे पड़े रहे थे वह पर्दे उठा दिये गये।

وَتَوَكَّلۡ عَلَى اللّٰهِ

"और आप अल्लाह पर तवक्कुल कीजिये।"

وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيۡلًا ﴿۸۱﴾

"और अल्लाह काफ़ी है भरोसे के लिये।"

आप ﷺ को सहारे के लिये अल्लाह काफ़ी है। उनकी सारी रेशादवानियाँ, यह मशवरे, यह साज़िशें, सब पादर हवा हो जायेंगी, आप फ़िक्र ना कीजिये।

आयत 82

اَفَلَا يَتَدَبَّرُوۡنَ الۡقُرۡاٰنَ

"क्या यह क़ुरान पर तदब्बुर नहीं करते?"

यह क़ुरान पढ़ते भी हैं और सुनते भी हैं, लेकिन इस पर ग़ौरो फ़िक्र नहीं करते। नमाज़ें तो वह पढ़ते थे। उस वक़्त जो भी मुनाफ़िक़ था उसे नमाज़ तो पढ़नी पड़ती थी, वरना उसको मुसलमान ना माना जाता। आज तो मुसलमान माने जाने के लिये नमाज़ ज़रूरी नहीं है, उस वक़्त तो ज़रूरी थी। बल्कि रईसुल मुनाफ़िक़ीन अब्दुल्लाह बिन उबई तो पहली सफ़ में होता था और जुमे के रोज़ तो ख़ासतौर पर ख़ुत्बे से पहले खड़े होकर ऐलान करता था कि लोगों इनकी बात तवज्जोह से सुनो, यह अल्लाह के रसूल हैं। गोया अपनी चौधराहट के इज़हार के लिये यह अंदाज़ इख़्तियार करता। तो वह नमाज़े पढ़ते थे, क़ुरान सुनते थे, लेकिन क़ुरान पर तदब्बुर नहीं करते थे। क़ुरान उनके सिरों के ऊपर से गुज़र रहा था। या उनके एक कान से दाख़िल होकर दूसरे कान से निकल जाता था।

وَلَوۡ كَانَ مِنۡ عِنۡدِ غَيۡرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوۡا فِيۡهِ اخۡتِلَافًا كَثِيۡرًا ﴿۸۲﴾

"अगर यह अल्लाह के सिवा किसी और की तरफ से होता तो इसमें वह बहुत से तज़ादात (इख़्तिलाफ़) पाते।"

इस पर ग़ौर करो, यह बहुत मरबूत (वर्णन किया हुआ) कलाम है। इसका पूरा फ़लसफ़ा मन्तक़ी तौर पर बहुत मरबूत है, इसके अंदर कहीं कोई तज़ाद नहीं है।

आयत 83

وَاِذَا جَآءَهُمۡ اَمۡرٌ مِّنَ الۡاَمۡنِ اَوِ الۡخَوۡفِ اَذَاعُوۡا بِهٖ

"और जब उनके पास कोई ख़बर पहुँचती है अमन की या ख़तरे की तो वह उसे फैला देते हैं।"

मुनाफ़िकों की एक रविश यह भी थी कि ज्यों ही कोई इत्मिनान बख़्श या ख़तरनाक ख़बर सुन पाते उसे लेकर फैला देते। कहीं से ख़बर आ गई कि फ़लाँ क़बीला चढ़ाई करने की तैयारी कर रहा, उसकी तरफ़ से हमले का अंदेशा है तो वह फ़ौरन उसे आम कर देते, ताकि लोगों में ख़ौफ़ व हरास (गिरावट) पैदा हो जाये। "اِذَاعَة" का लफ़्ज़ आज-कल नश्रियाति (broadcasting) इदारों के लिये इस्तेमाल होता है और "مِذۡيَاع" रेडियो सेट को कहा जाता है।

وَلَوْ رَدُّوْهُ اِلَى الرَّسُوْلِ وَاِلٰٓى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ

"और अगर वह उसको रसूल ﷺ और अपने ऊलुल अम्र के सामने पेश करते"

لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ مِنْهُمْ

"तो यह बात उनमें से उन लोगों के इल्म में आ जाती जो बात की तह तक पहुँचने वाले हैं।"

अग़र यह लोग ऐसी ख़बरों को रसूल अल्लाह ﷺ तक या ज़िम्मेदार असहाब तक पहुँचाते, मसलन औस के सरदार साद बिन उबादाह रज़ि० और ख़ज़रज के सरदार साद बिन मुआज़ रज़ि०, तो यह उनकी तहक़ीक़ कर लेते कि बात किस हद तक दुरुस्त है और इसका क्या नतीजा निकल सकता है और फिर जायज़ा लेते कि हमें इस ज़िमन में क्या क़दम उठाना चाहिये। लेकिन उनकी रविश यह थी कि महज़ सनसनी फैलाने और सरासेमगी (डर) पैदा करने के लिये ऐसी ख़बरें लोगों में आम कर देते।

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ

"और अगर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत तुम्हारे शामिले हाल ना होती"

لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطٰنَ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٨٣﴾

"तो तुम सबके सब शैतान की पैरवी करते, सिवाय चंद एक के।"

आयत 84

فَقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"पस (ऐ नबी ﷺ!) आप जंग करे अल्लाह की राह में!"

क़िताल के ज़िमन में यह क़ुरान मजीद की ग़ालिबन सख़्त तरीन आयत है, लेकिन इसमें सख़्ती लफ़्ज़ी नहीं, मायनवी है।

لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ

"आप पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है सिवाय अपनी ज़ात के"

وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ

"अलबत्ता अहले ईमान को आप इसके लिये उकसाएँ।"

आप ﷺ अहले ईमान को क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह के लिये जिस क़दर तरग़ीब व तशवीक़ दे सकते हैं दीजिये। उन्हें इसके लिये जोश दिलायें, उभारिये। लेकिन अगर कोई और नहीं निकलता तो अकेले निकलिये जैसे हज़रत अबु बकर रज़ि० का क़ौल भी नक़ल हुआ है जब उनसे कहा गया कि मानीने ज़कात (ज़कात ना देने वालों) के बारे में नर्मी कीजिये तो आप रज़ि० ने फ़रमाया था कि अगर कोई मेरा साथ नहीं देगा तो मैं अकेला जाऊँगा, अज़मियत का यह आलम है! तो ऐ नबी ﷺ आपको तो यह काम करना है, आपका तो यह फ़र्ज़े मन्सबी है। आपको हमने भेजा ही इसलिये है कि रूए अरज़ी पर अल्लाह के दीन को ग़ालिब कर दें।

عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّكُفَّ بَاْسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

"बईद (दूर) नहीं कि अल्लाह तआला जल्द ही इन काफ़िरों की क़ुव्वत को रोक दे।"

कुफ़्फ़ार व मुशरिकीन की जंगी तैयारियाँ हो रही हैं, बड़ी चलत-फिरत हो रही है, यह तो कुछ अरसे की बात है वह वक़्त बस आया चाहता है कि उनमें दम नहीं रहेगा कि आपका मुक़ाबला करें। और वह वक़्त जल्द ही आ गया कि मुशरिकीन की कमर टूट गई। सूरतुन्निसा की यह आयत चार हिजरी में नाज़िल हुई और पाँच हिजरी में ग़ज़वा-ए-अहज़ाब पेश आया। जिसके बाद मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ ने अहले ईमान से फ़रमाया कि ((لن تغزوکم قریش بعد عامکم ھذا ولکنکم تغزونھم)) "इस साल के बाद क़ुरैश तुम पर हमलावर होने की जुर्रत नहीं करेंगे, बल्कि अब तुम उन पर हमलावर होगे।" ग़ज़वा-ए-अहज़ाब के फ़ौरन बाद सूरह सफ़ नाज़िल हुई। जिस (आयत:13) में अहले ईमान को फ़तह व नुसरत की बशारत दी गई। {وَّاُخْرٰى تُحِبُّوْنَهَا ۭ نَصْرٌ مِّنَ اللّٰهِ وَفَتْحٌ قَرِيْبٌ ۭ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِيْنَ} इससे अगले

साल 6 हिजरी में आप ﷺ ने उमरे का सफ़र किया, जिसके नतीजे में सुलह हुदैबिया हो गयी, जिसे अल्लाह तआला ने फ़तह मुबीन क़रार दिया {اِنَّا فَتَحۡنَا لَكَ فَتۡحًا مُّبِيۡنًا}। इसके बाद सातवें साल अल्लाह तआला ने फ़तह ख़ैबर अता फ़रमा दी और आठवें साल में मक्का फ़तह हो गया। इसी तरह एक के बाद एक, सारे बंद दरवाज़े खुलते चले गये।

وَاللّٰهُ اَشَدُّ بَاۡسًا وَّاَشَدُّ تَنۡكِيۡلًا ۝٨٤

"और यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत शदीद है क़ुव्वत में भी और सज़ा देने में भी।"

मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब के बाद अब फिर कुछ तमद्दुनी आदाब का ज़िक्र हो रहा है। मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब में दो बातों को नुमाया किया गया। एक इताअते रसूल ﷺ जो उन पर बहुत शाक़ (मुश्किल) गुज़रती थी और एक क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह जो उनके लिए बहुत बड़ा इम्तिहान बन जाता था। अब फिर अहले ईमान से ख़िताब आ रहा है।

आयत 85

مَنۡ يَّشۡفَعۡ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنۡ لَّهٗ نَصِيۡبٌ مِّنۡهَا ۚ

"जो कोई सिफ़ारिश करेगा भलाई की उसे उसमें से हिस्सा मिलेगा।"

इंसानी मआशरे के अंदर किसी के लिये सिफ़ारिश करना भी बाज़ अवक़ात ज़रूरी हो जाता है। कोई शख्स है, उसकी कोई अहतियाज (ज़रुरत) है, आप जानते हैं कि सही आदमी है, बहरुपिया नहीं है। दूसरे शख्स को आप जानते हैं कि वह इसकी मदद कर सकता है तो आपको दूसरे शख्स के पास जाकर उसके हक़ में सिफ़ारिश करनी चाहिये कि मैं इसको जानता हूँ, यह वाक़िअतन ज़रूरतमंद है। इस तरह उसकी ज़रूरत पूरी हो जायेगी और इस नेकी के सवाब में आप भी हिस्सेदार होंगे। इसी तरह किसी पर कोई मुक़दमा क़ायम हो गया है और आपके इल्म में उसकी बेगुनाही के बारे में हक़ाइक़ और शवाहिद हैं तो आपको अदालत में पेश होकर यह हक़ाइक़ और शवाहिद पेश करने चाहियें, ताकि उसकी गुलु ख़लासी हो सके। इस आयत की रू से नेकी, भलाई, ख़ैर और अद्ल व इंसाफ़ की ख़ातिर अगर किसी की सिफ़ारिश की जाये तो अल्लाह तआला इसका अजर व सवाब अता फ़रमायेगा।

وَمَنۡ يَّشۡفَعۡ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنۡ لَّهٗ كِفۡلٌ مِّنۡهَا ۚ

"और जो कोई सिफ़ारिश करेगा बुराई की तो उसे उसमें से हिस्सा मिलेगा।"

किसी ने किसी कि झूठी और ग़लत सिफ़ारिश की, हक़ाइक़ को तोड़ा-मरोड़ा तो वह भी उसके जुर्म में शरीक हो गया और वह उस जुर्म की सज़ा में भी हिस्सेदार होगा।

وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيۡءٍ مُّقِيۡتًا ۝٨٥

"और अल्लाह तआला हर शय पर क़ुव्वत रखने वाला है।"

आयत 86

وَاِذَا حُيِّيۡتُمۡ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوۡا بِاَحۡسَنَ مِنۡهَاۤ اَوۡ رُدُّوۡهَا ۚ

"और जब तुम्हें सलामती की कोई दुआ दी जाये तो तुम भी सलामती की उससे बेहतर दुआ दो या उसी को लौटा दो।"

हर मआशरे में कुछ ऐसे दुआइया कलिमात राइज होते हैं जो मआशरे के अफ़राद बाहमी मुलाक़ात के वक़्त इस्तेमाल करते हैं। जैसे मग़रिबी मआशरे में गुड मॉर्निंग और गुड इवनिंग वग़ैरह। अरबों के यहाँ सबाह अल् ख़ैर व मसाअ अल् ख़ैर के अलावा सबसे ज़्यादा रिवाज "हय्याका अल्लाह" कहने का था। यानि अल्लाह तुम्हारी ज़िन्दगी बढ़ाये। जैसे हमारे यहाँ सरायकी इलाक़े में कहा जाता है "हयाती होवे"। दराज़ी-ए-उम्र की इस दुआ को तहिय्या कहा जाता है। सलाम और उसके हम मायने दूसरे दुआइया कलिमात भी सब इसके अंदर शामिल हो जाते हैं। अरब में जब इस्लामी मआशरा वुजूद में आया तो दीग़र दुआइया कलिमात भी बाक़ी रहे, अलबत्ता "अस्सलामु अलैकुम" को एक ख़ास इस्लामी शआर (सिद्धांत) की हैसियत हासिल हो गई। इस आयत में हिदायत की जा रही है कि जब तुम्हें कोई सलामती की दुआ दे तो उसके जवाब का आला तरीक़ा यह है कि उससे बेहतर तरीक़े पर जवाब दो। "अस्सलामु अलैकुम" के जवाब में "वालैकुम अस्सलाम" के साथ

"वा रहमतुल्लाही वा बरकातुहू" का इज़ाफा करके उसे लौटाएँ। अगर यह नहीं हो तो कम से कम उसी के अल्फ़ाज़ उसकी तरफ़ लौटा दो।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَیْءٍ حَسِیْبًا ۝

"यक़ीनन अल्लाह तआला हर चीज़ का हिसाब करने वाला है।"

यह छोटी-छोटी नेकियाँ जो हैं इंसानी ज़िन्दगी में इनकी बहुत अहमियत है। इन मआशरती आदाब से मआशरती ज़िन्दगी के अंदर हुस्न पैदा होता है, आपस में मुहब्बत व मवद्दत (स्नेह) पैदा होती है।

आयत 87

اَللّٰهُ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ؕ

"अल्लाह वह है जिसके सिवा कोई मअबूद नहीं।"

لَیَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى یَوْمِ الْقِیٰمَةِ لَا رَیْبَ فِیْهِ ؕ

"वह तुम्हें लाज़िमन जमा करेगा क़यामत के दिन, जिसके आने में कोई शक नहीं।"

وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ حَدِیْثًا ۝

"और अल्लाह से बढ़ कर अपनी बात में सच्चा कौन होगा?"

मुनाफ़िक़ीन पर जो तीन चीज़ें बहुत शाक़ थीं, अब उनमें से तीसरी चीज़ का तज़किरा आ रहा है, यानि हिजरत। एक तो वह लोग थे जो बीमार थे, बूढ़े थे, सफ़र के क़ाबिल नहीं थे, या औरतें और बच्चे थे, उनका मामला तो पहले ज़िक्र हो चुका कि उनके लिये तुम्हें क़िताल करना चाहिये ताकि उन्हें ज़ालिमों के चंगुल से छुड़ाओ। एक वह लोग थे जो दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल होने का ऐलान तो कर चुके थे लेकिन अपने काफ़िर क़बीलों और अपनी बस्तियों के अंदर आराम से रह रहे थे और हिजरत नहीं कर रहे थे, जबकि हिजरत अब फ़र्ज़ कर दी गई थी। यह भी समझ लीजिये कि हिजरत फ़र्ज़ क्यों कर दी गई? इसलिये कि जब मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की दावत और तहरीक इस मरहले में दाख़िल हो गई कि अब बातिल के ख़िलाफ़ इक़दाम करना है, तो अब अहले ईमान की जितनी भी दस्तयाब ताक़त थी उसे एक मरकज़ पर मुजतमअ (जमा) करना ज़रूरी था, मक्की दौर में जो पहली हिजरत हुई थी यानि हिजरते हब्शा वह इख़्तियारी थी। इसकी सिर्फ़ इजाज़त थी, हुक्म नहीं था लेकिन हिजरते मदीना का तो हुक्म था। लिहाज़ा अब उन लोगों का ज़िक्र है जो इस बिना पर मुनाफ़िक़ क़रार पाये कि वह हिजरत नहीं कर रहे हैं।

आयात 88 से 91 तक

فَمَا لَكُمْ فِی الْمُنٰفِقِیْنَ فِئَتَیْنِ وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوْا ؕ اَتُرِیْدُوْنَ اَنْ تَهْدُوْا مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ ؕ وَمَنْ یُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ
لَهٗ سَبِیْلًا ۝ وَدُّوْا لَوْ تَكْفُرُوْنَ كَمَا كَفَرُوْا فَتَكُوْنُوْنَ سَوَآءً فَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ اَوْلِیَآءَ حَتّٰى یُهَاجِرُوْا فِیْ سَبِیْلِ اللّٰهِ ؕ
فَاِنْ تَوَلَّوْا فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَیْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ ۪ وَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ وَلِیًّا وَّلَا نَصِیْرًا ۝ اِلَّا الَّذِیْنَ یَصِلُوْنَ اِلٰى
قَوْمٍۭ بَیْنَكُمْ وَبَیْنَهُمْ مِّیْثَاقٌ اَوْ جَآءُوْكُمْ حَصِرَتْ صُدُوْرُهُمْ اَنْ یُّقَاتِلُوْكُمْ اَوْ یُقَاتِلُوْا قَوْمَهُمْ ؕ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ
لَسَلَّطَهُمْ عَلَیْكُمْ فَلَقٰتَلُوْكُمْ ۚ فَاِنِ اعْتَزَلُوْكُمْ فَلَمْ یُقَاتِلُوْكُمْ وَاَلْقَوْا اِلَیْكُمُ السَّلَمَ ۙ فَمَا جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ عَلَیْهِمْ
سَبِیْلًا ۝ سَتَجِدُوْنَ اٰخَرِیْنَ یُرِیْدُوْنَ اَنْ یَّاْمَنُوْكُمْ وَیَاْمَنُوْا قَوْمَهُمْ ؕ كُلَّمَا رُدُّوْۤا اِلَى الْفِتْنَةِ اُرْكِسُوْا فِیْهَا ۚ فَاِنْ لَّمْ
یَعْتَزِلُوْكُمْ وَیُلْقُوْۤا اِلَیْكُمُ السَّلَمَ وَیَكُفُّوْۤا اَیْدِیَهُمْ فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَیْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ ؕ وَاُولٰٓئِكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ
عَلَیْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِیْنًا ۝

आयत 88

فَمَا لَكُمْ فِي الْمُنٰفِقِيْنَ فِئَتَيْنِ

"पस तुम्हें क्या हो गया है कि तुम मुनाफ़िक़ों के बारे में दो गिरोह हो रहे हो?"

बात आगे वाज़ेह हो जायेगी कि यह किन मुनाफ़िक़ीन का तज़किरा है, जिनके बारे में मुसलमानों के दरमियान दो राय पाई जाती थीं। अहले ईमान में से बाज़ का ख़्याल था कि उनके साथ नर्मी होनी चाहिये, आख़िर यह ईमान तो लाये थे ना, अब नहीं हिजरत कर सके। जबकि कुछ लोग अल्लाह के हुक्म के मामले में उनसे सख़्त रवैया इख़्तियार करने के हक़ में थे। चुनाँचे इर्शाद हुआ कि ऐ मुसलमानों! तुम्हें क्या हो गया है कि तुम उनके बारे में दो ग़िरोहों में तक़सीम हो गये हो?

وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوْا ۭ

"और अल्लाह ने तो उनको उनकी करतूतों के सबब उलट दिया है।"

उनका हिजरत ना करना दरहक़ीक़त इस बात का सबूत है कि वह उल्टे फेर दिए गये हैं। यानि उनका ईमान सल्ब हो चुका है। हाँ कोई मजबूरी होती, उज़्र (बहाना) होता तो बात थी।

اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَهْدُوْا مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ ۭ

"क्या तुम चाहते हो कि उनको हिदायत दे दो जिनको अल्लाह ने गुमराह कर दिया है?"

जिनकी गुमराही पर अल्लाह की तरफ़ से मुहर तस्दीक़ सब्त हो चुकी है।

وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ۝٨٨

"और जिसको अल्लाह रास्ते से हटा दे उसके लिये तुम कोई रास्ता ना पाओगे।"

जिसकी गुमराही पर अल्लाह की तरफ़ से आखरी मुहर तस्दीक़ सब्त हो चुकी हो उसके लिये फिर कौन सा रास्ता बाक़ी रह जाता है।

आयत 89

وَدُّوْا لَوْ تَكْفُرُوْنَ كَمَا كَفَرُوْا فَتَكُوْنُوْنَ سَوَاۗءً

"यह तो चाहते हैं कि तुम भी कुफ़्र करो जिस तरह इन्होंने कुफ़्र किया है ताकि तुम सब बराबर हो जाओ"

यह लोग जो उनके बारे में नर्मी की बातें कर रहे हैं यह चाहते हैं कि जैसे उन्होंने कुफ़्र किया है तुम भी करो, ताकि तुम और वह सब यक्साँ (एक जैसे) हो जायें। दुम कटी बिल्ली चाहती है कि सब बिल्लियों की दुम कट जायें।

فَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْھُمْ اَوْلِيَاۗءَ حَتّٰى يُھَاجِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۭ

"तो अब उनमें से किसी को दोस्त ना बनाओ जब तक कि वह हिजरत ना करें अल्लाह की राह में।"

यह गोया अब उनके ईमान का लिट्मस टेस्ट है। अगर वह हिजरत नहीं करते तो इसका मतलब यह होगा कि वह मोमिन नहीं मुनाफ़िक़ हैं।

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَخُذُوْھُمْ وَاقْتُلُوْھُمْ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْھُمْ ۠

"और अगर वह पीठ मोड़ लें (हिजरत ना करें) तो उनको पकड़ो और क़त्ल करो जहाँ कहीं भी पाओ।"

यानि अगर वह हिजरत नहीं करते जो उन पर फ़र्ज़ कर दी गई है तो फिर वह काफ़िरों के हुक्म में है, चाहे वह कलमा पढ़ते हों। तुम उन्हें जहाँ भी पाओ पकड़ो और क़त्ल करो।

وَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْھُمْ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا ۝٨٩

"और उनमें से किसी को भी अपना साथी और मददगार मत बनाओ।"

आयत 90

اِلَّا الَّذِیۡنَ یَصِلُوۡنَ اِلٰی قَوۡمٍۭ بَیۡنَکُمۡ وَبَیۡنَہُمۡ مِّیۡثَاقٌ

"सिवाय उनके जिनका ताल्लुक़ किसी ऐसी क़ौम से हो जिसके साथ तुम्हारा कोई मुआहिदा है"

यानि इस हुक्म से सिर्फ़ वह मुनाफ़िक़ीन मुस्तसना हैं जो किसी ऐसे क़बीले से ताल्लुक़ रखते हों जिसके साथ तुम्हारा सुलह का मुआहिदा है। उस मुआहिदे से उन्हें भी तहफ्फ़ुज़ हासिल हो जायेगा।

اَوۡ جَآءُوۡکُمۡ حَصِرَتۡ صُدُوۡرُہُمۡ

"या वह लोग जो तुम्हारे पास इस हाल में आयें कि दिल बरदाश्ता हों"

اَنۡ یُّقَاتِلُوۡکُمۡ اَوۡ یُقَاتِلُوۡا قَوۡمَہُمۡ ؕ

"इस बात से कि तुमसे लड़ें या अपनी क़ौम से लड़ें।"

यानि उनमें इतनी जुर्रत नहीं रही कि वह तुम्हारे साथ होकर अपनी क़ौम के ख़िलाफ़ लड़ें या अपनी क़ौम के साथ होकर तुम्हारे ख़िलाफ़ लड़ें। इंसानी मआशरे में हर सतह के लोग हर दौर में रहे हैं और हर दौर में रहेंगे। लिहाज़ा वाज़ेह किया जा रहा है कि इन्क़लाबी जद्दो-जहद के दौरान हर तरह के हालात आयेंगे और हर तरह के लोगों से वास्ता पड़ेगा। इस तरह के कम हिम्मत लोग कहते थे भई हमारे लिये लड़ना-भिड़ना मुश्किल है, ना तो हम अपनी क़ौम के साथ होकर मुसलमानों से लड़ेंगे और ना मुसलमानों के साथ होकर अपनी क़ौम से लड़ेंगे, उनके बारे में भी फ़रमाया कि उनकी भी जान बख़्शी करो। चुनाँचे हिज़रत ना करने वाले मुनाफ़िक़ीन के बारे में जो यह हुक्म दिया गया कि {فَخُذُوۡہُمۡ وَاقۡتُلُوۡہُمۡ حَیۡثُ وَجَدۡتُّمُوۡہُمۡ} "पस उनको पकड़ो और क़त्ल करो जहाँ कहीं भी पाओ" इससे दो इस्तसना बयान कर दिये गये।

وَلَوۡ شَآءَ اللّٰہُ لَسَلَّطَہُمۡ عَلَیۡکُمۡ فَلَقٰتَلُوۡکُمۡ ۚ

"अगर अल्लाह चाहता तो उनको तुम पर मुसल्लत कर देता और वह तुमसे लड़ते।"

यह भी तो हो सकता था कि अल्लाह उन्हें तुम्हारे ख़िलाफ़ हिम्मत अता कर देता और वह तुम्हारे ख़िलाफ़ क़िताल करते।

فَاِنِ اعۡتَزَلُوۡکُمۡ فَلَمۡ یُقَاتِلُوۡکُمۡ

"पस अगर यह लोग तुमसे किनाराकश रहें और तुमसे जंग ना करें"

وَاَلۡقَوۡا اِلَیۡکُمُ السَّلَمَ ۙ

"और तुम्हारी तरफ़ सुलह व आशती (शांति) का हाथ बढ़ाएँ।"

فَمَا جَعَلَ اللّٰہُ لَکُمۡ عَلَیۡہِمۡ سَبِیۡلًا ﴿۹۰﴾

"तो अल्लाह ने तुम्हें भी ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ इक़दाम करने की इजाज़त नहीं दी।"

तो इस बात को समझ लीजिये कि जो मुनाफ़िक़ हिजरत नहीं कर रहे, उनके लिये क़ायदा यह है कि अब उनके ख़िलाफ़ इक़दाम होगा, उन्हें जहाँ भी पकड़ो और क़त्ल करो, वह हरबी काफ़िरों के हुक्म में हैं। इल्ला यह कि (1) उनके क़बीले से तुम्हारा सुलह का मआहिदा है तो वह उनको तहफ्फ़ुज़ फ़राहम कर जायेगा। (2) वह आकर अगर यह कह दें कि हम बिल्कुल ग़ैर जानिबदार (neutral) हो जाते हैं, हममें जंग की हिम्मत नहीं है, हम ना आपके साथ होकर अपनी क़ौम से लड़ सकते हैं और ना ही आपके ख़िलाफ़ अपनी क़ौम की मदद करेंगे, तब ही उन्हें छोड़ दो। इसके बाद अब मुनाफ़िक़ीन के एक तीसरे गिरोह की निशानदेही की जा रही है।

आयत 91

سَتَجِدُوْنَ اٰخَرِيْنَ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّاْمَنُوْكُمْ وَيَاْمَنُوْا قَوْمَهُمْ ۭ

“तुम पाओगे एक और क़िस्म के लोगों को भी जो चाहते हैं कि तुमसे भी अमन में रहें और अपनी क़ौम से भी अमन में रहें।”

كُلَّمَا رُدُّوْٓا اِلَى الْفِتْنَةِ اُرْكِسُوْا فِيْهَا ۚ

“लेकिन जब भी फ़ितने की तरफ़ मोड़े जाते हैं तो उसके अंदर औंधे हो जाते हैं।”

जब भी आज़माइश का वक़्त आता है तो उसमें वो औंधे मुँह गिरते हैं। जब देखते हैं कि अपनी क़ौम का पलड़ा भारी है तो मुसलमानों के ख़िलाफ़ जंग करने के लिये तैयार हो जाते हैं कि अब तो हमारी फ़तह होने वाली है और हमें माले ग़नीमत में से हिस्सा मिल जायेगा।

فَاِنْ لَّمْ يَعْتَزِلُوْكُمْ وَيُلْقُوْٓا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوْٓا اَيْدِيَهُمْ

“पस अगर यह तुमसे किनाराकश ना रहें, तुम्हारे सामने सुलह व सलामती पेश ना करें और अपने हाथ ना रोकें”

فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ ۭ

“तो इनको पकड़ो और क़त्ल करो जहाँ कहीं भी पाओ।”

وَاُولٰۗىِٕكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۝

“यह वह लोग हैं जिनके ख़िलाफ़ हमने तुम्हें सनद (और क़ुव्वत) अता कर दी है।”

ऐसे लोगों के मामले में हमने तुम्हें खुला इख़्तियार दे दिया है कि तुम इनके ख़िलाफ़ इक़दाम कर सकते हो।

आयात 92 से 96 तक

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـــًٔا ۚ وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـــــًٔا فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَھْلِهٖٓ اِلَّآ
اَنْ يَّصَّدَّقُوْا ۭ فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَّكُمْ وَھُوَ مُؤْمِنٌ فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۭ وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَھُمْ
مِّيْثَاقٌ فَدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَھْلِهٖ وَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۚ فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ ۡ تَوْبَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَكَانَ
اللّٰهُ عَلِــيْمًا حَكِــيْمًا ۝ وَمَنْ يَّقْتُلْ مُؤْمِنًا مُّتَعَمِّدًا فَجَزَاۗؤُهٗ جَهَنَّمُ خٰلِدًا فِيْھَا وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا
عَظِيْمًا ۝ يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا ضَرَبْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوْا وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ اَلْقٰٓى اِلَيْكُمُ السَّلٰمَ لَسْتَ مُؤْمِنًا ۚ
تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۡ فَعِنْدَ اللّٰهِ مَغَانِمُ كَثِيْرَةٌ ۭ كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلُ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ فَتَبَيَّنُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ
بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝ لَا يَسْتَوِي الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ اُولِي الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ
وَاَنْفُسِهِمْ ۭ فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ عَلَي الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً ۭ وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰي ۭ وَفَضَّلَ اللّٰهُ
الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَي الْقٰعِدِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝ دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝

अब एक और मआशरती मसला आ रहा है। उस वक़्त दरअसल पूरे अरब के अंदर एक भट्टी दहक रही थी, जगह-जगह जंगें लड़ी जा रही थीं, मैदान लग रहे थे, मअरके (आक्रमण) हो रहे थे। तारीख़ और सीरत की किताबों में तो सिर्फ़ बड़े-बड़े मअरकों और ग़ज़वात का ज़िक्र हुआ है मगर हक़ीक़त में उस वक़्त पूरा मआशरा हालते जंग में था। एक चौमुखी जंग थी

जो मुसलसल जारी थी। इन आयात से उस वक़्त के अरब मआशरे की असल सूरते हाल और उस क़बाइली मआशरे के मसाइल की बहुत कुछ अक्कासी होती है। इस तरह के माहौल में फ़र्ज़ करें, एक शख्स ने किसी दूसरे को क़त्ल कर दिया। क़ातिल और मक़तूल दोनों मुसलमान हैं। क़ातिल कहता है कि मैंने अम्दन (जानबूझ कर) ऐसा नहीं किया, मैंने तो शिकार की ग़र्ज़ से तीर चलाया था मगर इत्तेफ़ाक़ से निशाना चूक गया और उसको जा लगा। तो अब यह मुसलमान को मुसलमान को क़त्ल करना दो तरह का हो सकता है, क़त्ले अम्द या क़त्ले ख़ता। यहाँ इस बारे में वज़ाहत फ़रमाई गई है।

आयत 92

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـًٔا ۚ

"किसी मोमिन के लिये यह रवा नहीं कि वह एक मोमिन को क़त्ल करे मगर ख़ता के तौर पर।"

ख़ता के तौर पर क़त्ल क्या है? निशाना चूक गया और किसी को जा लगा या सड़क पर हादसा हो गया, कोई शख्स गाड़ी के नीचे आकर मर गया। आप तो उसे मारना नहीं चाहते थे, बस यह सब कुछ आपसे इत्तेफ़ाक़ी तौर पर हो गया। चुनाँचे सऊदी अरब में हादसों के ज़रिये होने वाली मौतों के फ़ैसले इसी क़ानूने क़त्ले ख़ता के तहत होते हैं। वह क़ानून क्या है:

وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـًٔا فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ

"और जो शख्स किसी मोमिन को क़त्ल कर दे ग़लती से तो (उसके ज़िम्में है) एक मुसलमान ग़ुलाम की ग़र्दन का आज़ाद कराना"

وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّصَّدَّقُوْا ۭ

"और ख़ून बहा मक़तूल के घरवालों को अदा करना, इल्ला यह कि वह माफ़ कर दें।"

यानि क़त्ले ख़ता के बदले में क़ातिल को क़त्ल नहीं किया जायेगा बल्कि दीयत यानि ख़ून बहा अदा किया जायेगा, यह मक़तूल के वारिसों का हक़ है। और गुनाह के कफ्फ़ारे के तौर पर एक मुसलमान ग़ुलाम को आज़ाद करना होगा, यह अल्लाह का हक़ है।

فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَّكُمْ وَھُوَ مُؤْمِنٌ

"और अगर वह (मक़तूल) किसी ऐसे क़बीले से था जिससे तुम्हारी दुश्मनी है और था वह मुसलमान"

فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۭ

"तो फिर सिर्फ़ एक मुसलमान ग़ुलाम को आज़ाद करना होगा।"

क्योंकि काफ़िर क़बीले का आदमी था और अगर उसकी दीयत दी जायेगी तो वह उसके घर वालों को मिलेगी जो कि काफ़िर हैं, लिहाज़ा यहाँ दीयत माफ़ हो गई, लेकिन एक गुलाम को आज़ाद करना जो अल्लाह का हक़ था, वह बरक़रार रहेगा।

وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَھُمْ مِّيْثَاقٌ

"और अगर वह (मक़तूल) हो किसी ऐसी क़ौम से जिसके साथ तुम्हारा मुआहिदा है"

فَدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَھْلِهٖ وَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۚ

"तो फिर दीयत भी देनी होगी उसके घर वालों को और एक मोमिन ग़ुलाम भी आज़ाद करना होगा।"

गोया यह दो हक़ अलग-अलग हैं। एक तो दीयत है जो मक़तूल के वुरसा का हक़ है, इसमें यहाँ रिआयत नहीं हो सकती, अलबत्ता जो हक़ अल्लाह का अपना है यानि गुनाह के असरात को ज़ाइल करने के लिये एक मोमिन ग़ुलाम का आज़ाद करना, तो इसमें अल्लाह ने नर्मी कर दी, जिसका ज़िक्र आगे आ रहा है।

فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ ۡ تَوْبَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِــيْمًا حَكِـيْمًا ۹۲

"फिर जो यह (ग़ुलाम आज़ाद) ना कर सके तो रोज़े रखे दो महीनों के मुतावातिर। यह अल्लाह की तरफ़ से तौबा (क़ुबूल करने का ज़रिया) है, और यक़ीनन अल्लाह तो अलीम व हकीम है।"

अब आगे क़त्ले अम्द के मुताल्लिक़ तफ़सीलात का ज़िक्र है।

आयत 93

وَمَنۡ يَّقۡتُلۡ مُؤۡمِنًا مُّتَعَمِّدًا فَجَزَآؤُهٗ جَهَنَّمُ خٰلِدًا فِيۡهَا

“और जो कोई क़त्ल करेगा किसी मोमिन को जानबूझ कर तो उसका बदला जहन्नम है जिसमें वह हमेशा रहेगा”

وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيۡهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا عَظِيۡمًا ۝۹۳

“और अल्लाह का ग़ज़ब उस पर होगा, और अल्लाह ने उस पर लानत फ़रमाई है और उसके लिये बहुत बड़ा अज़ाब तैयार कर रखा है।”

जैसा कि आग़ाज़े सूरत में ज़िक्र हुआ था कि हुरमते जान और हुरमते माल के तसव्वुर पर मआशरे की बुनियाद क़ायम है। लिहाज़ा एक मुसलमान का क़त्ल कर देना अल्लाह के यहाँ एक बहुत संजीदा मामला है। यही वजह है कि सूरह मायदा (आयत:32) में क़त्ले नाहक़ को पूरी नौए इंसानी के क़त्ल के मुतरादिफ़ क़रार दिया गया है। इसलिये कि क़ातिल ने हुरमते जान को पामाल करके शजरे तमद्दुन की गोया जड़ काट दी, और उसका यह फ़अल (काम) ऐसे ही है जैसे उसने पूरी इंसानी नस्ल को मौत के घाट उतार दिया। इससे अंदाज़ा कीजिये कि हमारे यहाँ ईमान व इस्लाम कितना कुछ है और इंसानी जान की क़द्र व क़ीमत क्या है। आज हमारे मआशरे में क़त्ले अम्द के वाक़िआत रोज़मर्रा का मामूल बन चुके हैं और इंसानी जान मच्छर-मक्खी की जान की तरह अरज़ा (सस्ती) हो चुकी है।

अब अगली आयत को समझने के लिये अरब के उन मख़सूस हालात को नज़र में रखें जिनमें मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम एक-दूसरे के साथ रहते थे, मुख़्तलिफ़ इलाकों में कुछ लोग दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल हो चुके थे और कुछ अभी कुफ़्र पर क़ायम थे और कोई ज़रिया तमीज़ भी उनमें नहीं था, जगह-जगह मअरके भी हो रहे थे। अब फ़र्ज़ करें किसी इलाक़े में लड़ाई हो रही है, मुसलमान मुजाहिद समझा कि सामने से काफ़िर आ रहा है, मगर जब वह उसे क़त्ल करने के लिये बढ़ा तो उसने आगे से कलमा पढ़ कर दावा किया कि वह मुसलमान है। इस सूरते हाल में मुमकिन है समझा जाये कि उसने जान बचाने के लिये बहाना किया है। इस बारे में हुक्म दिया जा रहा है:

आयत 94

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِذَا ضَرَبۡتُمۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوۡا

“ऐ अहले ईमान, जब तुम अल्लाह की राह में निकलो तो तहक़ीक़ कर लिया करो”

وَلَا تَقُوۡلُوۡا لِمَنۡ اَلۡقٰۤى اِلَيۡكُمُ السَّلٰمَ لَسۡتَ مُؤۡمِنًا ۚ

“और जो शख़्स भी तुम्हारे सामने सलाम पेश करे (या इस्लाम पेश करे) उसको यह मत कहो कि तुम मोमिन नहीं हो।”

तुम उसकी बातिनी कैफ़ियत मालूम नहीं कर सकते। ईमान का ताल्लुक़ चूँकि दिल से है और दिल का हाल सिवाय अल्लाह के और कोई नहीं जान सकता, लिहाज़ा दुनिया में तमाम मामलात का ऐतबार ज़बानी इस्लाम (इक़रार बिल् लिसान) पर ही होगा। अगर कोई शख़्स कलमा पढ़ रहा है और अपने इस्लाम का इज़हार कर रहा है तो आपको उसके अल्फ़ाज़ का ऐतबार करना होगा। इस आयत के पसमंज़र के तौर पर रिवायात में एक वाक़िये का ज़िक्र मिलता है जो हज़रत उसामा रज़ि० के साथ पेश आया था। किसी सरीये में हज़रत उसामा रज़ि० का एक काफ़िर से दू-बर-दू मुक़ाबला हुआ। जब वह काफ़िर बिल्कुल ज़ेर हो गया और उसको यक़ीन हो गया कि बचने का कोई रास्ता नहीं तो उसने कलमा पढ़ दिया: اَشۡهَدُ اَنۡ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشۡهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَسُوۡلُ اللّٰهِ. अब ऐसी सूरते हाल में जो कोई भी होता यही समझता कि उसने जान बचाने के लिये बहाना किया है। हज़रत उसामा रज़ि० ने भी यही समझते हुए उस पर नेज़े का वार किया और उसे क़त्ल कर दिया। लेकिन दिल में एक खलिश रही। बाद में उन्होंने रसूल अल्लाह ﷺ से इसका ज़िक्र किया तो आप ﷺ ने फ़रमाया: ((اَقَالَ لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَقَتَلْتَهٗ؟)) “उसने ला इलाहा इल्ललाह कह दिया और तुमने फिर भी उसे क़त्ल कर दिया?” हज़रत उसामा रज़ि० ने जवाब दिया: “या रसूल अल्लाह! उसने तो हथियार के ख़ौफ़ से कलमा पढ़ा था।” आप ﷺ ने फ़रमाया:

((اَفَلَا شَقَقْتَ عَنْ قَلْبِهٖ حَتّٰى تَعْلَمَ اَقَالَهَا اَمْ لَا؟)) "तुमने उसका दिल चीर कर क्यों ना जान लिया कि उसने कलमा दिल से पढ़ा था या नहीं?" हज़रत उसामा रज़ि० कहते हैं कि आप ﷺ ने यह बात मुझसे बार-बार फ़रमाई, यहाँ तक कि मैं ख़्वाहिश करने लगा कि काश मैं आज ही मुसलमान हुआ होता! बाज़ रिवायात में आया है कि आप ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया कि ऐ उसामा उस दिन क्या जवाब दोगे जब वह कलमा-ए-शहादत तुम्हारे ख़िलाफ़ मुद्दई होकर आयेगा?

تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۡ

"तुम दुनिया का सामान चाहते हो"

कि ऐसे शख्स को काफ़िर क़रार दें, क़त्ल करें और माले ग़नीमत ले लें।

فَعِنْدَ اللّٰهِ مَغَانِمُ كَثِيْرَةٌ ۭ

"अल्लाह के यहाँ बड़ी ग़नीमतें हैं।"

तुम्हारे लिये बड़ी-बड़ी ममलकतों के अम्वाले ग़नीमत आने वाले हैं। इन छोटी-छोटी चीजों के लिये हुदूदुल्लाह से तजावुज़ ना करो।

كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلُ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ

"तुम ख़ुद भी तो पहले ऐसे ही थे, तो अल्लाह ने तुम पर अहसान फ़रमाया है"

आख़िर एक दौर तुम पर भी ऐसा ही गुज़रा है। तुम सब भी तो नौ मुस्लिम ही हो और एक वक़्त में तुममें से हर शख्स काफ़िर या मुशरिक ही तो था! फिर अल्लाह ही ने तुम लोगों पर अहसान फ़रमाया कि तुम्हें कलमा-ए-शहादत अता किया और रसूल अल्लाह ﷺ की दावत व तब्लीग़ से बहराहमंद होने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई। लिहाज़ा अल्लाह का अहसान मानों और इस तरीक़े से लोगों के मामले में इतनी सख़्त रविश इख़्तियार ना करो।

فَتَبَيَّنُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝۹۴

"तो (देखो) तहक़ीक़ कर लिया करो। और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे अच्छी तरह बा ख़बर है।"

अगली आयत मुबारका में जिहाद का लफ़्ज़ बा-मायने क़िताल आया है। जहाँ तक जिहाद की असल रूह का ताल्लुक़ है तो एक मोमिन गोया हर वक़्त जिहाद में मसरूफ़ है। दावत व तब्लीग़ भी जिहाद है, अपने नफ़्स के ख़िलाफ़ इताअते इलाही भी जिहाद है। अज़रूए हदीसे नबवी: ((اَلْمُجَاهِدُ مَنْ جَاهَدَ نَفْسَهٗ)) बल्कि रसूल अल्लाह ﷺ से पूछा गया: اَيُّ الْجِهَادِ اَفْضَلُ؟ "सबसे अफ़ज़ल जिहाद कौनसा है?" तो आपने फ़रमाया: ((اَنْ تُجَاهِدَ نَفْسَكَ وَهَوَاكَ فِيْ ذَاتِ اللّٰهِ عَزَّ وَجَلَّ)) "यह कि तुम अपने नफ़्स और अपनी ख़्वाहिशात के ख़िलाफ़ जिहाद करो उन्हें अल्लाह का मुतीअ बनाने के लिये।" चुनाँचे जिहाद की बहुत सी मंजिलें हैं, जिनमें से आख़री मंजिल क़िताल है। ताहम जिहाद और क़िताल के अल्फ़ाज़ क़ुरान में एक-दूसरे की जगह पर भी इस्तेमाल हुए हैं। क़ुरान में अल्फ़ाज़ के तीन ऐसे जोड़े हैं जिनमें से हर लफ़्ज़ अपने जोड़े के दूसरे लफ़्ज़ की जगह अक्सर इस्तेमाल हुआ है। उनमें से एक जोड़ा तो यही है, यानि जिहाद और क़िताल के अल्फ़ाज़, जबकि दूसरे दो जोड़े हैं "मोमिन व मुस्लिम" और "नबी व रसूल।"

आयत 95

لَا يَسْتَوِي الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ اُولِي الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۭ

"बराबर नहीं हैं अहले ईमान में से बैठे रहने वाले बग़ैर उज़्र के और वह लोग जो अल्लाह की राह में जिहाद (क़िताल) के लिये निकलते हैं अपनी जानों और मालों के साथ।"

فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً ؕ

"अल्लाह ने फ़ज़ीलत दी है उन मुजाहिदों को जो अपनी जानों और मालों से जिहाद करने वाले हैं, बैठे रहने वालों पर, एक बहुत बड़े दर्जे की।"

دَرَجَةً की तन्कीर تفخيم के लिये है, यानि बहुत बड़ा दर्जा। यहाँ क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह के लिये निकलने की बात हो रही है कि जो किसी माक़ूल उज़्र के बग़ैर क़िताल के लिये नहीं निकलता वह उसके बराबर हरग़िज़ नहीं हो सकता जो क़िताल कर रहा है। अग़र कोई अंधा है, देखने से माज़ूर है या कोई लँगड़ा है, चल नहीं सकता, ऐसे माज़ूर क़िस्म के लोग अगर क़िताल के लिये ना निकलें तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन ऐसे लोग जिनको कोई ऐसा उज़्र नहीं है, फिर भी वह बैठे रहें, यहाँ उन्हीं लोगों का ज़िक्र हो रहा है कि वह दर्जे में मुजाहिदीन के बराबर हरगिज़ नहीं हो सकते। और यह भी नोट कर लीजिये कि यह ऐसे क़िताल की बात हो रही है जिसकी हैसियत इख़्तियारी (optional) हो, लाज़िमी क़रार ना दिया गया हो। जब इस्लामी रियासत की तरफ़ से क़िताल के लिये नफ़ीरे आम हो जाये तो माज़ूरों के सिवा सबके लिये निकलना लाज़िम हो जाता है। और यह भी याद रहे कि क़िताल के लिये पहली दफ़ा नफ़ीरे आम ग़ज़वा-ए-तबूक (सन् 9 हिजरी) में हुई थी। इससे पहले क़िताल के बारे में सिर्फ़ तरगीब (persuasion) थी कि निकलो अल्लाह की राह में, हुक्म नहीं था। लिहाज़ा कोई जवाब तलबी भी नहीं थी। कोई चला गया, कोई नहीं गया, कोई गिरफ्त नहीं थी। लेकिन ग़ज़वा-ए-तबूक के लिये नफ़ीरे आम हुई थी, बाक़ायदा एक हुक्म था, लिहाज़ा जो लोग नहीं निकले उनसे वज़हें तलब की गई, उनका मुआख़्ज़ा किया गया और उनको सज़ाएँ भी दी गयीं। तो यहाँ चूँकि इख़्तियारी क़िताल की बात हो रही है इसलिये यह नहीं कहा जा रहा कि उनको पकड़ो और सज़ा दो, बल्कि यह बताया जा रहा है कि क़िताल करने वाले मुजाहिदीन अल्लाह की नज़र में बहुत अफ़ज़ल हैं। इससे पहले ऐसे क़िताल के लिये इसी सूरत (आयत:84) में {وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ} का हुक्म है, यानि मोमिनों को क़िताल पर उकसाइये, तरगीब दीजिये, आमादा कीजिये। लेकिन यहाँ वाज़ेह अंदाज़ में बताया जा रहा है कि क़िताल करने वाले और ना करने वाले बराबर नहीं हो सकते।

وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى ؕ

"(अग़रचे) सबके लिये अल्लाह की तरफ़ से अच्छा वादा है।"

चूँकि अभी क़िताल फ़र्ज़ नहीं था, नफ़ीरे आम नहीं थी, सबका निकलना लाज़िम नहीं किया गया था, इसलिये फ़रमाया गया कि तमाम मोमिनों को उनके आमाल के मुताबिक़ अच्छा अजर दिया जायेगा। क़िताल के लिये ना निकलने वालों ने अगर इतनी हिम्मत नहीं की और वह कमतर मक़ाम पर क़ानेअ (संतुष्ट) हो गये हैं तो ठीक है, अल्लाह तआला की तरफ़ से इस सिलसिले में उन पर कोई गिरफ़्त नहीं होगी।

وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ۙ﴿۹۵﴾

"लेकिन फ़ज़ीलत दी है अल्लाह तआला ने मुजाहिदों को बैठे रहने वालों पर एक अज्रे अज़ीम की (सूरत में)।"

.

आयत 96

دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً ؕ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿۹۶﴾

"(उनके लिये) उसकी तरफ़ से बुलंद दरजात भी होंगे और मग़फ़िरत व रहमत भी। और यक़ीनन अल्लाह तआला बख़्शने वाला, बहुत रहम करने वाला है।"

आयात 97 से 100 तक

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰىهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ ظَالِمِيْٓ اَنْفُسِهِمْ قَالُوْا فِيْمَ كُنْتُمْ ؕ قَالُوْا كُنَّا مُسْتَضْعَفِيْنَ فِي الْاَرْضِ ؕ قَالُوْٓا اَلَمْ تَكُنْ
اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُهَاجِرُوْا فِيْهَا ؕ فَاُولٰٓئِكَ مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ؕ وَسَآءَتْ مَصِيْرًا ﴿۹۷﴾ اِلَّا الْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ

وَالنِّسَآءِ وَالْوِلْدَانِ لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ حِيْلَةً وَّلَا يَهْتَدُوْنَ سَبِيْلًا ﴿٩٨﴾ فَاُولٰٓئِكَ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّعْفُوَ عَنْهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ
عَفُوًّا غَفُوْرًا ﴿٩٩﴾ وَمَنْ يُّهَاجِرْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يَجِدْ فِي الْاَرْضِ مُرٰغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً ۭ وَمَنْ يَّخْرُجْ مِنْۢ بَيْتِهٖ مُهَاجِرًا اِلَى
اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ثُمَّ يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَي اللّٰهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٠٠﴾

अब उन लोगों का ज़िक्र आ रहा है जो हिजरत करने में पसोपेश (टाल-मटोली) कर रहे थे, इस सिलसिले में उन्हें कोई उज़र भी मानेअ (रुकावट) नहीं था, मगर फिर भी वह अपने क़बीले या मक्का शहर में अपने घरों में आराम से बैठे थे।

आयत 97

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰىھُمُ الْمَلٰۗئِكَةُ ظَالِمِيْٓ اَنْفُسِهِمْ

"यक़ीनन वह लोग कि जिनको फ़रिश्ते इस हाल में क़ब्ज़ करेंगे कि वह अपनी जानों पर ज़ुल्म कर रहे थे"

यानि उन्होंने हिजरत नहीं की थी, इस सिलसिले में रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत नहीं की थी। आख़िर मौत तो आनी है, लिहाज़ा फ़रिश्ते जब उनकी रूहें क़ब्ज़ करेंगे तो उनके साथ इस तरह का मकालमा करेंगे:

قَالُوْا فِيْمَ كُنْتُمْ ۭ

"वह उनसे कहेंगे यह तुम किस हाल में थे।"

तुमने ईमान का दावा तो किया था, लेकिन जब रसूल अल्लाह ﷺ ने हिजरत का हुक्म दिया तो हिजरत क्यों नहीं की? तुम्हें क्या हो गया था?

قَالُوْا كُنَّا مُسْتَضْعَفِيْنَ فِي الْاَرْضِ ۭ

"वह कहेंगे हम मजबूर और कमज़ोर बना दिये गये थे इस ज़मीन में।"

قَالُوْٓا اَلَمْ تَكُنْ اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُھَاجِرُوْا فِيْھَا ۭ

"वह (फ़रिश्ते) कहेंगे क्या अल्लाह की ज़मीन कुशादा नहीं थी कि तुम उसमें हिजरत करते?"

فَاُولٰۗئِكَ مَاْوٰىھُمْ جَهَنَّمُ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا ﴿٩٧﴾

"तो यह वह लोग हैं जिनका ठिकाना जहन्नम है, और वह बहुत बुरी जगह है ठहरने की।"

आयत 98

اِلَّا الْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاۗءِ وَالْوِلْدَانِ

"सिवाय उन मर्दों, औरतों और बच्चों के जिनको वाक़िअतन दबा लिया गया हो"

जिन लोगों को कमज़ोर समझ कर दबा लिया गया हो, वाक़िअतन ज़ंजीरों में जकड़ कर घरों में बंद कर दिया गया हो, उनका मामला और है। या फिर कोई औरत है जिसके लिये तन्हा सफ़र करना मुमकिन नहीं। वैसे तो ऐसी औरतें भी थी जिन्होंने तन्हा हिजरतें कीं, लेकिन हर एक के लिये तो ऐसा मुमकिन नहीं था।

لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ حِيْلَةً وَّلَا يَهْتَدُوْنَ سَبِيْلًا ﴿٩٨﴾

"ना तो वह कोई तदबीर कर सकते हैं और ना वह रास्ता जानते हैं।"

आयत 99

فَاُولٰٓىِٕكَ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّعْفُوَ عَنْهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَفُوًّا غَفُوْرًا ﴿٩٩﴾

"बईद नहीं कि ऐसे लोगों को अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा दे, और अल्लाह वाक़िअतन बख़्शने वाला और माफ़ फ़रमाने वाला है।"

ऐसे बेबस और लाचार मर्दों, बच्चों और औरतों के लिये इसी सूरह (आयत:75) में हुक्म हुआ था कि उनके लिये क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह करो और उन्हें जाकर छुड़ाओ। लेकिन जो लोग हिजरत के इस वाज़ेह हुक्म के बाद भी बग़ैर उज़्र के बैठे रहे हैं उनके बारे में मुसलमानों को बताया गया है कि वह मुनाफ़िक़ हैं, उनसे तुम्हारा कोई ताल्लुक़ नहीं, जब तक कि वह हिजरत ना करें। बल्कि क़िताल के मामले में वह बिल्कुल कुफ़्फ़ार के बराबर हैं।

आयत 100

وَمَنْ يُّهَاجِرْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"और जो कोई हिजरत करेगा अल्लाह की राह में"

يَجِدْ فِي الْاَرْضِ مُرٰغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً ۭ

"वह पायेगा ज़मीन में बड़े ठिकाने और बड़ी वुसअत।"

जैसे सूरह अन्कबूत में फ़रमाया: {يٰعِبَادِيَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّ اَرْضِيْ وَاسِعَةٌ فَاِيَّايَ فَاعْبُدُوْنِ} (आयत:56) "ऐ मेरे वह बन्दों जो ईमान लाये हो, मेरी ज़मीन बहुत कुशादा है, बस तुम लोग मेरी ही बंदगी करो!" अगर यहाँ अपने वतन में अल्लाह की बंदगी नहीं कर सकते हो तो कहीं और चले जाओ।

وَمَنْ يَّخْرُجْ مِنْۢ بَيْتِهٖ مُهَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ثُمَّ يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ

"और जो कोई अपने घर से निकल खड़ा हुआ हिजरत के लिये अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़, फिर उसे मौत ने आ लिया"

فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَي اللّٰهِ ۭ

"तो उसका अजर अल्लाह के ज़िम्मे साबित हो गया।"

यानि जिस किसी ने भी हिजरत की, फ़ी सबीलिल्लाह, दौलत के लिये या हुसूले दुनिया के लिये नहीं, बल्कि अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की रज़ाजोई के लिये, वह असल हिजरत है। हदीस में इसकी मज़ीद वज़ाहत मिलती है:

اِنَّمَا الْاَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ وَاِنَّمَا لِكُلِّ امْرِئٍ مَا نَوٰى، فَمَنْ كَانَتْ هِجْرَتُهٗ اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ فَهِجْرَتُهٗ اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ، وَمَنْ كَانَتْ هِجْرَتُهٗ لِدُنْيَا يُصِيْبُهَا اَوِ امْرَاَةٍ يَنْكِحُهَا فَهِجْرَتُهٗ اِلٰى مَا هَاجَرَ اِلَيْهِ

"आमाल का दारोमदार नीयतों पर ही है और बिलाशुबह हर इंसान के लिये वही कुछ है जिसकी उसने नीयत की। पस जिसने हिजरत की अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ तो वाक़ई उसकी हिजरत अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ है, और जिसने हिजरत की दुनिया कमाने के लिये या किसी औरत से शादी रचाने के लिये तो उसकी हिजरत उसी चीज़ की तरफ़ शुमार होगी जिसका उसने क़सद (इरादा) किया।"

चुनाँचे जिसने अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ हिजरत की, ख़ुलूसे नीयत के साथ घर से निकल खड़ा हुआ और रास्ते ही में फ़ौत हो गया, मदीना मुनव्वरा नहीं पहुँच सका, हुज़ूर ﷺ के क़दमों तक उसकी रसाई नहीं हो सकी, वह अपना मक़सूद हासिल नहीं कर सका, तो फिर भी वह कामयाब व कामरान है। अल्लाह तआला उसकी नीयत के मुताबिक़ उसे हिजरत का अजर ज़रूर अता फ़रमायेगा।

وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٠٠﴾

"और यक़ीनन अल्लाह बख़्शने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।"

आयात 101 से 104 तक

وَاِذَا ضَرَبۡتُمۡ فِى الۡاَرۡضِ فَلَيۡسَ عَلَيۡكُمۡ جُنَاحٌ اَنۡ تَقۡصُرُوۡا مِنَ الصَّلٰوةِ ‌ۖ اِنۡ خِفۡتُمۡ اَنۡ يَّفۡتِنَكُمُ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا ‌ؕ اِنَّ
الۡكٰفِرِيۡنَ كَانُوۡا لَـكُمۡ عَدُوًّا مُّبِيۡنًا ﴿۱۰۱﴾ وَاِذَا كُنۡتَ فِيۡهِمۡ فَاَقَمۡتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ فَلۡتَقُمۡ طَآئِفَةٌ مِّنۡهُمۡ مَّعَكَ وَلۡيَاۡخُذُوۡۤا
اَسۡلِحَتَهُمۡ فَاِذَا سَجَدُوۡا فَلۡيَكُوۡنُوۡا مِنۡ وَّرَآئِكُمۡ وَلۡتَاۡتِ طَآئِفَةٌ اُخۡرٰى لَمۡ يُصَلُّوۡا فَلۡيُصَلُّوۡا مَعَكَ وَلۡيَاۡخُذُوۡا
حِذۡرَهُمۡ وَاَسۡلِحَتَهُمۡ‌ ۚ وَدَّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا لَوۡ تَغۡفُلُوۡنَ عَنۡ اَسۡلِحَتِكُمۡ وَاَمۡتِعَتِكُمۡ فَيَمِيۡلُوۡنَ عَلَيۡكُمۡ مَّيۡلَةً وَّاحِدَةً‌ ؕ وَلَا
جُنَاحَ عَلَيۡكُمۡ اِنۡ كَانَ بِكُمۡ اَذًى مِّنۡ مَّطَرٍ اَوۡ كُنۡتُمۡ مَّرۡضٰۤى اَنۡ تَضَعُوۡۤا اَسۡلِحَتَكُمۡ‌ ۚ وَخُذُوۡا حِذۡرَكُمۡ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ
لِلۡكٰفِرِيۡنَ عَذَابًا مُّهِيۡنًا ﴿۱۰۲﴾ فَاِذَا قَضَيۡتُمُ الصَّلٰوةَ فَاذۡكُرُوا اللّٰهَ قِيٰمًا وَّقُعُوۡدًا وَّعَلٰى جُنُوۡبِكُمۡ‌ ۚ فَاِذَا اطۡمَاۡنَنۡتُمۡ فَاَقِيۡمُوا
الصَّلٰوةَ‌ ۚ اِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتۡ عَلَى الۡمُؤۡمِنِيۡنَ كِتٰبًا مَّوۡقُوۡتًا ﴿۱۰۳﴾ وَلَا تَهِنُوۡا فِى ابۡتِغَآءِ الۡقَوۡمِ‌ ؕ اِنۡ تَكُوۡنُوۡا تَاۡلَمُوۡنَ فَاِنَّهُمۡ
يَاۡلَمُوۡنَ كَمَا تَاۡلَمُوۡنَ‌ ۚ وَتَرۡجُوۡنَ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا يَرۡجُوۡنَ‌ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا ﴿۱۰۴﴾

इस रुकूअ में फिर शरीअत के कुछ अहकाम और इबादात की कुछ तफ़ासील हैं। गोआ ख़िताब का रुख़ अब फिर अहले ईमान की तरफ़ है।

आयत 101

وَاِذَا ضَرَبۡتُمۡ فِى الۡاَرۡضِ فَلَيۡسَ عَلَيۡكُمۡ جُنَاحٌ اَنۡ تَقۡصُرُوۡا مِنَ الصَّلٰوةِ ‌ۖ

"और (ऐ मुसलमानों!) जब तुम ज़मीन में सफ़र करो तो तुम पर कोई गुनाह नहीं अगर तुम नमाज़ को कुछ कम कर लिया करो"

اِنۡ خِفۡتُمۡ اَنۡ يَّفۡتِنَكُمُ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا ‌ؕ

"अगर तुम्हें अंदेशा हो कि काफ़िर तुम्हें नुक़सान पहुँचाऐंगे।"

اِنَّ الۡكٰفِرِيۡنَ كَانُوۡا لَـكُمۡ عَدُوًّا مُّبِيۡنًا ﴿۱۰۱﴾

"यक़ीनन यह काफ़िर तुम्हारे ख़ुले दुश्मन हैं।"

यह तो है हालते सफ़र में क़सरे सलाह (नमाज़) का हुक्म। लेकिन जंग की हालत में क़सर यानि सलातुल ख़ौफ़ का तरीक़ा अगली आयत में मज़कूर है। हालते जंग में जब पूरे लश्कर का एक साथ नमाज़ पढ़ना मुमकिन ना रहे तो गिरोहों की शक्ल में नमाज़ अदा करने की इजाज़त है। लेकिन ऐसी सूरत में जब हुज़ूर ﷺ ख़ुद भी लश्कर में मौजूद होते तो कोई एक गिरोह ही आप ﷺ के साथ नमाज़ पढ़ सकता था, जबकि दूसरे गिरोह के लोगों को लाज़िमन महरूमी का अहसास होता। लिहाज़ा इस मसले के हल के लिये सलातुल ख़ौफ़ अदा करने की बहुत उम्दा तदबीर बताई गयी।

.

आयत 102

وَاِذَا كُنۡتَ فِيۡهِمۡ فَاَقَمۡتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ

"और (ऐ नबी ﷺ) जब आप ﷺ उनके दरमियान मौजूद हों और (हालते जंग में) उन्हें नमाज़ पढ़ाने खड़े हों"

فَلۡتَقُمۡ طَآئِفَةٌ مِّنۡهُمۡ مَّعَكَ وَلۡيَاۡخُذُوۡۤا اَسۡلِحَتَهُمۡ

"तो उनमें से एक गिरोह को खड़ा होना चाहिये आप ﷺ के साथ, और वह अपना अस्लाह लिये हुए हों।"

فَاِذَا سَجَدُوْا فَلْيَكُوْنُوْا مِنْ وَّرَآىِٕكُمْ

"फिर जब वह सज्दा कर चुकें तो तुम्हारे पीछे हो जाएँ"

وَلْتَاْتِ طَآىِٕفَةٌ اُخْرٰى لَمْ يُصَلُّوْا فَلْيُصَلُّوْا مَعَكَ

"और आए दूसरा गिरोह जिन्होंने अभी नमाज़ नहीं पढ़ी और वह आप ﷺ के साथ नमाज़ पढ़ें"

यह हुक्म सलातुल ख़ौफ़ के बारे में है। इसकी अमली सूरत यह थी कि हुज़ूर ﷺ ने एक रकअत नमाज़ पढ़ा दी और उसके बाद आप ﷺ बैठे रहे, दूसरी रकअत के लिये खड़े नहीं हुए, जबकि मुक़तदियों ने दूसरी रकअत ख़ुद अदा कर ली। दो रकअतें पूरी करके वह महाज़ पर वापस चले गये तो दूसरे गिरोह के लोग जो अब तक नमाज़ में शरीक नहीं हुए थे, नमाज़ के लिए हुज़ूर ﷺ के पीछे आकर खड़े हो गए। अब हुज़ूर ﷺ ने दूसरी रकअत इस गिरोह के लोगों की मौजूदगी में पढ़ाई। इसके बाद हुज़र ﷺ ने सलाम फेर दिया, लेकिन मुक़तदियों ने अपनी दूसरी रकअत इन्फ़रादी तौर पर अदा कर ली। इस तरीक़े से लश्कर में से कोई शख़्स भी हुज़ूर ﷺ की इमामत के शर्फ़ और सआदत से महरूम ना रहा।

وَلْيَاْخُذُوْا حِذْرَهُمْ وَاَسْلِحَتَهُمْ

"और उनको भी चाहिये कि वह अपनी हिफ़ाज़त का सामान और अपना अस्लाह अपने साथ रखें।"

وَدَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ فَيَمِيْلُوْنَ عَلَيْكُمْ مَّيْلَةً وَّاحِدَةً

"यह काफ़िर लोग तो इसी ताक में रहते हैं कि तुम जैसे ही अपने अस्लाह और साज़ो सामान से ज़रा गाफ़िल हो, तो वह तुम पर एक दम टूट पड़ें।"

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ كَانَ بِكُمْ اَذًى مِّنْ مَّطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَنْ تَضَعُوْٓا اَسْلِحَتَكُمْ

"और तुम पर कोई गुनाह नहीं है कि अगर तुम्हें कोई तकलीफ़ हो बारिश की वजह से या तुम बीमार हो जाओ और (ऐसी सूरतों में) तुम अपना अस्लाह उतार कर रख दो।"

وَخُذُوْا حِذْرَكُمْ

"अलबत्ता अपना बचाव ज़रूर कर लिया करो।"

अगर तलवार, नेज़ा वग़ैरह जिस्म से बंधे हुए हों और इस हालत में नमाज़ पढ़ना मुश्किल हो तो यह असला वग़ैरह खोल कर अलैहदा रख देने में कोई हर्ज नहीं, बशर्ते कि जंग के हालात इजाज़त देते हों, लेकिन ढ़ाल वग़ैरह अपने पास ज़रूर मौजूद रहे ताकि अचानक कोई हमला हो तो इंसान अपने आपको उस फ़ौरी हमले से बचा सके और अपने हथियार संभाल सके।

اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ۝١٠٢

"यक़ीनन अल्लाह ने काफ़िरों के लिये बहुत ज़िल्लत आमेज़ अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 103

فَاِذَا قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ

"फिर जब तुम (इस तरीक़े से) नमाज़ अदा कर लो"

فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيٰمًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِكُمْ

"तो फिर ज़िक्र करो अल्लाह का खड़े हुए, बैठे हुए और लेटे हुए।"

चलते-फिरते, उठते-बैठते, सवारी पर, पैदल चलते हुए हर हालत में अल्लाह का ज़िक्र जारी रहना चाहिये। यह ज़िक्रे कसीर सिर्फ़ नमाज़ के साथ मख़्सूस नहीं बल्कि हर वक़्त और हर हालत में इसका अहतमाम होना चाहिये। जैसे सूरह अल् जुमा (आयत:10) में हुक्म दिया गया है: فَاِذَا قُضِيَتِ الصَّلٰوةُ فَانْتَشِرُوْا فِي الْاَرْضِ وَابْتَغُوْا مِنْ }

{فَضۡلِ اللّٰہِ وَاذۡکُرُوا اللّٰہَ کَثِیۡرًا لَّعَلَّکُمۡ تُفۡلِحُوۡنَ} "फिर जब नमाज़ पूरी हो जाए तो ज़मीन में फैल जाओ और अल्लाह का फ़ज़ल तलाश करो, और अल्लाह को कसरत से याद करो ताकि तुम फ़लाह पा जाओ।" चुनाँचे नमाज़ के बाद भी और कारोबारी ज़िन्दगी की मसरूफ़ियात के दौरान भी ज़िक्रे कसीर ज़ारी रखो। हर हाल में अल्लाह को याद करते रहो, उसके ज़िक्र में मशगूल रहो। दुआ-ए-मासूरह और दुआ-ए-मसनून का अहतमाम करो, अपनी ज़बानों, ज़हनों और दिलों को उसके ज़िक्र से तरोताज़ा रखो।

فَاِذَا اطۡمَاۡنَنۡتُمۡ فَاَقِیۡمُوا الصَّلٰوۃَ

"फिर जब तुम्हें अमन हासिल हो जाए तो फिर नमाज़ को क़ायम करो (तमाम आदाब व शराइत के साथ)।"

यानि नमाज़ की यह शक्ल (सलातुल ख़ौफ़) सिर्फ़ इज़्तरारी (emergency) हालत में होगी, मगर जब ख़ौफ़ जाता रहे और हालते अमन बहाल हो जाए तो नमाज़ को शरीअत के अहकाम और आदाब के ऐन मुताबिक़ अदा करना ज़रूरी है।

اِنَّ الصَّلٰوۃَ کَانَتۡ عَلَی الۡمُؤۡمِنِیۡنَ کِتٰبًا مَّوۡقُوۡتًا ﴿۱۰۳﴾

"यक़ीनन नमाज़ अहले ईमान पर फ़र्ज़ की गई है वक़्त की पाबंदी के साथ।"

यानि नमाज़ की फ़र्ज़ियत बाक़ायदा उसके अवक़ात के साथ है। नमाज़ के अवक़ात के ज़िमन में एक हदीस में तफ़सील मज़कूर है कि हज़रत जिब्रील अलै० ने दो दिन रसूल अल्लाह ﷺ को नमाज़ पढ़ाई। एक दिन पाँचो नमाज़ें अव्वल वक़्त में जबकि दूसरे दिन तमाम नमाज़ें आख़िर वक़्त में पढ़ाईं और बताया कि नमाज़ों के अवक़ात इन हदों के माबैन (बीच) हैं।

आयत 104

وَلَا تَہِنُوۡا فِی ابۡتِغَآءِ الۡقَوۡمِ ؕ

"और उस दुश्मन गिरोह का पीछा करने में कमज़ोरी ना दिखाओ।"

हक़ व बातिल की जंग अब फ़ैसलाकुन मरहले में दाख़िल हो रही हैं। इस आख़री मरहले में आकर थक ना जाना और दुश्मन का पीछा करने में सुस्त मत पड़ जाना, हिम्मत ना हार देना।

اِنۡ تَکُوۡنُوۡا تَاۡلَمُوۡنَ فَاِنَّہُمۡ یَاۡلَمُوۡنَ کَمَا تَاۡلَمُوۡنَ ۚ

"अग़र तुम्हें तकलीफ़ पहुँचती है तो तुम्हारी तरह उन्हें भी तो तकलीफ़ पहुँचती है।"

यह बड़ा प्यारा अंदाज़ है कि इस कशमकश में अगर तुम लोग नुक़सान उठा रहे हो तो क्या हुआ? तुम्हारे दुश्मन भी तो वैसे ही नुक़सान से दो-चार हो रहे हैं, उन्हें भी तो तकालीफ़ पहुँच रही हैं, वह भी तो ज़ख़्म पर ज़ख़्म खा रहे हैं, उनके लोग भी तो मर रहे हैं।

وَتَرۡجُوۡنَ مِنَ اللّٰہِ مَا لَا یَرۡجُوۡنَ ؕ

"और तुम अल्लाह से ऐसी उम्मीदें रखते हो जैसी उम्मीदें वह नहीं रखते।"

तुम्हें तो जन्नत की उम्मीद है, अल्लाह तआला से मग़फ़िरत की उम्मीद है, जबकि उन्हें ऐसी कोई उम्मीद नहीं है। लिहाज़ा इस ऐतबार से तुम्हें तो उनसे कहीं बढ़ कर पुरजोश होना चाहिये। सूरह आले इमरान की आख़री आयत में भी अहले ईमान को मुख़ातिब करके फ़रमाया गया है (आयत:200): {یٰۤاَیُّہَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوا اصۡبِرُوۡا وَصَابِرُوۡا وَرَابِطُوۡا ۟} "ऐ ईमान वालो, सब्र से काम लो और सब्र में अपने दुश्मनों से बढ़ जाओ और मरबूत (एक साथ) रहो।" तो आप लोगों को सब्र व इस्तकामत में उनसे बहुत आगे होना चाहिये, क्योंकि तुम्हारा सहारा तो अल्लाह है: {وَاصۡبِرۡ وَمَا صَبۡرُکَ اِلَّا بِاللّٰہِ} (अल् नहल:127) "आप सब्र कीजिये, और आपका सब्र तो बस अल्लाह ही की तौफ़ीक़ से है।" तुम्हारे दुश्मनों के तो मनगढ़त क़िस्म के ख़ुदा हैं। उनके देवताओं और देवियों की ख़ुद उनके दिलों में कोई हक़ीक़ी क़द्र व क़ीमत नहीं है, फिर भी वह अपने बातिल मअबूदों के लिये अपनी जान जोख़िम में डाल रहे हैं तो ऐ मुसलमानों! तुम्हें तो उनसे कई गुना ज़्यादा क़ुर्बानियों के लिये हर वक़्त तैयार रहना चाहिये।

وَکَانَ اللّٰہُ عَلِیۡمًا حَکِیۡمًا ﴿۱۰۴﴾

"और यक़ीनन अल्लाह अलीम भी है और हकीम भी।"

यह चंद आयतें तो थीं अहले ईमान से ख़िताब में। इसके बाद अगले रुकूअ में फिर मुनाफ़िक़ीन का ज़िक्र आ रहा है।

आयात 105 से 115 तक

إِنَّآ أَنزَلْنَآ إِلَيْكَ ٱلْكِتَٰبَ بِٱلْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ ٱلنَّاسِ بِمَآ أَرَىٰكَ ٱللَّهُ ۚ وَلَا تَكُن لِّلْخَآئِنِينَ خَصِيمًا ﴿١٠٥﴾ وَٱسْتَغْفِرِ ٱللَّهَ ۖ إِنَّ
ٱللَّهَ كَانَ غَفُورًا رَّحِيمًا ﴿١٠٦﴾ وَلَا تُجَٰدِلْ عَنِ ٱلَّذِينَ يَخْتَانُونَ أَنفُسَهُمْ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ لَا يُحِبُّ مَن كَانَ خَوَّانًا أَثِيمًا ﴿١٠٧﴾
يَسْتَخْفُونَ مِنَ ٱلنَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُونَ مِنَ ٱللَّهِ وَهُوَ مَعَهُمْ إِذْ يُبَيِّتُونَ مَا لَا يَرْضَىٰ مِنَ ٱلْقَوْلِ ۚ وَكَانَ ٱللَّهُ بِمَا
يَعْمَلُونَ مُحِيطًا ﴿١٠٨﴾ هَٰٓأَنتُمْ هَٰٓؤُلَآءِ جَٰدَلْتُمْ عَنْهُمْ فِى ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا فَمَن يُجَٰدِلُ ٱللَّهَ عَنْهُمْ يَوْمَ ٱلْقِيَٰمَةِ أَم مَّن يَكُونُ
عَلَيْهِمْ وَكِيلًا ﴿١٠٩﴾ وَمَن يَعْمَلْ سُوٓءًا أَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهُۥ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ ٱللَّهَ يَجِدِ ٱللَّهَ غَفُورًا رَّحِيمًا ﴿١١٠﴾ وَمَن يَكْسِبْ إِثْمًا
فَإِنَّمَا يَكْسِبُهُۥ عَلَىٰ نَفْسِهِۦ ۚ وَكَانَ ٱللَّهُ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿١١١﴾ وَمَن يَكْسِبْ خَطِيٓـَٔةً أَوْ إِثْمًا ثُمَّ يَرْمِ بِهِۦ بَرِيٓـًٔا فَقَدِ ٱحْتَمَلَ بُهْتَٰنًا
وَإِثْمًا مُّبِينًا ﴿١١٢﴾ وَلَوْلَا فَضْلُ ٱللَّهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهُۥ لَهَمَّت طَّآئِفَةٌ مِّنْهُمْ أَن يُضِلُّوكَ وَمَا يُضِلُّونَ إِلَّآ أَنفُسَهُمْ ۖ وَمَا
يَضُرُّونَكَ مِن شَىْءٍ ۚ وَأَنزَلَ ٱللَّهُ عَلَيْكَ ٱلْكِتَٰبَ وَٱلْحِكْمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُن تَعْلَمُ ۚ وَكَانَ فَضْلُ ٱللَّهِ عَلَيْكَ عَظِيمًا
﴿١١٣﴾ لَّا خَيْرَ فِى كَثِيرٍ مِّن نَّجْوَىٰهُمْ إِلَّا مَنْ أَمَرَ بِصَدَقَةٍ أَوْ مَعْرُوفٍ أَوْ إِصْلَٰحٍۭ بَيْنَ ٱلنَّاسِ ۚ وَمَن يَفْعَلْ ذَٰلِكَ ٱبْتِغَآءَ
مَرْضَاتِ ٱللَّهِ فَسَوْفَ نُؤْتِيهِ أَجْرًا عَظِيمًا ﴿١١٤﴾ وَمَن يُشَاقِقِ ٱلرَّسُولَ مِنۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ ٱلْهُدَىٰ وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيلِ
ٱلْمُؤْمِنِينَ نُوَلِّهِۦ مَا تَوَلَّىٰ وَنُصْلِهِۦ جَهَنَّمَ ۖ وَسَآءَتْ مَصِيرًا ﴿١١٥﴾

आयत 105

إِنَّآ أَنزَلْنَآ إِلَيْكَ ٱلْكِتَٰبَ بِٱلْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ ٱلنَّاسِ بِمَآ أَرَىٰكَ ٱللَّهُ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) यक़ीनन हमने आप ﷺ पर किताब नाज़िल की है हक़ के साथ ताकि आप ﷺ लोगों के माबैन फ़ैसला करें उसके मुताबिक़ जो अल्लाह ने आपको दिखाया है"

यानि एक तो अल्लाह ने अपने रसूल ﷺ को किताब दी है, क़ानून दिया है, इसके साथ आप ﷺ को बसीरते ख़ास दी है। मसलन अदालत में एक जज बैठा है, उसके सामने क़ानून की किताब है, मुकदमें से मुताल्लिक़ मुतलक़ा रिकार्ड है, शहादतें हैं, अब उसकी अपनी अक़्ल (sixth sense) और क़ुव्वते फ़ैसला भी होती है, जिसको बरूएकार (इस्तेमाल) लाकर वह फ़ैसला करता है। यही वह चीज़ है जिसके बारे में अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि जैसा हम आप ﷺ को दिखाते हैं उसके मुताबिक़ आप ﷺ फ़ैसला करें।

وَلَا تَكُن لِّلْخَآئِنِينَ خَصِيمًا ﴿١٠٥﴾

"और आप ﷺ ख्यानत करने वालों की तरफ़ से झगड़ने वाले ना बने।"

यानि आप ﷺ उनकी तरफ़ से वकालत ना फ़रमायें। एक शख़्स जो कहने को तो मुसलमान है लेकिन है ख़ाइन, आप ﷺ को उसकी तरफ़दारी नहीं करनी चाहिये। इसके पसमंज़र में दरअसल एक वाक़्या है। एक मुनाफ़िक़ ने किसी मुसलमान के घर में चोरी के लिये नक़ब (सेंध) लगाई और वहाँ से आटे का एक थैला और कुछ अस्लाह चुरा लिया। आटे

के थैले में सुराख़ था, जब वहाँ से वह अपने घर की तरफ़ चला तो सुराख़ में से आटा थोड़ा-थोड़ा गिरता गया। इस तरह उसके रास्ते और घर की निशानदेही होती गई, मगर उसे ख़बर नहीं थी कि आटे की लकीर उसका राज़ फ़ाश कर रहीं है। घर पहुँच कर उसे ख़्याल आया कि मुमकिन है मुझ पर शक़ हो जाये, चुनाँचे उसने उसी वक़्त जाकर वह सामान एक यहूदी के यहाँ अमानतन रखवा दिया, लेकिन आटे का निशान वहाँ भी पहुँच गया अगले रोज़ जब तलाश शुरू हुई तो आटे की लकीर के ज़रिये लोग खोज लगाते हुए उसके मकान पर पहुँच गये, लेकिन पूछने पर उसने साफ़ इन्कार कर दिया। तलाशी ली गई, मग़र कोई चीज़ बरामद ना हुई। जब लोगों ने देखा कि आटे के निशानात मज़ीद आगे जा रहे हैं तो वह खोज लगाते हुए यहूदी के घर पहुँचे, उसके यहाँ से सामान भी बरामद हो गया। यहूदी ने हक़ीक़त बयान कर दी यह सामान रात को फलाँ शख्स ने उसके पास अमानतन रखवाया था। मुनाफ़िक़ की क़ौम के लोगों ने कहा कि यहूदी झूठ बोलता है, वही चोर है। जब कोई फ़ैसला ना हो सका तो यह झगड़ा हुज़ूर ﷺ के सामने लाया गया। मुनाफ़िक़ के क़बीले वालों ने क़समें खा-खा कर ख़ूब वकालत की कि हमारा यह आदमी तो बहुत नेक है, इस पर ख़्वाह मख़्वाह का झूठा इल्ज़ाम लग रहा है। यहाँ तक कि हुज़ूर ﷺ का दिल भी उस शख्स के बारे में कुछ पसीजने लगा। इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि आप ख्यानत करने वाले के हिमायती ना बनें, उसकी तरफ़ से वकालत ना करें, उसका सहारा ना बनें, उसको मदद ना पहुँचायें। यहाँ خَصِيْمًا के मायने हैं झगड़ा करने वाला, बहस करने वाला। لِّلْخَآىِٕنِيْنَ का मतलब है "ख़ाइन लोगों के हक़ में।" लेकिन अग़र عَلَى الْخَآىِٕنِيْنَ होता तो इसका मतलब होता "ख़ाइन लोगों के ख़िलाफ़।"

आयत 106

وَّاسْتَغْفِرِ اللّٰهَ ۭاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ١٠٦ۚ

"और अल्लाह से अस्तग़फ़ार करें, यक़ीनन अल्लाह तआला बख़्शने वाला बहुत रहम करने वाला है।"

यानि उस मुनाफ़िक़ के हक़ में आप ﷺ की तबीयत में जो नर्मी पैदा हो गई थी उस पर अल्लाह से अस्तग़फ़ार कीजिये, मग़फ़िरत तलब कीजिये।

आयत 107

وَلَا تُجَادِلْ عَنِ الَّذِيْنَ يَخْتَانُوْنَ اَنْفُسَھُمْ ۭ

"और आप ﷺ मत झगडिये उन लोगों की तरफ़ से जो अपनी जानों के साथ ख्यानत करते हैं।"

इस हुक्म के हवाले से ज़रा मसला-ए-शफ़ाअत पर भी ग़ौर करें। हम यह उम्मीद लगाये बैठे हैं कि हुज़ूर ﷺ हमारी तरफ़ से शफ़ाअत करेंगे, चाहे हमने बेईमानियाँ की हैं, हरामख़ोरियाँ की हैं, शरीअत की धज्जियाँ बिखेरी हैं। लेकिन यहाँ आप ﷺ को दो टूक अंदाज़ में ख़ाइन लोगों की वकालत से मना किया जा रहा है।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ خَوَّانًا اَثِــيْمًا ١٠٧ۙ

"यक़ीनन अल्लाह तआला को बिल्कुल पसंद नहीं है ख्यानत में बहुत बढ़े हुए और गुनहगार लोग।"

आयत 108

يَّسْتَخْفُوْنَ مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُوْنَ مِنَ اللّٰهِ

"यह लोगों से तो छुपते हैं मगर अल्लाह से नहीं छुप सकते"

यह लोग इंसानों से अपनी हरकतों को छुपा सकते हैं मगर अल्लाह तआला से नहीं छुपा सकते।

وَھُوَ مَعَھُمْ اِذْ يُبَيِّتُوْنَ مَا لَا يَرْضٰى مِنَ الْقَوْلِ ۭ

"और वह तो उनके साथ होता है जब वह रातों को छुप कर उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ मशवरे करते हैं।"

यह मुनाफ़िक़ों के बारे में फ़रमाया जा रहा है कि जब वह मुसलमानों और रसूल ﷺ के ख़िलाफ़ चोरी-छुपे साज़िशें कर रहे होते हैं तो अल्लाह तआला उनके साथ मौजूद होता है। अगर अल्लाह पर उनका ईमान हो तो उन्हें मालूम हो कि अल्लाह हमारी बातें सुन रहा है। यह मुसलमानों से डरते हैं, उनसे अपनी बातों को ख़ुफ़िया रखते हैं, मग़र इन बबदबख्तों को यह ख़्याल नहीं आता कि अल्लाह तआला तो हर वक़्त हमारे पास मौजूद है, उससे तो कुछ नहीं छुप सकता।

وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطًا ﴿١٠٨﴾

"और जो कुछ वह कर रहें हैं अल्लाह तआला उसका अहाता किये हुए हैं।"

यानि उसकी पकड़ से कहीं बाहर नहीं निकल सकते।

आयत 109

هٰٓاَنْتُمْ هٰٓؤُلَاۗءِ جٰدَلْتُمْ عَنْھُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۣ

"यह तुम लोग हो जिन्होंने दुनिया की ज़िन्दगी में इन (मुजरिमों) की तरफ़ से झगड़ा कर लिया।"

فَمَنْ يُّجَادِلُ اللّٰهَ عَنْھُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ

"मग़र कयामत के दिन अल्लाह से इनके बारे में कौन झगड़ा करेगा?"

اَمْ مَّنْ يَّكُوْنُ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا ﴿١٠٩﴾

"या कौन होगा जो (वहाँ) उनका वकील बन सकेगा?"

यह ख़िताब है उस मुनाफ़िक़ चोर के क़बीले के लोगों से कि ऐ लोगों! तुमने दुनिया की ज़िन्दगी में तो मुजरिमों की तरफ़ से ख़ूब वकालत कर ली, यहाँ तक कि हुज़ूर ﷺ को भी क़ायल करने के हद तक तुम पहुँच गये। मगर यहाँ तुम उन्हें छुड़ा भी लेते और बिल फ़र्ज़ हुज़ूर ﷺ को भी क़ायल कर लेते तो क़यामत के दिन उन्हें अल्लाह की पकड़ से कौन छुड़ाता? इस ज़िमन में हुज़ूर ﷺ की एक हदीस का मफ़हूम इस तरह है कि मेरे सामने कोई मुक़दमा पेश होता है, उसमें एक फ़रीक़ ज़्यादा चर्प ज़बान होता है, वह अपनी बात बेहतर तौर पर पेश करता है और मेरे यहाँ से अपने हक़ में गलत तौर पर फ़ैसला ले जाता है। (फ़र्ज़ कीजिये किसी ज़मीन के टुकड़े के बारे में कोई तनाज़ा [विवाद] था और एक शख़्स गलत तौर पर बात साबित करके अपने हक़ में फ़ैसला ले गया) लेकिन उसे मालूम होना चाहिये कि इस तरह वह ज़मीन का टुकड़ा नहीं बल्कि जहन्नम का टुकड़ा लेकर गया है। यानि ख़ुद रसूल अल्लाह ﷺ जो भी फ़ैसला करते थे शहादतों के ऐतबार से करते थे, हुज़ूर ﷺ के लिये अल्लाह की तरफ़ से हर वक़्त और हर मरहले पर तो वही नाज़िल नहीं होती थी, जहाँ अल्लाह तआला चाहता वहाँ आप ﷺ को मुतन्बा (note) फ़रमा देता था। इसलिये आइंदा के लिये अल्लाह तआला ने तम्बीह फ़रमा दी कि अगर कुछ लोग इस दुनिया में झूठ, फ़रेब और गलत फ़ैसले के ज़रिये कोई मफ़ाद हासिल कर भी लेते हैं तो उन्हें यह बात नहीं भूलनी चाहिये कि एक दिन उसकी अदालत में भी पेश होना है जहाँ झूठ और गलत बयानी से काम नहीं चलेगा, वहाँ उनके हक़ में अल्लाह से कौन झगड़ेगा?

आयत 110

وَمَنْ يَّعْمَلْ سُوْۗءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهٗ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١١٠﴾

"और जो कोई बुरी हरकत करे या अपनी जान पर कोई ज़ुल्म कर बैठे और फिर अल्लाह से इस्तग़फ़ार करे तो वह अल्लाह को पायेगा बख़्शने वाला, बहुत रहम करने वाला।"

इस सिलसिले में सीधी रविश यही है कि गलती या ख़ता हो गई है तो उसका ऐतराफ़ कर लो, उस जुर्म की जो दुनियवी सज़ा है वह भुगत लो और अल्लाह से इस्तग़फ़ार करो। इस तरह आख़िरत की सज़ा से छुटकारा मिल जायेगा।

आयत 111

وَمَنْ يَّكْسِبْ اِثْمًا فَاِنَّمَا يَكْسِبُهٗ عَلٰي نَفْسِهٖ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِــيْمًا حَكِـيْمًا ﴿١١١﴾

"जो कोई भी गुनाह कमाता है तो वह उसका वबाल अपनी ही जान पर लेता है। और अल्लाह अलीम और हकीम है।"

आयत 112

وَمَنۡ يَّكۡسِبۡ خَطِيۡٓـَٔةً اَوۡ اِثۡمًا ثُمَّ يَرۡمِ بِهٖ بَرِيۡٓــًٔا

"और जो कोई किसी गलती या गुनाह का इरतकाब करता है, फिर उसका इल्ज़ाम किसी बेगुनाह पर लगा देता है"

فَقَدِ احۡتَمَلَ بُهۡتَانًا وَّاِثۡمًا مُّبِيۡنًا ۝١١٢

"तो उसने अपने सर एक बहुत बड़ा बोहतान और बहुत सरीह गुनाह का बोझ ले लिया।"

किसी ने कोई गुनाह कमाया, कोई ख़ता की, कोई ग़लती की, कोई जुर्म किया, फिर उसकी तोहमत किसी बेकसूर शख़्स पर लगा दी तो बहुत बड़े बोहतान और ख़ुल्म-खुल्ला गुनाह का भार समेट लिया। मज़कूरा मामले में यहूदी तो बेकसूर था, जो लोग उसको सजा दिलवाने में तुल गए तो उनका यह फ़अल يَرۡمِ بِهٖ بَرِيۡٓــًٔا के ज़ुमरे (category) में आ गया। किसी बेगुनाह पर इस तरह का बोहतान लगाना अल्लाह के नज़दीक बहुत संजीदा मामला है।

इसके बाद उस यहूदी और मुनाफ़िक़ के मुक़दमे के कुछ मज़ीद पहलुओं के बारे में हुज़ूर ﷺ से ख़िताब हो रहा है।

आयत 113

وَلَوۡلَا فَضۡلُ اللّٰهِ عَلَيۡكَ وَرَحۡمَتُهٗ لَهَمَّتۡ طَّآئِفَةٌ مِّنۡهُمۡ اَنۡ يُّضِلُّوۡكَ ؕ

"और (ऐ नबी ﷺ) अगर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत आप ﷺ के शामिले हाल ना होती तो उन (मुनाफ़िक़ों) का एक गिरोह तो इस पर तुल गया था कि आपको गुमराह कर दें।"

वह लोग तो इस पर कमरबस्ता थे कि आप ﷺ को ग़लतफ़हमी में मुब्तला करके आप ﷺ से ग़लत फ़ैसला करवाएँ, अदालते मुहम्मदी ﷺ से ज़ुल्म पर मब्नी फ़ैसला सादर (जारी) हो जाये, गुनाहग़ार छूट जाए और जो असल मुजरिम नहीं था, बिल्कुल बेगुनाह था, उसे पकड़ लिया जाए।

وَمَا يُضِلُّوۡنَ اِلَّاۤ اَنۡفُسَهُمۡ وَمَا يَضُرُّوۡنَكَ مِنۡ شَىۡءٍ ؕ

"और हक़ीक़त में वह नहीं गुमराह करते मगर अपने आपको और (ऐ नबी ﷺ) वह आप ﷺ को कुछ भी नुक़सान नहीं पहुँचा सकते।"

हम ऐसे मौक़े पर बरवक़्त आप ﷺ को मुत्तलाअ करते रहेंगे।

وَاَنۡزَلَ اللّٰهُ عَلَيۡكَ الۡكِتٰبَ وَالۡحِكۡمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمۡ تَكُنۡ تَعۡلَمُ ؕ

"और अल्लाह ने आप ﷺ पर किताब नाज़िल की है और हिकमत भी, और आप ﷺ को वह कुछ सिखाया है जो आप ﷺ नहीं जानते थे।"

وَكَانَ فَضۡلُ اللّٰهِ عَلَيۡكَ عَظِيۡمًا ۝١١٣

"और यक़ीनन अल्लाह का फ़ज़ल है आप ﷺ पर बहुत बड़ा।"

आयत 114

لَا خَيۡرَ فِىۡ كَثِيۡرٍ مِّنۡ نَّجۡوٰٮهُمۡ

"उन (मुनाफ़िक़ीन) की सरगोशियों में से अक्सर में कोई भलाई नहीं होती"

मुनाफ़िक़ीन की मन्फ़ी सरगर्मियों का ज़िक्र है। अलैहदा बैठ कर सरगोशियाँ करना, दूसरों को देख कर मुस्कुराना और साथ इशारे भी करना ताकि देखने वाले के दिल में ख़ल्जान (शक) पैदा हो कि मेरे बारे में बात हो रही है, आज भी हमारी मजलिसों में यह सब कुछ होता है। यह सारे मामले ज्यों के त्यों इंसानी मआशरे के अंदर वैसे ही आज भी मौजूद हैं। मगर अल्लाह का फ़रमान है कि इस अंदाज़ की ख़ुफ़िया सरग़ोशियों का ज़्यादा हिस्सा ऐसा होता है जिसमें कोई ख़ैर नहीं होती।

اِلَّا مَنۡ اَمَرَ بِصَدَقَةٍ اَوۡ مَعۡرُوۡفٍ اَوۡ اِصۡلَاحٍۢ بَيۡنَ النَّاسِ‌ؕ

"इल्ला यह कि कोई तल्क़ीन करे सद्क़ा व ख़ैरात की, या नेकी की या लोगों के मामलात को दुरुस्त करने की।"

ख़ैर वाली सरग़ोशी यह हो सकती है कि ख़ामोशी से किसी को अलैहदगी में ले जाकर उसको सद्क़ा व ख़ैरात की तल्क़ीन की जाये कि भाई देखो आपको अल्लाह ने ग़नी किया है, फलाँ शख़्स मोहताज है, मैं उसको जानता हूँ, आपको उसकी मदद करनी चाहिये, वग़ैरह। फिर मारूफ़ और भलाई के उमूर (कामों) में ख़ुफ़िया सलाह मशवरे अगर किये जाएँ तो इसमें भी हर्ज नहीं। इसी तरह किसी ग़लतफ़हमी या झगड़े की सूरत में फ़रीक़ैन में सुलह सफ़ाई कराने की ग़र्ज़ से भी ख़ुफ़िया मुज़ाकरात किसी साज़िश के ज़ुमरे में नहीं आते। मसलन दो भाई झगड़ पड़े हैं, अब आप एक की बात अलैहदगी में सुने और दूसरे के पास जाकर उस बात को बेहतर अंदाज़ में पेश करें कि आपको मुग़ालता हुआ है, उन्होंने यह बात यूँ नहीं, यूँ कही थी। इस तरह की अलैहदा-अलैहदा गुफ़्तगू जो नेक नीयती से की जा रही हो, यह यक़ीनन नेकी और भलाई की बात है, जो बाइसे अज्रो सवाब है।

وَمَنۡ يَّفۡعَلۡ ذٰلِكَ ابۡتِغَآءَ مَرۡضَاتِ اللّٰهِ فَسَوۡفَ نُؤۡتِيۡهِ اَجۡرًا عَظِيۡمًا ﴿۱۱۴﴾

"और जो शख़्स इस तरह (की शरग़ोशी) करेगा अल्लाह तआला की रज़ाजोई के लिये तो अनक़रीब हम उसे देंगे बहुत बड़ा अजर।"

आयत 115

وَمَنۡ يُّشَاقِقِ الرَّسُوۡلَ مِنۡۢ بَعۡدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الۡهُدٰى

"और जो रसूल अल्लाह ﷺ की मुख़ालफ़त पर तुल गया, इसके बाद कि उस पर हिदायत वाज़ेह हो चुकी"

यानि जो कोई ख़ुफ़िया साज़िशों और चोरी-छुपे की लगाई-बुझाई के ज़रिये लोगों को अल्लाह के रसूल ﷺ के ख़िलाफ़ भड़काता है कि देखो जी यह अपने लोगों को नवाज़ रहे हैं। जैसा कि ग़ज़वा-ए-हुनैन में हुआ था कि आप ﷺ ने मक्का मुकर्रमा के उन मुसलमानों को जो फ़तह मक्का के बाद मुसलमान हुए थे, माले ग़नीमत में से उनकी दिलजोई के लिये (जिसे क़ुरान में तालीफ़े क़ुलूब कहा गया है) ज़रा ज़्यादा माल दे दिया तो उस पर बाज़ लोगों ने शोर मचा दिया कि देख लिया, जब कड़ा वक़्त था, मुश्किल वक़्त था तो उसे हम झेलते रहे, अब यह अच्छा वक़्त आया है तो आपको रिश्तेदार याद आ गये हैं। ज़ाहिर है मक्के वाले हुज़ूर ﷺ के रिश्तेदार थे, क़ुरैश का क़बीला हुज़ूर ﷺ का अपना क़बीला था। तो तरह-तरह की बातें जो आज के दौर में भी होती हैं वैसी ही बातें हमेशा होती रही हैं। यह इंसान की फ़ितरत है जो हमेशा एक सी रही है, इसमें कोई तगय्युर (परिवर्तन) व तबद्दुल (बदलाव) नहीं हुआ।

وَيَتَّبِعۡ غَيۡرَ سَبِيۡلِ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ

"और वह अहले ईमान के रास्ते के सिवा कोई दूसरा रास्ता इख़्तियार करें"

نُوَلِّهٖ مَا تَوَلّٰى وَنُصۡلِهٖ جَهَنَّمَ‌

"तो हम भी उसको उसी तरफ़ फेर देते हैं जिस तरफ़ उसने ख़ुद रुख़ इख़्तियार कर लिया हो और हम उसे पहुँचाएँगे जहन्नम में।"

وَسَآءَتۡ مَصِيۡرًا ﴿۱۱۵﴾

"और वह बहुत बुरी जगह है लौटने की।"

यह आयत इस ऐतबार से बड़ी अहम है कि इमाम शाफ़ई रहि० के नज़दीक इज्मा-ए-उम्मत की सनद इस आयत में है। यह बात तो बहुत वाज़ेह है कि इस्लामी क़वानीन के लिये बुनियादी माख़ज़ (source) क़ुरान है, फिर हदीस व सुन्नत है। इस तरह इज्तिहाद का मामला भी समझ में आता है, मग़र इज्मा किसी चीज़ का नाम है? इसका ज़िक्र क़ुरान में कहाँ है? इमाम शाफ़ई रहि० फ़रमाते हैं कि मैंने इज्मा की दलील क़ुरान से तलाश करने की कोशिश की और क़ुरान को शुरू से आख़िर तक तीन सौ मर्तबा पढ़ा मगर मुझे इज्मा की कोई दलील नहीं मिली। फिर बिल्आख़िर तीन सौ एक मर्तबा पढ़ने

पर मेरी नज़र जाकर इस आयत पर जम गई: {وَيَتَّبِعۡ غَيۡرَ سَبِيۡلِ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ}। गोया अहले ईमान का जो रास्ता है, जिस पर इज्मा हो गया हो अहले ईमान का, वह ख़ुद अपनी जगह बहुत बड़ी सनद है। इसलिये कि रसूल अल्लाह ﷺ का इर्शाद है: ((اِنَّ اُمَّتِیۡ لَا تَجۡتَمِعُ عَلٰی ضَلَالَۃٍ)) "मेरी उम्मत कभी गुमराही पर जमा नहीं होगी।"

आयात 116 से 126 तक

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغۡفِرُ اَنۡ يُّشۡرَكَ بِهٖ وَيَغۡفِرُ مَا دُوۡنَ ذٰلِكَ لِمَنۡ يَّشَآءُ ؕ وَمَنۡ يُّشۡرِكۡ بِاللّٰهِ فَقَدۡ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا ﴿١١٦﴾ اِنۡ
يَّدۡعُوۡنَ مِنۡ دُوۡنِهٖۤ اِلَّاۤ اِنٰثًا ۚ وَاِنۡ يَّدۡعُوۡنَ اِلَّا شَيۡطٰنًا مَّرِيۡدًا ﴿١١٧﴾ لَّعَنَهُ اللّٰهُ ۘ وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنۡ عِبَادِكَ نَصِيۡبًا
مَّفۡرُوۡضًا ﴿١١٨﴾ وَّلَاُضِلَّنَّهُمۡ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمۡ وَلَاٰمُرَنَّهُمۡ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الۡاَنۡعَامِ وَلَاٰمُرَنَّهُمۡ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلۡقَ اللّٰهِ ؕ وَمَنۡ
يَّتَّخِذِ الشَّيۡطٰنَ وَلِيًّا مِّنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ فَقَدۡ خَسِرَ خُسۡرَانًا مُّبِيۡنًا ﴿١١٩﴾ يَعِدُهُمۡ وَيُمَنِّيۡهِمۡ ؕ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيۡطٰنُ اِلَّا
غُرُوۡرًا ﴿١٢٠﴾ اُولٰٓئِكَ مَاۡوٰٮهُمۡ جَهَنَّمُ وَلَا يَجِدُوۡنَ عَنۡهَا مَحِيۡصًا ﴿١٢١﴾ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدۡخِلُهُمۡ جَنّٰتٍ
تَجۡرِىۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَاۤ اَبَدًا ؕ وَعۡدَ اللّٰهِ حَقًّا ؕ وَمَنۡ اَصۡدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيۡلًا ﴿١٢٢﴾ لَيۡسَ بِاَمَانِيِّكُمۡ وَلَاۤ اَمَانِىِّ
اَهۡلِ الۡكِتٰبِ ؕ مَنۡ يَّعۡمَلۡ سُوۡۤءًا يُّجۡزَ بِهٖ ۙ وَلَا يَجِدۡ لَهٗ مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيۡرًا ﴿١٢٣﴾ وَمَنۡ يَّعۡمَلۡ مِنَ الصّٰلِحٰتِ مِنۡ
ذَكَرٍ اَوۡ اُنۡثٰى وَهُوَ مُؤۡمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ يَدۡخُلُوۡنَ الۡجَنَّةَ وَلَا يُظۡلَمُوۡنَ نَقِيۡرًا ﴿١٢٤﴾ وَمَنۡ اَحۡسَنُ دِيۡنًا مِّمَّنۡ اَسۡلَمَ وَجۡهَهٗ لِلّٰهِ
وَهُوَ مُحۡسِنٌ وَّاتَّبَعَ مِلَّةَ اِبۡرٰهِيۡمَ حَنِيۡفًا ؕ وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبۡرٰهِيۡمَ خَلِيۡلًا ﴿١٢٥﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ
بِكُلِّ شَىۡءٍ مُّحِيۡطًا ﴿١٢٦﴾

आयत 116

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغۡفِرُ اَنۡ يُّشۡرَكَ بِهٖ وَيَغۡفِرُ مَا دُوۡنَ ذٰلِكَ لِمَنۡ يَّشَآءُ ؕ

"अल्लाह हरगिज़ नहीं बख़्शेगा इस बात को कि उसके साथ शिर्क किया जाये, और बख़्श देगा इसके सिवा जिसके लिये चाहेगा।"

गोया यह भी कोई फ्री लाइसेंस नहीं है। याद रहे कि यह आयत इस सूरह मुबारका में दूसरी बार आ रही है।

وَمَنۡ يُّشۡرِكۡ بِاللّٰهِ فَقَدۡ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا ﴿١١٦﴾

"और जो शिर्क करता है अल्लाह के साथ वह तो फिर गुमराह हो गया और गुमराही में भी बहुत दूर निकल गया।"

आयत 117

اِنۡ يَّدۡعُوۡنَ مِنۡ دُوۡنِهٖۤ اِلَّاۤ اِنٰثًا ۚ وَاِنۡ يَّدۡعُوۡنَ اِلَّا شَيۡطٰنًا مَّرِيۡدًا ﴿١١٧﴾

"नहीं पुकारते यह लोग अल्लाह के सिवा मगर देवियों को, और वह नहीं पुकारते किसी को सिवाये सरकश शैतान के।"

यहाँ पहली मर्तबा मुशरिकीने मक्का की बात भी हो रही है। मुशरिकीने मक्का ने अपने देवियों के मुअन्नस (female) नाम रखे हुए थे, जैसे लात, मनात, उज्ज़ा वग़ैरह। लेकिन असल में ना लात का कोई वुजूद है और ना ही मनात की कुछ हक़ीक़त है। अलबत्ता शैतान ज़रूर मौजूद है जो उनकी पुकार सुन रहा है।

आयत 118

لَّعَنَهُ اللّٰهُ

"अल्लाह ने उस पर लानत फ़रमा दी है।"

وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنْ عِبَادِكَ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا ﴿١١٨﴾

"और उसने कहा (ऐ अल्लाह) मैं तेरे बंदो में से एक मुक़र्रर हिस्सा तो लेकर ही छोड़ूँगा।"

उन लोगों को मैं अपने साथ जहन्नम में पहुँचा कर रहूँगा। गोया:

"हम तो डूबे हैं सनम, तुमको भी ले डूबेंगे!"

आयत 119

وَّلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ

"और मैं लाज़िमन उनको बहकाऊँगा और उनको बड़ी-बड़ी उम्मीदें दिलाऊँगा"

उनके दिलों में बड़ी उम्मीदों के चिराग़ रोशन करूँगा कि यह बहुत ताबनाक (bright) केरियर हैं, लगे रहो इस काम में, इसमें बड़ा फ़ायदा है, नाजायज़ है तो ख़ैर है, अल्लाह बख़्श ही देगा। हम तो अल्लाह के प्यारे रसूल ﷺ के उम्मती हैं, हमें ख़ौफ़ किस बात का है? जिस तरह यहूदियों को यह ज़अम (दावा) हो गया था कि हम तो अल्लाह के बेटे हैं, हम उसके बड़े चहेते हैं, वग़ैरह। उनको मैं इस तरह की लंबी-लंबी उम्मीदों और लंबे-लंबे मन्सूबों में उलझा दूँगा। इसी को 'तौले अमल' कहते हैं।

وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الْاَنْعَامِ

"और मैं उन्हें हुक्म दूँगा तो (उसकी तामील में) वह चौपायों के कान चीर देंगे"

इसकी तफ़सील सूरतुल अनआम में आयेगी कि फलाँ बुत या फलाँ देवी के नाम पर किसी जानवर के कान चीर कर उसे आज़ाद कर दिया गया है, अब इसको कोई छेड़ नहीं सकता, इसका ग़ोश्त नहीं खाया जा सकता, इस पर सवारी नहीं हो सकती।

وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ ؕ

"और मैं उन्हें हुक्म दूँगा तो (उसकी तामील में) वह अल्लाह की तख़्लीक़ में तब्दीली करेंगे।"

जैसे आज जो कुछ आप देख रहे हैं कि मर्दों में औरतों के से अंदाज़ अपनाये जा रहे हैं और औरतों में मर्दों के से तौर-तरीक़े इख़्तियार किये जा रहे हैं। लेकिन साइंस के मैदान में, ख़ास तौर पर Genetics में जो कुछ आज हो रहा है वह तो बहुत ही नाज़ुक सूरते हाल है। साइंसी तरक्क़ी के सबब इंसान आज इस मक़ाम पर पहुँच गया है कि वह अपना इख़्तियार इस्तेमाल करके जीनियाती तब्दीलियों के ज़रिये से अल्लाह की तख़्लीक़ में तगय्युर व तबद्दुल कर रहा है।

وَمَنْ يَّتَّخِذِ الشَّيْطٰنَ وَلِيًّا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَقَدْ خَسِرَ خُسْرَانًا مُّبِيْنًا ﴿١١٩﴾

"और जिस किसी ने भी अल्लाह को छोड़ कर शैतान को अपना दोस्त बना लिया तो वह बहुत खुले ख़सारे (और तबाही) में पड़ गया।"

आयत 120

يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيهِمْ ۖ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطٰنُ اِلَّا غُرُوْرًا ۝١٢٠

"वह (शैतान) उनसे वादे भी करता है और उन्हें उम्मीदें भी दिलाता है, और नहीं वादा करता उनसे शैतान मग़र धोखे का।"

शैतान उनको वादों के बहलावे देता है और आरज़ुओं में फँसाता है, सब्ज़ बाग़ दिखाता है, मग़र शैतान के दावे सरासर फ़रेब हैं।

आयत 121

اُولٰٓئِكَ مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۡ وَلَا يَجِدُوْنَ عَنْهَا مَحِيْصًا ۝١٢١

"यह वह लोग हैं जिनका ठिकाना जहन्नम है, और वहाँ से वह फ़रार की कोई सूरत नहीं पाएँगे।"

वहाँ से भागने का उन्हें कोई रास्ता नहीं मिलेगा। दूसरी तरफ़ अहले ईमान की शान क्या होगी, अगली आयत में इसकी तफ़सील है। दो गिरोहों या दो पहलुओं के दरमियान फ़ौरी तक़ाबुल (simultaneous contrast) का यह अंदाज़ क़ुरान में हमें जगह-जगह नज़र आता है।

आयत 122

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ

"और जो लोग ईमान लाएँ और नेक अमल करें उन्हें हम अनक़रीब दाख़िल करेंगे ऐसे बाग़ात में जिनके नीचे नहरें बहती होंगी"

خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ

"उनमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे।"

وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا ۭ وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيْلًا ۝١٢٢

"अल्लाह का यह वादा सच्चा है, और कौन है जो अल्लाह से बढ़ कर अपनी बात में सच्चा हो सकता है?"

आयत 123

لَيْسَ بِاَمَانِيِّكُمْ وَلَآ اَمَانِيِّ اَهْلِ الْكِتٰبِ ۭ

"(ऐ मुसलमानों!) ना तुम्हारी ख़्वाहिशात पर (मौक़ूफ़ है) और ना अहले किताब की ख़्वाहिशात पर।"

तंबीह आ गई कि तुम्हारे अंदर भी बिला जवाज़ और बे बुनियाद ख़्वाहिशात पैदा हो जाएँगी। यहूद व नसारा की तरह तुम लोग भी बड़ी दिल ख़ुशकुन आरज़ुओं में (wishful thinkings) के आदी हो जाओगे, शफ़ाअत की उम्मीद पर तुम भी हरामख़ोरियाँ करोगे, अल्लाह की नाफ़रमानियाँ जैसी कुछ उन्होंने की थीं तुम भी करोगे। लेकिन जान लो कि अल्लाह का क़ानून अटल है, बदलेगा नहीं। तुम्हारी ख़्वाहिशात से, तुम्हारी आरज़ुओं से और तुम्हारी तमन्नाओं से कुछ नहीं होगा। बिल्कुल उसी तरह जैसे अहले किताब की ख़्वाहिशात से कुछ नहीं हुआ। बल्कि:

مَنْ يَّعْمَلْ سُوْۗءًا يُّجْزَ بِهٖ ۙ

"जो कोई बुरा काम करेगा उसकी सज़ा उसको मिल कर रहेगी"

अग़रचे अल्लाह के यहाँ इस क़ानून में नर्मी का एक पहलु मौजूद है, लेकिन अपनी जगह यह बहुत सख़्त अल्फ़ाज़ हैं। बाज़ अवक़ात बदी की जगह पर नेकी उसके मन्फ़ी असरात को धो देती है, लेकिन इस आयत के रू से बुराई का हिसाब तो होकर रहना है। मतलब यह है कि इंसान से जिस बदी का इरत्काब होता है वह उसके बारे में जवाबदेह है, उसका अहतसाब होकर रहेगा। अगर किसी की नेकी ने उसकी बदी को छुपा भी लिया, किसी ने ग़लती की और फिर सिद्क़े दिल से तौबा

कर ली तो इसके सबब उसकी बदी के असरात जाते रहे, लेकिन मामला account for ज़रूर होगा। तौबा को दिखाया जायेगा, कि क्या तौबा वाक़िअतन सच्ची थी? तौबा करने वाला अपने किये पर नादिम (शर्मिंदा) हुआ था? वाक़ई उसने आदते बद को छोड़ दिया था? या सिर्फ़ ज़बान से "اَسْتَغْفِرُ اللّٰہَ رَبِّیْ مِنْ کُلِّ ذَنْبٍ وَّ اَتُوْبُ اِلَیْہِ" की ग़रदान हो रही थी और साथ नाफ़रमानी और हरामख़ोरी भी ज्यों की त्यों चल रही थी। तो अहतसाब के कटहरे में हर शख़्स और हर मामले को लाया जायेगा और खरा-खोटा देख कर फ़ैसला किया जायेगा। फिर जो मुजरिम पाया गया, उसे उसके किये की सज़ा ज़रूर मिलेगी।

وَلَا يَجِدْ لَهٗ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا ۝۱۲۳

"और वह नहीं पायेगा अपने लिये अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हिमायती और ना कोई मददगार।"

आयत 124

وَمَنْ يَّعْمَلْ مِنَ الصّٰلِحٰتِ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ

"और जो कोई नेक अमल करेगा, ख़्वाह वह मर्द हो या औरत और हो वह साहिबे ईमान"

فَاُولٰٓئِكَ يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ وَلَا يُظْلَمُوْنَ نَقِيْرًا ۝۱۲۴

"तो यह वह लोग हैं जो जन्नत में दाख़िल होंगे और उनकी तिल के बराबर भी कोई हक़ तल्फ़ी नहीं की जायेगी।"

आयत 125

وَمَنْ اَحْسَنُ دِيْنًا مِّمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ

"और उससे बेहतर दीन किसका होगा जिसने अपना चेहरा (सिर) अल्लाह के सामने झुका दिया, और (उसके बाद) अहसान (के दर्जे) तक पहुँच गया"

अल्लाह की बंदगी में ख़ूबसूरती लाकर, ख़ुलूस और लिल्लाहियत के साथ, पूरे दीन का इत्तेबाअ करके, تفریق بین الدّین से बच कर और total submission के ज़रिये से उसने अहसान के दर्जे तक रसाई हासिल कर ली।

وَّاتَّبَعَ مِلَّةَ اِبْرٰهِيْمَ حَنِيْفًا ۭ

"और उसने पैरवी की दीने इब्राहीम अलै० की यक्सू होकर (या पैरवी की उस इब्राहीम अलै० के दीन की, जो यक्सू था)।"

وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيْمَ خَلِيْلًا ۝۱۲۵

"और अल्लाह ने तो इब्राहीम को अपना दोस्त बना लिया था।"

आयत 126

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُّحِيْطًا ۝۱۲۶ۧ

"और अल्लाह ही के लिये है जो कुछ आसमानों में और जो कुछ ज़मीन में है, और अल्लाह तआला हर शय का अहाता किये हुए हैं।"

आयात 127 से 134 तक

وَيَسْتَفْتُوْنَكَ فِي النِّسَاۗءِ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِيْهِنَّ ۙ وَمَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ فِي الْكِتٰبِ فِيْ يَتٰمَى النِّسَاۗءِ الّٰتِيْ لَا تُؤْتُوْنَهُنَّ مَا كُتِبَ لَهُنَّ وَتَرْغَبُوْنَ اَنْ تَنْكِحُوْهُنَّ وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الْوِلْدَانِ ۙ وَاَنْ تَقُوْمُوْا لِلْيَتٰمٰى بِالْقِسْطِ ۭ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ

خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِهٖ عَلِيْمًا ﴿١٢٧﴾ وَاِنِ امْرَاَةٌ خَافَتْ مِنْۢ بَعْلِهَا نُشُوْزًا اَوْ اِعْرَاضًا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَآ اَنْ يُّصْلِحَا بَيْنَهُمَا
صُلْحًا ؕ وَالصُّلْحُ خَيْرٌ ؕ وَاُحْضِرَتِ الْاَنْفُسُ الشُّحَّ ؕ وَاِنْ تُحْسِنُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ﴿١٢٨﴾ وَلَنْ
تَسْتَطِيْعُوْٓا اَنْ تَعْدِلُوْا بَيْنَ النِّسَآءِ وَلَوْ حَرَصْتُمْ فَلَا تَمِيْلُوْا كُلَّ الْمَيْلِ فَتَذَرُوْهَا كَالْمُعَلَّقَةِ ؕ وَاِنْ تُصْلِحُوْا وَتَتَّقُوْا
فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٢٩﴾ وَاِنْ يَّتَفَرَّقَا يُغْنِ اللّٰهُ كُلًّا مِّنْ سَعَتِهٖ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيْمًا ﴿١٣٠﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ
وَمَا فِي الْاَرْضِ ؕ وَلَقَدْ وَصَّيْنَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَاِيَّاكُمْ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ ؕ وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي
السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا حَمِيْدًا ﴿١٣١﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ﴿١٣٢﴾
اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِيْنَ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى ذٰلِكَ قَدِيْرًا ﴿١٣٣﴾ مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا فَعِنْدَ اللّٰهِ
ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًۢا بَصِيْرًا ﴿١٣٤﴾

अब जो आयात आ रही हैं इनमें ख़िताब मुसलमानों ही से है लेकिन इनकी हैसियत "इस्तदराक (समझाने)" की है और इनका ताल्लुक़ इस सूरत की इब्तदाई आयतों के साथ है। सूरतुन्निसा के आग़ाज़ में ख्वातीन के मसलों के बारे में कुछ अहकाम नाज़िल हुए थे, जिनमें यतीम बच्चियों से निकाह के बारे में भी मामलात ज़ेरे बहस आये थे और कुछ तलाक़ वग़ैरह के मसले थे। इसमें कुछ निकात (points) लोगों के लिये वज़ाहत तलब थे, लिहाज़ा ऐसे निकात के बारे में मुसलमानों की तरफ़ से कुछ सवाल किये गये और हुज़ूर ﷺ से कुछ वज़ाहतें तलब की गईं। जवाब में अल्लाह तआला ने यह वज़ाहतें नाज़िल की हैं और उस सवाल का हवाला देकर बात शुरू की गई है जिसका जवाब दिया जाना मक़सूद है।

आयत 127

وَيَسْتَفْتُوْنَكَ فِي النِّسَآءِ ؕ

"(ऐ नबी ﷺ) यह लोग आप ﷺ से औरतों के मामले में फ़तवा पूछते हैं।"

قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِيْهِنَّ ۙ

"कह दीजिये कि अल्लाह तुम्हें फ़तवा देता है (वज़ाहत करता है) उनके बारे में"

وَمَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ فِي الْكِتٰبِ فِيْ يَتٰمَى النِّسَآءِ

"और जो तुम्हें (पहले से) सुनाया जा रहा है किताब में यतीम लड़कियों के बारे में"

यह इसी सूरत की आयत 3 की तरफ़ इशारा है। आयत ज़ेरे नज़र के साथ मिल कर उस आयत की तशरीह भी बिल्कुल वाज़ेह हो गई है और साबित हो गया कि वहाँ जो फ़रमाया गया था {وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى} तो उससे असल मुराद "يَتٰمَى النِّسَآءِ" था। यानि अगर तुम्हें अंदेशा हो कि यतीम लड़कियों से शादी करोगे तो उनके साथ इंसाफ़ नहीं कर सकोगे (इसलिये कि उनकी तरफ़ से कोई नहीं जो उनके हुक़ूक़ का पासदार हो और तुमसे बाज़पुर्स कर सके) तो फिर उनसे शादी मत करो, बल्कि दूसरी औरतों से शादी कर लो। अगर एक से ज़्यादा निकाह करना चाहते हो तो अपनी पसंद की दूसरी औरतों से, दो-दो, तीन-तीन, या चार-चार से कर लो {فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ} मगर ऐसी बेसहारा यतीम लड़कियों से निकाह ना करो क्योंकि:

الّٰتِیۡ لَا تُؤۡتُوۡنَھُنَّ مَا کُتِبَ لَھُنَّ وَ تَرۡغَبُوۡنَ اَنۡ تَنۡکِحُوۡھُنَّ

"जिनको तुम देते नहीं हो जो अल्लाह ने उनके लिये लिख दिया है और चाहते हो कि उनसे निकाह भी करो"

यतीम समझ कर महर दिये बग़ैर उनसे निकाह करने के ख़्वाहिशमंद रहते हो।

وَ الۡمُسۡتَضۡعَفِیۡنَ مِنَ الۡوِلۡدَانِ ۙ

"और (इसी तरह) वह बच्चे जो कमज़ोर हैं (जिन पर ज़ुल्म होता है)"

وَ اَنۡ تَقُوۡمُوۡا لِلۡیَتٰمٰی بِالۡقِسۡطِ ؕ

"और यह (हमने तुम्हें इतने तफ़सीलली अहकाम दिये हैं) कि यतीमों के मामले में इंसाफ़ पर कारबंद रहो।"

وَ مَا تَفۡعَلُوۡا مِنۡ خَیۡرٍ فَاِنَّ اللّٰہَ کَانَ بِہٖ عَلِیۡمًا ﴿۱۲۷﴾

"और जो भलाई भी तुम करोगे अल्लाह उससे वाक़िफ़ है।"

वह तुम्हारी नीयतों को जानता है। उसने शरीअत के अहकाम नाज़िल कर दिये हैं, बुनियादी हिदायात तुम्हें दे दी गई हैं। अब इज़ाफ़ी चीज़ तो बस यही है कि तुम्हारी नीयत साफ़ होनी चाहिये। क्योंकि { وَاللّٰہُ یَعۡلَمُ الۡمُفۡسِدَ مِنَ الۡمُصۡلِحِ } (अल् बकरह:220) अल्लाह जानता है कि कौन हक़ीक़त में शरारती है और किसकी नीयत सही है।

आयत 128

وَ اِنِ امۡرَاَۃٌ خَافَتۡ مِنۡۢ بَعۡلِہَا نُشُوۡزًا اَوۡ اِعۡرَاضًا

"और अगर किसी औरत को अंदेशा हो अपने शौहर से ज़्यादती या बेरुख़ी का"

एक "नुशूज़" तो वह था जिसका तज़किरा इसी सूरत की आयत 34 मे औरत के लिये हुआ था: {وَالّٰتِیۡ تَخَافُوۡنَ نُشُوۡزَھُنَّ} "और जिन औरतों से तुम्हें शरकशी का अंदेशा हो।" यानि वह औरतें, वह बीवियाँ जो ख़ाविंदों से सरकशी करती हैं, उनके अहकाम नहीं मानती, उनकी इताअत नहीं करती, अपनी ज़िद पर अड़ी रहती हैं, उनके बारे में हुक्म था कि उनके साथ कैसा मामला किया जाये। अब यहाँ ज़िक्र है उस "नुशूज़" का जिसका इज़हार ख़ाविंद की तरफ़ से हो सकता है। यानि यह भी तो हो सकता है कि ख़ाविंद अपनी बीवी पर ज़ुल्म कर रहा हो, उसके हुक़ूक़ अदा करने में पहलु तही कर रहा हो, अपनी "क़व्वामियत" के हक़ को ग़लत तरीक़े से इस्तेमाल कर रहा हो, बेजा रौब डालता हो, धौंस देता हो, या बिना वजह सताता हो, तंग करता हो और तंग करके महर माफ़ करवाना चाहता हो, या फिर बीवी के वालिदैन अच्छे खाते-पीते हों तो हो सकता है उसे ब्लैकमेल करके उसके वालिदैन से दौलत हथियाना चाहता हो। यह सारी ख़बासतें हमारे मआशरे में मौजूद हैं और औरतें बेचारी ज़ुल्म व सितम की इस चक्की में पिसती रहतीं हैं। आयत ज़ेरे नज़र में इस मसले की वज़ाहत की गई है कि अगर किसी औरत को अपने शौहर से अंदेशा हो जाये कि वह ज़्यादती करेगा, या अगर शौहर ज़्यादती कर रहा हो और वह बीवी के हुक़ूक़ अदा ना कर रहा हो, या उसकी तरफ़ मैलान ही ना रखता हो, कोई नई शादी रचा ली हो और अब सारी तवज्जोह नई दुल्हन की तरफ़ हो।

فَلَا جُنَاحَ عَلَیۡہِمَاۤ اَنۡ یُّصۡلِحَا بَیۡنَہُمَا صُلۡحًا ؕ

"तो उन दोनों पर कोई इल्ज़ाम नहीं होगा कि वह आपस में सुलह कर लें।"

यहाँ सुलह से मुराद यह है कि सारे मामले बाहम तय करके औरत ख़ुला ले ले। लेकिन ख़ुला लेने में, जैसा कि हम पढ़ चुके हैं जबकि औरत को महर छोड़ना पड़ेगा, और अगर लिया था तो कुछ वापस करना पड़ेगा।

وَ الصُّلۡحُ خَیۡرٌ ؕ وَ اُحۡضِرَتِ الۡاَنۡفُسُ الشُّحَّ ؕ

"और सुलह बहरहाल बेहतर है। अलबत्ता इंसानी नफ़्स पर लालच मुसल्लत रहता है।"

मर्द चाहेगा कि मेरा पूरा महर वापस किया जाये जबकि औरत चाहेगी कि मुझे कुछ भी वापस ना करना पड़े। यह मज़ामीन सूरतुल बक़रह में बयान हो चुके हैं।

وَاِنۡ تُحۡسِنُوۡا وَتَتَّقُوۡا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ خَبِيۡرًا ﴿۱۲۸﴾

"और अगर तुम अहसान करो और तक़वा इख़्तियार करो तो जान लो कि अल्लाह तुम्हारे तमाम आमाल से बाख़बर है।"

तुम मर्द हो, मर्दानगी का सबूत दो, इस मामले में अपने अंदर नर्मी पैदा करो, बीवी का हक़ फ़राख़ दिली से अदा करो।

आयत 129

وَلَنۡ تَسۡتَطِيۡعُوۡۤا اَنۡ تَعۡدِلُوۡا بَيۡنَ النِّسَآءِ وَلَوۡ حَرَصۡتُمۡ

"और तुम्हारे लिये मुमकिन ही नहीं कि तुम औरतों के दरमियान पूरा-पूरा इंसाफ कर सको, चाहे तुम इसके लिये कितने ही हरीस हो"

सूरह के आग़ाज़ (आयत 3) में फ़रमाया गया था: {فَاِنۡ خِفۡتُمۡ اَلَّا تَعۡدِلُوۡا فَوَاحِدَةً} यानि अगर तुम्हें अंदेशा हो कि तुम अपनी बीवियों में (अग़र एक से ज़्यादा हैं) अद्ल नहीं कर सकोगे तो फिर एक पर ही इकतफ़ा (सन्तुष्टि) करो, दूसरी शादी मत करो। अगर तुम्हें कुल्ली तौर पर इत्मिनान है, अपने ऊपर ऐतमाद है कि तुम अद्ल कर सकते हो तब दूसरी शादी करो, वरना नहीं। लेकिन हक़ीक़त यह है कि कुछ चीज़ें तो गिनती और नाप-तौल की होती हैं, उनमें तो अद्ल करना मुमकिन है, लेकिन जो क़ल्बी मैलान है यह तो इंसान के इख़्तियार में नहीं है। हुज़ूर ﷺ ने अपनी तमाम अज़वाज के लिये हर चीज़ गिन-गिन कर तय की हुई थी। शब बसरी (रात गुज़ारने) के लिये सबकी बारियाँ मुक़र्रर थीं। दिन में भी आप ﷺ हर घर में चक्कर लगाते थे। अस्र और मग़रिब के दरमियान थोड़ी-थोड़ी देर हर ज़ौजा मोहतरमा के पास ठहरते थे। अगर कहीं ज़्यादा देर हो जाती तो गोया ख़लबली मच जाती थी कि आज वहाँ ज़्यादा देर क्यों ठहर गये? यह चीज़े इंसानी मआशरे में साथ-साथ चलती हैं। हुज़ूर ﷺ की अज़वाजे मुतह्हरात रज़ि० का आपस का मामला बहुत अच्छा था, लेकिन सोकनापे (सोकनों) के असरात कुछ ना कुछ तो होते हैं, यह औरत की फ़ितरत है, जो उसके इख़्तियार में नहीं है। तो इसलिये फ़रमाया कि मुकम्मल इंसाफ़ करना तुम्हारे बस में नहीं। इससे मुराद दरअसल क़ल्बी मैलान है। एक हदीस में भी इसकी वज़ाहत मिलती है कि नबी अकरम ﷺ फ़रमाया करते थे कि ऐ अल्लाह मैंने ज़ाहिरी चीज़ों में पूरा-पूरा अद्ल किया है, बाक़ी जहाँ तक मेरे दिल के मैलान का ताल्लुक़ है तो मुझे उम्मीद है कि इस बारे में तू मुझसे मुवाख़ज़ा नहीं करेगा। इसी लिये यहाँ फ़रमाया गया कि तुम चाहो भी तो अद्ल नहीं कर सकते।

فَلَا تَمِيۡلُوۡا كُلَّ الۡمَيۡلِ فَتَذَرُوۡهَا كَالۡمُعَلَّقَةِ‌ؕ

"तो ऐसा ना हो कि तुम एक ही तरफ़ पूरे के पूरे झुक जाओ कि दूसरी बीवी को मुअल्लक़ करके छोड़ दो।"

दूसरी बीवी इस तरह मुअल्लक़ होकर ना रह जाये कि अब वह ना शौहर वाली है और ना आज़ाद है। उससे ख़ाविंद का गोया कोई ताल्लुक़ ही नहीं रहा।

وَاِنۡ تُصۡلِحُوۡا وَتَتَّقُوۡا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوۡرًا رَّحِيۡمًا ﴿۱۲۹﴾

"और अगर तुम इस्लाह कर लो और तक़वा की रविश इख़्तियार करो तो अल्लाह तआला भी ग़फ़ूर और रहीम है।"

अब अगली आयत में तलाक़ के मामले में एक अहम नुक्ता बयान हो रहा है। तलाक़ यक़ीनन एक निहायत संजीदा मसला है, इसलिये रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: ((اَبۡغَضُ الۡحَلَالِ اِلَى اللّٰهِ تَعَالَى الطَّلَاقُ)) "हलाल चीज़ों में अल्लाह तआला के नज़दीक सबसे ज़्यादा नापंसदीदा चीज़ तलाक़ है।" लेकिन हमारे मआशरे में इसको बसा अवक़ात कुफ़्र तक पहुँचा दिया जाता है। लड़ाईयाँ हो रही हैं, मुक़दमात चल रहे हैं, मिज़ाजों में मुवाफ़क़त (मेल-जोल) नहीं है, एक-दूसरे को कोस रहे हैं, दिन-रात का झगड़ा है, लेकिन तलाक़ नहीं देनी। यह तर्ज़े अमल निहायत अहमक़ाना है और शरीअत की मंशा के बिल्कुल ख़िलाफ़ भी। इस आयत में आप देखेंगे कि एक तरह से तलाक़ की तरगीब दी गई है।

आयत 130

وَاِنۡ يَّتَفَرَّقَا يُغۡنِ اللّٰهُ كُلًّا مِّنۡ سَعَتِهٖ‌ؕ

"और अगर वह (मियाँ-बीवी) दोनो अलैहदा हो जाएँगे तो अल्लाह उनको अपनी कुशादगी से ग़नी कर देगा।"

हो सकता है कि उस औरत को भी कोई बेहतर रिश्ता मिल जाये जो उसके साथ मिज़ाजी मुवाफ़क़त रखने वाला हो और उस शौहर को भी अल्लाह तआला कोई बेहतर बीवी दे दे। मियाँ-बीवी का हर वक़्त लड़ते रहना, दंगा-फ़साद करना और अदमे मुवाफ़क़त के बावजूद तलाक़ का इख़्तियार (option) इस्तेमाल ना करना, यह सोच हमारे यहाँ हिन्दु मआशरत और ईसाईयत के असरात की वजह से पैदा हुई है। हिन्दुमत की तरह ईसाईयत में भी तलाक़ हराम है। दरअसल इंजील में तो शरीअत और क़ानून है ही नहीं, सिर्फ़ अख़्लाक़ी तालीमात हैं। चुनाँचे जिस तरह नबी अकरम ﷺ ने फ़रमाया: ((اَبۡغَضُ الۡحَلَالِ اِلَی اللّٰہِ تَعَالٰی الطَّلَاقُ)) ऐसी ही कोई बात हज़रत मसीह अलै० ने भी फ़रमाई थी कि कोई शख़्स बिना वजह अपनी बीवी को तलाक़ ना दे कि मआशरे में इसके मन्फ़ी असरात मुरत्तब होने का अंदेशा है। तलाक़ शुदा औरत की दूसरी शादी ना होने की सूरत में उसके आवारा हो जाने का इम्कान है और अगर ऐसा हुआ तो उसका बवाल उसे बिना वजह तलाक़ देने वाले के सर जायेगा। लेकिन यह महज़ अख़्लाक़ी तालीम थी, कोई क़ानूनी शिक़ (article) नहीं थी। ईसाईयत का क़ानून तो वही है जो तौरात के अंदर है और हज़रत मसीह अलै० फ़रमा गये हैं कि यह ना समझो कि मैं क़ानून को ख़त्म करने आया हूँ, बल्कि हज़रत मूसा अलै० की शरीअत तुम पर बदस्तूर नाफ़िज़ रहेगी। क़ानून बहरहाल क़ानून है, अख़्लाक़ी हिदायात को क़ानून का दर्जा तो नहीं दिया जा सकता। लेकिन ईसाईयत में इस तरह की अख़्लाक़ी तालीमात को क़ानून बना दिया गया, जिसकी वजह से बिलाजवाज़ पेचीदगियाँ पैदा हुईं। चुनाँचे उनके यहाँ कोई शख़्स अपनी बीवी को उस वक़्त तक तलाक़ नहीं दे सकता जब तक उस पर बद्कारी का जुर्म साबित ना करे। लिहाज़ा वह तलाक़ देने के लिये तरह-तरह के तरीक़े इस्तेमाल करके बीवी को पहले बद्कार बना देते हैं, फिर उसका सबूत फ़राहम करते हैं, तब जाकर उससे जान छुड़ाते हैं। तो शरीअत के दुरुस्त और आसान रास्ते अगर छोड़ दिये जाएँ तो फिर इसी तरह ग़लत और मुश्किल रास्ते इख़्तियार करने पड़ते हैं। यही वजह है कि इस आयत में अदमे मुवाफ़क़त की सूरत में तलाक़ के बारे में एक तरह की तरगीब नज़र आती है।

وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيۡمًا ۝١٣٠

"और अल्लाह बड़ी वुसअत रखने वाला, हिकमत वाला है।"

अल्लाह के ख़जाने बड़े वसीअ हैं और उसका हर हुक्म हिकमत पर मब्नी होता है।

आयत 131

وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ‌ؕ

"और अल्लाह ही का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।"

وَلَقَدۡ وَصَّيۡنَا الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡكِتٰبَ مِنۡ قَبۡلِكُمۡ وَاِيَّاكُمۡ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ‌

"और (देखो मुसलमानों!) तुमसे पहले जिन लोगों को किताब दी गई थी उन्हें भी हमने वसीयत की थी और अब तुम्हें भी यही वसीयत है कि अल्लाह का तक़्वा इख़्तियार करो।"

अहकामे शरीअत की तामील के सिलसिले में असल जज़्बा-ए-मुहरका तक़्वा है। तक़्वा के बग़ैर शरीअत भी मज़ाक बन जायेगी। रसूल अल्लाह ﷺ के एक ख़ुत्बे के यह अल्फ़ाज़ बहुत मशहूर हैं और जुमे के ख़ुत्बों में भी अक्सर इन्हें शामिल किया जाता है: ((اُوۡصِيۡكُمۡ وَنَفۡسِىۡ بِتَقۡوَى اللّٰهِ)) "मुसलमानों! मैं तुम्हें भी और अपने नफ़्स को भी अल्लाह का तक़्वा इख़्तियार करने की वसीयत करता हूँ।" क़ुरान हकीम में जा-बजा (जगह-जगह) अल्लाह तआला का तक़्वा इख़्तियार करने की हिदायत की गई है। सूरह तहरीम (आयत:6) में इर्शाद है: {يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا قُوۡۤا اَنۡفُسَكُمۡ وَاَهۡلِيۡكُمۡ نَارًا} "ऐ ईमान वालो, बचाओ अपने आपको और अपने अहलो अयाल (घर वालों) को आग से।" यहाँ भी तक़्वा का हुक्म इन्तहाई ताकीद (ज़ोर) के साथ दिया जा रहा है।

وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا حَمِيْدًا ﴿١٣١﴾

"और अगर तुम ना मानोगे तो (याद रखो कि) जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है वह अल्लाह ही का है, और अल्लाह तआला तो ख़ुद ग़नी है, अपनी ज़ात में ख़ुद सतूदह (प्रशंसनीय) सिफ़ात हैं।"

आयत 132

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ﴿١٣٢﴾

"और आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है वह अल्लाह ही का है, और अल्लाह काफ़ी है कारसाज़ होने के ऐतबार से।"

अगर मियाँ-बीवी में वाक़ई निबाह नहीं हो रहा तो बेशक वह अलैहदगी इख़्तियार कर लें, दोनों का कारसाज़ अल्लाह है। औरत भी यह समझे कि मेरा शौहर मुझ पर जो ज़ुल्म कर रहा है और साथ इंसाफ़ नहीं कर रहा है, इस सूरत में अगर मैं इससे ताल्लुक़ मुन्क़तअ कर लूँगी तो अल्लाह कारसाज़ है, वह मेरे लिये कोई रास्ता पैदा कर देगा। और इसी तरह की सोच मर्द की भी होनी चाहिये। इसके बरअक्स यह सोच इन्तहाई अहमक़ाना और ख़िलाफ़े शरीअत है कि हर सूरत में औरत से निबाह करना है, चाहे अल्लाह से बग़ावत ही क्यों ना हो जाये। लिहाज़ा हर चीज़ को उसके मक़ाम पर रखना चाहिये।

आयत 133

اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِيْنَ ۭ

"ऐ लोगों! वह चाहे तो तुम सबको ले जाये और दूसरे लोगों को ले आये।"

अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारी कोई हैसियत नहीं। उसके सामने तुम सब नफ़्से वाहिद की तरह हो, जब चाहे अल्लाह तआला सबको नस्यम-मन्सिया (नेस्तोनाबूद) कर दे और नये लोगों को पैदा कर दे।

وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰي ذٰلِكَ قَدِيْرًا ﴿١٣٣﴾

"और यक़ीनन अल्लाह तआला इस पर क़ादिर है।"

आयत 134

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۭ

"जो कोई भी दुनिया का सवाब चाहता है तो अल्लाह के पास है सवाब दुनिया का भी और आख़िरत का भी।"

जो शख़्स अपनी सारी भाग-दौड़ और दिन-रात की मेहनत दुनिया कमाने, दौलत और जायदाद बढ़ाने, ओहदों में तरक्क़ी पाने और माद्दी तौर पर फलने-फूलने में लगा रहा है, दूसरी तरफ़ अल्लाह के अहकाम और हुक़ूक़ को नज़रअंदाज़ कर रहा है, उसे मालूम होना चाहिये कि अल्लाह तआला के पास तो पास दुनिया के ख़ज़ाने भी हैं और आख़िरत के भी। और यह कि वह सिर्फ़ दुनियावी चीज़ों की ख़्वाहिश करके गोया समुन्दर से क़तरा हासिल करने पर एकतफ़ा कर रहा है। बक़ौल अल्लामा इक़बाल:

तू ही नादान चंद कलियों पर क़नाअत कर गया
वरना गुलशन में इलाज-ए-तंगी-ए-दामाँ भी है!

लिहाज़ा अल्लाह से दुनिया भी माँगो और आख़िरत भी। और इस तरह माँगो जिस तरह उसने माँगने का तरीक़ा बताया है: (सूरतुल बक़रह, आयत:201) {رَبَّنَآ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ} तुम लोग अल्लाह के साथ अपने मामलात को दुरुस्त करो, उसके साथ अपना ताल्लुक़ ख़ुलूस व इख्लास की बुनियाद पर इस्तवार (stable) करो, उसकी तरफ़ से जो ज़िम्मेदारियाँ हैं उनको अदा करो, फिर अल्लाह तआला यक़ीनन दुनिया में भी नवाज़ेगा और आख़िरत में भी।

وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيۡعًاۢ بَصِيۡرًا ﴿۱۳۴﴾

"और अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला और देखने वाला है।"

आयात 135 से 141 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا كُوۡنُوۡا قَوّٰمِيۡنَ بِالۡقِسۡطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ وَلَوۡ عَلٰٓى اَنۡفُسِكُمۡ اَوِ الۡوَالِدَيۡنِ وَالۡاَقۡرَبِيۡنَ ۚ اِنۡ يَّكُنۡ غَنِيًّا اَوۡ
فَقِيۡرًا فَاللّٰهُ اَوۡلٰى بِهِمَا فَلَا تَتَّبِعُوا الۡهَوٰٓى اَنۡ تَعۡدِلُوۡا ۚ وَاِنۡ تَلۡوٗۤا اَوۡ تُعۡرِضُوۡا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ خَبِيۡرًا ﴿۱۳۵﴾
يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡۤا اٰمِنُوۡا بِاللّٰهِ وَرَسُوۡلِهٖ وَالۡكِتٰبِ الَّذِىۡ نَزَّلَ عَلٰى رَسُوۡلِهٖ وَالۡكِتٰبِ الَّذِىۡۤ اَنۡزَلَ مِنۡ قَبۡلُ ؕ وَمَنۡ يَّكۡفُرۡ
بِاللّٰهِ وَمَلٰٓـئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ فَقَدۡ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا ﴿۱۳۶﴾ اِنَّ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا ثُمَّ كَفَرُوۡا ثُمَّ اٰمَنُوۡا ثُمَّ
كَفَرُوۡا ثُمَّ ازۡدَادُوۡا كُفۡرًا لَّمۡ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَـغۡفِرَ لَهُمۡ وَلَا لِيَـهۡدِيَهُمۡ سَبِيۡلًا ؕ ﴿۱۳۷﴾ بَشِّرِ الۡمُنٰفِقِيۡنَ بِاَنَّ لَهُمۡ عَذَابًا اَلِيۡمَا ۙ
﴿۱۳۸﴾ الَّذِيۡنَ يَتَّخِذُوۡنَ الۡـكٰفِرِيۡنَ اَوۡلِيَآءَ مِنۡ دُوۡنِ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ ؕ اَيَبۡتَغُوۡنَ عِنۡدَهُمُ الۡعِزَّةَ فَاِنَّ الۡعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيۡعًا ؕ ﴿۱۳۹﴾ وَقَدۡ
نَزَّلَ عَلَيۡكُمۡ فِى الۡـكِتٰبِ اَنۡ اِذَا سَمِعۡتُمۡ اٰيٰتِ اللّٰهِ يُكۡفَرُ بِهَا وَيُسۡتَهۡزَاُ بِهَا فَلَا تَقۡعُدُوۡا مَعَهُمۡ حَتّٰى يَخُوۡضُوۡا فِىۡ حَدِيۡثٍ
غَيۡرِهٖۤ ۖ اِنَّكُمۡ اِذًا مِّثۡلُهُمۡ ؕ اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الۡمُنٰفِقِيۡنَ وَالۡكٰفِرِيۡنَ فِىۡ جَهَـنَّمَ جَمِيۡعَا ۙ ﴿۱۴۰﴾ الَّذِيۡنَ يَتَرَبَّصُوۡنَ بِكُمۡ ۚ فَاِنۡ كَانَ
لَـكُمۡ فَتۡحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوۡۤا اَلَمۡ نَكُنۡ مَّعَكُمۡ ۖ وَاِنۡ كَانَ لِلۡكٰفِرِيۡنَ نَصِيۡبٌ ۙ قَالُوۡۤا اَلَمۡ نَسۡتَحۡوِذۡ عَلَيۡكُمۡ وَنَمۡنَعۡكُمۡ مِّنَ
الۡمُؤۡمِنِيۡنَ ؕ فَاللّٰهُ يَحۡكُمُ بَيۡنَكُمۡ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ ؕ وَلَنۡ يَّجۡعَلَ اللّٰهُ لِلۡكٰفِرِيۡنَ عَلَى الۡمُؤۡمِنِيۡنَ سَبِيۡلًا ﴿۱۴۱﴾

आयत 135

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا كُوۡنُوۡا قَوّٰمِيۡنَ بِالۡقِسۡطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ

"ऐ अहले ईमान, खड़े हो जाओ पूरी क़ुव्वत के साथ अद्ल को क़ायम करने के लिये अल्लाह के गवाह बन कर"

यह आयत क़ुरान करीम की अज़ीम तरीन आयतों में से है। सूरह आले इमरान (आयत18) में हम पढ़ आये हैं: { شَهِدَ اللّٰهُ اَنَّهٗ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۙ وَالۡمَلٰٓـئِكَةُ وَاُولُوا الۡعِلۡمِ قَآئِمًاۢ بِالۡقِسۡطِ } "अल्लाह गवाह है कि उसके सिवा कोई मअबूद नहीं, और सारे फ़रिश्ते और अहले इल्म भी इस पर गवाह हैं, वह अद्ल का क़ायम करने वाला है।" अल्लाह तआला इस ज़मीन पर अद्ल क़ायम करना चाहता है, इसके लिये वह अपने दीन का ग़लबा चाहता है, और इस अज़ीम काम के लिये उसके कारिन्दे और सिपाही अहले ईमान ही हैं। उन्हीं के ज़रिये से अल्लाह तआला इस दुनिया में अद्ल क़ायम करेगा। लेकिन अहले ईमान को इस अज़ीम मक़सद के लिये कोशिश करनी होगी, जानों का नज़राना पेश करना होगा, ईसार करना होगा, क़ुर्बानियाँ देनी होंगी, तब जाकर कहीं दीन ग़ालिब होगा। अल्लाह तआला के यहाँ यह बहुत ही अहम मामला है। मआशरे में अद्ल व क़िस्त के क़याम की अहमियत का अंदाज़ा इससे लगाएँ कि इसके लिये जद्दो-जहद करने वालों को "अल्लाह के गवाह" कहा गया है। अद्ले इज्तमाई (Social Justice) पर इस्लाम ने जितना ज़ोर दिया है बदक़िस्मती से आज हमारा मज़हबी तबक़ा उतना ही उससे बेपरवाह है। आज के मुस्लिम मआशरों में सिरे से शऊर ही नहीं की अद्ले इज्तमाई की भी कोई अहमियत इस्लाम में है। इस्लामी क़ानूने और हुदूद व ताज़ीरात के निफ़ाज़ की अहमियत तो सब जानते हैं, लेकिन बातिल निज़ाम की नाइंसाफ़ियाँ, यह जागीरदाराना ज़ुल्म व सितम और ग़रीबों का इस्तहसाल (exploitation) किस तरह ख़त्म होगा? सरमायादार ग़रीबों का ख़ून चूस-चूस कर रोज़-ब-रोज़ मोटे होते जा रहे हैं। यह निज़ाम एक ऐसी चक्की है जो आटा

पीस-पीस कर एक ही तरफ़ डालती जा है रही है, जबकि दूसरी तरफ़ महरूमी ही महरूमी है। यहाँ दौलत का तक़सीम का निज़ाम ही ग़लत है, एक तरफ़ वसाइल की रेल-पेल है तो दूसरी तरफ़ भूख ही भूख। एक तरफ़ अमीर अमीरतर हो रहे हैं दूसरी तरफ़ ग़रीब ग़रीबतर, और ग़ुरबत तो ऐसी लानत है जो इंसान को कुफ़्र तक पहुँचा देती है, अज़रुए हदीसे नबवी ﷺ: ((كَادَ الْفَقْرُ اَنْ يَّكُوْنَ كُفْرًا)) लिहाज़ा सबसे पहले वह निज़ाम क़ायम करने की ज़रूरत है जिसमें अद्ल हो, इंसाफ़ हो, जिसमें ज़मानत दी गई हो कि हर शहरी की बुनियादी ज़रूरतों की कफ़ालत होगी। कफ़ालते आम्मा की यह ज़मानत निज़ामे ख़िलाफ़त में दी जाती है। जब निज़ाम दुरुस्त हो जाए तो फिर हुदूद व ताज़ीरात का निफ़ाज़ हो। फिर जो कोई चोरी करे उसका हाथ काटा जाए। लेकिन मौजूदा हालात में अगर इस्लामी क़वानीन नाफ़िज़ होंगे तो उनका फ़ायदा उल्टा लुटेरों और हरामख़ोरों को होगा, ब्लैक मार्केटिंग करने वाले उनसे मुस्तफ़ीद होंगे। जिन्होंने हरामख़ोरी से दौलत जमा कर रखी है, वह ख़ूब पाँव फैला कर सोएंगे। चोर का हाथ कटेगा तो उन्हें चोरी का डर रहेगा ना डाके का। तो असल काम निज़ाम का बदलना है। इसका यह मतलब नहीं कि (मआज़ अल्लाह) शरीअत नाफ़िज़ ना की जाये, बल्कि मक़सद यह है कि शरीअत नाफ़िज़ करने से पहले निज़ाम (system) को बदला जाए, दीन का निज़ाम क़ायम किया जाए और फिर इस निज़ाम को क़ायम रखने के लिये, इसको मुस्तहकम और मज़बूत करने के लिये, इसे मुस्तक़िल तौर पर चलाने के लिये क़ानून नाफ़िज़ किया जाए। क्योंकि क़ानून ही किसी निज़ाम के इस्तहकाम (स्थिरता) का ज़रिया बनता है क़ानून के सही निफ़ाज़ से ही कोई निज़ाम मज़बूत होता है।

यही मज़मून आगे चल कर सूरतुल मायदा (आयत:8) में भी आयेगा, लेकिन वहाँ इसकी तरतीब बदल गई है। वहाँ तरतीब इस तरह है: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ} इस तरतीब के बदलने में एक इशारा यह भी है कि अल्लाह और अद्ल व क़िस्त गोया मुतरादिफ़ (बराबर) अल्फ़ाज़ हैं। एक जगह हुक्म है "गवाह बन जाओ अल्लाह के" और दूसरी जगह फ़रमाया: "गवाह बन जाओ क़िस्त के।" एक जगह फ़रमाया: "खड़े हो जाओ क़िस्त (अद्ल व इंसाफ़) के लिये" जबकि दूसरी जगह इर्शाद हुआ है कि "खड़े हो जाओ अल्लाह के लिये।" मालूम हुआ कि अल्लाह और क़िस्त के अल्फ़ाज़ जो एक दूसरे की जगह आये हैं, आपस में मुतरादिफ़ हैं।

وَلَوْ عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ ۚ

"ख़्वाह यह (इंसाफ़ की बात और शहादत) तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हो या तुम्हारे वालिदैन के या तुम्हारे क़राबतदारों के।"

एक मोमिन का ताल्लुक़ अद्ल व इंसाफ़ और क़िस्त के साथ होना चाहिये, रिश्तेदारी के साथ नहीं। यहाँ पर हर्फ़े जार के बदलने से मायने में होने वाली तब्दीली मद्देनज़र रहे। شهادة على का मतलब है लोगों पर गवाही, उनके ख़िलाफ़ गवाही, जबकि شهادة لله का मतलब है अल्लाह के लिये गवाही, लिहाज़ा شُهَدَاۗءَ لِلّٰهِ के मायने हैं अल्लाह के गवाह।

اِنْ يَّكُنْ غَنِيًّا اَوْ فَقِيْرًا فَاللّٰهُ اَوْلٰى بِهِمَا ۣ

"चाहे वह शख़्स ग़नी है या फ़क़ीर, अल्लाह ही दोनों का पुश्तपनाह है।"

अल्लाह हर किसी का कफ़ील है, तुम किसी के कफ़ील नहीं हो। तुम्हें तो फ़ैसला करना है जो अद्ल व इन्साफ पर मब्नी होना चाहिये, तुम्हें किसी की जानिबदारी नहीं करनी, ना माँ-बाप की, ना भाई की ना ख़ुद अपनी। एक चोर दरवाज़ा यह भी होता है कि इसका हक़ तो नहीं बनता, लेकिन यह ग़रीब है, लिहाज़ा इसके हक़ में फ़ैसला कर दिया जाये। फ़रमाया कि फ़रीक़े मामला ख़्वाह मालदार हो या ग़रीब, तुम्हें उसकी जानिबदारी नहीं करनी। यह हुक्म हमें वाज़ेह तौर पर हमारा फ़र्ज़ याद दिलाता है कि हम सब अल्लाह के गवाह बन कर खड़े हो जाएँ। हर हक़ बात जो अल्लाह की तरफ़ से हो उसके अलम्बरदार बन जाएँ और उस हक़ को क़ायम करने के लिये तन, मन और धन की क़ुर्बानी देने के लिये अपनी कमर कस लें।

فَلَا تَتَّبِعُوا الْهَوٰٓى اَنْ تَعْدِلُوْا ۚ وَاِنْ تَلْوٗٓا اَوْ تُعْرِضُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ١٣٥

"तो तुम ख़्वाहिशात की पैरवी ना करो, मबादा कि तुम अद्ल से हट जाओ। अगर तुम ज़बानों को मरोड़ोगे या ऐराज़ करोगे तो (याद रखो कि) अल्लाह तआला तुम्हारे हर अमल से पूरी तरह बाख़बर है।"

यानि अगर तुमने लगी-लपटी बात कही या हक़गोई से पहलु तही की तो जान रखो कि जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह को उसकी पूरी-पूरी ख़बर है "تَلْوٗا" का सही मफ़हूम आज की ज़बान में होगा chewing your words. यानि इस तरीक़े से ज़बान को हरकत देना कि बात कहना भी चाहते हैं लेकिन कह भी नहीं पा रहे हैं, हक़ बात ज़बान से निकालना नहीं चाहते, ग़लत बात निकल नहीं रही है। या फिर वैसे ही हक़ बात कहने वाली सूरते हाल का सामना करने से कन्नी कतरा रहे हैं, मौक़े से ही बच निकलना चाहते हैं। लेकिन याद रखो कि ऐसी किसी कोशिश से इंसानो को तो धोखा दिया जा सकता है मगर अल्लाह तो तुम्हारी हर सोच, हर नीयत और हर हरकत से बाख़बर है।

इसके बाद जो मज़मून आ रहा है वह शायद इस सूरह मुबारका का अहमतरीन मज़मून है।

आयत 136

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْ نَزَّلَ عَلٰي رَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ ۭ

"ऐ ईमान वालो! ईमान लाओ अल्लाह पर, उसके रसूल ﷺ पर और उस किताब पर जो उसने नाज़िल फ़रमाई अपने रसूल ﷺ पर और उस किताब पर जो उसने पहले नाज़िल फ़रमाई।"

ईमान वालों से यह कहना कि ईमान लाओ बज़ाहिर अजीब मालूम होता है। "ऐ ईमान वालो, ईमान लाओ!" क्या मायने हुए इसके? इसका मतलब है कि इक़रार बिल् लिसान वाला ईमान तो तुम्हें मौरूसी तौर पर हासिल हो चुका है। मुसलमान माँ-बाप के घर पैदा हो गए तो विरासत में ईमान भी मिल गया, या यह कि जब पूरा क़बीला इस्लाम ले आया तो उसमें पक्के मुसलमानों के साथ कुछ कच्चे मुसलमान भी शामिल हो गए। उन्होंने भी कहा: اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَسُوْلُ اللّٰهِ इस तरह ईमान एक दर्जे (इक़रार बिल् लिसान) में तो हासिल हो गया। यह ईमान का क़ानूनी दर्जा है। पीछे इसी सूरत (आयत:94) में हम पढ़ आए हैं कि अगर कोई शख़्स रास्ते में मिले और वह अपना इस्लाम ज़ाहिर करे तो तुम उसको यह नहीं कह सकते हो कि तुम मोमिन नहीं हो, क्योंकि जिसने ज़बान से कलमा-ए-शहादत अदा कर लिया तो क़ानूनी तौर पर वह मोमिन है। लेकिन क्या हक़ीक़ी ईमान यही है? नहीं, बल्कि हक़ीक़ी ईमान है यक़ीने क़ल्बी। इसलिये फ़रमाया: "ऐ ईमान वालो! ईमान लाओ अल्लाह पर....." इस नुक्ते को समझने के लिये हम इस आयत का तर्जुमा इस तरह करेंगे कि "ऐ अहले ईमान! ईमान लाओ अल्लाह पर जैसा कि ईमान लाने का हक़ है, मानो रसूल ﷺ को जैसा कि मानने का हक़ है....." और यह हक़ उसी वक़्त अदा होगा जब अल्लाह और उसके रसूल ﷺ पर ईमान दिल में घर कर गया हो। जैसे सहाबा किराम रज़ि० के बारे में सूरतुल हुजरात (आयत:7) में फ़रमाया गया: {وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيْكُمُ الْاِيْمَانَ وَزَيَّنَهٗ فِيْ قُلُوْبِكُمْ} "अल्लाह ने ईमान को तुम्हारे नज़दीक महबूब बना दिया है और उसे तुम्हारे दिलों में मुज़य्यन कर दिया है।" आगे चल कर इसी सूरह में कुछ लोगों के बारे यूँ फ़रमाया: {قَالَتِ الْاَعْرَابُ اٰمَنَّا ۭ قُلْ لَّمْ تُؤْمِنُوْا وَلٰكِنْ قُوْلُوْٓا اَسْلَمْنَا وَلَمَّا يَدْخُلِ الْاِيْمَانُ فِيْ قُلُوْبِكُمْ ۭ} (आयत:14) "यह बददु लोग दावा कर रहे हैं कि हम ईमान ले आये हैं। ऐ नबी (ﷺ) इनसे कह दीजिये कि तुम हरगिज़ ईमान नहीं लाये हो, हाँ यूँ कह सकते हो कि हम मुसलमान हो गए हैं, लेकिन अभी तक ईमान तुम्हारे दिलों में दाख़िल नहीं हुआ।" चुनाँचे असल ईमान वह है जो दिल में दाखिल हो जाए। यह दर्जा तस्दीक़ बिल् क़ल्ब का है। याद रहे कि आयत ज़ेरे मुताअला में दरअसल रूए सुख़न मुनाफ़िक़ीन की तरफ़ है। वह ज़बानी ईमान तो लाए थे लेकिन वह ईमान असल ईमान नहीं था, उसमें दिल की तस्दीक़ शामिल नहीं थी (अरबी ज़बान से वाक़फ़ियत रखने वाले हज़रात यह नुक्ता भी नोट करें कि क़ुरान के लिये इस आयत में लफ़्ज़ नज़्ज़ला और तौरात के लिए अन्ज़ला इस्तेमाल हुआ है।)

وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاللّٰهِ وَمَلٰۗىِٕكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًۢا بَعِيْدًا ١٣٦

"और जो कोई कुफ़्र (इन्कार) करेगा अल्लाह का, उसके फ़रिश्तों का, उसकी किताबों का, उसके रसूलों का और क़यामत के दिन का, तो वह गुमराह हो गया और गुमराही में बहुत दूर निकल गया।"

यह तमाम आयात बहुत अहम हैं और मफ़हूम के लिहाज़ से इनमें बड़ी गहराई है।

आयत 137

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ ازْدَادُوْا كُفْرًا

"बेशक वह लोग जो ईमान लाये, फिर कुफ़्र किया, फिर ईमान लाये, फिर कुफ़्र किया, फिर कुफ़्र में बढ़ते चले गये"

यहाँ कुफ़्र से मुराद कुफ़्रे हक़ीक़ी, कुफ़्रे मायनवी, कुफ़्रे बातिनी यानि निफ़ाक़ है, क़ानूनी कुफ़्र नहीं। क्योंकि मुनाफ़िक़ीन के यहाँ कुफ़्र व ईमान के दरमियान जो भी कशमकश और खींचा-तानी हो रही थी, वह अंदर ही अंदर हो रही थी, लेकिन ज़ाहिरी तौर पर तो उन लोगों ने इस्लाम का इंकार नहीं किया था।

لَّمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ سَبِيْلًا ﴿١٣٧﴾

"तो अल्लाह ना उनकी मग़फिरत करने वाला है और ना वह उन्हें राहे रास्त दिखाएगा।"

वाज़ेह रहे कि मुनाफ़क़त का मामला ऐसा नहीं है कि एक ही दिन में कोई मुनाफ़िक़ हो गया हो। मुनाफ़िक़ीन में एक तो शऊरी मुनाफ़िक़ थे, जो बाक़ायदा एक फ़ैसला करके अपनी हिकमते अमली इख़्तियार करते थे, जैसे हम सूरह आले इमरान में उनकी पॉलिसी के बारे में पढ़ आए हैं कि सुबह ईमान का ऐलान करेंगे, शाम को फिर क़ाफ़िर हो जाएँगे, मुर्तद हो जाएँगे। तो मालूम हुआ कि ईमान उन्हें नसीब हुआ ही नहीं और उन्हें भी मालूम था कि वह मोमिन नहीं हैं। वह दिल से जानते थे कि हम ईमान लाये ही नहीं हैं, हम तो धोखा दे रहे हैं यह शऊरी मुनाफ़क़त है।

दूसरी तरफ़ कुछ लोग ग़ैर शऊरी मुनाफ़िक़ थे। यह वह लोग थे जिन्होंने इस्लाम तो क़ुबूल किया था, उनके दिल में धोखा देने की नीयत भी नहीं थी, लेकिन उन्हें असल सूरते हाल का अंदाज़ा नहीं था। वह समझते थे कि यह फूलों की सेज है, लेकिन उनकी तवक्क़ुआत के बिल्कुल बरअक्स वह निकला काँटो वाला बिस्तर। अब उन्हें क़दम-क़दम पर रुकावट महसूस हो रही है, इरादे में पुख़्तगी नहीं है, ईमान में गहराई नहीं है, लिहाज़ा उनका मामला "हरचे बादा बाद" वाला नहीं है। ऐसे लोगों का हाल हम सूरतुल बक़रह के आग़ाज़ (आयत:20) में पढ़ आए हैं कि कुछ रोशनी हुई तो ज़रा चल पड़े, अँधेरा हुआ तो खड़े के खड़े रह गए। कुछ हिम्मत की, दो चार क़दम चले, फिर हालात ना मुवाफ़िक़ देख कर ठिठक गये, पीछे हट गये। नतीजा यह होता था कि लोग उनको मलामत करते कि यह तुम क्या करते हो? तो अब उन्होंने यह किया कि झूठे बहाने बनाने लगे, और फिर इससे भी बढ़ कर झूठी क़समें खानी शुरू कर दीं, कि ख़ुदा की क़सम यह मजबूरी थी, इसलिये मैं रुक गया था, ऐसा तो नहीं कि मैं जिहाद में जाना नहीं चाहता था। मेरी बीवी मर रही थी, उसे छोड़ कर मैं कैसे जा सकता था? वग़ैरह वग़ैरह। इस तरह की झूठी क़समें खाना ऐसे मुनाफ़िक़ीन का आख़री दर्जे का हरबा होता है। तो ईमान और कुफ़्र का यह मामला उनके यहाँ यूँ ही चलता रहता है, अगरचे ऊपर ईमान बिल् लिसान का पर्दा मौजूद रहता है। जब कोई शख़्स ईमान ले आया और उसने इरतदाद (स्वधर्म त्याग) का ऐलान भी नहीं किया तो क़ानूनी तौर पर तो वह मुसलमान ही रहता है, लेकिन जहाँ तक ईमान बिल् क़ल्ब का ताल्लुक़ है तो वह "مُذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ" की कैफ़ियत में होता है और उसके अंदर हर वक़्त तज़बज़ुब और अहतज़ाज़ (oscillation) की कैफ़ियत रहती है कि अभी ईमान की तरफ़ आया, फिर कुफ़्र की तरफ़ गया, फिर ईमान की तरफ़ आया, फ़िर कुफ़्र की तरफ़ गया। इसकी मिसाल बैनही (बिल्कुल) उस शख़्स की सी है जो दरिया या तालाब के गहरे पानी में डूबते हुए कभी नीचे जा रहा है, फिर हाथ-पैर मारता है तो एक लम्हे के लिये फिर ऊपर आ जाता है मगर ऊपर ठहर नहीं सकता और फ़ौरन नीचे चला जाता है। बिल्आख़िर नीचे जाकर ऊपर नहीं आता और डूब जाता है। बिल्कुल यही नक़्शा है जो इस आयत में पेश किया जा रहा है। अगली आयत में खोल कर बयान कर दिया गया है कि यह किन लोगों का तज़किरा है।

आयत 138

بَشِّرِ الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ﴿١٣٨﴾

"(ऐ नबी ﷺ) इन मुनाफ़िक़ों को बशारत दे दीजिये कि इनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

यानि वाज़ेह तौर पर फ़रमा दिया गया कि यह लोग मुनाफ़िक़ हैं और इनको अज़ाब की बशारत भी दे दी गई। यह अज़ाब की बशारत देना तंज़िया अंदाज़ है।

यहाँ पर क़ुबूले हक़ के दावेदारों को यह हक़ीक़त अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि जो लोग दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल होते हैं, अल्लाह को अपना रब मानते हैं, उनके लिये यहाँ फूलों की सेज नहीं है, इसलिये जो शख़्स इस गिरोह में शामिल होना चाहता है उसे चाहिये कि यकसू होकर आये, दिल में तहफ्फ़ुज़ात (reservations) रख कर ना आये। यहाँ तो क़दम-क़दम पर आज़माईशें आएँगी, यह अल्लाह का अटल फ़ैसला है: (सूरतुल बक़रह, आयत:155) {وَلَنَبۡلُوَنَّكُم بِشَيۡءٍ مِّنَ الۡخَوۡفِ وَالۡجُوعِ وَنَقۡصٍ مِّنَ الۡاَمۡوَالِ وَالۡاَنۡفُسِ وَالثَّمَرٰتِ} यहाँ तो अलल ऐलान बताया जा रहा है: (सूरह आले इमरान, आयत:186) {لَتُبۡلَوُنَّ فِيۡۤ اَمۡوَالِكُمۡ وَاَنۡفُسِكُمۡ وَلَتَسۡمَعُنَّ مِنَ الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡكِتٰبَ مِنۡ قَبۡلِكُمۡ وَمِنَ الَّذِيۡنَ اَشۡرَكُوۡۤا اَذًى كَثِيۡرًا} यहाँ तो माल व जान का नुक़सान उठाना पड़ेगा, हर तरह की तल्ख़ व नाज़ेबा बातें सुननी पड़ेंगी, कड़वे घूँट भी हलक़ से उतारने पड़ेंगे, क़दम-क़दम पर ख़तरात का सामना करना पड़ेगा।

दर रहे मंजिले लैला कि ख़तर हास्त बसे
शर्ते अव्वल क़दम ईं अस्त कि मजनूँ बाशी!

आयत 139

اَلَّذِيۡنَ يَتَّخِذُوۡنَ الۡكٰفِرِيۡنَ اَوۡلِيَآءَ مِنۡ دُوۡنِ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ‌ؕ

"जो अहले ईमान को छोड़ कर कुफ़्फ़ार को अपना दोस्त बनाते हैं।"

इन मुनाफ़िक़ीन का तरीक़ा यह भी था कि वह कुफ़्फ़ार के साथ भी दोस्ती रखते थे और अपनी अक़्ल से इस पॉलिसी पर अमल पैरा थे कि: Don't keep all your eggs in one basket. उनका ख़्याल था कि आज अगर हम सब ताल्लुक़, दोस्तियाँ छोड़ कर, यकसू होकर मुसलमानों के साथ हो गए तो कल का क्या पता? क्या मालूम कल हालात बदल जाएँ, हालात का पलड़ा कुफ़्फ़ार की तरफ़ झुक जाये। तो ऐसे मुश्किल वक़्त में फिर यही लोग काम आएँगे, इसलिये वह उनसे दोस्तियाँ रखते थे।

اَيَبۡتَغُوۡنَ عِنۡدَهُمُ الۡعِزَّةَ

"क्या वह उनके क़ुर्ब से इज़्ज़त चाहते हैं?"

क्या यह लोग इज़्ज़त की तलब में उनके पास जाते हैं? क्या उनकी महफ़िलों में जगह पाकर वह मुअज़ज़्ज़ बनना चाहते हैं? जैसे आज अमेरिका जाना और सदरे अमेरिका से मिलना गोया बहुत बड़ा ऐज़ाज़ है, जिसे पाने के लिये करोड़ों रुपये ख़र्च होते हैं। चंद मिनट की ऐसी मुलाक़ात के लिये किस-किस अंदाज़ से lobbying होती है, ख़्वाह उससे कुछ भी हासिल ना हो और उनकी पॉलिसियाँ ज्यों कि त्यों चलती रहें।

فَاِنَّ الۡعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيۡعًا ۝١٣٩

"हाँलाकि इज़्ज़त तो कुल की कुल अल्लाह के इख़्तियार में है।"

लेकिन वह अल्लाह को छोड़ कर कहाँ इज़्ज़त ढूँढ रहे हैं?

आयत 140

وَقَدۡ نَزَّلَ عَلَيۡكُمۡ فِى الۡكِتٰبِ

"और यह बात वह तुम पर नाज़िल कर चुका है किताब में"

اَنۡ اِذَا سَمِعۡتُمۡ اٰيٰتِ اللّٰهِ يُكۡفَرُ بِهَا وَيُسۡتَهۡزَاُ بِهَا

"कि जब तुम सुनो कि अल्लाह की आयात के साथ कुफ़्र किया जा रहा है और उनका मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है"

فَلَا تَقْعُدُوْا مَعَهُمْ حَتّٰى يَخُوْضُوْا فِيْ حَدِيْثٍ غَيْرِهٖٓ ۖ

"तो उनके साथ मत बैठो यहाँ तक कि वह किसी और बात में लग जाएँ"

यह सूरतुल अनआम की आयत 68 का हवाला है जिसमें मुसलमानों को हुक्म दिया गया था कि जब तुम्हारे सामने काफ़िर लोग अल्लाह की आयात का इस्तहज़ाअ (मज़ाक) कर रहे हों, क़ुरान का मज़ाक़ उड़ा रहे हों तो तुम वहाँ बैठो नहीं, वहाँ से उठ जाओ। यह मक्की आयत है। चूँकि उस वक़्त मुसलमानों में इतना ज़ोर नहीं था कि कुफ्फ़ार को ऐसी हरकतों से ज़बरदस्ती मना कर सकते इसलिये उनको बताया गया कि ऐसी महफ़िलों में तुम लोग मत बैठो। अगर किसी महफ़िल में ऐसी कोई बात हो जाए तो अहतजाजन वहाँ से उठ कर चले जाओ। ऐसा ना हो कि ऐसे बातों से तुम्हारी ग़ैरते ईमानी में भी कुछ कमी आ जाए या तुम्हारी ईमानी हिस्स कुन्द (कुंठित) पड़ जाए। हाँ जब वह लोग दूसरी बातों में मशगूल हो जाएँ तो फिर दोबारा उनके पास जाने में कोई हर्ज नहीं। दरअसल यहाँ ग़ैर मुस्लिमों से ताल्लुक़ मुन्क़तअ करना मक़सूद नहीं क्योंकि उनको तब्लीग़ करने के लिये उनके पास जाना भी ज़रूरी है।

اِنَّكُمْ اِذًا مِّثْلُهُمْ ۭ

"वरना तुम उन्हीं के मानिंद हो जाओगे।"

अगर इस हालत में तुम भी उन्हीं के साथ बैठे रहोगे तो फिर तुम भी उन जैसे हो जाओगे।

اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْكٰفِرِيْنَ فِيْ جَهَنَّمَ جَمِيْعَۨا ١٤٠

"यक़ीनन अल्लाह तआला जमा करने वाला है मुनाफ़िक़ों को भी और काफ़िरों को भी जहन्नम में सबके सब।"

आयत 141

الَّذِيْنَ يَتَرَبَّصُوْنَ بِكُمْ ۚ

"वो लोग जो तुम्हारे लिये इन्तेज़ार की हालत में हैं।"

मुनाफ़िक़ तुम्हारे मामले में गर्दिशे ज़माना के मुन्तज़िर हैं। देखना चाहते हैं कि हालात का ऊँट किस करवट बैठता है। यह लोग "तेल देखो, तेल की धार देखो" की पॉलिसी अपनाये हुए हैं और नतीजे के इन्तेज़ार में हैं कि आख़री फ़तह किसकी होती है। इसलिये कि उनका तयशुदा मन्सूबा है कि दोनों तरफ़ कुछ ना कुछ ताल्लुक़ात रखो, ताकि वक़्त जैसा भी आये, जो भी सूरते हाल हो, हम उसके मुताबिक़ अपने बचाव की कुछ सूरत बना सकें।

فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوْٓا اَلَمْ نَكُنْ مَّعَكُمْ ڮ

"तो अगर तुम लोगों को अल्लाह की तरफ़ से कोई फ़तह हासिल हो जाये तो यह कहेंगे कि क्या हम तुम्हारे साथ नहीं थे?"

अगर अल्लाह तआला की मदद से मुसलमान फ़तह हासिल कर लेते हैं तो वह आ जाएँगे बाते बनाते हुए कि हम भी तो आपके साथ थे, मुसलमान थे, माले ग़नीमत में से हमारा भी हिस्सा निकालिये।

وَاِنْ كَانَ لِلْكٰفِرِيْنَ نَصِيْبٌ ۙ

"और अगर कोई हिस्सा पहुँच जावा काफ़िरों को"

कभी वक़्ती तौर पर कुफ़्फ़ार को फ़तह हासिल हो जाये, जंग में उनका पलड़ा भारी हो जाये।

قَالُوْٓا اَلَمْ نَسْتَحْوِذْ عَلَيْكُمْ وَنَمْنَعْكُمْ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ

"तो वह कहेंगे (अपने काफ़िर साथियों से) क्या हमने तुम्हारा घेराव नहीं कर लिया था? और हमने बचाया नहीं तुमको मुसलमानों से?"

यानि हमने तो आपको मुसलमानों से बचाने का मन्सूबा बनाया हुआ था, हम तो आपके लिये आड़ बने हुए थे। आप समझते हैं कि हम मुसलमानों के साथ होकर जंग करने आये थे? नहीं, हम तो इसलिये आये थे कि वक़्त आने पर मुसलमानों के हमलों से आपको बचा सकें।

فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ

"तो अल्लाह ही फ़ैसला करेगा तुम्हारे माबैन क़यामत के दिन।"

وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكٰفِرِيْنَ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا ﴿١٤١﴾

"और अल्लाह अहले ईमान के मुक़ाबले में काफ़िरों को राहयाब नहीं करेगा।"

जैसा कि इससे पहले बताया जा चुका है कि सुरतुन्निसा का बड़ा हिस्सा मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब पर मुश्तमिल है, अगरचे उनसे बराहे रास्त ख़िताब में يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ نَافَقُوْا के अल्फ़ाज़ कहीं इस्तेमाल नहीं हुए, बल्कि يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا के अल्फ़ाज़ से ही मुख़ातिब किया गया है। क्योंकि वह भी ईमान के दावेदार थे, ईमान के मुद्दई थे, क़ानूनी तौर पर मुसलमान थे। यह एक तवील मज़मून है जो आइंदा आयाते मुबारका में अंजाम पज़ीर (concluded) हो रहा है।

आयात 142 से 152 तक

اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ ۚ وَاِذَا قَامُوْٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى ۙ يُرَاۗءُوْنَ النَّاسَ وَلَا يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ
اِلَّا قَلِيْلًا ﴿١٤٢﴾ مُّذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ ڰ لَآ اِلٰى هٰٓؤُلَاۗءِ وَلَآ اِلٰى هٰٓؤُلَاۗءِ ۭ وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ﴿١٤٣﴾ يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ﴿١٤٤﴾ اِنَّ
الْمُنٰفِقِيْنَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ ۚ وَلَنْ تَجِدَ لَھُمْ نَصِيْرًا ﴿١٤٥﴾ اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا وَاَصْلَحُوْا وَاعْتَصَمُوْا بِاللّٰهِ
وَاَخْلَصُوْا دِيْنَھُمْ لِلّٰهِ فَاُولٰۗىِٕكَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿١٤٦﴾ مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ
اِنْ شَكَرْتُمْ وَاٰمَنْتُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِــيْمًا ﴿١٤٧﴾ لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الْجَــهْرَ بِالسُّوْۗءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا
عَلِــيْمًا ﴿١٤٨﴾ اِنْ تُبْدُوْا خَيْرًا اَوْ تُخْفُوْهُ اَوْ تَعْفُوْا عَنْ سُوْۗءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيْرًا ﴿١٤٩﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ
وَرُسُلِهٖ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّفَرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيَقُوْلُوْنَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِبَعْضٍ ۙ وَّيُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَّخِذُوْا بَيْنَ
ذٰلِكَ سَبِيْلًا ﴿١٥٠﴾ اُولٰۗىِٕكَ ھُمُ الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا ۚ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿١٥١﴾ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَمْ
يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ اُولٰۗىِٕكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٥٢﴾

आयत 142

اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ

"यक़ीनन मुनाफ़िक़ कोशिश कर रहे हैं अल्लाह को धोखा देने की"

यह मज़मून सूरतुल बक़रह के दूसरे रुकूअ में भी आ चुका है। مُخَادَعَة बाब मुफ़ाअला का मसदर है। इस बाब में किसी के मुक़ाबले में कोशिश के मायने शामिल होते हैं। इसी सूरत में दो फ़रीक़ों में मुक़ाबला होता है और पता नहीं होता कि कौन जीतेगा और कौन हारेगा। लिहाज़ा इसका सही तर्जुमा होगा कि "वह धोखा देने की कोशिश कर रहे हैं।" इसके जवाब में अल्लाह की तरफ़ से फ़रमाया गया है:

وَهُوَ خَادِعُهُمْ ۚ

"और वह उनको धोखा देकर रहेगा।"

خَادِع सलासी मुजर्रद से इस्मुल फ़ाइल है और यह निहायत ज़ोरदार ताकीद के लिये आता है, इसलिये तर्जुमे में ताकीदी अल्फ़ाज़ आएँगे। यहाँ मुनाफ़िक़ीन के लिये धोखे वाला पहलु यह है कि अल्लाह ने उनको जो ढ़ील दी हुई है उससे वह समझ रहें हैं कि हम कामयाब हो रहे हैं, हमारे ऊपर अभी तक कोई आँच नहीं आई, कोई पकड़ नहीं हुई, कोई गिरफ़्त नहीं हुई, हम दोनों तरफ़ से बचे हुए हैं। इस हवाले से वह अपनी इस ढ़ील की वजह से बढ़ते चले जा रहे हैं। और दरहक़ीकत यही धोखा है जो अल्लाह की तरफ़ से उनको दिया जा रहा है। यानि अल्लाह ने उनको धोखे में डाल रखा है।

وَاِذَا قَامُوْٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى

"और जब वह खड़े होते हैं नमाज़ के लिये तो खड़े होते हैं बड़ी कसलमंदी (थकावट) के साथ"

यह मुनाफ़िक़ीन जब नमाज़ के लिये खड़े होते हैं तो साफ़ नज़र आता है कि तबीयत में बशाशत नहीं है, आमादगी नहीं है। लेकिन चूँकि अपने आपको मुसलमान ज़ाहिर करना भी ज़रूरी है लिहाज़ा मजबूरन खड़े हो जाते हैं। قَامَ फ़अल है और इसके मायने हैं खड़े होना, जबकि قَائِم इससे इस्मुल फ़ाइल है। मुख़्तलिफ़ ज़बानों में आम तौर पर verb के बाद prepositions की तब्दीली से मायने और मफ़हूम बदल जाते हैं। मसलन अँग्रेज़ी में to give एक ख़ास मसदर है। अग़र to give up हो तो मायने यक्सर (radically) बदल जाएँगे। फिर यह to give in हो तो बिल्कुल ही उल्टी बात हो जायेगी। इसी तरह अरबी में भी हुरूफ़े जार के तब्दील होने से मायने बदल जाते हैं। लिहाज़ा अग़र قَامَ عَلٰى हो, जैसे {اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوْنَ عَلَى النِّسَآءِ} में है तो इसके मायने होंगे हाकिम होना, सरबराह होना, किसी के हुक्म का नाफ़िज़ होना। लेकिन अग़र قَامَ اِلٰى हो (जैसे आयत ज़ेरे नज़र में है) तो इसका मतलब होगा किसी शय के लिये खड़े होना, किसी शय की तरफ़ खड़े होना, कोई काम करने के लिये उठना, कोई काम करने का इरादा करना। इससे पहले हम قَامَ "بِ" के साथ भी पढ़ चुके हैं: قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ और قَآئِمًا بِالْقِسْطِ. यहाँ इसके मायने हैं किसी शय को क़ायम करना। तो आपने मुलाहिज़ा किया कि हुरूफ़े जार (prepositions) की तब्दीली से किसी फ़अल के अंदर किस तरह इज़ाफ़ी मायने पैदा हो जाते हैं।

يُرَآءُوْنَ النَّاسَ

"महज़ लोगों को दिखाने के लिये"

وَلَا يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝

"और अल्लाह का ज़िक्र नहीं करते मगर बहुत कम।"

यानि ज़िक्रे इलाही जो नमाज़ का असल मक़सद है {وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْرِيْ} (ताहा:14) वह उन्हें नसीब नहीं होता। मगर मुमकिन है इस बेध्यानी में किसी वक़्त कोई आयत बिजली के कड़के की तरह कड़क कर उनके शऊर में कुछ ना कुछ असरात पैदा कर दे।

.

आयत 143

مُّذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ

"यह उसके माबैन मुज़बज़ब (होकर रह गये) हैं।"

कुफ़्र और ईमान के दरमियान डवाँडोल हैं, किसी तरफ़ भी यकसू नहीं हो रहे। इसी लिये क़ुरान में हज़रत इब्राहीम अलै० के तज़किरे के साथ हनीफ़ का लफ़्ज़ बार-बार आता है। दीन के बारे में अल्लाह की तरफ़ से तरगीब यही है कि यकसू हो जाओ। दुनिया में अगर इंसान कुफ़्र पर भी यकसू होगा तो कम से कम उसकी दुनिया तो बन जायेगी, लेकिन अगर दुनिया और आख़िरत दोनों बनाने हैं तो फिर ईमान के साथ यकसू होना ज़रूरी है। लेकिन जो लोग बीच में रहेंगे, इधर के ना उधर के, उनके लिये तो {خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ} के मिस्दाक़ दुनिया और आख़िरत दोनों का घाटा और नुक़सान होगा।

لَآ اِلٰى هٰٓؤُلَآءِ وَلَآ اِلٰى هٰٓؤُلَآءِ

"ना तो यह इनकी जानिब हैं और ना ही उनकी जानिब हैं।"

ना अहले ईमान के साथ मुख़्लिस हैं और ना अहले कुफ़्र के साथ। ना इनके साथ यकसू हैं और ना उनके साथ।

وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ۝١٤٣

"और जिसे अल्लाह ही ने गुमराह कर दिया हो तो उसके लिये तुम कोई रास्ता ना पाओगे।"

यानि जिसकी गुमराही पर अल्लाह की तरफ़ से मोहर तस्दीक़ सब्त हो चुकी हो, उसके राहे रास्त पर आने का कोई इम्कान बाक़ी नहीं रहता।

आयत 144

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ

"ऐ अहले ईमान, मत बनाओ काफ़िरों को अपना दिली दोस्त मुसलमानों को छोड़ कर।"

यह मज़मून पहले आयत 139 में भी आ चुका है। यह भी निफ़ाक़ की एक अलामत है कि अहले ईमान को छोड़ कर काफ़िरों के साथ दोस्तियों की पींगें बढ़ाई जायें, उनको अपना हिमायती, मददगार और राज़दार बनाया जाये।

اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۝١٤٤

"क्या तुम चाहते हो कि तुम अपने ख़िलाफ़ अल्लाह के हाथ में एक सरीह हुज्जत दे दो?"

इस तरह तुम लोग ख़ुद ही अपने ख़िलाफ़ एक हुज्जत फ़राहम कर रहे हो। जब अल्लाह तआला आख़िरत में तुम्हारा मुहासबा करेगा, तब इस सवाल का क्या जवाब दोगे कि तुम्हारी दोस्तियाँ काफ़िरों के साथ क्यों थी? इस तरह तुम्हारा यह फ़अल तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हुज्जते क़ातअ (transverse) बन जायेगा।

अब जो आयत आ रही है वह एक ऐतबार से मुनाफ़िक़ीन के हक़ में क़ुराने हकीम की सख़्त तरीन आयत है। अगरचे बाज़ दूसरे ऐतबारात से, बल्कि एक ख़ास लतीफ़ पहलु से एक आयत इससे भी सख़्त तर है जो सूरह तौबा में आयेगी। दरअसल तवील सूरतों में से सुरतुन्निसा और सूरतुत्तौबा दो ऐसी सूरतें हैं जिनमें निफ़ाक़ का मज़मून बहुत ज़्यादा तफ़सील के साथ आया है।

आयत 145

اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ ۚ وَلَنْ تَجِدَ لَھُمْ نَصِيْرًا ۝١٤٥ۙ

"यक़ीनन मुनाफ़िक़ीन आग के सबसे निचले तब्क़े में होंगे, और तुम ना पाओगे उनके लिये कोई मददगार।"

अगली आयत में उन लोगों के लिये एक रिआयत का ऐलान है। मुनाफ़क़त का पर्दा कुल्ली तौर पर तो सूरह तौबा में चाक होगा। यानि उनके लिये आख़री अहकाम सन् 9 हिजरी में आये थे, जबकि अभी सन् 4 हिजरी के दौर की बातें हो रही हैं। तो अभी उनके लिये रिआयत रखी गई है कि तौबा का दरवाज़ा अभी खुला है। फ़रमाया:

आयत 146

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا وَاَصْلَحُوْا وَاعْتَصَمُوْا بِاللّٰهِ

"सिवाय उन लोगों के जो तौबा करें और इस्लाह कर लें और अल्लाह से चिमट जायें"

अल्लाह का दामन मज़बूती से थाम लें, ईमान के साथ यकसू हो जायें। "كُوْنُوْا رَبّٰنِيّٖنَ" के मिस्दाक़ अल्लाह वाले बन जायें। शैतान से मोहब्बत की पींगें ना बढ़ायें, शैतान के एजेंटों से दोस्तियाँ ना करें, और अपने आपको दीन इस्लाम के साथ वाबस्ता कर लें कि हरचे बादा बाद, अब तो हम इस्लाम की इस कश्ती पर सवार हो गये हैं, अगर यह तैरती है तो हम तैरेंगे, और अगर ख़ुदा ना ख़ास्ता इसके मुक़द्दर में कोई हादसा है तो हम भी उस हादसे में शामिल होंगे।

وَاَخْلَصُوْا دِيْنَهُمْ لِلّٰهِ

“और अपनी इताअत को अल्लाह के लिये ख़ालिस कर लें”

यह ना हो कि ज़िन्दगी के कुछ हिस्से में इताअत अल्लाह की हो रही है, कुछ हिस्से में किसी और की हो रही है कि क्या करें जी! यह मामला तो रिवाज का है, बिरादरी को छोड़ तो नहीं सकते ना! मालूम हुआ आपने अपनी इताअत के अलैहदा-अलैहदा हिस्से कर लिये हैं और फिर उनमें इंतख़ाब करते हैं कि यह हिस्सा तो बिरादरी की इताअत में जायेगा और यह हिस्सा अल्लाह की इताअत के लिये होगा। इताअत जब तक कुल की कुल अल्लाह के लिये ना हो, अल्लाह के यहाँ क़ाबिले क़ुबूल नहीं है। सूरतुल बक़रह (आयत:193) में हमने पढ़ा था: {وَقٰتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ وَّيَكُوْنَ الدِّيْنُ لِلّٰهِ} यहाँ पर दीन पूरे का पूरा अल्लाह के लिये हो जाने का मतलब यह है कि इज्तमाई सतह पर दीन अल्लाह के लिये हो जाये, यानि इस्लामी रियासत क़ायम हो जाये, पूरा इस्लामी निज़ाम क़ायम हो जाये, शरीअते इस्लामी का निफ़ाज़ अमल में आ जाये। और अगर यह नहीं है तो कम से कम एक शख़्स इन्फ़रादी सतह पर तो अपनी इताअत अल्लाह के लिये ख़ालिस कर ले। यह गोया इन्फ़रादी तौहीदी अमली है।

فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿١٤٦﴾

“तो फिर यह लोग अहले ईमान में शामिल हो जाएँगे, और अल्लाह अहले ईमान को अनक़रीब बहुत बड़ा अजर अता फ़रमाएगा।”

यानि अभी तौबा का दरवाज़ा खुला है, सच्ची तौबा करने के बाद उनको माफ़ी मिल सकती है। अभी उनके लिये point of no return नहीं आया है।

आयत 147

مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ

“(ऐ मुनाफ़िक़ों ज़रा सोचो!) अल्लाह तुम्हें अज़ाब देकर क्या करेगा?”

अल्लाह तआला मआज़ अल्लाह कोई इज़ा पसंद (sadist) हस्ती नहीं है कि उसे लोगों को दुख पहुँचा कर खुशी होती हो। इस तरह के रवैये तो perverted क़िस्म के इंसानों के होते हैं, जिनकी शख़्सियतें मस्ख़ हो चुकी होती हैं, जो दूसरों को तकलीफ़ में देखते हैं तो ख़ुश होते हैं, दूसरों को तकलीफ़ और कोफ़्त पहुँचा कर उन्हें राहत हासिल होती है। लेकिन अल्लाह तो ऐसा नहीं है। इसलिये फ़रमाया कि अल्लाह तुम्हें अज़ाब देकर तुमसे क्या लेगा?

اِنْ شَكَرْتُمْ وَاٰمَنْتُمْ ۭ

“अग़र तुम शुक्र और ईमान की रविश इख़्तियार करो।”

وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِيْمًا ﴿١٤٧﴾

“और अल्लाह बहुत ही क़दरदानी फ़रमाने वाला और हर शय का इल्म रखने वाला है।”

जो बंदा उसके लिये काम करे, मेहनत करे, अल्लाह तआला उसकी क़द्र फ़रमाता है। और जो कोई जो कुछ भी करता है सब उसके इल्म में होता है। इंसान का कोई अमल ऐसा नहीं है जो अल्लाह के यहाँ unaccounted रह जाये, और उसे उसका अजर ना मिल सके।

अब इस सूरत के आख़री हिस्से में फ़लसफ़ा-ए-दीन के बहुत अहम बुनियादी निकात की कुछ तफ़सील आयेगी। इस ज़िमन में पहली बात तो तमद्दुनी और मआशरती मामलात ही से मुताल्लिक़ है। मआशरे के अंदर किसी बुरी बात का चर्चा करना बिलफ़अल कोई अच्छी बात नहीं है, लेकिन इसमें एक इस्तसना रखा गया है, और वह है मज़लूम का मामला। अगर मज़लूम की ज़बान से ज़ुल्म के रद्दे अमल के तौर पर कुछ नाज़ेबा कलिमात, जले-कटे अल्फ़ाज़ भी निकल जायें तो अल्लाह तआला उन्हें माफ़ कर देगा।

आयत 148

لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الْجَهْرَ بِالسُّوْٓءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ

"अल्लाह को बिल्कुल पसंद नहीं है कि किसी बुरी बात को बुलन्द आवाज़ से कहा जाये, सिवाय उसके जिस पर ज़ुल्म हुआ है।"

जिसका दिल दुखा है, जिसके साथ ज़्यादती हुई है, ना सिर्फ़ यह कि उसके जवाब में उसकी ज़बान से निकलने वाले कलिमात पर गिरफ़्त नहीं, बल्कि मज़लूम की दुआ को भी क़ुबूलियत की सनद अता होती है। किसी फ़ारसी शायर ने इस मज़मून को इस तरह अदा किया है:

बतरस अज़ आहे मज़लूमा की हंगामे दुआ कर दन
इजाबत अज़ दरे हक़ बहरे इस्तक़बाल मी आयद

कि मज़लूम की आहों से डरो कि उसकी ज़बान से निकलने वाली फ़रियाद ऐसी दुआ बन जाती है जिसकी क़ुबूलियत ख़ुद अल्लाह तआला की तरफ़ से उसका इस्तक़बाल करने के लिये अर्श से आती है।

وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا عَلِيْمًا ۝١٤٨

"और अल्लाह सुनने वाला और जानने वाला है।"

उसे सब मालूम है कि जिसके दिल से यह आवाज़ निकली है वह कितना दुखी है। उसके अहसासात कितने मजरूह (आहत) हुए हैं।

आयत 149

اِنْ تُبْدُوْا خَيْرًا اَوْ تُخْفُوْهُ

"अगर तुम भलाई को ज़ाहिर करो या उसे छुपाओ"

जहाँ तक तो खैर का मामला है तुम उसे बुलन्द आवाज़ से कहो, ज़ाहिर करो या छुपाओ बराबर की बात है। अल्लाह तआला के लिये खैर तो हर हाल में खैर ही है, अयाँ (ज़ाहिर) हो या ख़ुफ़िया।

اَوْ تَعْفُوْا عَنْ سُوْٓءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيْرًا ۝١٤٩

"या तुम बुराई को माफ़ कर दिया करो तो यक़ीनन अल्लाह भी माफ़ फ़रमाने वाला, क़ुदरत रखने वाला है।"

अपने साथ होने वाली ज़्यादती को माफ़ कर देना यक़ीनन नेकी का एक ऊँचा दर्जा है। इसलिये यहाँ तरगीब के अंदाज़ में मज़लूम से भी कहा जा रहा है कि अगरचे तुम्हें छूट है, तुम्हारी बदगोई की भी तुम पर कोई गिरफ़्त नहीं, लेकिन ज़्यादती की तलाफ़ी का इससे आला और बुलन्दतर दर्जा भी है, तुम उस बुलन्द दर्जे को हासिल क्यों नहीं करते? वह यह कि तुम अपने साथ होने वाली ज़्यादती को माफ़ कर दो। इसके साथ अल्लाह की क़ुदरत का ज़िक्र भी हुआ है कि इन्सान तो बसा अवक़ात बदला लेने की ताक़त ना होने के बाइस माफ़ करने पर मजबूर भी हो जाता है, जबकि अल्लाह तआला क़ादिरे मुतलक़ है, क़दीर है, वह तो जब चाहे, जैसे चाहे (there & then) ख़ताकार को फ़ौरन सज़ा देकर हिसाब चुका सकता है। लेकिन इतनी क़ुदरत के बावजूद भी वह माफ़ फ़रमा देता है।

आइन्दा आयात में फिर वहदत अल अदयान जैसे अहम मज़मून का तज़किरा होने जा रहा है और इस सिलसिले में यहाँ तमाम ग़लत नज़रियात की जड़ काटी जा रही है। इससे पहले भी यह बात ज़ेरे बहस आ चुकी है कि फ़लसफ़ा-ए-वहदत-ए-अदयान का एक हिस्सा सही है। वह यह कि असल (origin) सब अदयान की एक है। लेकिन अगर कोई यह कहे कि मुख्तलिफ़ अदयान की मौजूदा शक्लों में भी एक रंगी और हम आहंगी है तो इससे बड़ी हिमाक़त, जहालत, ज़लालत और गुमराही कोई नहीं।

यहाँ पर अब कांटे की बात बताई जा रही है कि दीन में जिस चीज़ की वजह से बुनियादी खराबी पैदा होती है वह असल में क्या है। वह ग़लती या खराबी है अल्लाह और रसूलों में तफ़रीक़! एक तफ़रीक़ तो वह है जो रसूलों के दरमियान की जाती है, और दूसरी तफ़रीक़ अल्लाह और रसूल ﷺ को अलैहदा-अलैहदा कर देने की शक्ल में सामने आती है, और यह सबसे बड़ी जहालत है। फ़ितना इन्कारे हदीस और इन्कारे सुन्नत इसी जहालत व गुमराही का शाखसाना (नतीजा) है। यह लोग अपने आप को अहले क़ुरान समझते हैं और उनका नज़रिया यह है कि रसूल ﷺ का काम क़ुरान पहुँचा देना

था, सो उन्होंने पहुँचा दिया, अब असल मामला हमारे और अल्लाह के दरमियान है। अल्लाह की किताब अरबी ज़बान में है, हम इसको ख़ुद समझेंगे और इस पर अमल करेंगे। रसूल ﷺ ने अपने ज़माने में मुसलमानों को जो इसकी तशरीह समझायी थी और उस ज़माने के लोगों ने उसे क़ुबूल किया था, वह उस ज़माने के लिये थी। गोया रसूल ﷺ की तशरीह कोई दाइमी चीज़ नहीं, दाइमी शय सिर्फ़ क़ुरान है। इस तरह उन्होंने अल्लाह और रसूल ﷺ को जुदा कर दिया। यहाँ उसी गुमराही का ज़िक्र आ रहा है।

आयत 150

إِنَّ الَّذِينَ يَكْفُرُونَ بِاللَّهِ وَرُسُلِهِ وَيُرِيدُونَ أَنْ يُفَرِّقُوا بَيْنَ اللَّهِ وَرُسُلِهِ

"यक़ीनन वह लोग जो कुफ़्र करते हैं अल्लाह और उसके रसूलों का और वह चाहते हैं कि तफ़रीक़ कर दें अल्लाह और उसके रसूलों के माबैन"

अकबर के "दीन-ए-इलाही" का बुनियादी फ़लसफ़ा भी यही था कि बस दीन तो अल्लाह ही का है, रसूल ﷺ की निस्बत ज़रूरी नहीं, क्योंकि जब दीन की निस्बत रसूल के साथ हो जाती है तो फिर दीन रसूल के साथ मंसूब हो जाता है कि यह दीने मूसा (अलै०) है, यह दीने ईसा (अलै०) है, यह दीने मुहम्मदी ﷺ है। अगर रसूलों का यह तफ़रीक़ी अन्सर (differentiating factor) दरमियान से निकाल दिया जाये तो मज़ाहिब के इख्तलाफ़ात का ख़ात्मा हो जायेगा। अल्लाह तो सबका मुश्तरिक़ (common) है, चुनाँचे जो दीन उसी के साथ मंसूब होगा वह दीने इलाही होगा।

وَيَقُولُونَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِبَعْضٍ

"और वह कहते हैं कि हम कुछ को मानेंगे और कुछ को नहीं मानेंगे"

यानि अल्लाह को मानेंगे, रसूलों का मानना ज़रूरी नहीं है। अल्लाह की किताब को मानेंगे, रसूल ﷺ की सुन्नत का मानना कोई ज़रूरी नहीं है, वगैरह-वगैरह।

وَّيُرِيدُونَ أَنْ يَّتَّخِذُوا بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيلًا ﴿١٥٠﴾

"और वह चाहते हैं कि इसके बैन-बैन एक रास्ता निकाल लें।"

अल्लाह को एक तरफ़ कर दें और रसूल को एक तरफ़।

आयत 151

أُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُونَ حَقًّا ۚ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿١٥١﴾

"यही लोग हक़ीक़त में पक्के काफ़िर हैं, और हमने इन काफ़िरों के लिये बड़ा अहानत आमेज़ अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 152

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَمْ يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ

"और जो लोग ईमान रखते हैं अल्लाह और उसके रसूलों पर और उन्होंने उनमें से किसी के माबैन कोई तफ़रीक़ नहीं की"

ना अल्लाह को रसूल से जुदा किया और ना रसूल को रसूल से जुदा किया। और वह कहते हैं कि हम सबको मानते हैं: لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهٖ (अल बक़रह:285)। हम उन रसूलों को भी मानते हैं जिनके नाम क़ुरान मजीद में आ गये हैं, और यह भी मानते हैं कि उनके अलावा भी अल्लाह की तरफ़ से बेशुमार नबी और रसूल आये हैं।

اُولٰۗىِٕكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ١٥٢

"यह वह लोग हैं कि जिन्हें अल्लाह उनके अज्र अता फ़रमायेगा, और अल्लाह तआला गफ़ूर और रहीम है।"

आयत 153 से 162 तक

يَسْـَٔــلُكَ اَهْلُ الْكِتٰبِ اَنْ تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتٰبًا مِّنَ السَّمَاۗءِ فَقَدْ سَاَلُوْا مُوْسٰٓى اَكْبَرَ مِنْ ذٰلِكَ فَقَالُوْٓا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً
فَاَخَذَتْهُمُ الصّٰعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ ۚ ثُمَّ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَتْهُمُ الْبَيِّنٰتُ فَعَفَوْنَا عَنْ ذٰلِكَ ۚ وَاٰتَيْنَا مُوْسٰى
سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ١٥٣ وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّوْرَ بِمِيْثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَّقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوْا فِي
السَّبْتِ وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا ١٥٤ فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ وَكُفْرِهِمْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَقَتْلِهِمُ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ
وَّقَوْلِهِمْ قُلُوْبُنَا غُلْفٌ ۭ بَلْ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ١٥٥ وَّبِكُفْرِهِمْ وَقَوْلِهِمْ عَلٰي مَرْيَمَ بُهْتَانًا
عَظِيْمًا ١٥٦ وَّقَوْلِهِمْ اِنَّا قَتَلْنَا الْمَسِيْحَ عِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ رَسُوْلَ اللّٰهِ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ وَمَا صَلَبُوْهُ وَلٰكِنْ شُبِّهَ لَهُمْ ۭ وَاِنَّ
الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ ۭ مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًۢا ١٥٧ بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ
اِلَيْهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ١٥٨ وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ ۚ وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكُوْنُ عَلَيْهِمْ
شَهِيْدًا ١٥٩ فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا ١٦٠
وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُھُوْا عَنْهُ وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ ۭ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِـيْمًا ١٦١ لٰكِنِ
الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ وَالْمُؤْتُوْنَ
الزَّكٰوةَ وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا ١٦٢

आयत 153

يَسْـَٔــلُكَ اَهْلُ الْكِتٰبِ اَنْ تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتٰبًا مِّنَ السَّمَاۗءِ

"(ऐ नबी ﷺ!) अहले किताब आप ﷺ से यह मुतालबा कर रहे हैं कि आप उन पर एक किताब आसमान से उतार लायें"

यानि जैसे तौरात उतरी थी, वैसे ही तहरीरी शक्ल में एक किताब आसमान से उतरनी चाहिये। आप ﷺ तो कहते हैं मुझ पर वही आती है, लेकिन कहाँ लिखी हुई है वह वही? कौन लाया है? हमें तो पता नहीं। मूसा (अलै०) को तो उनकी किताब लिखी हुई मिली थी और वह पत्थर की तख्तियों की सूरत में उसे लेकर आये थे। आप ﷺ पर भी इसी तरह की किताब नाज़िल हो तो हम मानें।

فَقَدْ سَاَلُوْا مُوْسٰٓى اَكْبَرَ مِنْ ذٰلِكَ

"(यह तअज्जुब की बात नहीं) इन्होंने मूसा (अलै०) से इससे भी बढ़ कर मुतालबे किये थे"

ऐ नबी ﷺ आप फ़िक्र ना करें, इनकी परवाह ना करें। इन्होंने, इनके आबा व अजदाद ने हज़रत मूसा (अलै०) से इससे भी बड़े-बड़े मुतालबात किये थे।

فَقَالُوْٓا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً

"उन्होंने तो (उनसे यह भी) कहा था कि हमें दिखाओ अल्लाह को ऐलानिया"

कि हम ख़ुद अपनी आँखों से उसे देखना चाहते हैं, जब देखेंगे तब मानेंगे।

فَاَخَذَتْهُمُ الصّٰعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ ۚ

"तो उनको आ पकड़ा था कड़क ने उनके इस गुनाह की पादाश में।"

ثُمَّ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَتْهُمُ الْبَيِّنٰتُ

"फिर उन्होंने बछड़े को मअबूद बना लिया इसके बाद कि उनके पास बहुत वाज़ेह निशानियाँ आ चुकी थीं"

उन लोगों की नाहंजारी का अंदाज़ा करें कि नौ-नौ मौअज्जज़े हज़रत मूसा (अलै०) के हाथों देखने के बाद भी उन्होंने बछड़े की परस्तिश शुरू कर दी।

فَعَفَوْنَا عَنْ ذٰلِكَ ۚ وَاٰتَيْنَا مُوْسٰى سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ١٥٣

"तो हमने इन तमाम चीज़ों से भी दरगुज़र किया, और हमने मूसा (अलै०) को अता किया बड़ा वाज़ेह गलबा।"

फ़िरऔन और उसके लाव-लश्कर को उनकी आँखों के सामने गर्क़ कर दिया।

आयत 154

وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّوْرَ بِمِيْثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا

"और हमने उनके सरों पर मुअल्लक़ कर दिया था तूर पहाड़ को जबकि उनसे अहद लिया जा रहा था और हमने उनसे कहा कि दरवाज़े में दाख़िल हों झुक कर"

यानि जब अरीहा (Jericho) शहर तुम्हारे हाथों फ़तह हो जाये और उसमें दाख़िल होने का मरहला आये तो अपने सरों को झुका कर आजिज़ी के साथ दाख़िल होना।

وَّقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوْا فِي السَّبْتِ

"और हमने उनसे (यह भी) कहा था कि सब्त (हफ़्ते के दिन के क़ानून) में हद से तजावुज़ ना करना"

وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا ١٥٤

"और हमने उनसे (इन तमाम बातों के बारे में) बड़े गाढ़े क़ौल व क़रार लिये थे।"

आयत 155

فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ

"तो उन्होंने जो अपने इस मीसाक़ को तोड़ डाला इसके सबब"

अब उनके जराइम (जुर्मों) की फ़ेहरिस्त आ रही है, और यूँ समझिये कि मुब्तदा ही की तकरार हो रही है और इसमें जो असल ख़बर है वह गोया महज़ूफ़ है। गोया बात यूँ बनेगी: فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ कि उन्होंने जो अपने मीसाक़ को तोडा और तोड़ते रहे, हमारे साथ उन्होंने जो भी वादे किये थे, जब उनका पास (guard) उन्होंने ना किया तो हमने उन पर लानत कर दी। लेकिन यह "لَعَنّٰهُمْ" इतनी वाज़ेह बात थी कि इसको कहने की ज़रूरत महसूस नहीं की गयी, बल्कि उनके जराइम की फ़ेहरिस्त बयान कर दी गयी।

وَكُفْرِهِمْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَقَتْلِهِمُ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ

"और उनके अल्लाह की आयात के इन्कार और अम्बिया को नाहक़ क़त्ल करने (के सबब)"

وَّقَوۡلِهِمۡ قُلُوۡبُنَا غُلۡفٌ ؕ بَلۡ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيۡهَا بِكُفۡرِهِمۡ فَلَا يُؤۡمِنُوۡنَ اِلَّا قَلِيۡلًا ۞

"और उनके इस तरह कहने (की पादाश) में कि हमारे दिल तो गिलाफ़ों में बंद हैं। बल्कि (हक़ीक़त यह है कि) अल्लाह ने उन (के दिलों) पर मोहर कर दी है उनके कुफ़्र के बाइस, पस अब वह ईमान नहीं लायेंगे मगर बहुत ही शाज़।"

आयत 156

وَّبِكُفۡرِهِمۡ وَقَوۡلِهِمۡ عَلٰى مَرۡيَمَ بُهۡتَانًا عَظِيۡمًا ۞

"और बसबब उनके कुफ़्र के और उन बातों के जो उन्होंने मरयम के ख़िलाफ़ कीं एक बहुत बड़े बोहतान के तौर पर।"

हज़रत मरयम सलामुन अलैहा पर यहूदियों ने बोहतान लगाया कि उन्होंने (माज़ अल्लाह) ज़िना किया है और मसीह (अलै०) दरअसल युसुफ़ नज्जार का बेटा है। उनकी रिवायात के मुताबिक़ युसुफ़ नज्जार के साथ हज़रत मरयम की निस्बत हो चुकी थी, लेकिन अभी रुख्सती नहीं हुई थी कि उनके माबैन ताल्लुक़ क़ायम हो गया, जिसके नतीजे में यह बेटा पैदा हो गया। इस तरह उन्होंने हज़रत मसीह (अलै०) को वलदुज़्ज़िना क़रार दिया। यह है वह इतनी बड़ी बात जो यहूदी कहते हैं और आज भी इस गुमराहकुन नज़रिये पर मब्नी "Son of Man" जैसी फ़िल्में बना कर अमेरिका में चलाते हैं, जिनमें ईसाईयों को बताया जाता है कि जिस मसीह को तुम लोग Son of God कहते हो वह हक़ीक़त में Son of Man है।

आयत 157

وَّقَوۡلِهِمۡ اِنَّا قَتَلۡنَا الۡمَسِيۡحَ عِيۡسَى ابۡنَ مَرۡيَمَ رَسُوۡلَ اللّٰهِ ۚ

"और बसबब उनके यह कहने के कि हमने क़त्ल किया मसीह ईसा इब्ने मरयम को, अल्लाह के रसूल को!"

यानि अल्लाह के रसूल को क़त्ल कर दिया! यहाँ यह "رَسُوۡلَ اللّٰهِ" के अल्फ़ाज़ उनके नहीं हैं, बल्कि यह अल्लाह की तरफ़ से हैं इस्तेजाबिया निशान (sign of exclamation) के साथ, कि अच्छा उनका दावा यह है कि उन्होंने अल्लाह के रसूल को क़त्ल किया है! जबकि रसूल तो क़त्ल हो ही नहीं सकता। अल्लाह का तो फ़ैसला है, एक तयशुदा अम्र है, अल्लाह की तरफ़ से लिखा हुआ है कि मैं और मेरे रसूल ग़ालिब आकर रहेंगे {كَتَبَ اللّٰهُ لَاَغۡلِبَنَّ اَنَا وَرُسُلِىۡ ؕ} (अल मुजादला:21) तो उनकी यह जुर्रात कि वह समझते हैं कि उन्होंने अल्लाह के रसूल को क़त्ल किया है!

وَمَا قَتَلُوۡهُ وَمَا صَلَبُوۡهُ وَلٰـكِنۡ شُبِّهَ لَهُمۡ ؕ

"हालाँकि ना तो उन्होंने उसे क़त्ल किया और ना ही उसे सूली दी, बल्कि उसकी शबीहा (image) बना दी गयी उनके लिये।"

मामला उनके लिये मुशतबा (संदिग्ध) कर दिया गया और एक शख्स की हज़रत मसीह अलै० जैसी सूरत बना दी गयी, उनके साथ मुशाबिहत कर दी गयी। चुनाँचे उन्होंने जिसको मसीह समझ कर सूली पर चढ़ाया, वह मसीह अलै० नहीं था, उनकी जगह कोई और था। इन्जील बरनबास से मालूम होता है कि उस शख्स का नाम "यहूदा इस्केरियोट" (Judas Iscariot) था और वह आप (अलै०) के हवारियों में से था, वैसे उसकी नीयत कुछ और थी, उसमें बदनीयती बहरहाल नहीं थी (तफ़सील का यहाँ मौक़ा नहीं है) लेकिन चूँकि उसने आप (अलै०) को गिरफ़्तार कराया था, चुनाँचे इस गुस्ताखी की पादाश में अल्लाह तआला ने उसकी शक्ल हज़रत मसीह (अलै०) जैसी बना दी और हज़रत मसीह (अलै०) की जगह वह पकड़ा गया और सूली चढ़ा दिया गया।

وَاِنَّ الَّذِيۡنَ اخۡتَلَفُوۡا فِيۡهِ لَفِىۡ شَكٍّ مِّنۡهُ ؕ

"और जो लोग उसके बारे में इख्तिलाफ़ में पड़े हुए हैं वह यक़ीनन शुक़ूक व शुबहात में हैं।"

उन्हें ख़ुद पता नहीं कि क्या हुआ? कैसे हुआ?

مَا لَهُمۡ بِهٖ مِنۡ عِلۡمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوۡهُ يَقِيۡنًا ۞

"उनके पास इस ज़िमन में कोई इल्म नहीं है सिवाय इसके कि गुमान की पैरवी कर रहे हैं, और यह बात यक़ीनी है कि उन्होंने उसे क़त्ल नहीं किया।"

हज़रत मसीह अलै० हरगिज़ क़त्ल नहीं हुए और ना ही आप अलै० को सलैब पर चढ़ाया गया।

आयत 158

بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ ۭوَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِـيْمًا ١٥٨

"बल्कि अल्लाह ने उसे उठा लिया अपनी तरफ़, और अल्लाह तआला ज़बरदस्त है कमाले हिकमत वाला।"

इस वाक़्ये की तफ़सील इन्जील बरनबास में मौजूद है।

आयत 159

وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ ۚ

"और नहीं होगा अहले किताब में से कोई भी मगर उस पर ईमान लाकर रहेगा उसकी मौत से क़ब्ल।"

यानि हज़रत मसीह अलै० फ़ौत नहीं हुए, ज़िन्दा हैं, उन्हें आसमान पर उठा लिया गया था और वह दोबारा ज़मीन पर आएंगे, और जब आएंगे तो अहले किताब में से कोई शख़्स नहीं रहेगा कि जो उन पर ईमान ना ले आये।

وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكُوْنُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا ١٥٩ۚ

"और क़यामत के दिन वही उनके ख़िलाफ़ गवाह (बन कर खड़ा) होगा।"

यह गवाही वाला मामला वही है जिसकी तफ़सील हम आयत 41 में पढ़ आये हैं: { فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍۢ بِشَهِيْدٍ وَّجِئْنَا بِكَ عَلٰي هٰٓؤُلَاۗءِ شَهِيْدًا } कि हर नबी को अपनी उम्मत के ख़िलाफ़ गवाही देनी है। लिहाज़ा हज़रत मसीह अलै० अपनी उम्मत के ख़िलाफ़ गवाही देंगे।

आयत 160

فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ

"तो बसबब उन यहूदी बन जाने वालों की ज़ालिमाना रविश के हमने उन पर वह पाकीज़ा चीज़ें भी हराम कर दीं जो असलन उनके लिये हलाल थीं"

अल्लाह तआला की एक सुन्नत यह भी है कि कोई क़ौम अगर किसी मामले में हद से गुज़रती है तो सज़ा के तौर पर उसे हलाल चीज़ों से भी महरूम कर दिया जाता है। यहाँ पर यही उसूल बयान हो रहा है। मसलन अगर याक़ूब अलै० ने ऊँट का गोश्त खाना छोड़ दिया था तो अल्लाह तआला ने तौरात में इसकी सराहत नहीं की कि यह हराम नहीं है, यह तो महज़ तुम्हारे नबी (अलै०) का बिल्कुल ज़ाती क़िस्म का फ़ैसला है, बल्कि अल्लाह ने कहा कि ठीक है, इनकी यही सज़ा है कि इन पर तंगी रहे और इस तरह इनके करतूतों की सज़ा के तौर पर हलाल चीज़ें भी उन पर हराम कर दीं।

وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا ١٦٠ۙ

"और बसबब इसके कि यह बकसरत अल्लाह के रास्ते से (ख़ुद रुकते हैं और दूसरों को भी) रोकते हैं।"

यह लोग अल्लाह के रास्ते से ख़ुद भी रुकते हैं और दूसरे लोगों को भी रोकते हैं। तो इस वजह से अल्लाह तआला ने इनको सज़ा दी और इन पर बाज़ हलाल चीज़ें भी हराम कर दीं।

आयत 161

وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُھُوْا عَنْهُ

"और बसबब उनके सूद खाने के जबकि इससे उन्हें मना किया गया था"

शरीअते मूसवी में सूद हराम था, आज भी हराम है, लेकिन उन्होंने इस हुक्म का अपना एक मनपसंद मफ़हूम निकाल लिया, जिसके मुताबिक़ यहूदियों का आपस में सूद का लेन-देन तो हराम है, कोई यहूदी दूसरे यहूदी से सूदी लेन-देन नहीं कर सकता, लेकिन गैर यहूदी से सूद लेना जायज़ है, क्योंकि वह उनके नज़दीक Gentiles और Goyems हैं, इन्सान नुमा हैवान हैं, जिनसे फ़ायदा उठाना और उनका इस्तेहसाल करना उनका हक़ है। हम सूरह आले इमरान (आयत:75) में यहूद का यह क़ौल पढ़ चुके हैं: {لَيْسَ عَلَيْنَا فِي الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ} कि इन उम्मिय्यीन के बारे में हम पर कोई गिरफ़्त है ही नहीं, कोई ज़िम्मेदारी है ही नहीं। हम जैसे चाहें लूट-मार करें, जिस तरह चाहें इन्हें धोखा दें, हम पर कोई मुआखज़ा नहीं। लिहाज़ा सूद खाने में उनके यहाँ अमूमी तौर पर कोई क़बाहत नहीं है।

وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ ۭ

"और बसबब उनके लोगों के माल नाहक़ हड़प करने के।"

وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِـيْمًا ١٦١

"और उनमें से जो काफ़िर हैं उनके लिये हमने बहुत दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 162

لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ

"अलबत्ता जो लोग उनमें से पुख्ता इल्म वाले हैं और अहले ईमान हैं"

यानि यहूद में से अहले इल्म लोग जैसे अब्दुल्लाह बिन सलाम (अलै०) और ऐसे ही रास्तबाज़ लोग जिन्होंने तौरात के इल्म की बिना पर नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ की तस्दीक़ की और आप ﷺ पर ईमान लाये।

يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ

"वह ईमान रखते हैं उस पर जो (ऐ नबी ﷺ) आप ﷺ पर नाज़िल किया गया और उस पर भी जो आप ﷺ से पहले नाज़िल किया गया"

وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ وَالْمُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ

"और वह नमाज़ क़ायम करने वाले हैं, ज़कात अदा करने वाले हैं, और ईमान रखने वाले हैं अल्लाह पर भी और यौमे आख़िरत पर भी"

اُولٰۗىِٕكَ سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا ١٦٢

"यह वह लोग हैं जिन्हें हम ज़रूर अज्रे अज़ीम अता फ़रमाएंगे।"

इन आयात में अभी भी थोड़ी सी गुंजाइश रखी जा रही है कि अहले किताब में से कोई ऐसा अन्सर (तत्व) अगर अब भी मौजूद हो जो हक़ की तरफ़ माइल हो, अब भी अगर कोई सलीमुल फ़ितरत फ़र्द कहीं कोने खुदरे में पड़ा हो, अगर इस कान में हीरे का कोई टुकड़ा कहीं अभी तक पड़ा रह गया हो, तो वह भी निकल आये इससे पहले कि आखरी दरवाज़ा भी बंद कर दिया जाये। तो अभी आखरी दरवाज़ा ना तो मुनाफ़िक़ीन पर बंद किया गया है और ना इन अहले किताब पर, बल्कि لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ फ़रमा कर एक दफ़ा फिर सिलाये आम दे दी गयी है कि अहले किताब में से अब भी अगर कुछ लोग माइल बाहक़ हैं तो वह मुतवज्ज हो जायें।

आयत 163 से 169 तक

اِنَّآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ كَمَآ اَوْحَيْنَآ اِلٰى نُوْحٍ وَّالنَّـبِيّٖنَ مِنْۢ بَعْدِهٖ ۚ وَاَوْحَيْنَآ اِلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ
وَالْاَسْبَاطِ وَعِيْسٰى وَاَيُّوْبَ وَيُوْنُسَ وَهٰرُوْنَ وَسُلَيْمٰنَ ۚ وَاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا ١٦٣ وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنٰهُمْ عَلَيْكَ مِنْ
قَبْلُ وَرُسُلًا لَّمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ ۭ وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوْسٰى تَكْلِيْمًا ١٦٤ رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَي

اللّٰہِ حُجَّۃٌۢ بَعۡدَ الرُّسُلِ ؕ وَکَانَ اللّٰہُ عَزِیۡزًا حَکِیۡمًا ﴿۱۶۵﴾ لٰکِنِ اللّٰہُ یَشۡہَدُ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اِلَیۡکَ اَنۡزَلَہٗ بِعِلۡمِہٖ ۚ وَالۡمَلٰٓئِکَۃُ یَشۡہَدُوۡنَ ؕ وَکَفٰی بِاللّٰہِ شَہِیۡدًا ﴿۱۶۶﴾ اِنَّ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡا وَصَدُّوۡا عَنۡ سَبِیۡلِ اللّٰہِ قَدۡ ضَلُّوۡا ضَلٰلًۢا بَعِیۡدًا ﴿۱۶۷﴾ اِنَّ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡا وَظَلَمُوۡا لَمۡ یَکُنِ اللّٰہُ لِیَغۡفِرَ لَہُمۡ وَلَا لِیَہۡدِیَہُمۡ طَرِیۡقًا ﴿۱۶۸﴾ اِلَّا طَرِیۡقَ جَہَنَّمَ خٰلِدِیۡنَ فِیۡہَاۤ اَبَدًا ؕ وَکَانَ ذٰلِکَ عَلَی اللّٰہِ یَسِیۡرًا ﴿۱۶۹﴾

इस रुकूअ के शुरू में अम्बिया और रसूलों के नामों का एक ख़ूबसूरत गुलदस्ता नज़र आता है। क़ुरान पाक में मुतअद्दिद (कई) ऐसे मक़ामात हैं जहाँ ऐसे गुलदस्ते ख़ूबसूरती से सजाये गये हैं। यहाँ आपको पे-बा-पे अम्बिया और रसूलों के नाम मिलेंगे और फिर उनमें से बाज़ की इज़ाफ़ी शानों का ज़िक्र भी मिलेगा। इसके बाद फ़लसफ़ा-ए-क़ुरान के ऐतबार से एक बहुत अहम आयत भी आयेगी, जिसमें नबुवत का बुनियादी मक़सद और असासी फ़लसफ़ा बयान किया गया है।

आयत 163

اِنَّاۤ اَوۡحَیۡنَاۤ اِلَیۡکَ کَمَاۤ اَوۡحَیۡنَاۤ اِلٰی نُوۡحٍ وَّالنَّبِیّٖنَ مِنۡۢ بَعۡدِہٖ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) हमने आप ﷺ की जानिब भी वही की है जैसे हमने नूह (अलै०) और उनके बाद बहुत से अम्बिया पर वही की थी।"

وَاَوۡحَیۡنَاۤ اِلٰۤی اِبۡرٰہِیۡمَ وَاِسۡمٰعِیۡلَ وَاِسۡحٰقَ وَیَعۡقُوۡبَ وَالۡاَسۡبَاطِ

"और हमने इब्राहीम (अलै०), इस्माइल (अलै०), इस्हाक़ (अलै०), याक़ूब (अलै०) और उनकी औलाद की तरफ़ भी वही की"

وَعِیۡسٰی وَاَیُّوۡبَ وَیُوۡنُسَ وَہٰرُوۡنَ وَسُلَیۡمٰنَ ۚ وَاٰتَیۡنَا دَاوٗدَ زَبُوۡرًا ﴿۱۶۳﴾

"और ईसा (अलै०), अय्यूब (अलै०), युनुस (अलै०), हारुन (अलै०) और सुलेमान (अलै०) की तरफ़ (भी वही की)। और दाऊद (अलै०) को तो हमने ज़बूर (जैसी किताब) अता फ़रमायी।"

आयत 164

وَرُسُلًا قَدۡ قَصَصۡنٰہُمۡ عَلَیۡکَ مِنۡ قَبۡلُ وَرُسُلًا لَّمۡ نَقۡصُصۡہُمۡ عَلَیۡکَ ؕ

"और (भेजे) वह रसूल जिनका हम इससे पहले आप ﷺ के सामने तज़किरा कर चुके हैं और ऐसे रसूल (भी) जिनके हालात हमने आप ﷺ के सामने बयान नहीं किये"

पूरी दुनिया की तारीख बयान करना तो क़ुरान मजीद का मक़सद नहीं है कि तमाम अम्बिया व रुसुल (अलै०) की मुकम्मल फ़ेहरिस्त दे दी जाती। यह तो किताबे हिदायत है, तारीख की किताब नहीं है।

وَکَلَّمَ اللّٰہُ مُوۡسٰی تَکۡلِیۡمًا ﴿۱۶۴﴾

"और मूसा अलै० से तो कलाम किया अल्लाह ने जैसा कि कलाम किया जाता है।"

यह ख़ास हज़रत मूसा अलै० की इम्तियाज़ी शान बयान हुई है। लेकिन यह मुकलमा "مِنۡ وَّرَآءِ حِجَابٍ" था, यानि परदे के पीछे से, अलबत्ता था दू-बर-दू कलाम। अब इसके बाद वह आयत आ रही है जिसमें नबुवत का असासी मक़सद (basic purpose) बयान हुआ है कि यह तमाम रसूल (अलै०) किस लिये भेजे गये थे।

आयत 165

رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ

"यह रसूल अलै० (भेजे गये) बशारत देने वाले और ख़बरदार करने वाले बना कर"

لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌۢ بَعْدَ الرُّسُلِ

"ताकि ना रह जाये लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत (दलील) रसूलों के आने के बाद।"

यहाँ पर एक तरफ़ لِلنَّاسِ का "لِ" नोट कीजिये और दूसरी तरफ عَلَى اللّٰهِ का "عَلَى"। यह दोनों हुरूफ़ मुतज़ाद (विपरीत) मायने पैदा कर रहे हैं। لِلنَّاسِ के मायने हैं लोगों के हक़ में हुज्जत, जबकि عَلَى اللّٰهِ के मायने हैं अल्लाह के ख़िलाफ़ हुज्जत।

وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ﴿١٦٥﴾

"और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

अब आप आख़िरत के अहतसाब के फ़लसफ़े को समझिये। क़यामत के दिन हर किसी का इम्तिहान होगा और इम्तिहान से फिर नतीजे निकलेंगे, कोई पास होगा और कोई फ़ेल। लेकिन इम्तिहान से पहले कुछ पढ़ाया जाना भी ज़रूरी है, किसी को जाँचने से पहले उसे कुछ दिया भी जाता है। चुनाँचे हमें देखना है कि क़यामत के इम्तिहान के लिये हमें क्या पढ़ाया गया है? इस आखरी जाँच पड़ताल से पहले हमें क्या कुछ दिया गया है? क़ुरान मजीद के बुनियादी फ़लसफ़े के मुताबिक़ अल्लाह तआला ने इन्सान को समअ, बसर और अक़्ल तीन बड़ी चीज़ें दी हैं। फिर अल्लाह तआला ने इन्सान के अन्दर रूह भी वदीयत की है और नफ़्से इंसानी में खैर और शर का इल्म भी रखा है। इन बातों की बिना पर इन्सान वही-ए-इलाही की रहनुमाई के बगैर भी अल्लाह के हुज़ूर जवाबदेह (accountable) है कि जब तुम्हारी फ़ितरत में नेकी और बदी की तमीज़ रख दी गयी थी तो तुम बदी की तरफ़ क्यों गये? तो गोया अगर कोई नबी या रसूल ना भी आता, कोई किताब नाज़िल ना भी होती, तब भी अल्लाह तआला की तरफ़ से मुहासबा नाहक़ नहीं था। इसलिये कि वह बुनियादी चीज़ें जो इम्तिहान और अहतसाब के लिये ज़रूरी थीं वह अल्लाह तआला इन्सान को दे चुका था। अलबत्ता अल्लाह तआला की सुन्नत यह रही है कि वह फिर भी इंसानों पर इत्मामे हुज्जत करता है। अब हमने यह देखना है कि हुज्जत क्या है? बुनियादी हुज्जत तो अक़्ल है जो अल्लाह ने हमें दे रखी है: {اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُوْلًا} (बनी इसराइल:36) इंसानी नफ़्स के अन्दर नेकी और बदी की तमीज़ भी वदीयत कर दी गयी है: {وَنَفْسٍ وَّمَا سَوّٰىهَا} {فَاَلْهَمَهَا فُجُوْرَهَا وَتَقْوٰىهَا} (अश्शम्श:7-8) फिर इन्सान के अन्दर अल्लाह तआला की तरफ़ से रूह फूँकी गयी है। इन तमाम सलाहियतों और अहलियतों (skills) की बिना पर जवाबदेही (accountability) का जवाज़ बरहक़ है। कोई नबी आता या ना आता, अल्लाह की यह हुज्जत तमाम इंसानों पर बहरहाल क़ायम है।

इसके बावजूद भी अल्लाह तआला ने इत्मामे हुज्जत करने के लिये अपने नबी और रसूल भेजे। यह इज़ाफ़ी शय है कि अल्लाह ने तुम्ही में से कुछ लोगों को चुना, जो बड़े ही आला किरदार के लोग थे। तुम जानते थे कि यह हमारे यहाँ के बेहतरीन लोग हैं, इनके दामने किरदार पर कोई दाग़-धब्बा नहीं है, इनकी सीरत व अख्लाक़ खुली किताब की मानिन्द तुम्हारे सामने थे। इनके पास अल्लाह ने अपनी वही भेजी और वाज़ेह तौर पर बता दिया कि इन्सान को क्या करना है और क्या नहीं करना है। इस तरह उसने तुम्हारे लिये इस इम्तिहान को आसान कर दिया, ताकि अब किसी के पास कोई उज़्र (बहाना) बाक़ी ना रह जाये, कोई यह दलील पेश ना कर सके कि मुझे तो इल्म ही नहीं था। परवरदिगार! मैं तो बेदीन माहौल में पैदा हो गया था, वहाँ सबके सब इसी रंग में रंगे हुए थे। परवरदिगार! मैं तो अपनी दो वक़्त की रोटी के धंधे में ही ऐसा मसरूफ़ रहा कि मुझे कभी होश ही नहीं आया कि दीन व ईमान और अल्लाह व आख़िरत के बारे में सोचता। लेकिन जब रसूल (अलै०) आ जाते हैं और रसूलों के आ जाने के बाद हक़ खुल कर सामने आ जाता है, हक़ व बातिल के दरमियान इम्तियाज़ बिल्कुल वाज़ेह तौर पर क़ायम हो जाता है तो फिर कोई उज़्र बाक़ी नहीं रहता। लोगों के पास अल्लाह के सामने मुहासबे के मुक़ाबले में पेश करने के लिये कोई हुज्जत बाक़ी नहीं रहती। तो यह है इत्मामे हुज्जत का फ़लसफ़ा और तरीक़ा अल्लाह की तरफ़ से।

रसूल (अलै०) इसके अलावा और क्या कर सकते हैं? किसी को ज़बरदस्ती तो हिदायत पर नहीं ला सकते। हाँ जिनके अन्दर अहसास जाग जायेगा वह रसूल (अलै०) की तालीमात की तरफ़ मुतवज्जह होंगे, उनसे फ़ायदा उठाएँगे, सीधे रास्ते पर चलेंगे। उनके लिये अल्लाह के रसूल "मुबश्शिर" होंगे, अल्लाह के फ़ज़ल और जन्नत की नेअमतों की बशारत देने वाले:

{فَرَوۡحٌ وَّرَيۡحَانٌ ۙ وَّجَنَّتُ نَعِيۡمٍ} (अल वाक़िया:89)। और जो लोग इसके बाद भी ग़लत रास्तों पर चलते रहेंगे, तअस्सुब में, ज़िद और हठधर्मी में, मफ़ादात के लालच में, अपनी चौधराहटें क़ायम रखने के लालच में, उनके लिये रसूल (अलै०) "नज़ीर" होंगे। उनको ख़बरदार करेंगे कि अब तुम्हारे लिये बदतरीन अंजाम के तौर पर जहन्नम तैयार है। तो रसूलों (अलै०) की बेअसत का बुनियादी मक़सद यही है, यानि तब्शीर और इन्ज़ार।

इस सारी वज़ाहत के बाद अब दोबारा आयत के अल्फ़ाज़ को सामने रखिये: {رُسُلًا مُّبَشِّرِيۡنَ وَمُنۡذِرِيۡنَ} "रसूल भेजे गये बशारत देने वाले और ख़बरदार करने वाले बना कर।" यह तब्शीर और इन्ज़ार किस लिये? {لِئَلَّا يَكُوۡنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ ۢ بَعۡدَ الرُّسُلِ} "ताकि बाक़ी ना रह जाये लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत, कोई उज़्र, कोई बहाना, रसूलों के आने के बाद।" {وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيۡزًا حَكِيۡمًا} "और अल्लाह ज़बरदस्त है हकीम है।" वह अज़ीज़ है, ग़ालिब है, ज़बरदस्त है, बगैर रसूलों के भी मुहासबा कर सकता है, उसका इख़्तियार मुतलक़ है। लेकिन साथ ही साथ वह हकीम भी है, उसने मुहासबा-ए-उखरवी के लिये यह मब्नी बर हिकमत निज़ाम बनाया है। इस ज़िमन में एक बात और नोट कर लीजिये कि रिसालत का एक तकमीली मक़सद भी है जो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर कामिल हुआ, और वह है रुए अर्ज़ी पर अल्लाह के दीन को ग़ालिब करना। आप ﷺ ने दावत का आगाज़ इसी तब्शीर और इन्ज़ार ही से फ़रमाया, जैसा कि सूरतुल अहज़ाब में इरशाद है: {يٰۤاَيُّهَا النَّبِيُّ اِنَّاۤ اَرۡسَلۡنٰكَ شَاهِدًا وَّمُبَشِّرًا وَّنَذِيۡرًا} {وَّدَاعِيًا اِلَى اللّٰهِ بِاِذۡنِهٖ وَسِرَاجًا مُّنِيۡرًا} (आयत 45-46) बहैसियते रसूल ﷺ यह आप ﷺ की रिसालत के बुनियादी मक़सद का इज़हार है, लेकिन इससे बुलन्दतर दर्जे में आपकी रिसालत की तकमीली हैसियत का इज़हार सूरतुत्तौबा:33, सूरह फ़तह:28 और सूरतुस्सफ़:9 में एक जैसे अल्फ़ाज़ में हुआ है: {هُوَ الَّذِيۡۤ اَرۡسَلَ رَسُوۡلَهٗ بِالۡهُدٰى وَدِيۡنِ الۡحَقِّ لِيُظۡهِرَهٗ عَلَى الدِّيۡنِ كُلِّهٖ} "वही है (अल्लाह) जिसने भेजा अपने रसूल (मुहम्मद ﷺ) को अल् हुदा (क़ुरान हकीम) और दीने हक़ देकर ताकि वह उसे ग़ालिब कर दे पूरे दीन पर।" तमाम अम्बिया व रुसुल (अलै०) में यह आप ﷺ की इम्तियाज़ी शान है। मेरी किताब "नबी अकरम ﷺ का मक़सदे बेअसत" में इस मौज़ू पर तफ़सील से बहस की गयी है।

आयत 166

لٰكِنِ اللّٰهُ يَشۡهَدُ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اِلَيۡكَ اَنۡزَلَهٗ بِعِلۡمِهٖ ۚ وَالۡمَلٰٓئِكَةُ يَشۡهَدُوۡنَ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيۡدًا ﴿۱۶۶﴾

"लेकिन अल्लाह गवाह है कि जो कुछ उसने नाज़िल किया है (ऐ नबी ﷺ) आप ﷺ की तरफ़ वह उसने नाज़िल किया है अपने इल्म से, और फ़रिश्ते भी इस पर गवाह हैं, अगरचे अल्लाह (अकेला ही) गवाह होने के ऐतबार से काफ़ी है।"

आयत 167

اِنَّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا وَصَدُّوۡا عَنۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ قَدۡ ضَلُّوۡا ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا ﴿۱۶۷﴾

"बिलाशुबा जिन लोगों ने कुफ़्र किया और अल्लाह के रास्ते से रोका (ख़ुद को भी और दूसरों को भी) तो यक़ीनन वह गुमराही में बहुत दूर निकल गये हैं।"

अब आखरी रसूल ﷺ के आने के बाद भी जो लोग कुफ़्र पर अड़े रहे, अल्लाह के रास्ते से रुके रहे और दूसरों को भी रोकते रहे, वह राहे हक़ से बहक गये, भटक गये, और अपने भटकने में, बहकने में, गुमराही में बहुत दूर निकल गये हैं।

आयत 168

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَظَلَمُوا لَمْ يَكُنِ اللَّهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ طَرِيقًا ﴿١٦٨﴾

"यक़ीनन वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया और ज़ुल्म (शिर्क) के मुरतकिब हुए अल्लाह उन्हें हरगिज़ बख्शने वाला नहीं है, और ना उन्हें किसी रास्ते की हिदायत देगा।"

आयत 169

إِلَّا طَرِيقَ جَهَنَّمَ خَالِدِينَ فِيهَا أَبَدًا ۚ وَكَانَ ذَٰلِكَ عَلَى اللَّهِ يَسِيرًا ﴿١٦٩﴾

"सिवाय जहन्नम के रास्ते के जिसमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे, और यह अल्लाह पर बहुत आसान है।"

अब ज़रा इस आयत का तक़ाबुल कीजिये (इस ही सूरह की) आयत 147 के साथ {مَا يَفْعَلُ اللَّهُ بِعَذَابِكُمْ....} "अल्लाह तुम्हें अज़ाब देकर क्या करेगा....?" यक़ीनन अल्लाह ईज़ा पसंद (sadist) नहीं है, उसे लोगों को अज़ाब देकर ख़ुशी नहीं होगी। लेकिन यह उसका ज़ाब्ता और क़ानून है, इसी पर उसने दुनिया बनाई है, और अपने इसी ज़ाब्ते और क़ानून के ऐन मुताबिक़ वह मुस्तहिक़ीन (लाभार्थियों) को जज़ा व सज़ा देगा। यह उस पर कोई भारी गुज़रने वाली बात नहीं है कि वह अपनी ही मख्लूक़ को सज़ा दे। बाज़ मलंग क़िस्म के सूफ़ी इस तरह की बातें भी करते हैं कि अल्लाह बड़ा रहीम है, क्या वह अपनी ही मख्लूक़ को जहन्नम में झोंक देगा? यह तो ऐसे ही डरावे के लिये, लोगों को राहे रास्त पर लाने के लिये अज़ाब और सज़ा की बातें की गयी हैं। जैसे बाप बच्चों को डाँटता है मैं तेरी हड्डियाँ तोड़ दूँगा, माँ कहती है मैं तेरा क़ीमा कर दूँगी। तो क्या वह सचमुच अपने बच्चों का क़ीमा कर देगी? लिहाज़ा यह तो सिर्फ़ डरावा है, हक़ीक़त में ऐसा नहीं होगा, वगैरह-वगैरह। इस तरह के ख्यालात व नज़रियात गुमराहकुन हैं। माँ के लिये तो अपने बच्चे को बड़े से बड़े क़ुसूर पर भी आग में डालना मुमकिन नहीं है, मगर अल्लाह तआला ने फ़रमाया है: {وَكَانَ ذَٰلِكَ عَلَى اللَّهِ يَسِيرًا} अल्लाह के लिये यह बहुत आसान है, बहुत हल्की बात है।

आयत 170 से 175 तक

يَا أَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاءَكُمُ الرَّسُولُ بِالْحَقِّ مِنْ رَبِّكُمْ فَآمِنُوا خَيْرًا لَكُمْ ۚ وَإِنْ تَكْفُرُوا فَإِنَّ لِلَّهِ مَا فِي السَّمَاوَاتِ
وَالْأَرْضِ ۚ وَكَانَ اللَّهُ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿١٧٠﴾ يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فِي دِينِكُمْ وَلَا تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ إِلَّا الْحَقَّ ۚ إِنَّمَا الْمَسِيحُ
عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُولُ اللَّهِ وَكَلِمَتُهُ أَلْقَاهَا إِلَىٰ مَرْيَمَ وَرُوحٌ مِنْهُ ۖ فَآمِنُوا بِاللَّهِ وَرُسُلِهِ ۖ وَلَا تَقُولُوا ثَلَاثَةٌ ۚ انْتَهُوا
خَيْرًا لَكُمْ ۚ إِنَّمَا اللَّهُ إِلَٰهٌ وَاحِدٌ ۖ سُبْحَانَهُ أَنْ يَكُونَ لَهُ وَلَدٌ ۘ لَهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۗ وَكَفَىٰ بِاللَّهِ وَكِيلًا ﴿١٧١﴾ لَنْ
يَسْتَنْكِفَ الْمَسِيحُ أَنْ يَكُونَ عَبْدًا لِلَّهِ وَلَا الْمَلَائِكَةُ الْمُقَرَّبُونَ ۚ وَمَنْ يَسْتَنْكِفْ عَنْ عِبَادَتِهِ وَيَسْتَكْبِرْ
فَسَيَحْشُرُهُمْ إِلَيْهِ جَمِيعًا ﴿١٧٢﴾ فَأَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَيُوَفِّيهِمْ أُجُورَهُمْ وَيَزِيدُهُمْ مِنْ فَضْلِهِ ۖ وَأَمَّا
الَّذِينَ اسْتَنْكَفُوا وَاسْتَكْبَرُوا فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا أَلِيمًا وَلَا يَجِدُونَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿١٧٣﴾ يَا أَيُّهَا
النَّاسُ قَدْ جَاءَكُمْ بُرْهَانٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَأَنْزَلْنَا إِلَيْكُمْ نُورًا مُبِينًا ﴿١٧٤﴾ فَأَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا بِاللَّهِ وَاعْتَصَمُوا بِهِ
فَسَيُدْخِلُهُمْ فِي رَحْمَةٍ مِنْهُ وَفَضْلٍ وَيَهْدِيهِمْ إِلَيْهِ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا ﴿١٧٥﴾

अब अगली आयात एक तरह से इस सूरह का "हर्फ़े आख़िर" हैं।

आयत 170

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمُ الرَّسُوْلُ بِالْحَقِّ مِنْ رَّبِّكُمْ فَاٰمِنُوْا خَيْرًا لَّكُمْ ؕ

"ऐ लोगो! तुम्हारे पास आ चुका है रसूल ﷺ हक़ के साथ, तो अब तुम ईमान ले आओ, यही तुम्हारे लिये बेहतर है।"

बल्कि आखरी अल्फ़ाज़ का सही तर तर्जुमा यह होगा कि "ईमान ले आओ, इसी में तुम्हारी खैरियत है।" इस आयत के एक-एक लफ्ज़ में बहुत ज़ोर और जलाल है और अब बात बिल्कुल दो टूक अंदाज़ और हत्मी तौर पर की जा रही है। यानि अब तुम यह नहीं कह सकते कि अल्लाह की तरफ़ से कोई रहनुमाई नहीं की गयी, हमें कुछ पता नहीं था, हम पर बात वाज़ेह नहीं हुई थी। हमारे आखरी नबी ﷺ के आ जाने के बाद तुम्हारा यह बहाना अब ख़त्म हो गया।

وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ۝

"और अगर तुम लोग कुफ्र पर अड़े रहोगे तो (अल्लाह का क्या बिगाड़ लोगे?) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है वह अल्लाह ही का है, और अल्लाह अलीम भी है, हकीम भी।"

आगे अहले किताब से जो ख़िताब है उसके मुख़ातिब ख़ास तौर पर ईसाई हैं, जो हज़रत मसीह (अलै०) की अक़ीदत व मोहब्बत में हद से गुज़र गये थे।

आयत 171

يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ وَلَا تَقُوْلُوْا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ ؕ

"ऐ अहले किताब, अपने दीन में गुलु (मुबालग़ा) ना करो, और अल्लाह की तरफ़ कोई शय मंसूब ना करो सिवाय उसके जो हक़ हो।"

तुम आपस के मामलात में तो झूठ बोलते ही हो, मगर अल्लाह के बारे में झूठ गढ़ना, झूठ बोल कर अल्लाह पर उसे थोपना कि अल्लाह का यह हुक्म है, अल्लाह ने यूँ कहा है, यह तो वही बात हुई: बाज़ी-बाज़ी बारीशे बाबा हम बाज़ी!

اِنَّمَا الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُوْلُ اللّٰهِ

"देखो मसीह ईसा (अलै०) इब्ने मरयम तो बस अल्लाह के रसूल (अलै०) थे"

वह अल्लाह की तरफ़ से भेजे गये एक रसूल (अलै०) थे और बस! उलूहियत (divinity) में उनका कोई हिस्सा नहीं है, वह ख़ुदा के बेटे नहीं हैं।

وَكَلِمَتُهٗ ۚ اَلْقٰىهَاۤ اِلٰى مَرْيَمَ وَرُوْحٌ مِّنْهُ ؗ

"और वह उसका एक कलमा थे, जो उसने इल्क़ा किया मरयम (अलै०) पर और एक रूह थे उसकी तरफ़ से"

यानि हज़रत मरयम (अलै०) के रहम में जो हमल हुआ था वह अल्लाह के कलमा-ए-कुन के तुफ़ैल हुआ। बच्चे की पैदाइश के तबई अमल में एक हिस्सा बाप का होता है और एक माँ का। अब हज़रत मसीह (अलै०) की विलादत में माँ का हिस्सा तो पूरा मौजूद है। हज़रत मरयम (अलै०) को हमल हुआ, नौ महीने आप (अलै०) रहम में रहे, लेकिन यहाँ बाप वाला हिस्सा बिल्कुल नहीं है और बाप के बगैर ही आप (अलै०) की पैदाइश मुमकिन हुई। ऐसे मामलात में जहाँ अल्लाह की मशीयत से एक लगे-बंधे तबई अमल में से अगर कोई कड़ी अपनी जगह से हटाई जाती है तो वहाँ पर अल्लाह का मख़सूस अम्र कलमा-ए-कुन की सूरत में किफ़ायत करता है। यहाँ पर अल्लाह के "कलमे" का यही मफ़हूम है।

जहाँ तक हज़रत मसीह (अलै०) "رُوْحٌ مِّنْهُ" क़रार देने का ताल्लुक़ है तो अगरचे सब इंसानों की रूह अल्लाह ही की तरफ़ से है, लेकिन तमाम रूहें एक जैसी नहीं होतीं। बाज़ रूहों के बड़े-बड़े ऊँचे मरातिब होते हैं। ज़रा तसव्वुर करें रूहे मुहम्मदी ﷺ की शान और अज़मत क्या होगी! रूहे मुहम्मदी ﷺ को आम तौर पर हमारे उलमा "नूरे मुहम्मदी ﷺ" कहते हैं। इसलिये कि रूह एक नूरानी शय है। मलाइका भी नूर से पैदा हुए हैं और इंसानी अरवाह भी नूर से पैदा हुई हैं।

लेकिन सब इंसानों की अरवाह बराबर नहीं हैं। हुज़ूर ﷺ की रूह की अपनी एक शान है। इसी तरह हज़रत ईसा (अलै०) की रूह की अपनी एक शान है।

فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ ۚ وَلَا تَقُوْلُوْا ثَلٰثَةٌ ۭ

"पस ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके रसूलों पर, और तसलीस (तीन ख़ुदाओं) का दावा मत करो।"

اِنْتَهُوْا خَيْرًا لَّكُمْ ۭ

"बाज़ आ जाओ, इसी में तुम्हारी बेहतरी (ख़ैरियत) है।"

यह मत कहो कि उलूहियत तीन में है। एक में तीन और तीन में एक का अक़ीदा मत गढ़ो।

اِنَّمَا اللّٰهُ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۭ سُبْحٰنَهٗٓ اَنْ يَّكُوْنَ لَهٗ وَلَدٌ

"जान लो कि अल्लाह तो बस एक ही है इलाहे वाहिद है, वह इससे पाक है कि उसका कोई बेटा हो।"

لَهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ١٧١؀

"आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब कुछ उसी का है, और अल्लाह काफ़ी है बतौरे कारसाज़।"

आयत 172

لَنْ يَّسْتَنْكِفَ الْمَسِيْحُ اَنْ يَّكُوْنَ عَبْدًا لِّلّٰهِ وَلَا الْمَلٰۗىِٕكَةُ الْمُقَرَّبُوْنَ ۭ

"मसीह (अलै०) को तो इसमें हरगिज़ कोई आर (घृणा) नहीं है कि वह बने अल्लाह का बंदा और ना ही मलाइका-ए-मुक़र्रबीन को इसमें कोई आर है (कि उन्हें अल्लाह का बंदा समझा जाये)।"

मसीह अलै० को तो अल्लाह का बंदा होने में अपनी शान महसूस होगी। जैसे हम भी हुज़ूर ﷺ के बारे में कहते हैं: وَنَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ। तो अबदियत की शान तो बहुत बुलन्द व बाला है, रिसालत से भी आला और अरफ़ा। (यह एक अलैहदा मज़मून है, जिसकी तफ़सील का यह मौक़ा नहीं है।) चुनाँचे हज़रत मसीह अलै० के लिये यह कोई आर की बात नहीं है कि वह अल्लाह के बन्दे हैं।

وَمَنْ يَّسْتَنْكِفْ عَنْ عِبَادَتِهٖ وَيَسْتَكْبِرْ فَسَيَحْشُرُهُمْ اِلَيْهِ جَمِيْعًا ١٧٢؁

"और जो कोई भी आर समझेगा उसकी बन्दगी में और तकब्बुर करेगा तो अल्लाह उन सबको अपने पास जमा कर लेगा।"

आयत 173

فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فَيُوَفِّيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ وَيَزِيْدُهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ ۚ

"पस जो लोग ईमान लाये होंगे और उन्होंने नेक अमल किये होंगे तो उनको तो उनका पूरा-पूरा अज्र भी देगा और उन्हें मज़ीद भी देगा अपने ख़ास फ़ज़ल में से।"

ऐसे लोगों को उनके अज्र के अलावा बोनस भी मिलेगा। जैसे आप किसी काम करने वाले को अच्छा काम करने पर उजरत के अलावा ईनाम (tip) भी देते हैं। अल्लाह तआला अपने ख़ज़ाना-ए-फ़ज़ल से उन्हें उनके मुक़र्रर अज्र से बढ़ कर नवाज़ेगा।

وَاَمَّا الَّذِيْنَ اسْتَنْكَفُوْا وَاسْتَكْبَرُوْا فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ڏ

"और जिन्होंने (अबदियत के अन्दर) आर महसूस की थी और तकब्बुर किया था तो उनको वह दर्दनाक अज़ाब देगा"

وَّلَا يَجِدُوْنَ لَهُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا ١٧٣

"और वह नहीं पाएँगे अपने लिये अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हिमायती और ना कोई मददगार।"

आयत 174

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاۗءَكُمْ بُرْهَانٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ

"ऐ लोगो! आ चुकी है तुम्हारे पास एक बुरहान तुम्हारे रब की तरफ़ से"

यह क़ुरान मजीद और रसूल अल्लाह ﷺ दोनों की तरफ़ इशारा है। क़ुरान और मुहम्मद ﷺ मिल कर बुरहान होंगे। तआरुफ़े क़ुरान के दौरान ज़िक्र हो चुका है कि किताब और रसूल ﷺ मिल कर बय्यिना बनते हैं, जैसा कि सूरतुल बय्यिना (आयात 1 से 3) में इरशाद हुआ है। आयत ज़ेरे मुताअला में उसी बय्यिना को बुरहान कहा गया है।

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ نُوْرًا مُّبِيْنًا ١٧٤

"और हमने तुम्हारी तरफ़ रोशन नूर नाज़िल कर दिया है।"

यहाँ चूँकि नूर के साथ-साथ लफ्ज़ इन्ज़ाल आया है इसलिये इससे मुराद लाज़िमन क़ुरान मजीद ही है।

आयत 175

فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَاعْتَصَمُوْا بِهٖ

"पस जो लोग अल्लाह पर ईमान लाएँगे और उसके साथ चिमट जाएँगे"

यकसू हो जाएँगे, ख़ालिस अल्लाह वाले बन जाएँगे, मुज़बज़ब नहीं रहेंगे कि कभी इधर कभी उधर, बल्कि पूरी तरह से यकसू होकर अल्लाह के दामन से वाबस्ता हो जाएँगे।

فَسَيُدْخِلُهُمْ فِيْ رَحْمَةٍ مِّنْهُ وَفَضْلٍ ۙ وَّيَهْدِيْهِمْ اِلَيْهِ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ١٧٥ۭ

"तो उन्हें वह दाख़िल करेगा अपनी रहमत और अपने फ़ज़ल में, और उन्हें हिदायत देगा अपनी तरफ़ सिराते मुस्तक़ीम की।"

وَّيَهْدِيْهِمْ اِلَيْهِ यानि अपनी तरफ़ हिदायत देगा। उन्हें सीधे रास्ते (सिराते मुस्तक़ीम) पर चलने की तौफ़ीक़ बख्शेगा और सहज-सहज, रफ़्ता-रफ़्ता उन्हें अपने ख़ास फ़ज़ल व करम और जवारे रहमत में ले आयेगा।

आयत 176

يَسْتَفْتُوْنَكَ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِي الْكَلٰلَةِ ۭ اِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ لَيْسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗٓ اُخْتٌ فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ ۚ وَهُوَ يَرِثُهَآ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهَا وَلَدٌ ۭ فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا الثُّلُثٰنِ مِمَّا تَرَكَ ۭ وَاِنْ كَانُوْٓا اِخْوَةً رِّجَالًا وَّنِسَاۗءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوْا ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ١٧٦ۧ

इस आखरी में फिर एक इस्तफ़ता (formal legal) है। आयत 12 में क़ानूने विरासत के ज़िमन में एक लफ्ज़ आया था كلاله, यानि वह मर्द या औरत जिसके ना तो वालिदैन ज़िन्दा हों और ना उसकी कोई औलाद हो। उसके बारे में बताया गया था कि अगर उसके बहन-भाई हों तो उसकी विरासत का हुक्म यह है। लेकिन वह हुक्म लोगों पर वाज़ेह नहीं हो सका था। लिहाज़ा यहाँ उस हुक्म की मज़ीद वज़ाहत की गयी है। आयत 12 के हुक्म को सिर्फ़ अख्याफ़ी बहन-भाइयों के साथ मख़सूस मान लेने के बाद इस तौज़ीही हुक्म में कलाला की विरासत का हर पहलु वाज़ेह हो जाता है।

आयत 176

يَسْتَفْتُوْنَكَ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِي الْكَلٰلَةِ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ) यह आप ﷺ से फ़तवा माँग रहे हैं। कहो कि अल्लाह तुम्हें कलाला के बारे में फ़तवा दे रहा है।"

اِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ لَيْسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗٓ اُخْتٌ فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ ۚ

"अगर कोई शख़्स फ़ौत हो गया और उसकी कोई औलाद नहीं (और ना माँ-बाप हैं) और उसकी सिर्फ़ एक बहन है तो उसके लिये उसके तरके में से निस्फ़ है।"

ऐसी सूरत में उसकी बहन ऐसे ही है जैसे एक बेटी हो तो उसे तरके में से आधा हिस्सा मिलेगा।

وَهُوَ يَرِثُهَآ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهَا وَلَدٌ ۭ

"और वह मर्द (भाई) उस (बहन) का मुकम्मल वारिस होगा अगर उस (बहन) की कोई औलाद नहीं।"

यानि अगर कलाला औरत थी जिसकी कोई औलाद नहीं, कोई वालिदैन नहीं तो उसका वारिस उसका भाई बन जायेगा, उसकी पूरी विरासत उसके भाई को चली जायेगी।

فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا الثُّلُثٰنِ مِمَّا تَرَكَ ۭ

"फिर अगर दो (या दो से ज़्यादा) बहनें हो तो वह तरके में से दो तिहाई की हक़दार होंगी।"

وَاِنْ كَانُوْٓا اِخْوَةً رِّجَالًا وَّنِسَاۗءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ

"और अगर कई बहन-भाई हों तो एक मर्द के लिये दो औरतों के बराबर हिस्सा होगा।"

यानि भाई को बहन से दोगुना मिलेगा। अलबत्ता यह बात अहम है कि आयत 12 में जो हुक्म दिया गया था वह अख्याफ़ी बहन-भाइयों के बारे में था। यानि ऐसे बहन-भाई जिनकी माँ एक हो और बाप अलैहदा-अलैहदा हों। उस ज़माने के अरब मआशरे में तादादे अज़्वाज के आम रिवाज की वजह से ऐसे मसाइल मामूलात का हिस्सा थे। बाक़ी ऐनी या अलाती बहन-भाइयों (जिनके माँ और बाप एक ही हों या माँएं अलग-अलग हों और बाप एक ही हो) का वही आम क़ानून होगा जो बेटे और बेटी का है। जिस निस्बत से बेटे और बेटी में विरासत तक़सीम होती है ऐसे ही उन बहन-भाइयों में होगी।

يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوْا ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ١٧٦ؑ

"अल्लाह वाज़ेह किये देता है तुम्हारे लिये मबादा कि तुम गुमराह हो जाओ, और अल्लाह हर चीज़ का इल्म रखने वाला है।"

तआरुफ़े क़ुरान के दौरान मैंने बताया था कि क़ुरान हकीम की एक तक़सीम सात अहज़ाब या मंज़िलों की है। इस ऐतबार से सूरतुन्निसा पर पहली मंज़िल ख़त्म हो गयी है।

!فالحمد للہ علیٰ ذٰلک

* * *

सूरतुल मायदा

तम्हीदी कलिमात

सूरतुल मायदा से क़ुरान मजीद की दूसरी मंज़िल का आगाज़ होता है, लेकिन क़ुरान हकीम के मक्की और मदनी सूरतों के जो ग्रुप्स हैं, उनके ऐतबार से पहला ग्रुप अभी ख़त्म नहीं हुआ, बल्कि सूरतुल मायदा इस ग्रुप की आखरी सूरत है। इन ग्रुप्स की तफ़सील क़ब्ल अज़ बयान हो चुकी है। उनमें से पहला ग्रुप एक मक्की सूरत (अल् फ़ातिहा) और चार मदनी सूरतों (अल् बक़रह, आले इमरान, अन्निसा और अल् मायदा) पर मुश्तमिल है। मज़ामीन की मुनास्बत के ऐतबार से सूरतुल मायदा का "जोड़ा" सूरतुन्निसा के साथ बनता है। इन दोनों सूरतों का अस्लूब भी काफ़ी हद तक आपस में मिलता-जुलता है, अलबत्ता यहाँ ज़्यादा ज़ोर अहले किताब पर है। इस ग्रुप की मदनी सूरतों (अल् बक़रह, आले इमरान, अन्निसा और अल् मायदा) के बुनियादी मौज़ूआत दो हैं, यानि अहले किताब पर इत्मामे हुज्जत और अहकामे शरीअते इस्लामी। इन सूरतों में इन दोनों मौज़ूआत का एक तसल्सुल है जो तदरीजन नज़र आता है। लिहाज़ा शरीअते इस्लामी का जो इब्तदाई ख़ाका हमें सूरतुल बक़रह में मिलता है और फिर सूरह आले इमरान और सूरतुन्निसा में इसके खद्दो-खाल मज़ीद वाज़ेह हुए हैं, यहाँ सूरतुल मायदा में आकर यह तकमीली रंग इख़्तियार करता नज़र आता है। यही वजह है कि मआशरे की बुलन्दतरीन (हुकूमती) सतह के अहकाम भी हमें इस सूरत में मिलते हैं। इसी तरह अहले किताब से जिस ख़िताब की इब्तदा सूरतुल बक़रह में हुई थी, यहाँ आकर वह भी फ़ैसलाकुन मरहले में दाख़िल हो चुका है।

सूरतुन्निसा का आगाज़ "يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ" से हुआ था, जबकि सूरतुल मायदा का आगाज़ "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" के अल्फ़ाज़ से हो रहा है।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

आयात 1 से 5 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ ڛ اُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيْمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ غَيْرَ مُحِلِّي الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۭ اِنَّ
اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُرِيْدُ ۝١ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَاۗىِٕرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَاۗىِٕدَ وَلَآ اٰۗمِّيْنَ
الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ۭ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ۭ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ
عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا عَلَي الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۠ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَي الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۠ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ
شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝٢ حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ وَمَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ وَالْمُنْخَنِقَةُ وَالْمَوْقُوْذَةُ
وَالْمُتَرَدِّيَةُ وَالنَّطِيْحَةُ وَمَآ اَكَلَ السَّبُعُ اِلَّا مَا ذَكَّيْتُمْ ۣ وَمَا ذُبِحَ عَلَي النُّصُبِ وَاَنْ تَسْتَقْسِمُوْا بِالْاَزْلَامِ ۭ ذٰلِكُمْ فِسْقٌ ۭ
اَلْيَوْمَ يَىِٕسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ دِيْنِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ ۭ اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ
نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ۭ فَمَنِ اضْطُرَّ فِيْ مَخْمَصَةٍ غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِّاِثْمٍ ۙ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٣ يَسْــَٔلُوْنَكَ

مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ ۭ قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ۙ وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ ۡ فَكُلُوْا مِمَّآ اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ ۠ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۝ اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ۭ وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ لَّكُمْ ۠ وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ ۡ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ مُحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ وَلَا مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهٗ ۡ وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝

आयत 1

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ ڛ

"ऐ अहले ईमान! अपने अहदो पैमान (क़ौल व क़रार) को पूरा किया करो।"

उक़्द गिरह को कहते हैं जिसमें मज़बूती से बंधने का मफ़हूम शामिल है। लिहाज़ा "**عُقُود**" से मुराद वह मुआहिदे हैं जो बाक़ायदा तय पा गये हों। मुआहिदों और क़ौल व क़रार की अहमियत यूँ समझ लीजिये कि हमारी पूरी की पूरी समाजी व मआशरती ज़िन्दगी क़ायम ही मुआहिदों पर है। मआशरती ज़िन्दगी का बुनियादी यूनिट एक खानदान है, जिसकी बुनियाद एक मुआहिदे पर रखी जाती है। शादी क्या है? मर्द और औरत के दरमियान एक साथ ज़िन्दगी गुज़ारने का मुआहिदा है। इस मुआहिदे से इंसानी मआशरे की बुलन्द व बाला इमारत की बुनियादी ईंट रखी जाती है। इस मुआहिदे के मुताबिक़ फ़रीक़ैन के कुछ हुक़ूक़ हैं और कुछ फ़राइज़। एक तरफ़ बीवी के हुक़ूक़ और उसके फ़राइज़ हैं और दूसरी तरफ़ शौहर के हुक़ूक़ और उसके फ़राइज़। बड़े-बड़े कारोबार भी मुआहिदों की शक्ल में होते हैं। आजिर और मुस्ताजिर (Employer & Employee) का ताल्लुक़ भी एक मुआहिदे की बुनियाद पर क़ायम होता है। इसी तरह कारोबारे हुकूमत, हुकूमती इदारों में ओहदे और मनासिब (posts), छोटे-बड़े अहलकारों (कर्मियों) की ज़िम्मेदारियाँ, उनकी मराआत (विचारों) और इख़्तियारात का मामला है। गोया तमाम मआशरती, मआशी और सियासी मामलात क़ुरान हकीम के एक हुक्म पर अमल करने से दुरुस्त सिम्त पर चल सकते हैं, और वह हुक्म है "**اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ**"।

اُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيْمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ

"तुम्हारे लिये हलाल कर दिये गये हैं मवेशी क़िस्म के तमाम हैवानात, सिवाय इनके जो तुम्हें पढ़ कर सुनाये जा रहे हैं"

जिनका हुक्म आगे चल कर तुम्हें बताया जायेगा, यानि खंज़ीर, मुरदार वग़ैरह हराम हैं। बाक़ी जो मवेशी क़िस्म के जानवर हैं, वहूश नहीं (मसलन शेर, चीता वग़ैरह वहशी हैं) वह हलाल हैं, जैसे हिरन, नील गाय और इस तरह के जानवर जो आम तौर पर गोश्त ख़ौर नहीं हैं बल्कि सब्ज़े पर उनका गुज़ारा है, उनका गोश्त तुम्हारे लिये हलाल कर दिया गया है। अलबत्ता इस्तसनाई सूरतों की तफ़सील बाद में तुम्हें बता दी जायेगी।

غَيْرَ مُحِلِّي الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۭ

"नाजायज़ करते हुए शिकार को जबकि तुम हालते अहराम में हो।"

यानि अगर तुमने हज या उमरे के लिये अहराम बाँधा हुआ है तो तुम इस हालत में इन हलाल जानवरों का भी शिकार नहीं कर सकते।

اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُرِيْدُ ۝

"बेशक अल्लाह हुक्म देता है जो चाहता है।"

यह अल्लाह का इख़्तियार है, वह जो चाहता है फ़ैसला करता है, जो चाहता है हुक्म देता है।

आयत 2

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَاۗىِٕرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ

"ऐ अहले ईमान! मत बेहुरमती करो अल्लाह के शआइर (ritual) की और ना हुरमत वाले महीने की"

यानि अल्लाह की हराम करदा चीज़ों को अपनी ख्वाहिश के मुताबिक़ हलाल मत कर लिया करो।

وَلَا الْهَدْيَ

"और ना हदी के जानवरों की (बेहुरमती करो)"

यानि क़ुरबानी के वह जानवर जो हज या उमरे पर जाते हुए लोग साथ लेकर जाते थे। अरबों के यहाँ रिवाज था कि वह हज या उमरे पर जाते वक़्त क़ुरबानी के जानवर साथ लेकर जाते थे। यहाँ उन जानवरों की बेहुरमती की मुमानिअत (prohibition) बयान हो रही है।

وَلَا الْقَلَاۗىِٕدَ

"और ना (उन जानवरों की बेहुरमती होने पाये) जिनकी गर्दनों में पट्टे डाल दिये गये हों"

यह पट्टे (क़लादे) अलामत के तौर पर डाल दिये जाते थे कि यह क़ुरबानी के जानवर हैं और काबे की तरफ़ जा रहे हैं।

وَلَآ اٰۗمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ

"और ना आज़मीने बैतुल हराम (की इज़्ज़त व अहतराम में फ़र्क़ आये)"

यानि वह लोग जो बैतुल हराम की तरफ़ चल पड़े हों, हज या उमरे का क़सद करके सफ़र कर रहे हों, अब उनकी भी अल्लाह के घर के साथ एक निस्बत हो गयी है, वह अल्लाह के घर के मुसाफ़िर हैं, जैसा कि अहले अरब हुज्जाजे किराम को कहते हैं: "مَرْحَبًا بِضُيُوْفِ الرَّحْمٰن" "मरहबा उन लोगों को जो रहमान के मेहमान हैं।" यानि तमाम हुज्जाजे किराम असल में अल्लाह के मेहमान हैं, अल्लाह उन तमाम ज़ायरीने काबा का मेज़बान है। तो अल्लाह के उन तमाम मेहमानों की हतके इज़्ज़त (अपमान) और बेहुरमती से मना कर दिया गया।

يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ۭ

"वह तलबगार हैं अपने रब के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनुदी के।"

यह सबके सब अल्लाह तआला के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनुदी की तलाश में निकले हुए हैं, अल्लाह को राज़ी करने की कोशिश में मकाने मोहतरम (काबे) की तरफ़ जा रहे हैं।

وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ۭ

"हाँ जब तुम हलाल हो जाओ (अहराम खोल दो) तो फिर तुम शिकार करो।"

हलाल हो जाना एक इस्तलाह है, यानि अहराम खोल देना, हालते अहराम से बाहर आ जाना। अब तुम्हें शिकार की आज़ादी है, इस पर पाबन्दी सिर्फ़ अहराम की हालत में थी।

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ

"और तुम्हें अमादा ना कर दे किसी क़ौम की दुश्मनी"

اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

"कि उन्होंने रोके रखा तुम्हें मस्जिदे हराम से"

اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ

"कि (तुम भी उन पर) ज़्यादती करने लगो।"

यानि जैसे अहले मक्का ने तुम लोगों को छः-सात बरस तक हज व उमरे से रोके रखा, अब कहीं उसके जवाब में तुम लोग भी उन पर ज़्यादती ना करना।

وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى

"और तुम नेकी और तक़वा के कामों में तआवुन करो"

وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ

"और गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती के कामों में तआवुन मत करो"

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, यक़ीनन अल्लाह तआला सज़ा देने में बहुत सख्त है।"

देखिये यह अंदाज़ बिल्कुल वही है जो सूरतुन्निसा का था, वही मआशरती मामलात और उनके बारे में बुनियादी उसूल बयान हो रहे हैं। अब आ रहे हैं वह इस्तसनाई अहकाम जिनका ज़िक्र आगाज़े सूरत में हुआ था कि "اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ"। खाने-पीने के लिये जो चीज़ें हराम क़रार दी गयी हैं उनका ज़िक्र यहाँ आखरी मरतबा आ रहा है और वह भी बहुत वज़ाहत के साथ।

आयत 3

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ

"हराम किया गया तुम पर मुरदार"

वह जानवर जो ख़ुद अपनी मौत मर गया हो वह हराम है।

وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ

"और खून और खंज़ीर का गोश्त"

وَمَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ

"और जिस पर पुकारा गया अल्लाह के सिवा किसी और का नाम"

यानि वह जानवर जो अल्लाह के अलावा किसी और के लिये नामज़द है, और गैरुल्लाह का तक़र्रुब हासिल करने के लिये उसको ज़िबह किया जा रहा है।

وَالْمُنْخَنِقَةُ

"और वह जानवर जो गला घुटने से मर गया हो"

وَالْمَوْقُوْذَةُ

"और चोट लगने से जिस जानवर की मौत वाक़ेअ हो गयी हो"

وَالْمُتَرَدِّيَةُ

"और जो जानवर किसी ऊँची जगह से गिर कर मर गया हो"

وَالنَّطِيْحَةُ

"और जो जानवर किसी दूसरे जानवर के सींग मारने से हलाक हो गया हो"

وَمَآ اَكَلَ السَّبُعُ

"और जिसे खाया हो किसी दरिन्दे ने"

यानि "اَلْمَيْتَةُ" की यह पाँच क़िस्में हैं। कोई जानवर इनमें से किसी सबब से मर गया, ज़िबह होने की नौबत नहीं आयी, उसके जिस्म से खून निकलने का इम्कान ना रहा, बल्कि खून उसके जिस्म के अन्दर ही जम गया और उसके गोश्त का हिस्सा बन गया तो वह मुरदार के हुक्म में होगा।

اِلَّا مَا ذَكَّيۡتُمۡ

"मगर यह कि जिसे तुम (ज़िन्दा पाकर) ज़िबह कर लो।"

यानि मज़कूरा बाला अक़सास में से जो जानवर अभी मरा ना हो और उसे ज़िबह कर लिया जाये तो उसे खाया जा सकता है। मसलन शेर ने हिरन का शिकार किया, लेकिन इससे पहले कि वह हिरन मरता शेर ने किसी सबब से उसे छोड़ दिया। इस हालत में अगर उसे ज़िबह कर लिया गया और उसमें से खून भी निकला तो वह हलाल जाना जायेगा। जहाँ-जहाँ शेर का मुँह लगा हो वह हिस्सा काट कर फेंक दिया जाये तो बाक़ी गोश्त खाना जायज़ है।

وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ

"और वह जानवर जो किसी स्थान पर ज़िबह किया गया हो"

यानि किसी ख़ास आस्ताने पर, ख्वाह वह किसी वली अल्लाह का मज़ार हो या देवता, देवी का कोई स्थान हो, ऐसी जगहों पर जाकर ज़िबह किया गया जानवर भी हराम है।

وَاَنۡ تَسۡتَقۡسِمُوۡا بِالۡاَزۡلَامِ‌ؕ

"और यह कि जुए के तीरों के ज़रिये से तक़सीम करो।"

यह भी जुए की एक क़िस्म थी। अरबों के यहाँ रिवाज़ था कि क़ुर्बानी के बाद गोश्त के ढेर लगा देते थे और तीरों के ज़रिये गोश्त पर जुआ खेलते थे।

ذٰلِكُمۡ فِسۡقٌ‌ؕ

"यह तमाम गुनाह के काम हैं।"

اَلۡيَوۡمَ يَئِسَ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا مِنۡ دِيۡنِكُمۡ

"अब यह काफ़िर लोग तुम्हारे दीन से मायूस हो चुके हैं"

यानि यह लोग अब यह हक़ीक़त जान चुके हैं कि अल्लाह का दीन ग़ालिब हुआ चाहता है और उसका रास्ता रोकना इनके बस की बात नहीं है। जैसा कि पहले बयान हो चुका है, सूरतुल मायदा नुज़ूल के ऐतबार से आखरी सूरतों में से है। यह उस दौर की बात है जब अरब में इस्लाम के ग़लबे के आसार साफ़ नज़र आना शुरू हो गये थे।

فَلَا تَخۡشَوۡهُمۡ وَاخۡشَوۡنِ‌ؕ

"तो उनसे मत डरो और मुझ ही से डरो।"

اَلۡيَوۡمَ اَكۡمَلۡتُ لَكُمۡ دِيۡنَكُمۡ

"आज के दिन मैंने तुम्हारे लिये तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया है"

وَاَتۡمَمۡتُ عَلَيۡكُمۡ نِعۡمَتِىۡ

"और तुम पर इत्माम फ़रमा दिया है अपनी नेअमत का"

وَرَضِيۡتُ لَكُمُ الۡاِسۡلَامَ دِيۡنًا‌ؕ

"और तुम्हारे लिये मैंने पसंद कर लिया है इस्लाम को बहैसियत दीन के।"

मेरे यहाँ पसंदीदा और मक़बूल दीन हमेशा-हमेश के लिये सिर्फ़ इस्लाम है।

فَمَنِ اضۡطُرَّ فِىۡ مَخۡمَصَةٍ

"लेकिन जो शख्स भूख में मुज़तर (बेहाल) हो जाये (और कोई हराम शय खा ले)"

शदीद फ़ाक़े की कैफ़ियत हो, भूख से जान निकल रही हो तो उन हराम करदा चीज़ों में से जान बचाने के बक़द्र खा सकता है।

غَيۡرَ مُتَجَانِفٍ لِّاِثۡمٍ‌ۙ

"(बशर्ते कि) उसका गुनाह की तरफ़ कोई रुझान ना हो"

नीयत में कोई फ़तूर ना हो, बल्कि हक़ीक़त में जान पर बनी हो और दिल में नाफ़रमानी का कोई ख्याल ना हो।

فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ③ *"तो अल्लाह तआला बख्शने वाला मेहरबान है।"*

आयत 4

يَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ ۭ *"(ऐ नबी ﷺ!) यह लोग आपसे पूछते हैं कि उनके लिये क्या-क्या हलाल है?"*

قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ۙ *"आप (ﷺ इन्हें) बतायें कि तुम्हारे लिये सब पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गयी हैं"*

وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ ۡ *"और यह जो तुम सधाते हो शिकारी जानवरों को, फिर छोड़ते हो इनको शिकार के लिये, इन्हें तुमने सिखाया है उसमें से जो अल्लाह ने तुम्हें सिखाया है"*

فَكُلُوْا مِمَّآ اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ *"तो तुम उनके उस शिकार में से खाओ जो वह तुम्हारे लिये रोके रखें"*

وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ ۠ *"और उस पर अल्लाह का नाम ले लो।"*

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ *"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो।"*

اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ④ *"यक़ीनन अल्लाह बहुत जल्द हिसाब चुकाने वाला है।"*

उसे हिसाब लेने में देर नहीं लगती।

आयत 5

اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ۭ *"आज तुम्हारे लिये तमाम पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गयी हैं।"*

यह वही "اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ...." वाला अंदाज़ है। यानि इससे पहले अगर मुख्तलिफ़ मज़ाहिब के अहकाम की वजह से, यहूद की शरीअत या हज़रत याक़ूब अलै० की ज़ाती पसंद व नापसंद की बिना पर अगर कोई रुकावटें पैदा हो गयी थीं या मआशरे में राइज मुशरिकाना रसूमात व अवहाम (अंधविश्वास) की वजह से तुम्हारे ज़हनों में कुछ उलझनें थीं तो आज उन सबको साफ़ किया जा रहा है और आज तुम्हारे लिये तमाम साफ़-सुथरी और पाकीज़ा चीज़ों के हलाल होने का ऐलान किया जा रहा है।

وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ لَّكُمْ ۠ *"और अहले किताब का खाना तुम्हारे लिये हलाल है।"*

लेकिन यह सिर्फ़ उस सूरत में है कि वह खाना असलन हलाल हो, क्योंकि अगर एक ईसाई सुवर खा रहा होगा तो वह हमारे लिये हलाल नहीं होगा। इस खाने में उनका ज़बीहा भी शामिल है, दो बुनियादी शराइत के साथ: एक यह कि जानवर हलाल हो और दूसरे यह कि उसे अल्लाह का नाम लेकर ज़िबह किया गया हो।

وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ

"इसी तरह तुम्हारा खाना भी उनके लिये हलाल है।"

وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ

"और (तुम्हारे लिये हलाल हैं) अहले ईमान में से खानदानी औरतें"

وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ

"और खानदानी औरतें उन लोगों की जिनको तुमसे पहले किताब दी गयी थी"

यानि मुस्लमान मर्द ईसाई या यहूदी औरत से शादी कर सकता है।

اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ

"जबकि तुम उन्हें अदा कर दो उनके महर"

مُحْصِنِيْنَ

"क़ैदे निकाह में लाकर उनके मुहाफ़िज़ बनते हुए"

नीयत यह हो कि तुमने उनको अपने घरों में बसाना है, मुस्तक़िल तौर पर एक खानदान की बुनियाद रखनी है।

غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ

"ना कि आज़ाद शहवत रानी के लिये"

وَلَا مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ

"और ना ही चोरी-छुपे आशनाई करने के लिये।"

बल्कि मारूफ़ तरीक़े से अलल ऐलान निकाह करके तुम उन्हें अपने घरों में आबाद करो और उनके मुहाफ़िज़ बनो। इस ज़िमन में बाज़ अशकालात (अश्कालात) का रफ़ा (दूर) करना ज़रूरी है। जहाँ तक शरीअते इस्लामी का हुक्म है तो शरीअत रसूल अल्लाह ﷺ पर मुकम्मल हो चुकी है, अब इसमें तगय्युर व तबद्दुल मुमकिन नहीं। इस लिहाज़ से यह क़ानून अपनी जगह क़ायम है और क़ायम रहेगा। यह तो है इसका जवाज़, अलबत्ता अगर आज इसके ख़िलाफ़ किसी को कोई मसलहत नज़र आती है तो वह अपनी जगह दुरुस्त हो सकती है, लेकिन इसके बावजूद क़ानून को बदला नहीं जा सकता। अलबत्ता अगर एक ख़ालिस इस्लामी रियासत हो तो हालात की संगीनी के पेशे नज़र कुछ अरसे के लिये किसी ऐसी इजाज़त या हुक्म को मौक़ूफ़ (pause) किया जा सकता है। जैसे हज़रत उमर रज़ि० ने एक मरतबा अपने ज़माने में क़हत के सबब क़तअ यद (हाथ काटने) की सज़ा को मौक़ूफ़ कर दिया था। इस तरह किसी क़ानून में इस्लामी हुकूमत के किसी आरज़ी इन्तेज़ामी हुक्म (executive order) के ज़रिये से कोई आरज़ी तब्दीली की जा सकती है। मज़ीद बराँ इस इजाज़त के पस मंज़र में जो फ़लसफ़ा और हिकमत है उसकी असल रूह को समझना भी ज़रूरी है। यह इजाज़त सिर्फ़ मुस्लमान मर्द को दी गयी है कि वह ईसाई या यहूदी औरतों से शादी कर सकते हैं, मुस्लमान औरत ईसाई या यहूदी मर्द से शादी नहीं कर सकती। इसकी वजह यह है कि आम तौर पर मर्द औरत पर ग़ालिब होता है, लिहाज़ा इम्काने ग़ालिब है कि वह अपनी बीवी को इस्लाम की तरफ़ रागिब कर लेगा। दूसरे यह कि उस ज़माने में यह बात मुसल्लमा (मान्य) थी कि औलाद मर्द की है, और मर्द के ग़ालिब और फ़आल होने का मतलब था कि ऐसे मियाँ-बीवी की औलाद ईसाई या यहूदी नहीं बल्कि मुस्लमान होगी। उस वक़्त वैसे भी मुसलमानों का ग़लबा था और यहूदी और ईसाई उनके ताबेअ हो चुके थे। आज-कल हालात यक्सर तब्दील हो चुके हैं। आज ईसाई और यहूदी ग़ालिब हैं, जबकि मुस्लमान इन्तहाई मग़लूब। दूसरी तरफ बैनुल अक़वामी सियासत में औरतों का ग़लबा है। लिहाज़ा मौजूदा हालात में मसलहत का तक़ाज़ा यही है कि ऐसी शादियाँ ना हों, लेकिन बहरहाल इनको हराम नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इसके जवाज़ का वाज़ेह हुक्म मौजूद है। हाँ अगर कोई इस्लामी रियासत कहीं क़ायम हो जाये तो वह आरज़ी तौर पर (जब तक हालात में कोई तब्दीली ना आ जाये) इस इजाज़त को मन्सूख कर सकती है।

وَمَنْ يَّكْفُرْ بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهٗ

"तो जिस शख्स ने ईमान के साथ कुफ़्र किया उसके तमाम आमाल ज़ाया हो गये"

इसमें इशारा अहले किताब की तरफ़ भी हो सकता है कि जब तक मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ तशरीफ़ नहीं लाये थे तब तक वह अहले ईमान थे लेकिन अब अगर वह नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ पर ईमान नहीं ला रहे तो गोया वह कुफ़्र कर रहे हैं। इसका दूसरा मफ़हूम यह है कि कोई शख़्स ईमान का मुद्दई होकर काफ़िराना हरकतें करे तो उसके तमाम आमाल ज़ाया हो जाएँगे।

وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۵

"और आख़िरत में वह होगा ख़सारा उठाने वालों में।"

आयात 6 से 11 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ
اِلَى الْكَعْبَيْنِ ۭ وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوْا ۭ وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰي سَفَرٍ اَوْ جَاۗءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَاۗىِٕطِ اَوْ لٰمَسْتُمُ
النِّسَاۗءَ فَلَمْ تَجِدُوْا مَاۗءً فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ مِّنْهُ ۭ مَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ
مِّنْ حَرَجٍ وَّلٰكِنْ يُّرِيْدُ لِيُطَهِّرَكُمْ وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۶ وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيْثَاقَهُ
الَّذِيْ وَاثَقَكُمْ بِهٖٓ ۙ اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۡ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ۷ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا
قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓي اَلَّا تَعْدِلُوْا ۭ اِعْدِلُوْا ۣ هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى ۡ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ
اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۸ وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ۙ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّاَجْرٌ عَظِيْمٌ ۹ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا
وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۱۰ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ هَمَّ قَوْمٌ اَنْ يَّبْسُطُوْٓا
اِلَيْكُمْ اَيْدِيَهُمْ فَكَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ وَعَلَي اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ۱۱

आयत 6

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ

"ऐ अहले ईमान! जब तुम खड़े हो नमाज़ के लिये"

यानि नमाज़ पढ़ने का क़सद किया करो।

فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ

"तो धो लिया करो अपने चेहरे और दोनों हाथ भी कोहनियों तक"

وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ

"और अपने सरों पर मसह कर लिया करो"

وَاَرْجُلَكُمْ اِلَى الْكَعْبَيْنِ ۭ

"और (धो लिया करो) अपने दोनों पाँव भी टखनों तक।"

यहाँ पर वाज़ेह रहे कि اَرْجُلَكُمْ और اَرْجُلِكُمْ दोनों क़िराअतें मुस्तनद (authentic) हैं, लिहाज़ा अहले तशय्य (शिया) इसको मुस्तक़लन اَرْجُلِكُمْ पढ़ते हैं और उनके नज़दीक इसमें पाँव पर मसह का हुक्म है। चुनाँचे वह { وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ وَاَرْجُلِكُمْ} का तर्जुमा इस तरह करते हैं: "और मसह कर लिया करो अपने सरों पर भी और अपने पाँव पर भी।" लेकिन अहले सुन्नत के नज़दीक यह اَرْجُلَكُمْ है और اِلَى الْكَعْبَيْنِ के इज़ाफ़े से यहाँ पाँव को धोने का हुक्म बिल्कुल वाज़ेह हो गया

है। अगर सिर्फ़ मसह करना मतलूब होता तो इसमें कोई हद बयान करने की ज़रूरत नहीं थी। लिहाज़ा اِلَى الْكَعْبَيْنِ की शर्त से यह टुकड़ा {فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ} के बिल्कुल मसावी (बराबर) हो गया है। जैसे हाथों का धोना है कोहनियों तक, ऐसे ही पाँव का धोना है टखनों तक। इस हुक्म में वुज़ू के फ़राइज़ बयान हुए हैं।

وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوْا

"और अगर तुम हालते जनाबत में हो तो फिर तुम और ज़्यादा पाकी हासिल करो।"

यानि पूरे जिस्म का गुस्ल करो। जनाबत की हालत में नमाज़ पढ़ना या क़ुरान को हाथ लगाना जायज़ नहीं।

وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰى سَفَرٍ

"और अगर तुम बीमार हो या सफ़र पर हो"

اَوْ جَآءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَآىِٕطِ

"या तुम में से कोई किसी नशेबी जगह (शौचालय) से होकर आये"

यह इस्तआरा है क़ज़ाये हाजत के लिये। आम तौर पर लोग क़ज़ाये हाजत के लिये नशेबी जगहों पर जाते थे।

اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَآءَ

"या तुमने औरतों से मुक़ारबत की हो"

فَلَمْ تَجِدُوْا مَآءً

"और तुम्हें पानी दस्तयाब ना हो"

فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا

"तो इरादा कर लो पाक मिट्टी का"

यानि पाक मिट्टी से तयम्मुम कर लिया करो।

فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ مِّنْهُ

"तो उससे अपने चेहरे और हाथों को मल लो।"

مَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْ حَرَجٍ

"अल्लाह यह नहीं चाहता कि तुम पर कोई तंगी करे"

وَّلٰكِنْ يُّرِيْدُ لِيُطَهِّرَكُمْ

"बल्कि वह चाहता है कि तुम्हें पाक कर दे"

وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝

"और तुम पर अपनी नेअमत का इत्माम फ़रमाये ताकि तुम शुक्रगुज़ार बन सको।"

आयत 7

وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيْثَاقَهُ الَّذِيْ وَاثَقَكُمْ بِهٖٓ

"और अल्लाह ने तुम्हें जो अपनी नेअमत अता की है उसको याद रखो और उस मुआहिदे को भी जो उसने तुमसे बाँध लिया है (या जिसमें उसने तुम्हें बाँध लिया है)"

एक मीसाक़ वह था जो बनी इसराइल से लिया गया था, अब एक मीसाक़ यह है जो अहले ईमान से हो रहा है। चूँकि यह सूरत शुरू हुई थी يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا से, यानि अहले ईमान से ख़िताब है, लिहाज़ा इस मीसाक़ में भी अहले ईमान ही मुख़ातिब हैं।

اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۡ

"जब तुमने कहा था हमने सुना और इताअत क़ुबूल की।"

सूरतुल बक़रह की आखरी आयत से पहले वाली आयत में अहले ईमान का यह इक़रार मौजूद है {سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۤ غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ} अब जो मुस्लमान भी سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۤ कहता है वह गोया एक मीसाक़ और एक बहुत मज़बूत मुआहिदे के अन्दर अल्लाह तआला के साथ बंध जाता है। यानि अब उसे अल्लाह की शरीअत की पाबन्दी करनी है।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ⑦

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, यक़ीनन अल्लाह तआला सीने के राज़ों से भी वाक़िफ़ है।"

आयत 8

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ

"ऐ लोगो जो ईमान लाये हो, अल्लाह की खातिर रास्ती पर क़ायम रहने वाले और इन्साफ़ की गवाही देने वाले बन जाओ"

यहाँ पर सूरतुन्निसा की आयत 135 का हवाला ज़रूरी है। सूरतुन्निसा की आयत 135 और ज़ेरे मुताअला आयत में एक ही मज़मून बयान हुआ है, फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि तरतीब अक्सी है (दोनों सूरतों की निस्बते ज़ौजियत मद्देनज़र रहे)। वहाँ अल्फ़ाज़ आये हैं: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَاۗءَ لِلّٰهِ} और यहाँ अल्फ़ाज़ हैं: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ}। एक हक़ीक़त तो मैंने उस वक़्त बयान कर दी थी कि इससे यह मालूम हुआ कि गोया "अल्लाह" और "क़िस्त" मुतरादिफ़ हैं। एक जगह फ़रमाया: "क़िस्त के लिये खड़े हो जाओ" और दूसरी जगह फ़रमाया: "अल्लाह के लिये खड़े हो जाओ।" इसी तरह एक जगह "अल्लाह के गवाह बन जाओ" और दूसरी जगह "क़िस्त के गवाह बन जाओ" फ़रमाया। तो गोया "अल्लाह" और "क़िस्त" एक-दूसरे के मुतरादिफ़ के तौर पर आये हैं।

दूसरा अहम नुक्ता इस आयत से हमारे सामने यह आ रहा है कि मआशरे में अद्ल क़ायम करने का हुक्म है। इन्सान फ़ितरतन इन्साफ़ पसंद है। इन्साफ़ आम इन्सान की नफ्सियात और उसकी फ़ितरत का तक़ाज़ा है। आज पूरी नौए इंसानी इन्साफ़ की तलाश में सरगर्दां (हैरान व परेशान) है। इन्साफ़ ही के लिये इन्सान ने बादशाहत से निजात हासिल की और जम्हूरियत को अपनाया ताकि इन्सान पर इन्सान की हाकिमियत ख़त्म हो, इन्साफ़ मयस्सर आये, मगर जम्हूरियत की मंज़िल सराब (भ्रम) साबित हुई और एक दफ़ा इन्सान फिर सरमाया दाराना निज़ाम (capitalism) की लानत में गिरफ़्तार हो गया। अब सरमायेदार उसके आक़ा और डिक्टेटर बन गये। इस लानत से निजात के लिये उसने कम्युनिज़्म (communism) का दरवाज़ा खटखटाया मगर यहाँ भी मताअलक़ा पार्टी की आमरियत (one party dictatorship) उसकी मुन्तज़िर थी। गोया "रुस्त अज़ यक बंद ता उफ्ताद दर बन्दे दिगर" यानि एक मुसीबत से निजात पायी थी कि दूसरी आफ़त में गिरफ़्तार हो गये। अब इन्सान अद्ल और इन्साफ़ हासिल करने के लिये कहाँ जाये? क्या करे? यहाँ पर एक रोशनी तो इन्सान को अपनी फ़ितरत के अन्दर से मिलती है कि उसकी फ़ितरत इन्साफ़ का तक़ाज़ा करती है और अपनी फ़ितरत के इस तक़ाज़े को पूरा करने के लिये वह अद्ल क़ायम करने के लिये खड़ा हो जाये, मगर इससे ऊपर भी एक मंज़िल है और वह यह है कि "अल् अद्ल" अल्लाह की ज़ात है जिसका दिया हुआ निज़ाम ही आदिलाना निज़ाम है। हम उसके बन्दे हैं, उसके वफ़ादार हैं, लिहाज़ा उसके निज़ाम को क़ायम करना हमारे ज़िम्मे है, हम पर फ़र्ज़ है। चुनाँचे {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ} में उसी बुलन्दतर मंज़िल का ज़िक्र है। यह सिर्फ़ फ़ितरते इन्सानी ही का तक़ाज़ा नहीं बल्कि तुम्हारी अबदियत का तक़ाज़ा भी है। अल्लाह तआला के साथ वफ़ादारी के रिश्ते का तक़ाज़ा है कि पूरी क़ुव्वत के साथ, अपने तमामतर वसाइल के साथ, जो भी असबाब व ज़राय मयस्सर हों उन सबको जमा करके खड़े हो जाओ अल्लाह के लिये! यानि अल्लाह के दीन के गवाह बन कर खड़े हो जाओ। और उस दीन में जो तसव्वुर है अद्ल, इन्साफ़ और क़िस्त का उस अद्ल व इन्साफ़ और क़िस्त को क़ायम करने के लिये खड़े हो जाओ। यह है इस हुक्म का तक़ाज़ा।

अब देखिये, वहाँ (सूरतुन्निसा आयत 135 में) क्या था: "ऐ ईमान वालो! इन्साफ़ के अलम्बरदार और अल्लाह वास्ते के गवाह बन जाओ।" {وَلَوْ عَلَىٰٓ اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ} "अगरचे इसकी (तुम्हारे इन्साफ़ और तुम्हारी गवाही की) ज़द ख़ुद तुम्हारी अपनी ज़ात पर या तुम्हारे वालिदैन या रिश्तेदारों पर ही क्यों ना पड़ती हो।"

इन्साफ़ से रोकने वाले अवामिल में से एक अहम आमिल मुस्बते ताल्लुक़ यानि मोहब्बत है। अपनी ज़ात से मोहब्बत, वालिदैन और रिश्तेदारों वगैरह की मोहब्बत इन्सान को सोचने पर मजबूर कर देती है कि मैं अपने ख़िलाफ़ कैसे फ़तवा दे दूँ? अपने ही वालिदैन के ख़िलाफ़ क्योंकर फ़ैसला सुना दूँ? सच्ची गवाही देकर अपने अज़ीज़ रिश्तेदार को कैसे फाँसी चढ़ा दूँ? लिहाज़ा "وَلَوْ عَلَىٰٓ اَنْفُسِكُمْ....." फ़रमा कर इस नौइयत की तमाम अस्बियतों की जड़ काट दी गयी कि बात अगर हक़ की है, इन्साफ़ की है तो फिर ख्वाह वह तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ ही क्यों ना जा रही हो, तुम्हारे वालिदैन पर ही उसकी ज़द क्यों ना पड़ रही हो, तुम्हारे अज़ीज़ रिश्तेदार ही उसकी काट के शिकार क्यों ना हो रहे हों, उसका इज़हार बगैर किसी मसलहत के डंके की चोट पर करना है।

इस सिलसिले में दूसरा आमिल मनफ़ी ताल्लुक़ है, यानि किसी फ़र्द या गिरोह की दुश्मनी, जिसकी वजह से इन्सान हक़ बात कहने से पहलुतही कर जाता है। वह सोचता है कि बात तो हक़ की है मगर है तो वह मेरा दुश्मन, लिहाज़ा अपने दुश्मन के हक़ में आखिर कैसे फ़ैसला दे दूँ? आयत ज़ेरे नज़र में इस आमिल को बयान करते हुए दुश्मनी की बिना पर भी कतमाने हक़ (हक़ छुपाने) से मना कर दिया गया:

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا ؕ

"और किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर अमादा ना कर दे कि तुम अद्ल से मुन्हरिफ़ (बागी) हो जाओ।"

اِعْدِلُوْا ۟

"अद्ल से काम लो"

هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى ۡ

"यही क़रीबतर है तक़्वे के"

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝۸

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो। जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह यक़ीनन उससे बाख़बर है।"

तुम्हारा कोई अमल और कोई क़ौल उसके इल्म से ख़ारिज नहीं, लिहाज़ा हर वक़्त चौकस रहो, चौकन्ने रहो। (आयत ज़ेरे नज़र और सूरतुन्निसा की आयत 135 के मायने व मफ़हूम का बाहमी रब्त और अल्फ़ाज़ की अक्सी और reciprocal तरतीब का हुस्न लायक़-ए-तवज्जोह है।)

आयत 9

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ۙ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّاَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝۹

"अल्लाह का वादा है उन लोगों से जो ईमान लाये और नेक अमल करते रहे कि उनके लिये मग़फ़िरत भी है और अज्रे अज़ीम भी।"

आयत 10

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝۱۰

"और जिन्होंने इन्कार किया और हमारी आयात को झुठलाया वही लोग जहन्नम वाले हैं।"

आयत 11

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ هَمَّ قَوْمٌ اَنْ يَّبْسُطُوْٓا اِلَيْكُمْ اَيْدِيَهُمْ

"ऐ अहले ईमान! ज़रा याद करो अल्लाह के उस ईनाम को जो उसने तुम पर किया जब इरादा किया था एक क़ौम ने कि तुम्हारे ख़िलाफ़ अपने हाथ बढाये"

فَكَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ ۚ

"तो अल्लाह ने उनके हाथों को रोक दिया तुमसे।"

यह गज़वा-ए-अहज़ाब के बाद के हालात पर तबसिरा है। इस गज़वे के बाद अभी कुफ्फ़ार में से बहुत से लोग पेच व ताब खा रहे थे और बईद नहीं था कि वह दो बार मुहिम जोई करते, लेकिन अल्लाह तआला ने ऐसे हालात पैदा कर दिये और उनके दिलों में ऐसा रौब डाल दिया कि वह दोबारा लश्कर कशी की जुर्रात ना कर सके। इस सूरते हाल का ज़िक्र अल्लाह तआला यहाँ पर अपने ईनाम के तौर पर कर रहे हैं कि जब कुफ्फ़ार ने इरादा किया था कि तुम पर दस्तदराज़ी करें, तुम्हारे ऊपर ज़्यादती करने के लिये, तुम पर फ़ौज कशी के लिये इक़दाम करें।

इसमें ख़ास तौर पर इशारा सुलह हुदैबिया की तरफ़ है। उस वक़्त भी क़ुरैश लड़ाई के लिये बेताब हो रहे थे, उनके नौजवानों का खून खौल रहा था, लेकिन बिलआखिर उन्हें इस हक़ीक़त का इदराक (अहसास) हो गया कि अब हम मुसलमानों का मुक़ाबला नहीं कर सकते। गोया अल्लाह तआला ने उनके दिलों में रौब डाल दिया और उनके हाथों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उठने से रोक दिया।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ وَعَلَي اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ﴿١١﴾

"और तुम अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, और अहले ईमान को तो अल्लाह ही पर तवक्कुल करना चाहिये।"

आयात 12 से 19 तक

وَلَقَدْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ ۚ وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَيْ عَشَرَ نَقِيْبًا ۭ وَقَالَ اللّٰهُ اِنِّىْ مَعَكُمْ ۭ لَىِٕنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ
الزَّكٰوةَ وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلِيْ وَعَزَّرْتُمُوْهُمْ وَاَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا لَّاُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنّٰتٍ
تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْھٰرُ ۚ فَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَاۗءَ السَّبِيْلِ ﴿١٢﴾ فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ
وَجَعَلْنَا قُلُوْبَهُمْ قٰسِيَةً ۚ يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ ۙ وَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ ۚ وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰي خَاۗىِٕنَةٍ مِّنْهُمْ
اِلَّا قَلِيْلًا مِّنْهُمْ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿١٣﴾ وَمِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰٓى اَخَذْنَا مِيْثَاقَهُمْ
فَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ ۠ فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاۗءَ اِلٰي يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۭ وَسَوْفَ يُنَبِّئُهُمُ اللّٰهُ بِمَا كَانُوْا
يَصْنَعُوْنَ ﴿١٤﴾ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ قَدْ جَاۗءَكُمْ رَسُوْلُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ كَثِيْرًا مِّمَّا كُنْتُمْ تُخْفُوْنَ مِنَ الْكِتٰبِ وَيَعْفُوْا عَنْ كَثِيْرٍ ڛ
قَدْ جَاۗءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّكِتٰبٌ مُّبِيْنٌ ﴿١٥﴾ يَّهْدِيْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ وَيُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى
النُّوْرِ بِاِذْنِهٖ وَيَهْدِيْهِمْ اِلٰي صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿١٦﴾ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۭ قُلْ فَمَنْ يَّمْلِكُ
مِنَ اللّٰهِ شَـيْـــًٔـا اِنْ اَرَادَ اَنْ يُّهْلِكَ الْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهٗ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا ۭ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا
بَيْنَهُمَا ۭ يَخْلُقُ مَا يَشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿١٧﴾ وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ وَالنَّصٰرٰى نَحْنُ اَبْنٰۗؤُا اللّٰهِ وَاَحِبَّاۗؤُهٗ ۭ قُلْ فَلِمَ
يُعَذِّبُكُمْ بِذُنُوْبِكُمْ ۭ بَلْ اَنْتُمْ بَشَرٌ مِّمَّنْ خَلَقَ ۭ يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَاۗءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا

بَيْنَهُمَا ۭ وَاِلَيْهِ الْمَصِيْرُ ⑱ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ قَدْ جَاۗءَكُمْ رَسُوْلُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلٰي فَتْرَةٍ مِّنَ الرُّسُلِ اَنْ تَقُوْلُوْا مَا جَاۗءَنَا
مِنْۢ بَشِيْرٍ وَّلَا نَذِيْرٍ ۡ فَقَدْ جَاۗءَكُمْ بَشِيْرٌ وَّنَذِيْرٌ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ⑲

अब यहाँ से बनी इसराइल की तारीख के चंद वाक़िआत आ रहे हैं।

आयत 12

وَلَقَدْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ ۚ

"और अल्लाह तआला ने बनी इसराइल से भी मीसाक़ लिया था।"

यानि ऐ मुसलमानों! जिस तरह आज तुमसे यह मीसाक़ लिया गया है और अल्लाह ने तुम्हें शरीअत के मीसाक़ में बाँध लिया है, बिल्कुल इस तरह का मीसाक़ अल्लाह तआला ने तुमसे पहले बनी इसराइल से भी लिया था।

وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَيْ عَشَرَ نَقِيْبًا ۭ

"और उनमें हमने मुक़र्रर किये थे बारह नक़ीब।"

बनी इसराइल के बारह क़बीले थे, हर क़बीले में से हज़रत मूसा अलै० ने एक नक़ीब मुक़र्रर किया। नबी अकरम ﷺ ने भी अन्सार में बारह नक़ीब फ़रमाये थे, नौ ख़ज़रज में से और तीन औस से।

وَقَالَ اللّٰهُ اِنِّىْ مَعَكُمْ ۭ

"और अल्लाह ने (उनसे) फ़रमाया था कि मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

मेरी मदद, मेरी ताइद, मेरी नुसरत तुम्हारे साथ शामिले हाल रहेगी।

لَىِٕنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ

"अगर तुमने नमाज़ को क़ायम रखा और ज़कात अदा करते रहे"

وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلِيْ

"और मेरे रसूलों पर ईमान लाते रहे"

وَعَزَّرْتُمُوْهُمْ

"और उन (रसूलों) की तुम मदद करते रहे"

यह जिन रसूलों का ज़िक्र है वह पे-दर-पे बनी इसराइल में आते रहे। हज़रत मूसा अलै० के बाद तो रिसालत का यह सिलसिला एक तार की मानिन्द था जो छ: सौ बरस तक टूटा ही नहीं। फिर ज़रा सा वक़्फ़ा छ: सौ बरस का आया और फिर उसके बाद नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ तशरीफ़ लाये।

وَاَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا

"और अल्लाह को क़र्ज़े हसना देते रहे"

यानि अल्लाह के दीन के लिये माल ख़र्च करते रहे।

لَّاُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ

"तो मैं लाज़िमन दूर कर दूँगा तुमसे तुम्हारी बुराइयाँ"

وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْھٰرُ ۚ

"और मैं लाज़िमन दाख़िल कर दूँगा तुम्हें उन बाग़ात में जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी।"

فَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيْلِ ⑫

"तो जिसने कुफ़्र किया इसके बाद तुम में से तो वह सीधे रास्ते से भटक कर रह गया।"

आयत 13

فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ

"पस उनके अपने इस अहद को तोड़ने के बाइस हमने उन पर लानत फ़रमायी"

मैंने सूरतुन्निसा आयत 155 में "لَعَنّٰهُمْ" महज़ूफ़ क़रार दिया था, लेकिन यहाँ पर यह वाज़ेह होकर आ गया है कि हमने उनके इस मीसाक़ को तोड़ने की पादाश में उन पर लानत फ़रमायी।

وَجَعَلْنَا قُلُوْبَهُمْ قٰسِيَةً

"और उनके दिलों को सख्त कर दिया।"

जैसे सूरतुल बक़रह में फ़रमाया: {ثُمَّ قَسَتْ قُلُوْبُكُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ اَوْ اَشَدُّ قَسْوَةً} (आयत:74) "फिर तुम्हारे दिल सख्त हो गये उसके बाद, पत्थरों की तरह बल्कि पत्थरों से भी बढ़ कर सख्त।" यहाँ पर वही बात दोहराई गयी है।

يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ

"वह कलाम को उसके असल मक़ाम से हटाते थे"

وَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ

"और जो कुछ उनको दिया गया था नसीहत के तौर पर उसके अक्सर हिस्से को वह भूल गये।"

और उन्होंने उससे फ़ायदा उठाना छोड़ दिया।

وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَآئِنَةٍ مِّنْهُمْ

"और (ऐ नबी ﷺ) आप हमेशा उनकी तरफ़ से ख्यानत की इत्तलाअ पाते रहेंगे"

रसूल अल्लाह ﷺ जैसे ही मदीने पहुँचे थे तो आप ﷺ ने उस नयी जगह पर अपनी पोज़ीशन मज़बूत करने के लिये पहले छः महीनों में जो तीन काम किये उनमें से एक यह भी था कि यहूद के तीनों क़बीलों से मदीना के मुश्तरका दिफ़ा के मुआहिदे कर लिये कि अगर मदीने पर हमला होगा तो सब मिल कर इसका दिफ़ा करेंगे, लेकिन बाद में उनमें से हर क़बीले ने एक-एक करके ग़द्दारी की। चुनाँचे नबी अकरम ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि उनकी तरफ़ से मुसलसल ख्यानतें होती रहेंगी, लिहाज़ा आपको उनकी तरफ़ से होशियार रहना चाहिये और उनका तोड़ करने के लिये पहले से तैयार रहना चाहिये।

اِلَّا قَلِيْلًا مِّنْهُمْ

"सिवाय उनमें से चंद एक के"

उनमें से बहुत थोड़े लोग इससे मुस्तशना (मुक्त) हैं।

فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْ

"लिहाज़ा (अभी) आप ﷺ उन्हें माफ़ करते रहें और दरगुज़र से काम लें।"

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ⑬

"यक़ीनन अल्लाह तआला अहसान करने वालों को पसंद फ़रमाता है।"

आयत 14

وَمِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰٓى اَخَذْنَا مِيْثَاقَهُمْ

"और जिन लोगों ने कहा हम नसारा हैं, हमने उनसे भी मीसाक़ लिया"

فَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ

"तो वह भी भूल गये बड़ा हिस्सा उसका जिसकी उनको नसीहत की गयी थी।"

वह उस नसीहत से फ़ायदा उठाना भूल गये।

فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ

"तो हमने डाल दी उनके दरमियान दुश्मनी और बुग्ज़ क़यामत के दिन तक।"

यहाँ एक अहम नुक्ता तो यह है कि ईसाईयों और यहूदियों के दरमियान पूरे उन्नीस सौ बरस शदीद दुश्मनी रही है। मौजूदा दौर में सूरते हाल आरज़ी तौर पर कुछ तब्दील हो गयी है। ईसाई जिन्हें अल्लाह का बेटा बल्कि ख़ुदा समझते हैं, यहूदियों ने उन्हें वलदुज़्ज़िना क़रार दिया और काफ़िर व मुर्तद कहते हुए वाजिबुल क़त्ल ठहराया। यह बुनियादी इख्तलाफ़ दोनों मज़ाहिब के पैरोकारों में इस क़द्र अहम और शदीद है कि इसकी मौजूदगी में दोनों में इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक़ मुमकिन ही नहीं। लेकिन आयत ज़ेरे नज़र में बुनियादी तौर पर ईसाईयों की आपस की दुश्मनी और उनका बाहम बुग्ज़ व अनाद (विरोध) मुराद है। उनके मुख्तलिफ़ फ़िरक़ों के दरमियान नज़रियाती इख्तलाफ़ात उनकी दिली कदुरतों और नफ़रतों से बढ़ कर बारहा (बार-बार) बाहमी जंग व जदल (झगड़े) की शक्ल में नमूदार होते रहे हैं। मज़हबी बुनियादों पर ईसाई फ़िरक़ों की आपस की खाना जंगियों की मिसाल पूरी इंसानी तारीख में नहीं मिलती। मज़हब के नाम पर ईसाईयों की खूँरेज़ी और क़त्ल व ग़ारतगरी की इबरत आमोज़ और रोंगटे खड़े कर देने वाली तफ़सीलात "Blood on the Cross" नामी ज़खीम किताब में मिलती हैं, जो लन्दन से शाया हुई है। ख़ास तौर पर प्रोटेस्टेंट्स (Protestants) और कैथोलिक्स (Catholics) की बाहमी चप्पलिश तो कोई पोशीदा राज़ नहीं, जिसकी हल्की सी झलक आज भी हमें आयरलैंड में नज़र आती है।

وَسَوْفَ يُنَبِّئُهُمُ اللّٰهُ بِمَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ﴿١٤﴾

"और अनक़रीब अल्लाह तआला जितला देगा उन्हें जो कुछ वह करते रहे थे।"

अब फिर वही अंदाज़ है जो सूरतुन्निसा के आखिर में था।

आयत 15

يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ قَدْ جَآءَكُمْ رَسُوْلُنَا

"ऐ अहले किताब, आ गया है तुम्हारे पास हमारा रसूल"

يُبَيِّنُ لَكُمْ كَثِيْرًا مِّمَّا كُنْتُمْ تُخْفُوْنَ مِنَ الْكِتٰبِ

"जो ज़ाहिर कर रहा है तुम पर वह बहुत सी बातें जिनको तुम छुपा रहे थे किताब में से"

وَيَعْفُوْا عَنْ كَثِيْرٍ

"और बहुत सी बातों से तो दरगुज़र भी कर रहा है।"

قَدْ جَآءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّ كِتٰبٌ مُّبِيْنٌ ﴿١٥﴾

"आ चुका है तुम्हारे पास अल्लाह की तरफ़ से एक नूर भी और एक रोशन किताब भी।"

यहाँ नूर से मुराद नबी अकरम ﷺ की शख्सियत भी हो सकती है। सूरतुन्निसा आयत 174 में जो फ़रमाया गया: {وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ نُوْرًا مُّبِيْنًا} "और नाज़िल कर दिया है हमने तुम्हारी तरफ़ एक रोशन नूर" वहाँ नूर से मुराद क़ुरान है, इसलिये कि हुज़ूर ﷺ के लिये फ़अल وَاَنْزَلْنَآ दुरुस्त नहीं। लेकिन यहाँ ज़्यादा अहतमाल (सम्भावना) यही है कि नूर से मुराद रसूल अल्लाह ﷺ की ज़ाते मुबारका है, यानि आप ﷺ की रूहे पुरनूर, क्योंकि आप ﷺ की रूह और रूहानियत आप

ﷺ के पूरे वजूद पर ग़ालिब थी, छायी हुई थी। इस लिहाज़ से आप ﷺ को नूरे मुजस्सम भी कहा जा सकता है। गोया आप ﷺ को इस्तआरतन "नूर" कहा गया है। एक अहतमाल यह भी है कि यहाँ नूर भी क़ुरान पाक ही को कहा गया हो और "वाव" इसमें वावे तफ़सीरी हो। इस सूरत में मफ़हूम यूँ होगा: "आ गया है तुम्हारे पास नूर यानि किताबे मुबीन।"

आयत 16

يَّهْدِيْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ

"इसके ज़रिये से अल्लाह तआला रहनुमाई फ़रमाता है उनकी जो उसकी रज़ा के तालिब हैं, सलामती के रास्तों की तरफ़"

وَيُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ بِاِذْنِهٖ وَيَهْدِيْهِمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿۱۶﴾

"और निकलता है उन्हें अन्धेरों से रोशनी की तरफ़ अपने हुक्म से और उनकी रहनुमाई फ़रमाता है सीधे रास्ते की तरफ़।"

आयत 17

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ

"यक़ीनन कुफ़्र किया उन्होंने जिन्होंने कहा कि अल्लाह ही मसीह इब्ने मरयम है।"

हज़रत ईसा अलै० के बारे में ईसाईयों के यहाँ जो अक़ीदे रहे हैं उनमें से एक यह है कि अल्लाह ही मसीह अलै० है। इस अक़ीदे की बुनियाद इस नज़रिये पर क़ायम है कि ख़ुदा ख़ुद ही इन्सानी शक्ल में ज़हूर कर लेता है। इस अक़ीदे को God Incarnate कहा जाता है, यानि अवतार का अक़ीदा जो हिन्दुओं में भी है। जैसे राम चन्द्र जी, कृष्ण जी महाराज उनके यहाँ ख़ुदा के अवतार माने जाते हैं। चुनाँचे ईसाईयों का फ़िरक़ा Jacobites ख़ास तौर पर God Incarnate के अक़ीदे का सख्ती से क़ायल रहा है, कि असल में अल्लाह ही ने हज़रत मसीह अलै० की शक्ल में दुनिया में ज़हूर फ़रमाया। जैसे हमारे यहाँ भी बाज़ लोग नबी अकरम ﷺ की मोहब्बत व अक़ीदत और अज़मत के इज़हार में गुलु से काम लेकर हद से तजावुज़ करते हुए यहाँ तक कह जाते हैं:

वही जो मुस्तवी-ए-अर्श था ख़ुदा होकर
उतर पड़ा वह मदीने में मुस्तफ़ा होकर

ईसाईयों के इसी अक़ीदे का इब्ताल (खंडन) इस आयत में किया गया है।

قُلْ فَمَنْ يَّمْلِكُ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا

"तो उनसे पूछिये कौन है जिसे इख़्तियार हो अल्लाह के मुक़ाबले कुछ भी"

اِنْ اَرَادَ اَنْ يُّهْلِكَ الْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهٗ

"अगर वह हलाक करना चाहे मसीह अलै० इब्ने मरयम को और उसकी माँ को"

وَمَنْ فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا

"और जो ज़मीन में हैं उन सबको"

अगर अल्लाह इन सबको हलाक करना चाहे तो कौन है जो उसका हाथ रोक लेगा?

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا

"और अल्लाह ही के लिये है बादशाही आसमानों और ज़मीन की और जो कुछ इन दोनों के दरमियान है (सबकी)।"

يَخْلُقُ مَا يَشَاۗءُ

"वह पैदा करता है जो कुछ चाहता है।"

وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿۱۷﴾

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

वह जो चाहता है, जैसे चाहता है, तख्लीक़ फ़रमाता है। उसने आदम, ईसा और याहया (अलै०) को तख्लीक़ फ़रमाया। यह अल्लाह तआला के ऐजाज़े तख्लीक़ की मुख्तलिफ़ मिसालें हैं।

आयत 18

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ وَالنَّصٰرٰى نَحْنُ اَبْنٰٓؤُا اللّٰهِ وَاَحِبَّآؤُهٗ

"यहूदी और नसरानी कहते हैं कि हम अल्लाह के बेटे हैं और उसके बड़े चहेते हैं।"

यानि बेटों की मानिन्द हैं, बड़े लाड़ले और प्यारे हैं।

قُلْ فَلِمَ يُعَذِّبُكُمْ بِذُنُوْبِكُمْ

"(तो इनसे) कहिये कि फिर वह तुम्हें अज़ाब क्यों देता रहा है तुम्हारे गुनाहों की पादाश में?"

अगर तुम अल्लाह की औलाद हो, उसके बड़े चहेते हो, तो क्या इसी लिये बख्तनसर (Nebukadnezar) के हाथों उसने तुम्हें पिटवाया, तुम्हारे छ: लाख अफ़राद क़त्ल करवा दिये, छ: लाख क़ैदी बने, तुम्हारा हैकले अव्वल भी शहीद कर दिया गया। फिर आशूरियों ने तुम्हारी सल्तनत इसराइल को रौंद डाला। फिर यूनानियों के हाथों तुम्हारा इस्तहसाल (शोषण) हुआ। फिर रोमियों ने तुम्हारे ऊपर ज़ुल्म व बरबरियत के पहाड़ तोड़े और रोमन जनरल टाइटस (Titus) ने तुम्हारा दूसरा हैकल भी मस्मार कर दिया। क्या ऐसे ही लाड़ले होते हैं अल्लाह के? क्या अल्लाह इतना ही लाचार और आजिज़ है कि अपने लाडलों को ज़िल्लत व ख्वारी और ज़ुल्म व सितम से बचा नहीं सकता?

بَلْ اَنْتُمْ بَشَرٌ مِّمَّنْ خَلَقَ

"(नहीं) बल्कि तुम भी इन्सान हो जैसे दूसरे इन्सान उसने पैदा किये हैं।"

يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ

"वह जिसे चाहता है बख्श देता है और जिसे चाहता है सज़ा देता है।"

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا

"और अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन और जो कुछ इन दोनों के दरमियान है, सबकी बादशाही"

وَاِلَيْهِ الْمَصِيْرُ ۝۱۸

"और उसी की तरफ़ लौट कर जाना है।"

आयत 19

يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ قَدْ جَآءَكُمْ رَسُوْلُنَا

"ऐ अहले किताब! तुम्हारे पास आ चुका है हमारा रसूल"

يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلٰى فَتْرَةٍ مِّنَ الرُّسُلِ

"जो तुम्हारे लिये (दीन को) वाज़ेह कर रहा है, रसूलों के एक वक़्फ़े के बाद"

हज़रत ईसा अलै० और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के दरमियान छ: सौ बरस ऐसे गुज़रे हैं कि उस दौरान दुनिया में कोई नबी, कोई रसूल नहीं रहा। इस वक़्फ़े को इस्तलाह में 'फ़ितरत' कहा जाता है। फिर हुज़ूर ﷺ की बेअसत हुई और फिर इसके बाद ता क़यामे क़यामत रिसालत का दरवाज़ा बंद हो गया।

اَنْ تَقُوْلُوْا مَا جَآءَنَا مِنْۢ بَشِيْرٍ وَّلَا نَذِيْرٍ

"मबादा तुम कहो कि हमारे पास तो आया ही नहीं था कोई बशारत देने वाला और ना कोई ख़बरदार करने वाला"

فَقَدْ جَآءَكُمْ بَشِيْرٌ وَّنَذِيْرٌ

"तो (सुन लो!) आ गया है तुम्हारे पास बशारत देने वाला और ख़बरदार करने वाला।"

وَاللّٰہُ عَلٰی کُلِّ شَیۡءٍ قَدِیۡرٌ ﴿۱۹﴾

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

सूरतुन्निसा (आयत:165) में यही बात इस अंदाज़ से बयान हो चुकी है: {رُسُلًا مُّبَشِّرِیۡنَ وَمُنۡذِرِیۡنَ لِئَلَّا یَکُوۡنَ لِلنَّاسِ عَلَی اللّٰہِ حُجَّۃٌۢ بَعۡدَ الرُّسُلِ ؕ وَکَانَ اللّٰہُ عَزِیۡزًا حَکِیۡمًا}

आयात 20 से 26 तक

وَاِذۡ قَالَ مُوۡسٰی لِقَوۡمِہٖ یٰقَوۡمِ اذۡکُرُوۡا نِعۡمَۃَ اللّٰہِ عَلَیۡکُمۡ اِذۡ جَعَلَ فِیۡکُمۡ اَنۡۢبِیَآءَ وَجَعَلَکُمۡ مُّلُوۡکًا ٭ۖ وَّاٰتٰىکُمۡ مَّا لَمۡ یُؤۡتِ اَحَدًا مِّنَ الۡعٰلَمِیۡنَ ﴿۲۰﴾ یٰقَوۡمِ ادۡخُلُوا الۡاَرۡضَ الۡمُقَدَّسَۃَ الَّتِیۡ کَتَبَ اللّٰہُ لَکُمۡ وَلَا تَرۡتَدُّوۡا عَلٰۤی اَدۡبَارِکُمۡ فَتَنۡقَلِبُوۡا خٰسِرِیۡنَ ﴿۲۱﴾ قَالُوۡا یٰمُوۡسٰۤی اِنَّ فِیۡہَا قَوۡمًا جَبَّارِیۡنَ ٭ۖ وَاِنَّا لَنۡ نَّدۡخُلَہَا حَتّٰی یَخۡرُجُوۡا مِنۡہَا ۚ فَاِنۡ یَّخۡرُجُوۡا مِنۡہَا فَاِنَّا دٰخِلُوۡنَ ﴿۲۲﴾ قَالَ رَجُلٰنِ مِنَ الَّذِیۡنَ یَخَافُوۡنَ اَنۡعَمَ اللّٰہُ عَلَیۡہِمَا ادۡخُلُوۡا عَلَیۡہِمُ الۡبَابَ ۚ فَاِذَا دَخَلۡتُمُوۡہُ فَاِنَّکُمۡ غٰلِبُوۡنَ ۬ۚ وَعَلَی اللّٰہِ فَتَوَکَّلُوۡۤا اِنۡ کُنۡتُمۡ مُّؤۡمِنِیۡنَ ﴿۲۳﴾ قَالُوۡا یٰمُوۡسٰۤی اِنَّا لَنۡ نَّدۡخُلَہَاۤ اَبَدًا مَّا دَامُوۡا فِیۡہَا فَاذۡہَبۡ اَنۡتَ وَرَبُّکَ فَقَاتِلَاۤ اِنَّا ہٰہُنَا قٰعِدُوۡنَ ﴿۲۴﴾ قَالَ رَبِّ اِنِّیۡ لَاۤ اَمۡلِکُ اِلَّا نَفۡسِیۡ وَاَخِیۡ فَافۡرُقۡ بَیۡنَنَا وَبَیۡنَ الۡقَوۡمِ الۡفٰسِقِیۡنَ ﴿۲۵﴾ قَالَ فَاِنَّہَا مُحَرَّمَۃٌ عَلَیۡہِمۡ اَرۡبَعِیۡنَ سَنَۃً ۚ یَتِیۡہُوۡنَ فِی الۡاَرۡضِ ؕ فَلَا تَاۡسَ عَلَی الۡقَوۡمِ الۡفٰسِقِیۡنَ ﴿۲۶﴾

अब हज़रत मूसा अलै० का वह वाक़िया आ रहा है जब आप अलै० मिस्र से अपनी क़ौम को लेकर निकले, सहराए सीना में रहे, आप अलै० को कोहे तूर पर बुलाया गया और तौरात दी गयी। इसके बाद उन्हें हुक्म हुआ कि फ़लस्तीन में दाख़िल हो जाओ और वहाँ पर आबाद मुशरिक और काफ़िर क़ौम (जो फ़लस्तई कहलाते थे) के साथ जंग करो और उन्हें वहाँ से निकालो, क्योंकि यह अर्ज़े मुक़द्दस तुम्हारे लिये अल्लाह की तरफ़ से मौऊद (promised) है। इसलिये कि उनके जद्दे अमजद हज़रत इब्राहीम अलै० और हज़रत इस्हाक़ और हज़रत याक़ूब अलै० का ताल्लुक़ इस ख़ित्ते से था। फिर हज़रत याक़ूब अलै० के ज़माने में हज़रत युसुफ़ अलै० की वसातत (ज़रिये) से बनी इसराइल मिस्र में मुन्तक़िल (move) हुए तो उन्हें हुक्म हुआ कि अब जाओ, अपने असल घर (अर्ज़े फ़लस्तीन) को दोबारा हासिल करो। लेकिन जब जंग का मौक़ा आया तो पूरी क़ौम ने कोरा जवाब दे दिया कि हम जंग करने के लिये तैयार नहीं हैं। इस पर हज़रत मूसा अलै० के मिज़ाज में जो तल्ख़ी पैदा हुई और तबीयत के अन्दर बेज़ारी की जो कैफ़ियत पैदा हुई, उसकी शिद्दत यहाँ नज़र आती है। आम तौर पर समझा जाता है कि रसूल अपनी उम्मत के हक़ में सरापा शफ़क्क़त होता है, लेकिन हक़ीक़त यह है कि नबी का मामला भी अल्लाह तआला की मानिन्द है। जैसे अल्लाह रऊफ़ भी है, वदूद भी, लेकिन साथ ही वह अज़ीज़ुन ज़ुनतिक़ाम भी है (अल्लाह की यह दोनों शानें एक साथ हैं) इसी तरह रसूल का मामला है कि रसूल शफ़ीक़ और रहीम होने के साथ-साथ गय्यूर भी होता है। नबी के दिल में दीन की गैरत अपने पैरोकारों से कहीं बढ़ कर होती है। लिहाज़ा क़ौम के मनफ़ी रद्दे अमल पर नबी की बेज़ारी लाज़मी है।

यहाँ पर एक बहुत अहम नुक्ता समझने का यह है कि बनी इसराइल को पे-दर-पे मौअज्ज़ात के ज़हूर ने तसाहिल पसंद बना दिया था। प्यास लगी तो चट्टान पर मूसा अलै० की एक ही ज़र्ब से बारह चश्मे फूट पड़े, भूख महसूस हुई तो मन्न व सलवा नाज़िल हो गया, धूप ने सताया तो अब्र का सायबान साथ-साथ चल पड़ा, समुन्दर रास्ते में आया तो असा की ज़र्ब से रास्ता बन गया। ऐसा महसूस होता है कि इस लाड़-प्यार की वजह से वह बिगड़ गये, आराम तलब हो गये, मुश्किल की हर घड़ी में उन्हें मौअज्ज़े के ज़हूर की आदत सी पड़ गयी और जंग के मौक़े पर दुश्मन का सामना करने से इन्कार कर दिया, बावजूद यह कि उनके कम से कम एक लाख अफ़राद तो ऐसे थे जो जंग की सलाहियत रखते थे। यही हिकमत है कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की पूरी ज़िन्दगी में इस क़िस्म का कोई मौअज्ज़ा नज़र नहीं आता, बल्कि यह नक़्शा नज़र आता है कि मुसलमानों! तुम्हें जो कुछ करना है अपनी जान देकर, ईसार व क़ुर्बानी से, मेहनत व मशक्क़त से, भूख झेल

कर, फ़ाक़े बर्दाश्त करके करना है। चुनाँचे बनी इसराइल के बरअक्स रसूल अल्लाह ﷺ के साथियों में ईसार व क़ुर्बानी, जुर्रात व बहादुरी और बुलन्द हिम्मती नज़र आती है, जिसकी वाज़ेह मिसाल गज़वा-ए-बद्र के मौक़े पर हज़रत मिक़दाद रज़ि० का यह क़ौल है:

يَارَسُوْلَ اللّٰهِ اِنَّا لَا نَقُوْلُ لَكَ كَمَا قَالَتْ بَنُوْ اِسْرَائِيْلَ لِمُوْسٰى (فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَا اِنَّا هٰهُنَا قَاعِدُوْنَ) وَلٰكِنِ امْضِ وَنَحْنُ مَعَكَ، فَكَاَنَّهُ سُرِّيَ عَنْ رَسُوْلِ اللّٰهِ ﷺ ـ

"या रसूल अल्लाह! हम आप ﷺ से बनी इसराइल की तरह यह नहीं कहेंगे कि तुम और तुम्हारा रब जाकर क़िताल करो हम तो यहाँ बैठे हैं। बल्कि (हम कहेंगे) आप ﷺ क़दम बढाइये, हम आप ﷺ के साथ हैं! इस पर गोया रसूल अल्लाह ﷺ की परेशानी का इज़ाला हो गया।"

आयत 20

وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ

"और याद करो जब कहा मूसा अलै० ने अपनी क़ौम से"

اذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ

"ऐ मेरी क़ौम के लोगो! अल्लाह के उस ईनाम को याद करो जो तुम पर हुआ है"

اِذْ جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْۢبِيَآءَ

"जब उसने तुम्हारे अन्दर नबी उठाये"

यानि ख़ुद मैं नबी हूँ, मेरे भाई हारुन नबी हैं। हज़रत युसुफ़, हज़रत याक़ूब, हज़रत इस्हाक़ और हज़रत इब्राहीम अलै० सब नबी थे।

وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا

"और तुम्हें बादशाह बनाया"

अगरचे उस वक़्त तक उनकी बादशाहत तो क़ायम नहीं हुई थी मगर हो सकता है कि यह पेशनगोई हो कि आइन्दा तुम्हें अल्लाह तआला ज़मीन की सल्तनत और ख़िलाफ़त अता करने वाला है। चुनाँचे हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान अलै० के ज़माने में बनी इसराइल की अज़ीमुश्शान सल्तनत क़ायम हुई। एक राय यह भी है कि यहाँ हज़रत युसुफ़ अलै० के इक़तदार (power) की तरफ़ इशारा है, वह अगरचे मिस्र के बादशाह तो नहीं थे लेकिन बादशाहों के भी मखदूम व ममदूह थे और बनी इसराइल को मिस्र में पीरज़ादों का सा इज़्ज़त व अहतराम हासिल हो गया था।

وَّاٰتٰىكُمْ مَّا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ۝٢٠

"और तुम्हें वह कुछ दिया जो तमाम जहान वालों में से किसी को नहीं दिया।"

आयत 21

يٰقَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِيْ كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ

"(तो) ऐ मेरी क़ौम के लोगो! अब दाख़िल हो जाओ इस अर्ज़े मुक़द्दस (फ़लस्तीन) में जो अल्लाह ने तुम्हारे लिये लिख दी है"

अल्लाह का फ़ैसला है कि वह ज़मीन तुम्हें मिलेगी।

وَلَا تَرْتَدُّوْا عَلٰٓي اَدْبَارِكُمْ

"और अपनी पीठों के बल वापस ना फिरना"

فَتَنْقَلِبُوْا خٰسِرِيْنَ ۝٢١

"(और अगर ऐसा करोगे) तो नाकाम व नामुराद पलटोगे।"

आयत 22

قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّ فِيْهَا قَوْمًا جَبَّارِيْنَ ۖ

"उन्होंने कहा ऐ मूसा! इसमें तो बड़े ज़ोर आवर लोग हैं"

हम फ़लस्तीन में कैसे दाख़िल हो जायें? यहाँ तो जो लोग आबाद हैं वह बड़े ताक़तवर, गिराँ डेल और ज़बरदस्त हैं। हम उनका मुक़ाबला कैसे कर सकते हैं?

وَاِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَا حَتّٰى يَخْرُجُوْا مِنْهَا ۚ

"और हम उस (सरज़मीन) में दाख़िल नहीं होंगे जब तक वह वहाँ से निकल ना जायें।"

فَاِنْ يَّخْرُجُوْا مِنْهَا فَاِنَّا دٰخِلُوْنَ ﴿٢٢﴾

"हाँ अगर वह वहाँ से निकाल जायें तो फिर हम दाख़िल हो जाएँगे।"

आयत 23

قَالَ رَجُلٰنِ مِنَ الَّذِيْنَ يَخَافُوْنَ

"कहा दो अश्खास ने जो (अल्लाह का) खौफ़ रखने वालों में से थे"

اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمَا

"और अल्लाह ने भी उन दोनों पर ईनाम किया था"

यह दो अश्खास (शख्स) हज़रत मूसा अलै० के शागिर्द और क़रीबी हवारी थे। एक तो यूशा बिन नून थे, जो हज़रत मूसा अलै० के बाद उनके जानशीन भी हुए और गुमाने ग़ालिब है कि वह नबी भी थे, जबकि दूसरे शख्स कालिब बिन युफ़न्ना थे। इन दोनों ने अपनी क़ौम के लोगों को समझाना चाहा कि हिम्मत करो:

ادْخُلُوْا عَلَيْهِمُ الْبَابَ ۚ

"तुम उनके मुक़ाबले में दरवाज़े के अन्दर घुस जाओ।"

तुम लोग एक दफ़ा दरवाज़े में घुस कर उनका सामना तो करो।

فَاِذَا دَخَلْتُمُوْهُ فَاِنَّكُمْ غٰلِبُوْنَ ڬ

"और जब तुम उसमें दाख़िल होगे तो लाज़िमन तुम ग़ालिब हो जाओगे।"

وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوْٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٢٣﴾

"और अल्लाह पर तवक्कुल करो अगर तुम मोमिन हो।"

आयत 24

قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَآ اَبَدًا

"उन्होंने कहा ऐ मूसा हम तो हरगिज़ इस शहर में दाख़िल नहीं होंगे

مَّا دَامُوْا فِيْهَا

"जब तक कि वह इसमें मौजूद हैं"

فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ

"बस तुम और तुम्हारा रब दोनों जाओ और जाकर क़िताल करो"

गोया वह यह भी कह रहे थे कि साथ अपनी यह लठिया भी लेते जाओ, जिसने बड़े-बड़े कारनामे दिखाये हैं, इसकी मदद से उन जब्बारों को शिकस्त दे दो।

اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ ﴿٢٤﴾

"हम तो यहाँ बैठे हैं।"

हम तो यहाँ टिके हुए हैं, यहाँ से नहीं हिलेंगे, ज़मीन जनबद, ना जनबद गुल मुहम्मद!

यह मक़ामे इबरत है, तौरात (Book of Exsodus) से मालूम होता है कि मिस्र से हज़रत मूसा अलै० के साथ लगभग छ: लाख अफ़राद निकले थे। उनमें से औरतें, बच्चे और बूढ़े निकाल दें तो एक लाख अफ़राद तो जंग के क़ाबिल होंगे। मज़ीद मोहतात अंदाज़ा लगायें तो पचास हज़ार जंगजू तो दस्तयाब हो सकते थे, मगर उस क़ौम की पस्त हिम्मती और नज़रियाती कमज़ोरी मुलाहिज़ा हो कि छ: लाख के हुजूम में से सिर्फ़ दो अश्खास ने अल्लाह के इस हुक्म पर लब्बैक कहा। فاعتبروا یا اُولی الابصار!

अब नबी की बेज़ारी मुलाहिज़ा फ़रमायें। वही हज़रत मूसा अलै० जिन्होंने अपने हम क़ौम इसराइली की मुदाफ़अत (बचाव) करते हुए एक मुक्का रसीद करके क़िब्ती की जान निकाल दी थी {فَوَكَزَهٗ مُوْسٰى فَقَضٰى عَلَيْهِ} (अल् क़सस:15) अब अपनी क़ौम से किस क़दर बेज़ारी का इज़हार कर रहे हैं।

आयत 25

قَالَ رَبِّ اِنِّيْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِيْ وَاَخِيْ

"मूसा अलै० ने अर्ज़ किया परवरदिगार, मुझे तो इख़्तियार नहीं है सिवाय अपनी जान के और अपने भाई (हारुन अलै० की जान) के"

बाक़ी यह पूरी क़ौम इन्कार कर रही है। मेरा किसी पर कुछ ज़ोर नहीं है।

فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝۲۵

"तो अब तफ़रीक़ कर दे, हमारे और इन नाफ़रमान लोगों के दरमियान।"

हज़रत मूसा अलै० क़ौम के रवैय्ये से इस दर्जा आज़रदा खातिर हुए कि क़ौम से अलैहदगी की तमन्ना करने लगे कि मैं अब इन नाहंजारों के साथ नहीं रहना चाहता। इन्होंने तेरी अता करदा क्या कुछ नेअमतें बरती हैं और मेरे हाथों से क्या-क्या मौअज्ज़े यह लोग देख चुके हैं, इसके बावजूद इनका यह हाल है तो मुझे इनसे अलैहदा कर दे। अल्लाह तआला ने उनकी यह दरख्वास्त क़ुबूल नहीं की लेकिन इसका तज़किरा भी नहीं किया।

आयत 26

قَالَ فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً

"फ़रमाया अब यह (अर्ज़े मुक़द्दस) हराम रहेगी इन पर चालीस साल तक।"

यह हमारी तरफ़ से इनकी बुज़दिली की सज़ा है। अगर यह बुज़दिली ना दिखाते तो अर्ज़े फ़लस्तीन अभी इनको अता कर दी जाती, मगर अब यह चालीस साल तक इन पर हराम रहेगी।

يَتِيْهُوْنَ فِي الْاَرْضِ

"यह भटकते फिरेंगे ज़मीन में।"

इस सहराये सीना में यह चालीस साल तक मारे-मारे फिरते रहेंगे।

فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝۲۶

"तो (ऐ मूसा अलै०) आप अफ़सोस ना करें इस फ़ासिक़ क़ौम पर।"

अब आप इन नाफ़रमानों का ग़म ना खाइये। अब जो कुछ इन पर बीतेगी उस पर आप अलै० को तरस नहीं खाना चाहिये। आप बहरहाल इनकी तरफ़ रसूल बना कर भेजे गये हैं, जब तक ज़िन्दगी है आपको इनके साथ रहना है।

अल्लाह तआला के फ़ैसले के मुताबिक़ बनी इसराइल चालीस बरस तक सहराये सीना में भटकते फिरे। इस दौरान में वह सब लोग मर-खप गये जो जवानी की उम्र में मिस्र से निकले थे और सहरा में एक नयी नस्ल परवान चढ़ी जो खू-ए-गुलामी से मुबर्रा थी। हज़रत मूसा और हारुन अलै० दोनों का इन्तेक़ाल हो गया और इसके बाद हज़रत यूशा बिन नून के अहदे ख़िलाफ़त में बनी इसराइल इस क़ाबिल हुए कि फ़लस्तीन फ़तह कर सकें।

अब ज़रा इस पसमंज़र में सूरतुन्निसा में नाज़िल होने वाले हुक्म को भी याद करें। यहाँ तो हज़रत मूसा अ० का क़ौल नक़ल हुआ है:{لَاۤ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِيْ وَاَخِيْ} लेकिन वहाँ (सूरतुन्निसा, आयत:84 में) हुज़ूर ﷺ से फ़रमाया गया था: {فَقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ} "(ऐ नबी ﷺ) आप अल्लाह की राह में क़िताल कीजिये, आप ﷺ अपने सिवा किसी के ज़िम्मेदार नहीं हैं, अलबत्ता अहले ईमान को भी तरगीब दें।" आप ﷺ पर किसी और की ज़िम्मेदारी नहीं है सिवाय अपनी जान के, अलबत्ता आप ﷺ अहले ईमान को जिस क़दर तरगीब (प्रोत्साहन) व तशवीक़ (प्रेरणा) दिला सकते हैं दिलायें, उनके जज़्बाते ईमानी को जिस-जिस अंदाज़ से अपील करना मुमकिन है करें, और बस इससे ज़्यादा आप ﷺ पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं।

अब पाँचवें रुकूअ में क़त्ले नाहक़, मुल्क में फ़साद फैलाने और चोरी-डाके जैसे जराइम के बारे में इस्लामी नुक़्ता-ए-नज़र और फिर उनकी सज़ाओं का ज़िक्र होगा।

आयात 27 से 34 तक

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَيْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ ۘ اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ ؕ قَالَ لَاَقْتُلَنَّكَ ؕ قَالَ
اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ ﴿٢٧﴾ لَئِنْۢ بَسَطْتَّ اِلَيَّ يَدَكَ لِتَقْتُلَنِيْ مَاۤ اَنَا بِبَاسِطٍ يَّدِيَ اِلَيْكَ لِاَقْتُلَكَ ۚ اِنِّيْۤ اَخَافُ اللّٰهَ
رَبَّ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٢٨﴾ اِنِّيْۤ اُرِيْدُ اَنْ تَبُوْٓاَ بِاِثْمِيْ وَاِثْمِكَ فَتَكُوْنَ مِنْ اَصْحٰبِ النَّارِ ۚ وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا الظّٰلِمِيْنَ ﴿٢٩﴾ فَطَوَّعَتْ لَهٗ
نَفْسُهٗ قَتْلَ اَخِيْهِ فَقَتَلَهٗ فَاَصْبَحَ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿٣٠﴾ فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا يَّبْحَثُ فِي الْاَرْضِ لِيُرِيَهٗ كَيْفَ يُوَارِيْ سَوْءَةَ
اَخِيْهِ ؕ قَالَ يٰوَيْلَتٰۤى اَعَجَزْتُ اَنْ اَكُوْنَ مِثْلَ هٰذَا الْغُرَابِ فَاُوَارِيَ سَوْءَةَ اَخِيْ ۚ فَاَصْبَحَ مِنَ النّٰدِمِيْنَ ﴿٣١﴾ مِنْ اَجْلِ
ذٰلِكَ ۛۚ كَتَبْنَا عَلٰى بَنِيْۤ اِسْرَآءِيْلَ اَنَّهٗ مَنْ قَتَلَ نَفْسًۢا بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِي الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيْعًا ؕ وَمَنْ
اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَاۤ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا ؕ وَلَقَدْ جَآءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ ۫ ثُمَّ اِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ
لَمُسْرِفُوْنَ ﴿٣٢﴾ اِنَّمَا جَزٰٓؤُا الَّذِيْنَ يُحَارِبُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا اَنْ يُّقَتَّلُوْۤا اَوْ يُصَلَّبُوْۤا اَوْ تُقَطَّعَ
اَيْدِيْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ اَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْاَرْضِ ؕ ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْيٌ فِي الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ﴿٣٣﴾
اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ ۚ فَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٣٤﴾

आयत 27

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَيْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ ۘ

"और (ऐ नबी ﷺ) इनको पढ़ कर सुनाइये आदम अलै० के दो बेटों का क़िस्सा हक़ के साथ।"

اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا

"जबकि उन दोनों ने क़ुर्बानी पेश की"

فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ ؕ

"तो उनमें से एक की क़ुर्बानी क़ुबूल कर ली गयी, जबकि दूसरे की क़ुबूल नहीं की गयी।"

आदम अलै० के यह दो बेटे हाबील और क़ाबील थे। हाबील भेड़-बकरियाँ चराता था और क़ाबील काश्तकार था। उन दोनों ने अल्लाह के हुज़ूर क़ुर्बानी दी। हाबील ने कुछ जानवर पेश किये, जबकि क़ाबील ने अनाज नज़्र किया। हाबील की क़ुर्बानी क़ुबूल हो गयी मगर क़ाबील की क़ुबूल नहीं हुई। उस ज़माने में क़ुर्बानी की क़ुबूलियत की अलामत यह होती थी कि आसमान

से एक शोला नीचे उतरता था और वह क़ुर्बानी की चीज़ को जला कर भस्म कर देता था। इसका मतलब यह था कि अल्लाह ने क़ुर्बानी को क़ुबूल फ़रमा लिया।

قَالَ لَاَقْتُلَنَّكَ ؕ

"उसने कहा मैं तुम्हें क़त्ल करके रहूँगा।"

क़ाबील ने, जिसकी क़ुर्बानी क़ुबूल नहीं हुई थी, हसद की आग में जल कर अपने भाई हाबील से कहा कि मैं तुम्हें ज़िन्दा नहीं छोडूँगा।

قَالَ اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ ۝

"उसने जवाब दिया कि अल्लाह तो परहेज़गारों ही से क़ुबूल करता है।"

हाबील ने कहा भाई जान, इसमें मेरा क्या क़ुसूर है? यह तो अल्लाह तआला का क़ायदा है कि वह सिर्फ़ अपने मुत्तक़ी बन्दों की क़ुर्बानी क़ुबूल करता है।

आयत 28

لَىِٕنْۢ بَسَطْتَّ اِلَيَّ يَدَكَ لِتَقْتُلَنِيْ

"अगर आप अपना हाथ चलाएँगे मुझ पर मुझे क़त्ल करने के लिये"

مَاۤ اَنَا بِبَاسِطٍ يَّدِيَ اِلَيْكَ لِاَقْتُلَكَ ۚ

"(तब भी) मैं अपना हाथ नहीं चलाऊँगा आपको क़त्ल करने के लिये।"

यानि अगर ऐसा हुआ तो यह एक तरफ़ा क़त्ल ही होगा।

اِنِّيْۤ اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الْعٰلَمِيْنَ ۝

"मुझे तो अल्लाह का खौफ़ है जो तमाम जहानों का परवरदिगार है।"

आयत 29

اِنِّيْۤ اُرِيْدُ اَنْ تَبُوْٓاَ بِاِثْمِيْ وَاِثْمِكَ

"मैं चाहता हूँ कि मेरा और अपना गुनाह तुम्ही अपने सर लो"

فَتَكُوْنَ مِنْ اَصْحٰبِ النَّارِ ۚ

"तो फिर तुम हो जाओगे जहन्नम वालों में से।"

अगर आप इस इन्तहा तक पहुँच जाएँगे कि मुझे क़त्ल कर ही देंगे तो आप अपने गुनाहों के साथ-साथ मेरी खताओं का बोझ भी अपने सर उठा लेंगे। एक बेगुनाह इन्सान को क़त्ल करने वाला गोया मक़तूल के तमाम गुनाहों का बोझ भी अपने सर उठा लेता है। यानि अगर आप मुझे नाहक़ क़त्ल करेंगे तो मेरे गुनाहों का वबाल भी आपके सर होगा और मेरे लिये तो यह कोई घाटे का सौदा नहीं है। अलबत्ता इस जुर्म की वजह से आप जहन्नमी हो जाएँगे।

وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا الظّٰلِمِيْنَ ۝

"और यही बदला है ज़ालिमों का।"

आयत 30

فَطَوَّعَتْ لَهٗ نَفْسُهٗ قَتْلَ اَخِيْهِ

"बिलआखिर उसके नफ्स ने आमादा कर ही लिया उसे अपने भाई के क़त्ल पर"

इन अल्फ़ाज़ के बैनल सुतूर (between the lines) उसके ज़मीर की कशमकश का मुकम्मल नक़्शा मौजूद है। एक तरफ अल्लाह का खौफ़, नेकी का जज़्बा, खून का रिश्ता और दूसरी तरफ़ शैतानी तरगीब, हसद की आग और नफ्सानी ख्वाहिश की उकसाहट। और फिर बिलआखिर इस अन्दरूनी कशमकश में उसका नफ्स जीत ही गया।

فَقَتَلَهٗ فَاَصۡبَحَ مِنَ الۡخٰسِرِیۡنَ ۞

"तो उसने उसे क़त्ल कर दिया और हो गया तबाह होने वालों में से।"

.

आयत 31

فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا یَّبۡحَثُ فِی الۡاَرۡضِ

"तो अल्लाह ने एक कव्वा भेजा जो ज़मीन कुरेदने लगा"

यह पहला खून था जो नस्ले आदम में हुआ। क़ाबील ने हाबील को क़त्ल तो कर दिया लेकिन अब उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि भाई की लाश का क्या करे, उसे कैसे dispose off करे, तो अल्लाह तआला ने एक कव्वे को भेज दिया जो उसके सामने अपनी चोंच से ज़मीन खोदने लगा।

لِیُرِیَهٗ کَیۡفَ یُوَارِیۡ سَوۡءَۃَ اَخِیۡهِ ؕ

"ताकि (अल्लाह) उसे दिखा दे कि अपने भाई की लाश को कैसे छुपाये।"

कव्वे के ज़मीन खोदने के अमल से उसे समझ आ जाये कि ज़मीन खोद कर लाश को दफ़न किया जा सकता है।

قَالَ یٰوَیۡلَتٰۤی اَعَجَزۡتُ اَنۡ اَکُوۡنَ مِثۡلَ هٰذَا الۡغُرَابِ فَاُوَارِیَ سَوۡءَۃَ اَخِیۡ ۚ

"(यह देखा तो) उसने कहा हाय मेरी शामत! मैं इस कव्वे जैसा भी ना हो सका कि अपने भाई की लाश को छुपा देता।"

अफ़सोस मुझ पर! क्या मेरे अन्दर इस कव्वे जैसी अक़्ल भी ना थी कि यह तरीक़ा मुझे खुद ही सूझ जाता।

فَاَصۡبَحَ مِنَ النّٰدِمِیۡنَ ۞

"फिर वह बहुत पशेमान हुआ।"

इस अहसास पर उसके अन्दर बड़ी शदीद नदामत पैदा हुई।

आयत 32

مِنۡ اَجۡلِ ذٰلِکَ ۚ کَتَبۡنَا عَلٰی بَنِیۡۤ اِسۡرَآءِیۡلَ

"इस वजह से हमने बनी इसराइल पर (तौरात में) यह बात लिख दी थी"

{ مِنۡ اَجۡلِ ذٰلِکَ } वाला फ़िक़रा पिछली आयत के साथ भी पढ़ा जा सकता है और इस आयत के साथ भी, यह दोनों तरफ़ बामायने बन सकता है।

اَنَّهٗ مَنۡ قَتَلَ نَفۡسًۢا بِغَیۡرِ نَفۡسٍ

"कि जिस किसी ने किसी इन्सान को क़त्ल किया बगैर किसी क़त्ल के क़िसास के"

यानि अगर किसी ने क़त्ल किया है और वह उसके क़िसास में क़त्ल किया जाये तो यह क़त्ल नाहक़ नहीं है।

اَوۡ فَسَادٍ فِی الۡاَرۡضِ

"या बगैर ज़मीन में फ़साद फ़ैलाने (के जुर्म की सज़ा) के"

अगर कोई शख्स मुल्क में फ़साद फ़ैलाने का मुजरिम है और उसे इस जुर्म की सज़ा के तौर पर क़त्ल कर दिया जाये तो उसका क़त्ल भी क़त्ले नाहक़ नहीं। लेकिन इन सूरतों के अलावा अगर किसी ने किसी बेक़सूर इन्सान को क़त्ल कर दिया।

فَکَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِیۡعًا ؕ

"गोया उसने तमाम इंसानों को क़त्ल कर दिया।"

उसका यह फ़अल ऐसा ही है जैसे उसने पूरी नौए इंसानी को तहे तेग कर दिया। इसलिये कि उसने क़त्ले नाहक़ से तमद्दुन व मआशरत की जड़ काट डाली। जान व माल का अहतराम ही तो तमद्दुन की जड़ और बुनियाद है।

وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا

"और जिसने उस (किसी एक इन्सान) की जान बचायी तो गोया उसने पूरी नौए इंसानी को ज़िन्दा कर दिया।"

وَلَقَدْ جَاۗءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ

"और उनके पास हमारे रसूल आये थे वाज़ेह निशानियाँ लेकर"

ثُمَّ اِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ لَمُسْرِفُوْنَ ۝۳۲

"लेकिन इसके बावजूद उनमें से बहुत से लोग ज़मीन में ज़्यादतियाँ करते फिर रहे हैं।"

अब "आयते मुहारबा" आ रही है जो इस्लामी क़वानीन के लिहाज़ से बहुत अहम आयत है। मुहारबा यह है कि इस्लामी रियासत में कोई गिरोह फ़ितना व फ़साद मचा रहा है, दहशतगर्दी कर रहा है, ख़ूंरेज़ी और क़त्लो गारत कर रहा है, राहज़नी और डाकाज़नी कर रहा है, गैंग रेप हो रहे हैं। इस आयत में ऐसे लोगों की सज़ा बयान हुई है। लेकिन वाज़ेह रहे कि यह इस्लामी रियासत की बात हो रही है, जहाँ इस्लामी क़ानून नाफ़िज़ हो, जहाँ इस्लाम का पूरा निज़ाम क़ायम हो। वरना अगर निज़ाम ऐसा हो कि झूठी गवाहियाँ देने वाले खुले आम सौदे कर रहे हों, ईमान फ़रोश मौजूद हों, जजों को ख़रीदा जा सकता हो और ऐसे निज़ाम के तहत शरई क़वानीन का निफ़ाज़ कर दिया जाये तो फिर इससे जो नतीजे निकलेंगे उनसे शरीअत उल्टा बदनाम होगी। लिहाज़ा रियासत में हुकूमती निज़ाम और मरवज्जा (प्रचलित) क़वानीन दोनों का दुरुस्त होना लाज़मी है। अगर ऐसा होगा तो यह दोनों एक-दूसरे को मज़बूत व मुस्तहकम करेंगे और इसी सूरत में मतलूबा नताइज की तवक़्क़ो की जा सकती है।

आयत 33

اِنَّمَا جَزٰۗؤُا الَّذِيْنَ يُحَارِبُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

"यही है सज़ा उन लोगों की जो लड़ाई करते हैं अल्लाह और उसके रसूल से"

यानि इस्लामी रियासत की अमलदारी को चैलेंज करते हैं।

وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا

"और ज़मीन में फ़साद फैलाते फिरते हैं"

اَنْ يُّقَتَّلُوْٓا

"कि उन्हें (इबरतनाक तौर पर) क़त्ल किया जाये"

वाज़ेह रहे कि यहाँ फ़अल يُقْتَلُوْا इस्तेमाल नहीं हुआ बल्कि يُّقَتَّلُوْٓا है कि उनके टुकड़े किये जायें।

اَوْ يُصَلَّبُوْٓا

"या उन्हें सूली चढ़ाया जाये"

اَوْ تُقَطَّعَ اَيْدِيْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ

"या उनके हाथ और पाँव मुखालिफ़ सिम्तों में काट दिये जायें"

यानि एक तरफ़ का हाथ और दूसरी तरफ़ का एक पाँव काटा जाये।

اَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْاَرْضِ

"या उन्हें मुल्क बदर कर दिया जाये।"

ذٰلِكَ لَهُمۡ خِزۡیٌ فِی الدُّنۡیَا

“यह तो उनके लिये दुनिया की ज़िन्दगी में रुसवाई है”

وَلَهُمۡ فِی الۡاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِیۡمٌ (٣٣)

“और आख़िरत में उनके लिये (मज़ीद) बहुत बड़ा अज़ाब है।”

आयत 34

اِلَّا الَّذِیۡنَ تَابُوۡا مِنۡ قَبۡلِ اَنۡ تَقۡدِرُوۡا عَلَیۡهِمۡ ۚ

“सिवाय उनके जो तौबा कर लें इससे पहले कि तुम उन पर क़ाबू पाओ।”

यानि पकड़े जाने से पहले ऐसे लोग अगर तौबा कर लें तो उनके लिये रिआयत की गुंजाइश है, लेकिन जब पकड़ लिये गये तो तौबा का दरवाज़ा बंद हो गया।

فَاعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِیۡمٌ (٣٤)

“पस जान लो कि अल्लाह तआला मगफ़िरत फ़रमाने वाला, मेहरबान है।”

हज़रत अली रज़ि० ने ख्वारिज के साथ यही मामला किया था कि अगर तुम अपने ग़लत अक़ीदे को अपने तक रखो तो तुम्हें कुछ नहीं कहा जायेगा, लेकिन अगर तुम खूंरेज़ी करोगे, क़त्लो गारत करोगे तो फिर तुम्हारे साथ रिआयत नहीं की जा सकती।

आयात 35 से 43 तक

یٰۤاَیُّهَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابۡتَغُوۡۤا اِلَیۡهِ الۡوَسِیۡلَةَ وَجَاهِدُوۡا فِیۡ سَبِیۡلِهٖ لَعَلَّكُمۡ تُفۡلِحُوۡنَ (٣٥) اِنَّ الَّذِیۡنَ كَفَرُوۡا لَوۡ
اَنَّ لَهُمۡ مَّا فِی الۡاَرۡضِ جَمِیۡعًا وَّمِثۡلَهٗ مَعَهٗ لِیَفۡتَدُوۡا بِهٖ مِنۡ عَذَابِ یَوۡمِ الۡقِیٰمَةِ مَا تُقُبِّلَ مِنۡهُمۡ ۚ وَلَهُمۡ عَذَابٌ اَلِیۡمٌ
(٣٦) یُرِیۡدُوۡنَ اَنۡ یَّخۡرُجُوۡا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمۡ بِخٰرِجِیۡنَ مِنۡهَا ۫ وَلَهُمۡ عَذَابٌ مُّقِیۡمٌ (٣٧) وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقۡطَعُوۡۤا
اَیۡدِیَهُمَا جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ عَزِیۡزٌ حَكِیۡمٌ (٣٨) فَمَنۡ تَابَ مِنۡۢ بَعۡدِ ظُلۡمِهٖ وَاَصۡلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ یَتُوۡبُ
عَلَیۡهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِیۡمٌ (٣٩) اَلَمۡ تَعۡلَمۡ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلۡكُ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ ؕ یُعَذِّبُ مَنۡ یَّشَآءُ وَیَغۡفِرُ لِمَنۡ
یَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰی كُلِّ شَیۡءٍ قَدِیۡرٌ (٤٠) یٰۤاَیُّهَا الرَّسُوۡلُ لَا یَحۡزُنۡكَ الَّذِیۡنَ یُسَارِعُوۡنَ فِی الۡكُفۡرِ مِنَ الَّذِیۡنَ قَالُوۡۤا اٰمَنَّا
بِاَفۡوَاهِهِمۡ وَلَمۡ تُؤۡمِنۡ قُلُوۡبُهُمۡ ۚۛ وَمِنَ الَّذِیۡنَ هَادُوۡا ۚۛ سَمّٰعُوۡنَ لِلۡكَذِبِ سَمّٰعُوۡنَ لِقَوۡمٍ اٰخَرِیۡنَ ۙ لَمۡ یَاۡتُوۡكَ ؕ یُحَرِّفُوۡنَ
الۡكَلِمَ مِنۡۢ بَعۡدِ مَوَاضِعِهٖ ۚ یَقُوۡلُوۡنَ اِنۡ اُوۡتِیۡتُمۡ هٰذَا فَخُذُوۡهُ وَاِنۡ لَّمۡ تُؤۡتَوۡهُ فَاحۡذَرُوۡا ؕ وَمَنۡ یُّرِدِ اللّٰهُ فِتۡنَتَهٗ فَلَنۡ تَمۡلِكَ
لَهٗ مِنَ اللّٰهِ شَیۡـًٔا ؕ اُولٰٓئِكَ الَّذِیۡنَ لَمۡ یُرِدِ اللّٰهُ اَنۡ یُّطَهِّرَ قُلُوۡبَهُمۡ ؕ لَهُمۡ فِی الدُّنۡیَا خِزۡیٌ ۖۚ وَّلَهُمۡ فِی الۡاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِیۡمٌ
(٤١) سَمّٰعُوۡنَ لِلۡكَذِبِ اَكّٰلُوۡنَ لِلسُّحۡتِ ؕ فَاِنۡ جَآءُوۡكَ فَاحۡكُمۡ بَیۡنَهُمۡ اَوۡ اَعۡرِضۡ عَنۡهُمۡ ۚ وَاِنۡ تُعۡرِضۡ عَنۡهُمۡ فَلَنۡ
یَّضُرُّوۡكَ شَیۡـًٔا ؕ وَاِنۡ حَكَمۡتَ فَاحۡكُمۡ بَیۡنَهُمۡ بِالۡقِسۡطِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ یُحِبُّ الۡمُقۡسِطِیۡنَ (٤٢) وَكَیۡفَ یُحَكِّمُوۡنَكَ وَعِنۡدَهُمُ
التَّوۡرٰىةُ فِیۡهَا حُكۡمُ اللّٰهِ ثُمَّ یَتَوَلَّوۡنَ مِنۡۢ بَعۡدِ ذٰلِكَ ؕ وَمَاۤ اُولٰٓئِكَ بِالۡمُؤۡمِنِیۡنَ (٤٣)

आयत 35

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوْٓا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ

"ऐ अहले ईमान, अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और उसकी जनाब में उसका क़ुर्ब तलाश करो"

यहाँ लफ्ज़ "वसीला" क़बीले गौर है और इस लफ्ज़ ने काफ़ी लोगों को परेशान भी किया है। लफ्ज़ "वसीला" उर्दू में तो "ज़रिया" के मायने में आता है, यानि किसी तक पहुँचे का कोई ज़रिया बना लेना, सिफ़ारिश के लिये किसी को वसीला बना लेना। लेकिन अरबी ज़बान में "वसीले" के मायने हैं "क़ुर्ब"। बाज़ अल्फ़ाज़ ऐसे हैं जिनका अरबी में मफ़हूम कुछ और है जबकि उर्दू में कुछ और है। जैसे लफ्ज़ "ज़लील" है, अरबी में इसके मायने "कमज़ोर" जबकि उर्दू में "कमीने" के हैं। जैसा की हम पढ़ आये हैं: {وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ بِبَدْرٍ وَّاَنْتُمْ اَذِلَّةٌ} (आले इमरान:123) यानि "ऐ मुसलमानों! याद करो अल्लाह ने तुम्हारी मदद की थी बद्र में जबकि तुम बहुत कमज़ोर थे।" अब अगर यहाँ ज़लील का तर्जुमा उर्दू वाला कर दिया जाये तो हमारे ईमान के लाले पड़ जाएँगे। इसी तरह अरबी में "जहल" के मायने जज़्बाती होना है, अनपढ़ होना नहीं। एक पढ़ा लिखा शख्स भी जाहिल यानि जज़्बाती, अक्खड़ मिज़ाज हो सकता है लेकिन उर्दू में जाहिल आलिम का मुतज़ाद (विपरीत) है, यानि जो अनपढ़ हो। इसी तरह का मामला लफ्ज़ "वसीले" का है। इसका असल मफ़हूम "क़ुर्ब" है और यहाँ भी यही मुराद लिया जायेगा। यहाँ इरशाद हुआ है:

"ऐ ईमान वालो, अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और (आगे बढ़ कर) उसका क़ुर्ब तलाश करो"

तक़वा के मायने हैं अल्लाह के ग़ज़ब से, अल्लाह की नाराज़गी से और अल्लाह के अहकाम तोड़ने से बचना। यह एक मनफ़ी मुहर्रिक (इशारा) है, जबकि क़ुर्बे इलाही की तलब एक मुस्बत मुहर्रिक है कि अल्लाह के नज़दीक से नज़दीकतर होते चलो जाओ। लेकिन उसके क़ुर्ब का ज़रिया क्या होगा?

وَجَاهِدُوْا فِيْ سَبِيْلِهٖ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝٣٥

"और उसकी राह में जिहाद करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

इससे बात बिल्कुल वाज़ेह हो गयी कि तक़र्रुब इलल्लाह के लिये जिहाद करो। तक़वा शर्ते लाज़िम है। यानि पहले जो हराम चीज़ें हैं उनसे अपने आप को बचाओ, जिन चीज़ों से रोक दिया गया है उनसे रुक जाओ और अल्लाह की नाफ़रमानी से बाज़ आ जाओ। और फिर उसका तक़र्रुब हासिल करना चाहते हो तो उसकी राह में जद्दो-जहद करो।

आयत 36

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا وَّمِثْلَهٗ مَعَهٗ

"यक़ीनन वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया, अगर उनके पास वह सारी दौलत हो जो कि ज़मीन में है कुल की कुल और उसके साथ उतनी ही और भी हो"

لِيَفْتَدُوْا بِهٖ مِنْ عَذَابِ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ

"(और वह चाहें) कि वह उसके ज़रिये से फ़िदया देकर छूट सकें क़यामत के दिन के अज़ाब से"

مَا تُقُبِّلَ مِنْهُمْ ۚ

"तो उनसे हरगिज़ क़ुबूल नहीं की जायेगी।"

यह हुक्म गोया "तालीक़ बिलमहाल" है कि ना ऐसा मुमकिन है और ना ऐसा होगा। लेकिन बात की सख्ती वाज़ेह करने के लिये यह अंदाज़ा अपनाया गया है और आखरी दर्जे में वज़ाहत कर दी गयी है कि अगर बिलफ़र्ज़ उनके पास इतनी दौलत मौजूद भी हो तब भी अल्लाह के यहाँ उनका फिदया क़ुबूल नहीं होगा।

وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٣٦

"और उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 37

يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمْ بِخٰرِجِيْنَ مِنْهَا ۡ

"वह चाहेंगे कि आग से किसी तरह निकल जायें लेकिन निकल नहीं पाएँगे"

وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝

"और उनके लिये होगा क़ायम रहने वाला अज़ाब।"

यानि उनको मुसलसल दाइम और क़ायम रहने वाला अज़ाब दिया जायेगा।

आयत 38

وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا

"और चोर ख्वाह मर्द हो या औरत, उन दोनों के हाथ काट दो"

यानि चोर का एक हाथ काट दो।

جَزَاۗءًۢ بِمَا كَسَبَا

"यह बदला है उनके करतूत का"

نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ۭ

"और इबरतनाक सज़ा है अल्लाह की तरफ़ से।"

देखिये क़ुरान ख़ुद अपनी हिफ़ाज़त किस तरह करता है और क्यों चैलेंज करता है कि इस कलाम पर बातिल हमलावर नहीं हो सकता किसी भी जानिब से (हा मीम सज्दा:42)। ज़रा मुलाहिज़ा कीजिये इस आयत के ज़िमन में गुलाम अहमद परवेज़ साहब कहते हैं कि यहाँ चोर का हाथ काटने का मतलब है कि ऐसा निज़ाम वज़अ किया जाये जिसमें किसी को चोरी की ज़रूरत ही ना पड़े। यह तो हम भी चाहते हैं कि ऐसा निज़ाम हो, रियासत की तरफ़ से किफ़ालते आम्मा की सहूलत मौजूद हो ताकि कोई शख्स मजबूरन चोरी ना करे, लेकिन "فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا" के अल्फ़ाज़ से जो मतलब परवेज़ साहब ने निकाला है वह बिल्कुल ग़लत है। और अगर फ़र्ज़ कर लें कि ऐसा ही है तो फिर {جَزَاۗءًۢ بِمَا كَسَبَا} (यह बदला है उनकी अपनी कमाई का) की क्या तावील होगी? यानि जो कमाई उन्होंने की है उसका बदला यह है कि एक अच्छा निज़ाम क़ायम कर दिया जाये? इसके बाद फिर {نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ۭ} के अल्फ़ाज़ मज़ीद आये हैं। "نكال" कहते हैं इबरतनाक सज़ा को। तो क्या ऐसे निज़ाम का क़ायम करना अल्लाह की तरफ़ से इबरतनाक सज़ा होगी? अपने देखा क़ुरान के मायने व मफ़हूम की हिफ़ाज़त के लिये भी अल्फ़ाज़ के कैसे-कैसे पहरे बिठाये गये हैं!

दरअसल हुदूद व ताज़ीरात के फ़लसफ़े को समझना बहुत ज़रूरी है और इसके लिये लफ्ज़ "نكال" बहुत अहम है। क़ुरान में ताज़ीरात और हुदूद के सिलसिले में यह अल्फ़ाज़ अक्सर इस्तेमाल हुआ है। यानि अगर सज़ा होगी तो इबरतनाक होगी। इस्लाम में शहादत का क़ानून बहुत सख्त रखा गया है। ज़रा सा शुबह हो तो उसका फ़ायदा मुल्ज़िम को दिया जाता है। इस लिहाज़ से सज़ा का निफ़ाज़ आसान नहीं। लेकिन अगर तमाम मराहिल तय करके जुर्म पूरी तरह साबित हो जाये तो फिर सज़ा ऐसी दी जाये कि एक को सज़ा मिले और लाखों की आँखें खुल जायें ताकि आइन्दा किसी को जुर्म करने की हिम्मत ना हो। यह फ़लसफ़ा है इस्लामी सज़ाओं का। यह दरहक़ीक़त एक तस्दीद (deterrence) है जिसके सबब मआशरे से बुराई का इस्तेसाल (विनाश) करना मुमकिन है। आज अमेरिका जैसे (नाम-निहाद) मज़हब मआशरे में भी आये दिन इन्तहाई घिनौने जराइम हो रहे हैं। इसकी वजह यह है कि अहतसाब और सज़ा का निज़ाम दुरुस्त नहीं। लोग जुर्म करते हैं, सज़ा होती है, जेल जाते हैं, कुछ दिन वहाँ गुज़ारने के बाद, वापस आते हैं, फिर जुर्म करते हैं, फिर जेल चले जाते हैं। जेल क्या है? सरकारी मेहमानदारी है। यही वजह है कि ऐसे मआशरों में जराइम रोज़-ब-रोज़ बढ़ते जा रहे हैं।

وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝

"और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

आयत 39

فَمَنۡ تَابَ مِنۡۢ بَعۡدِ ظُلۡمِهٖ وَاَصۡلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوۡبُ عَلَيۡهِ‌ؕ

"तो जिसने भी तौबा कर ली अपने इस ज़ुल्म के बाद और इस्लाह कर ली तो अल्लाह ज़रूर क़ुबूल करता है उसकी तौबा को।"

اِنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝۳۹

"यक़ीनन अल्लाह गफ़ूर है, रहीम है।"

लेकिन इस तौबा से जुर्म की सज़ा दुनिया में ख़त्म नहीं होगी। यह जुर्म है दुनिया (क़ानून) का और गुनाह है अल्लाह का। जुर्म की सज़ा दुनिया में मिलेगी, गुनाह की सज़ा अल्लाह ने देनी है, अगर तौबा कर ली तो अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा देगा और अगर तौबा नहीं की तो उसकी सज़ा भी मिलेगी।

आयत 40

اَلَمۡ تَعۡلَمۡ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلۡكُ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ‌ؕ

"क्या तुम नहीं जानते हो कि अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन की बादशाही?"

يُعَذِّبُ مَنۡ يَّشَآءُ وَيَغۡفِرُ لِمَنۡ يَّشَآءُ‌ؕ

"वह सज़ा देगा जिसको चाहेगा और बख्श देगा जिसको चाहेगा।"

وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىۡءٍ قَدِيۡرٌ ۝۴۰

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

अब यहाँ फिर ज़िक्र आ रहा है उन लोगों का जो दोगली पालिसी पर कारबंद थे, लेकिन सूरतुल बक़रह की तरह यहाँ भी रुए सुखन क़तईयत (accuracy) के साथ वाज़ेह नहीं किया गया। लिहाज़ा इसका इन्तबाक़ (अनुपालन) मुनाफ़िक़ीन पर भी होगा और अहले किताब पर भी। मुनाफ़िक़ अहले किताब में से भी थे, जिनका मीलान इस्लाम की तरफ़ भी था और चाहते भी थे कि मुसलमानों में शामिल रहें लेकिन वह अपने साथियों को भी छोड़ने पर तैयार नहीं थे। तो यह लोग जो "مُذَبۡذَبِيۡنَ بَيۡنَ ذٰلِكَ" की मिसाल थे, यह दोनों तरफ़ के लोग थे।

आयत 41

يٰۤاَيُّهَا الرَّسُوۡلُ لَا يَحۡزُنۡكَ الَّذِيۡنَ يُسَارِعُوۡنَ فِى الۡكُفۡرِ

"ऐ नबी (ﷺ) यह लोग आपके लिये बाइसे रन्ज ना हों जो कुफ़्र की राह में बहुत भाग-दौड़ कर रहे हैं"

مِنَ الَّذِيۡنَ قَالُوۡۤا اٰمَنَّا بِاَفۡوَاهِهِمۡ وَلَمۡ تُؤۡمِنۡ قُلُوۡبُهُمۡ‌ۛ

"इन लोगों में से जो अपने मुँह से तो कहते हैं कि हम ईमान रखते हैं, मगर उनके दिल ईमान नहीं लाये हैं।"

आप ﷺ इन लोगों की सरगरमियों और भाग-दौड़ से ग़मगीन और रंजीदा खातिर ना हों।

وَمِنَ الَّذِيۡنَ هَادُوۡا‌ ۛۚ

"और इसी तरह के लोग यहूदियों में से भी हैं।"

سَمّٰعُوۡنَ لِلۡكَذِبِ

"यह बड़े ही गौर से सुनते हैं झूठ को"

سَمّٰعُوۡنَ لِقَوۡمٍ اٰخَرِيۡنَ ۙ لَمۡ يَاۡتُوۡكَ‌ؕ

"और यह सुनते हैं कुछ और लोगों की खातिर जो आपके पास नहीं आते"

यानि एक तो यह लोग अपने "शयातीन" की झूठी बातें बड़ी तवज्जो से सुनते हैं, जैसे: {وَاِذَا لَقُوا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قَالُوْٓا اٰمَنَّا ۚ وَاِذَا خَلَوْا اِلٰى شَيٰطِيْنِهِمْ ۙ قَالُوْٓا اِنَّا مَعَكُمْ ۙ اِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِءُوْنَ} सूरतुल बक़रह आयत:14 में फ़रमाया। फिर यह लोग उनकी तरफ़ से जासूस बन कर मुसलमानों के यहाँ आते हैं कि यहाँ से सुन कर उनको रिपोर्ट दे सकें कि आज मुहम्मद (ﷺ) ने यह कहा, आज आप ﷺ की मजलिस में फलाँ मामला हुआ। {سَمّٰعُوْنَ لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۙ} का तर्जुमा दोनों तरह से हो सकता है: "दूसरी क़ौम के लोगों की बातों को बड़ी तवज्जो से सुनते हैं" या "सुनते हैं दूसरी क़ौम के लोगों के लिये" यानि उन्हें रिपोर्ट करने के लिये उनके जासूस की हैसियत से। उनके जो लीडर और शयातीन हैं, वह आप ﷺ के पास ख़ुद नहीं आते और यह जो बैन-बैन के लोग हैं यह आप ﷺ के पास आते हैं और उनके ज़रिये से जासूसी का यह सारा मामला चल रहा है।

يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ مِنْۢ بَعْدِ مَوَاضِعِهٖ ۚ

"वह कलाम को फेर देते हैं उसकी जगह से उसका मौक़ा व महल (जगह) मुअय्यन हो जाने के बाद।"

يَقُوْلُوْنَ اِنْ اُوْتِيْتُمْ هٰذَا فَخُذُوْهُ

"वह कहते हैं अगर तुम्हें यही (फ़ैसला) मिल जाये तो क़ुबूल कर लेना"

وَاِنْ لَّمْ تُؤْتَوْهُ فَاحْذَرُوْا ۭ

"और अगर यह (फ़ैसला) ना मिले तो कन्नी कतरा जाना।"

अहले किताब के सरदारों को अगर किसी मुक़दमे का फ़ैसला मतलूब होता तो अपने लोगों को रसूल अल्लाह ﷺ के पास भेजते और पहले से उन्हें बता देते कि अगर फ़ैसला इस तरह हो तो तुम क़ुबूल कर लेना, वरना रद्द कर देना। वाज़ेह रहे कि मदीना मुनव्वरा में इस्लामी रियासत और पूरे तौर पर एक हमागीर इस्लामी हुकूमत दरअसल फ़तह मक्का के बाद क़ायम हुई और यह सूरते हाल इससे पहले की थी। वरना किसी रियासत में दोहरा अदालती निज़ाम नहीं हो सकता। यही वजह थी कि यह लोग जब चाहते अपने फ़ैसलों के लिये हुज़ूर ﷺ के पास आ जाते और जब चाहते किसी और के पास चले जाते थे। गोया बयक वक़्त दो मुतवाज़ी निज़ाम चल रहे थे। इसी लिये तो वह लोग यह कहने कि जसारत (हिम्मत) करते थे कि यह फ़ैसला हो तो क़ुबूल कर लेना, वरना नहीं।

وَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهٗ فَلَنْ تَمْلِكَ لَهٗ مِنَ اللّٰهِ شَـيْـــًٔا ۭ

"और जिसको अल्लाह ही ने फ़ितने में डालने का इरादा कर लिया हो तो तुम उसके लिये अल्लाह के मुक़ाबले में कुछ भी इख़्तियार नहीं रखते।"

اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ لَمْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يُّطَهِّرَ قُلُوْبَهُمْ ۭ

"यह वह लोग हैं कि जिनके दिलों को अल्लाह ने पाक करना चाहा ही नहीं।"

لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ ښ

"उनके लिये दुनिया में भी रुसवाई है"

وَّلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝۴۱

"और आख़िरत में भी उनके लिये बहुत बड़ा अज़ाब है।"

आयत 42

سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ

"यह ख़ूब सुनने वाले हैं झूठ को"

اَكّٰلُوْنَ لِلسُّحْتِ ۭ

"ख़ूब खाने वाले हैं हराम को।"

فَاِنْ جَاۗءُوْكَ

"फिर अगर यह आप ﷺ के पास (अपना कोई मुक़दमा लेकर) आयें"

فَاحۡكُمۡ بَيۡنَهُمۡ اَوۡ اَعۡرِضۡ عَنۡهُمۡ ۚ

"तो आप ﷺ (को इख़्तियार है) ख्वाह उनके दरमियान फ़ैसला कर दें या उनसे ऐराज़ करें।"

आप ﷺ को यह इख़्तियार दिया जाता है कि आप चाहें तो उनका मुक़दमा सुनें और फ़ैसला कर दें और चाहें तो मुक़दमा लेने ही से इन्कार कर दें, क्योंकि उनकी नीयत दुरुस्त नहीं होती और वह आप ﷺ का फ़ैसला लेने में संजीदा नहीं होते। लिहाज़ा ऐसे लोगों पर अपना वक़्त ज़ाया करने की कोई ज़रूरत नहीं है। लेकिन यह अन्देशा भी था कि वह प्रोपोगंडा करेंगे कि देखो जी हम तो गये थे मुहम्मद (ﷺ) के पास मुक़दमा लेकर, यह कैसे नबी हैं कि मुक़दमे का फ़ैसला करने को ही तैयार नहीं! इस ज़िमन में भी अल्लाह तआला की तरफ़ से हुज़ूर ﷺ को इत्मिनान दिलाया जा रहा है कि आप ﷺ इसकी परवाह ना करें।

وَاِنۡ تُعۡرِضۡ عَنۡهُمۡ فَلَنۡ يَّضُرُّوۡكَ شَيۡـًٔا ؕ

"और अगर आप ﷺ उनसे ऐराज़ करेंगे तो वह आप ﷺ को कोई ज़र्र (नुक़सान) नहीं पहुँचा सकेंगे।"

यानि उनके मुखालफ़ाना प्रोपोगंडे से क़तअन फ़िक्रमन्द होने की ज़रूरत नहीं है।

وَاِنۡ حَكَمۡتَ فَاحۡكُمۡ بَيۡنَهُمۡ بِالۡقِسۡطِ ؕ

"और अगर आप ﷺ फ़ैसला करें तो उनके दरमियान इन्साफ़ के ऐन मुताबिक़ फ़ैसला करें।"

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الۡمُقۡسِطِيۡنَ ۝٤٢

"यक़ीनन अल्लाह तआला इन्साफ़ करने वालों को पसंद करता है।"

आयत 43

وَكَيۡفَ يُحَكِّمُوۡنَكَ

"और (ऐ नबी ﷺ) यह लोग आप ﷺ को कैसे हाकिम बनाते हैं"

وَعِنۡدَهُمُ التَّوۡرٰىةُ

"जबकि इनके पास तौरात मौजूद है"

فِيۡهَا حُكۡمُ اللّٰهِ

"जिसमें अल्लाह का हुक्म मौजूद है"

यहाँ अल्लाह तआला ने यहूद की बदनीयती को बिल्कुल बेनक़ाब कर दिया है कि अगर उनकी नीयत दुरुस्त हो तो तौरात से रहनुमाई हासिल कर लें।

ثُمَّ يَتَوَلَّوۡنَ مِنۡۢ بَعۡدِ ذٰلِكَ ؕ

"फिर भी वह उससे रूगरदानी करते हैं।"

وَمَاۤ اُولٰٓئِكَ بِالۡمُؤۡمِنِيۡنَ ۝٤٣

"और हक़ीक़त में यह लोग मोमिन नहीं हैं।"

असल बात यह है कि यह ईमान से तही दस्त हैं, इनके दिल ईमान से खाली हैं। यह है इनका असल रोग।

आयात 44 से 50 तक

اِنَّاۤ اَنۡزَلۡنَا التَّوۡرٰىةَ فِيۡهَا هُدًى وَّنُوۡرٌ ۚ يَحۡكُمُ بِهَا النَّبِيُّوۡنَ الَّذِيۡنَ اَسۡلَمُوۡا لِلَّذِيۡنَ هَادُوۡا وَالرَّبّٰنِيُّوۡنَ وَالۡاَحۡبَارُ بِمَا
اسۡتُحۡفِظُوۡا مِنۡ كِتٰبِ اللّٰهِ وَكَانُوۡا عَلَيۡهِ شُهَدَآءَ ۚ فَلَا تَخۡشَوُا النَّاسَ وَاخۡشَوۡنِ وَلَا تَشۡتَرُوۡا بِاٰيٰتِىۡ ثَمَنًا قَلِيۡلًا ؕ وَمَنۡ لَّمۡ

يَحۡكُمۡ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓـئِكَ هُمُ الۡكٰفِرُوۡنَ ﴿۴۴﴾ وَكَتَبۡنَا عَلَيۡهِمۡ فِيۡهَاۤ اَنَّ النَّفۡسَ بِالنَّفۡسِ ۙ وَالۡعَيۡنَ بِالۡعَيۡنِ وَالۡاَنۡفَ
بِالۡاَنۡفِ وَالۡاُذُنَ بِالۡاُذُنِ وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ ۙ وَالۡجُرُوۡحَ قِصَاصٌ ؕ فَمَنۡ تَصَدَّقَ بِهٖ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَّهٗ ؕ وَمَنۡ لَّمۡ يَحۡكُمۡ بِمَاۤ اَنۡزَلَ
اللّٰهُ فَاُولٰٓـئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوۡنَ ﴿۴۵﴾ وَقَفَّيۡنَا عَلٰٓى اٰثَارِهِمۡ بِعِيۡسَى ابۡنِ مَرۡيَمَ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيۡنَ يَدَيۡهِ مِنَ التَّوۡرٰٮةِ ۖ وَاٰتَيۡنٰهُ
الۡاِنۡجِيۡلَ فِيۡهِ هُدًى وَّنُوۡرٌ ۙ وَّمُصَدِّقًا لِّمَا بَيۡنَ يَدَيۡهِ مِنَ التَّوۡرٰٮةِ وَهُدًى وَّمَوۡعِظَةً لِّلۡمُتَّقِيۡنَ ﴿۴۶﴾ وَلۡيَحۡكُمۡ اَهۡلُ
الۡاِنۡجِيۡلِ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ فِيۡهِ ؕ وَمَنۡ لَّمۡ يَحۡكُمۡ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓـئِكَ هُمُ الۡفٰسِقُوۡنَ ﴿۴۷﴾ وَاَنۡزَلۡنَاۤ اِلَيۡكَ الۡكِتٰبَ بِالۡحَـقِّ
مُصَدِّقًا لِّمَا بَيۡنَ يَدَيۡهِ مِنَ الۡكِتٰبِ وَمُهَيۡمِنًا عَلَيۡهِ فَاحۡكُمۡ بَيۡنَهُمۡ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعۡ اَهۡوَآءَهُمۡ عَمَّا جَآءَكَ مِنَ
الۡحَـقِّ ؕ لِكُلٍّ جَعَلۡنَا مِنۡكُمۡ شِرۡعَةً وَّمِنۡهَاجًا ؕ وَلَوۡ شَآءَ اللّٰهُ لَجَـعَلَـكُمۡ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰـكِنۡ لِّيَبۡلُوَكُمۡ فِىۡ مَاۤ اٰتٰٮكُمۡ
فَاسۡتَبِقُوا الۡخَـيۡرٰتِ ؕ اِلَى اللّٰهِ مَرۡجِعُكُمۡ جَمِيۡعًا فَيُنَبِّئُكُمۡ بِمَا كُنۡتُمۡ فِيۡهِ تَخۡتَلِفُوۡنَ ﴿۴۸﴾ وَاَنِ احۡكُمۡ بَيۡنَهُمۡ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ
وَلَا تَتَّبِعۡ اَهۡوَآءَهُمۡ وَاحۡذَرۡهُمۡ اَنۡ يَّفۡتِنُوۡكَ عَنۡۢ بَعۡضِ مَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ اِلَيۡكَ ؕ فَاِنۡ تَوَلَّوۡا فَاعۡلَمۡ اَنَّمَا يُرِيۡدُ اللّٰهُ اَنۡ
يُّصِيۡبَهُمۡ بِبَـعۡضِ ذُنُوۡبِهِمۡ ؕ وَاِنَّ كَثِيۡرًا مِّنَ النَّاسِ لَفٰسِقُوۡنَ ﴿۴۹﴾ اَفَحُكۡمَ الۡجَـاهِلِيَّةِ يَبۡغُوۡنَ ؕ وَمَنۡ اَحۡسَنُ مِنَ اللّٰهِ حُكۡمًا
لِّقَوۡمٍ يُّوۡقِنُوۡنَ ﴿۵۰﴾

सूरतुल मायदा का यह सातवाँ रुकूअ हुस्ने इत्तेफ़ाक़ से सात ही आयात पर मुश्तमिल है। इसमें बहुत सख्त तहदीद (प्रतिबन्ध), तम्बीह (चेतावनी) और धमकी है उन लोगों के लिये जो किसी आसमानी शरीअत पर ईमान के दावेदार हों और फिर उसके बजाये किसी और क़ानून के मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगी गुज़ार रहे हों। क़ुरान हकीम की तवील सूरतों में कहीं-कहीं तीन-तीन आयतों के छोटे-छोटे ग्रुप मिलते हैं जो मायने व मफ़हूम के लिहाज़ से बहुत जामेअ होते हैं, जैसा कि सूरह आले इमरान की आयत 102, 103 और 104 हैं। अभी सूरतुल मायदा में भी तीन आयात पर मुश्तमिल निहायत जामेअ अहकामात का हामिल एक मक़ाम आयेगा। इसी तरह कहीं-कहीं सात-सात आयात का मजमुआ भी मिलता है। जैसे सूरतुल बक़रह के पाँचवें रुकूअ की सात आयात (40 से 46) बनी इसराइल से ख़िताब के ज़िमन में निहायत जामेअ हैं। यह दावत के इब्तदाई अंदाज़ पर मुश्तमिल हैं और दावत के बाब में बा-मंज़िला-ए-फ़ातिहा हैं। इसी तरह क़ानूने शरीअत की तन्फीज़, उसकी अहमियत और उससे पहलु तही पर वईद (चेतावनी) के ज़िमन में ज़ेरे मुताअला रुकूअ की सात आयात निहायत ताकीदी और जामेअ हैं, बल्कि यह मक़ाम इस मौज़ू पर क़ुरान हकीम का ज़रवा-ए-सनाम (climax) है।

आयत 44

اِنَّاۤ اَنۡزَلۡنَا التَّوۡرٰٮةَ

"यक़ीनन हमने ही नाज़िल फ़रमायी थी तौरात"

فِيۡهَا هُدًى وَّنُوۡرٌ ۚ

"उसमें हिदायत भी थी और नूर भी था।"

يَحۡكُمُ بِهَا النَّبِيُّوۡنَ

"उसके मुताबिक़ फ़ैसले करते थे अम्बिया"

الَّذِيْنَ اَسْلَمُوْا

"जो कि सब फ़रमाबरदार थे (अल्लाह के)"

ज़ाहिर है कि तमाम अम्बिया किराम अलै० ख़ुद भी अल्लाह तआला के फ़रमाबरदार थे।

لِلَّذِيْنَ هَادُوْا

"(और वह फ़ैसले करते थे) यहूदियों के लिये"

यानि अम्बिया किराम अ० यहूदियों के तमाम फ़ैसले तौरात (शरीअते मूसवी) के मुताबिक़ करते थे, जैसा की हदीस में है ((كَانَتْ بَنُوْ اِسْرَائِيْلَ تَسُوْسُهُمُ الْاَنْبِيَاءُ)) यानि बनी इसराइल की सियासत और हुकूमत के मामलात, इंतेज़ाम व अन्सराम (प्रबंध) अम्बिया के हाथ में होता था। इसलिये वही उनके माबैन नज़ाआत (झगड़ों) के फ़ैसले करते थे।

وَالرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ

"और दरवेश और उलमा"

उनके यहाँ अल्लाह वाले सूफ़िया और उलमा व फ़ुक़हा भी तौरात ही के मुताबिक़ फ़ैसले करते थे।

بِمَا اسْتُحْفِظُوْا مِنْ كِتٰبِ اللّٰهِ

"बसबब इसके कि वह किताबुल्लाह के निगरान बनाये गये थे"

उन्हें ज़िम्मेदारी दी गयी थी कि उन्हें किताबुल्लाह की हिफ़ाज़त करनी है।

وَكَانُوْا عَلَيْهِ شُهَدَآءَ

"और वह उस पर गवाह थे।"

فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ

"(तो उनसे कह दिया गया था कि) तुम लोगों से मत डरो और मुझसे डरो"

وَلَا تَشْتَرُوْا بِاٰيٰتِيْ ثَمَنًا قَلِيْلًا

"और मेरी आयात को हक़ीर सी क़ीमत पर फ़रोख्त ना करो।"

यानि अल्लाह का तय करदा क़ानून मौजूद है, उसके मुताबिक़ फ़ैसले करो। लोगों को पसंद हो या नापसंद, इससे तुम्हारा बिल्कुल कोई सरोकार नहीं होना चाहिये। अब आ रही है वह काँटे वाली बात:

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ﴿٤٤﴾

"और जो अल्लाह की उतारी हुई शरीअत के मुताबिक़ फ़ैसले नहीं करते वही तो काफ़िर हैं।"

बक़ौल अल्लामा इक़बाल:

बुतों से तुझको उम्मीदें, ख़ुदा से नाउम्मिदी
मुझे बता तो सही और काफ़िरी क्या है?

आयत 45

وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيْهَآ

"और हमने लिख दिया था उन पर उस (तौरात) में"

اَنَّ النَّفْسَ بِالنَّفْسِ

"कि जान के बदले जान"

وَالْعَيْنَ بِالْعَيْنِ

"और आँख के बदले आँख"

وَالْاَنْفَ بِالْاَنْفِ	*"और नाक के बदले नाक"*
وَالْاُذُنَ بِالْاُذُنِ	*"और कान के बदले कान"*
وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ	*"और दांत के बदले दांत"*
وَالْجُرُوْحَ قِصَاصٌ	*"और इस तरह ज़ख्मों का बदला भी होगा बराबर।"*
فَمَنْ تَصَدَّقَ بِهٖ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَّهٗ	*"फिर जो कोई उसको माफ़ कर दे तो यह उसके लिये (गुनाहों का) कफ्फ़ारा होगा।"*

किसी ने एक शख्स का कान काट दिया, अब वह जवाबन उसका कान काटने का हक़दार है, लेकिन अगर वह क़िसास नहीं लेता और माफ़ कर देता है तो उसे अपने बहुत से गुनाहों का कफ्फ़ारा बना लेगा। इसका मफ़हूम यह भी हो सकता है कि मुजरिम को जब माफ़ कर दिया जाये तो उसके ज़िम्मे से वह गुनाह धुल गया।

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝45	*"और जो फ़ैसले नहीं करते अल्लाह की उतारी हुई शरीअत के मुताबिक़ वही तो ज़ालिम हैं।"*

और ज़ालिम यहाँ बा-मायने मुशरिक है, क्योंकि अल्लाह तआला ने शिर्क को ज़ुल्मे अज़ीम क़रार दिया है: {اِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظِيْمٌ} (लुक़मान:13) अब देखिये, एक क़ानून अल्लाह का है और एक इंसानों का। फिर इंसानों के भी मुख्तलिफ़ क़वानीन हैं, एक Roman Law है, एक पाकिस्तानी क़ानून है, एक रिवाज पर मब्नी क़ानून है। अब देखना यह है कि आप फ़ैसला किस क़ानून के मुताबिक़ कर रहे हैं? अल्लाह के क़ानून के तहत या किसी और क़ानून के मुताबिक़? अगर आपने अल्लाह के क़ानून के साथ-साथ किसी और क़ानून को भी मान लिया या अल्लाह के क़ानून के मुक़ाबले में किसी और क़ानून को तरजीह दी तो यह शिर्क है।

आयत 46

وَقَفَّيْنَا عَلٰٓي اٰثَارِهِمْ بِعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ	*"और हमने उनके पीछे उन्हीं के नक़्शे क़दम पर ईसा (अलै०) इब्ने मरयम को भेजा"*
مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ	*"(वह आये) तस्दीक़ करते हुए उसकी जो उनके सामने मौजूद था तौरात में से"*
وَاٰتَيْنٰهُ الْاِنْجِيْلَ فِيْهِ هُدًى وَّنُوْرٌ	*"और हमने उन्हें इंजील अता की, उसमें हिदायत भी थी और नूर भी था"*
وَّمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ	*"और वह (इंजील भी) तस्दीक़ कर रही थी उसकी जो तौरात में से उसके सामने मौजूद था"*
وَهُدًى وَّمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِيْنَ ۝46	*"और वह हिदायत (रहनुमाई) और नसीहत थी तक़वा वालों के लिये।"*

आयत 47

وَلْيَحْكُمْ اَهْلُ الْاِنْجِيْلِ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فِيْهِ ۭ

"और चाहिये कि इंजील के मानने वाले फ़ैसला करें उसके मुताबिक़ जो अल्लाह ने उसमें नाज़िल किया है।"

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝

"और जो लोग नहीं फ़ैसला करते अल्लाह के उतारे हुए अहकामात व क़वानीन के मुताबिक़, वही तो फ़ासिक़ हैं।"

वही तो सरकश हैं, वही तो नाफ़रमान हैं, वही तो नाहंजार हैं। गौर कीजिये एक रुकूअ में तीन दफ़ा यह अल्फ़ाज़ दोहराये गये हैं:

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ۝ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝
وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝

इन आयाते क़ुरानिया को सामने रखिये और मिल्लते इस्लामिया की मौजूदा कैफ़ियत का जायज़ा लीजिये कि दुनिया में कितने मुमालिक हैं जहाँ अल्लाह का क़ानून नाफ़िज़ है? आज रुए ज़मीन पर कोई एक भी मुल्क ऐसा नहीं है जहाँ शरीअते इस्लामी पूरे तौर पर नाफ़िज़ हो और इस्लाम का मुकम्मल निज़ाम क़ायम हो। अगरचे हम इन्फ़रादी ऐतबार से मुस्लमान हैं लेकिन हमारे निज़ाम काफ़िराना हैं।

आयत 48

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ

"और (अब ऐ नबी ﷺ) हमने आप पर किताब नाज़िल फ़रमायी हक़ के साथ"

مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ

"जो अपने से पहली किताबों की तस्दीक़ करती है और उन पर निगरान है"

यह किताब तौरात और इंजील की मिस्दाक़ भी है और मुसद्दक़ भी। और इसकी हैसियत कसौटी की है। पहली किताबों के अन्दर जो तहरीफ़ात हो गयी थीं अब उनकी तसहीह (correction) इसके ज़रिये से होगी।

فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ

"तो (आप ﷺ) भी फ़ैसला करें इनके दरमियान इस (क़ानून) के मुताबिक़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया है"

وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَاۗءَهُمْ عَمَّا جَاۗءَكَ مِنَ الْحَقِّ ۭ

"और मत पैरवी करें उनकी ख्वाहिशात की, इस हक़ को छोड़ कर जो आ चुका है आप (ﷺ) के पास।"

لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ۭ

"तुम में से हर एक के लिये हमने एक शरीअत और एक राहे अमल तय कर दी है।"

जहाँ तक शरीअत का ताल्लुक़ है सबको मालूम है कि शरीअते मूसवी (अलै०) शरीअते मुहम्मदी ﷺ से मुख्तलिफ़ थी। मज़ीद बराँ रसूलों के मिन्हाज (तरीक़े कार) में भी फ़र्क़ था। मसलन हज़रत मूसा अलै० के मिन्हाज में हम देखते हैं कि आप (अलै०) एक मुस्लमान उम्मत (बनी इसराइल) के लिये भेजे गये थे। वह उम्मत जोकि दबी हुई थी, पिसी हुई थी, गुलाम थी। उसमें अख्लाक़ी खराबियाँ भी थीं, दीनी ऐतबार से ज़ौफ़ (दोष) भी था, वह आले फ़िरऔन के ज़ुल्म-ओ-सितम का तख़्ता-ए-मश्क़ बनी हुई थी। चुनाँचे हज़रत मूसा अलै० के मक़सदे बेअसत में यह बात भी शामिल थी कि एक बिगड़ी हुई मुस्लमान उम्मत को काफ़िरों के तसल्लुत और गलबे से निजात दिलायें। इसका एक ख़ास तरीक़े कार अल्लाह तआला की तरफ़ से उन्हें बताया गया। हज़रत ईसा अलै० भी एक मुस्लमान उम्मत के लिये मबऊस किये गये, यानि यहूदियों ही की तरफ़। इस क़ौम में नज़रियाती फ़तूर आ चुका था, उनके मआशरे में अख्लाक़ी व रूहानी गिरावट इन्तहा को पहुँच चुकी

थी। उनके उलमा की तवज्जो भी दीन के सिर्फ़ ज़ाहिरी अहकाम और क़ानूनी पहलुओं पर रह गयी थी और वह असल मक़ासिदे दीन को भूल चुके थे। दीन की असल रूह निगाहों से ओझल हो गयी थी। इस सारे बिगाड़ की इस्लाह के लिये हज़रत मसीह अलै० को अल्लाह तआला ने एक ख़ास मन्हज, एक ख़ास तरीक़े कार अता फ़रमाया। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ को उन लोगों में मबऊस किया गया जो मुशरिक थे, अनपढ़ थे, किसी नबी के नाम से नावाक़िफ़ थे सिवाये हज़रत इब्राहीम अलै० के। उनका अहतराम भी वह अपने जद्दे अमजद के तौर पर करते थे, एक नबी के तौर पर नहीं। कोई शरीअत उनमें मौजूद नहीं थी, कोई किताब उनके पास नहीं थी। गोया "ضَلَّ ضَلٰلًا بَعِيْدًا" मुजस्सम तस्वीर! आप ﷺ ने अपनी दावत व तब्लीग के ज़रिये उनमें से सहाबा किराम रज़ि० की एक अज़ीम जमात पैदा की, उन्हें हिज़्बुल्लाह बनाया, और फिर उस जमात को साथ लेकर आप ﷺ ने कुफ़्र, शिर्क और अइम्मा-ए-कुफ़्र के ख़िलाफ़ जिहाद व क़िताल किया, और बिलआख़िर अल्लाह के दीन को उस मआशरे में क़ायम कर दिया। यह मिन्हाज हैं मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का। तो यह मफ़हूम है इस आयत का {لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا} "हमने तुम में से हर एक के लिये एक शरीअत और एक मिन्हाज (तरीक़े कार, मन्हजे अमल) मुक़र्रर किया है।" इस लिहाज़ से यह आयत बहुत अहम है।

وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً

"और अल्लाह चाहता तो तुम सबको एक ही उम्मत बना देता"

وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ اٰتٰىكُمْ

"मगर उसने चाहा कि वह उस चीज़ में तुम्हारी आज़माइश करे जो उसने तुमको अता की"

यानि अल्लाह की हिकमत इसकी मुतक़ाज़ी हुई (अल्लाह ने चाहा) कि जिसको जो-जो कुछ दिया गया है उसके हवाले से उसको आज़माये। चुनाँचे अब हमारे लिये असल उसवा ना तो हज़रत मूसा अलै० हैं और ना ही हज़रत ईसा अलै०, बल्कि {لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِيْ رَسُوْلِ اللّٰهِ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ} (अहज़ाब:21) के मिस्दाक़ हमारे लिये उसवा हैं तो सिर्फ़ मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की ज़ाते मुबारका है। हज़रत ईसा अलै० ने अगर शादी नहीं की तो यह हमारे लिये उसवा नहीं है। हमें तो हुज़ूर ﷺ के फ़रमान को पेशे नज़र रखना है, जिन्होंने फ़रमाया: ((اَلنِّكَاحُ مِنْ سُنَّتِيْ)) और फिर फ़रमाया: ((فَمَنْ رَغِبَ عَنْ سُنَّتِيْ فَلَيْسَ مِنِّيْ))। तो वाक़िया यह है कि तमाम अम्बिया अल्लाह ही की तरफ़ से मबऊस थे, और हर एक के लिये जो भी तरीक़ा अल्लाह तआला ने मुनासिब समझा वह उनको अता किया, अलबत्ता हमारे लिये क़ाबिले तक़लीद मिन्हाजे नबवी ﷺ है। अब हम पर फ़र्ज़ है कि इस मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ का गहरा शऊर हासिल करें, फिर इस रास्ते पर उसी तरह चलें जिस तरह हुज़ूर ﷺ चले। जिस तरह आप ﷺ ने दीन को क़ायम किया, ग़ालिब किया, एक निज़ाम बरपा किया, फिर उस निज़ाम के तहत अल्लाह का क़ानून नाफ़िज़ किया, उसी तरह हम भी अल्लाह के दीन को क़ायम करने की कोशिश करें।

فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ

"तो तुम नेकियों में एक-दूसरे से आगे निकलने की कोशिश करो।"

اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا

"अल्लाह ही की तरफ़ तुम सबका लौटना है"

فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۝٤٨

"तो वह तुम्हें जितला देगा उन चीज़ों के बारे में जिनमें तुम इख़्तिलाफ़ करते रहे थे।"

आयत 49

وَاَنِ احْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ

"और फ़ैसले कीजिये उनके माबैन उस (शरीअत) के मुताबिक़ जोकि अल्लाह ने उतारी है"

وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ

"और उनकी ख्वाहिशात की पैरवी ना कीजिये"

आज हमारा क्या हाल है? हम किन लोगों की ख्वाहिशात की पैरवी कर रहे हैं? आज हम अहकामे इलाही को पसे-पुश्त डाल कर अपने सियासी पेशवाओं की ख्वाहिशात की पैरवी कर रहे हैं। वह जो चाहते हैं क़ानून बना देते हैं, जो चाहते हैं फ़ैसला कर देते हैं और पूरी क़ौम उसकी पाबन्द होती है। हम इस जाल से इसी सूरत में निकल सकते हैं कि एक ज़बरदस्त जमात बनायें, ताक़त पैदा करें, एक भरपूर तहरीक उठायें, क़ुर्बानियाँ दें, जानें लड़ायें ताकि यह मौजूदा निज़ाम तब्दील हो, अल्लाह का दीन क़ायम हो, और फिर उस दीन के मुताबिक़ हमारे फ़ैसले हों। यहाँ हुज़ूर ﷺ को एक बार फिर से ताकीद की जा रही है कि आप ﷺ उनकी ख्वाहिशात की पैरवी मत कीजिये और अल्लाह के अहकाम के मुताबिक़ फ़ैसले कीजिये।

وَاحْذَرْهُمْ اَنْ يَّفْتِنُوْكَ عَنْۢ بَعْضِ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ اِلَيْكَ

"और उनसे होशियार रहिये, ऐसा ना हो कि यह लोग आपको उनमें से किसी चीज़ से बिचला दें जो अल्लाह ने आप पर नाज़िल की हैं।"

यानि हर तरफ़ से दबाव आयेगा, लेकिन आप ﷺ को साबित क़दमी से खड़े रहना है उस शरीअत पर जो अल्लाह तआला ने आप ﷺ पर नाज़िल फ़रमायी है।

فَاِنْ تَوَلَّوْا

"फिर अगर वह रुगरदानी करें"

اَنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّصِيْبَهُمْ بِبَعْضِ ذُنُوْبِهِمْ

"तो जान लीजिये कि अल्लाह तआला उन्हें उनके बाज़ गुनाहों की सज़ा देना चाहता है।"

यह दरअसल लरज़ा देने वाला मक़ाम है। अगर हम अपने इस मुल्क के अन्दर इस्लाम को क़ायम नहीं करते और हमारी सारी कोशिशों के बावजूद दीन नाफ़िज़ नहीं हो रहा तो इसका मतलब यह है कि अल्लाह के अज़ाब का कोई कोड़ा मुक़द्दर हो चुका है। वाज़ेह अल्फ़ाज़ में फ़रमाया जा रहा है कि अगर वह अल्लाह के अहकामात से मुँह मोड़ें, शरीअत के फ़ैसलों का इन्कार करें तो जान लो कि अल्लाह तआला दरहक़ीक़त उनके गुनाहों की पादाश में उन पर अज़ाब नाज़िल करना चाहता है और {اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيْدٌ} (अल बुरूज:12) के मिस्दाक़ उन्हें कोई सज़ा देना चाहता है।

وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ لَفٰسِقُوْنَ ۝٤٩

"और इसमें तो कोई शक ही नहीं है कि लोगों में से अक्सर फ़ासिक़ (नाफ़रमान) हैं।"

आयत 50

اَفَحُكْمَ الْجَاهِلِيَّةِ يَبْغُوْنَ

"तो क्या यह जाहिलियत के फ़ैसले चाहते हैं?"

जाहिलियत से मुराद हुज़ूर ﷺ की बेअसत से पहले का दौर है। यानि क्या क़ानूने इलाही नाज़िल हो जाने के बाद भी यह लोग जाहिलियत के दस्तूर, अपनी रिवायात और अपनी रसुमात पर अमल करना चाहते हैं? जैसा कि हिन्दुस्तान में मुस्लमान ज़मींदार अँगरेज़ की अदालत में खड़े होकर कह देते थे कि हमें अपनी विरासत के मुक़द्दमात में शरीअत का फ़ैसला नहीं चाहिये बल्कि रिवाज का फ़ैसला चाहिये।

وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ حُكْمًا لِّقَوْمٍ يُّوْقِنُوْنَ ۝٥٠

"और अल्लाह के हुक्म (और फ़ैसले) से बेहतर किसका हुक्म हो सकता है उन लोगों के लिये जो यक़ीन रखने वाले हैं।"

अल्लाह तआला हमें उस यक़ीन और ईमाने हक़ीक़ी की दौलत से सरफ़राज़ फ़रमाये। (आमीन)

आयात 51 से 56 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُوْدَ وَالنَّصٰرٰۤى اَوْلِيَآءَ ۘؕ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ؕ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ؕ اِنَّ
اللّٰهَ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿٥١﴾ فَتَرَى الَّذِيْنَ فِىْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا
دَآئِرَةٌ ؕ فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِىَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ فَيُصْبِحُوْا عَلٰى مَاۤ اَسَرُّوْا فِىْۤ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ﴿٥٢﴾ وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْۤا اَهٰۤؤُلَآءِ الَّذِيْنَ اَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ ۙ اِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ ؕ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فَاَصْبَحُوْا خٰسِرِيْنَ ﴿٥٣﴾ يٰۤاَيُّهَا
الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَاْتِى اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُّحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗۤ ۙ اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَى
الْكٰفِرِيْنَ ۫ يُجَاهِدُوْنَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ ؕ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٥٤﴾
اِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رٰكِعُوْنَ ﴿٥٥﴾ وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ
وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ ﴿٥٦﴾

आयत 51

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُوْدَ وَالنَّصٰرٰۤى اَوْلِيَآءَ

"ऐ ईमान वालो! यहूद व नसारा को अपना दिली दोस्त (हिमायती और पुश्त पनाह) ना बनाओ।"

بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ؕ

"वह आपस में एक-दूसरे के दोस्त हैं।"

उनमें से बाज़, बाज़ के पुश्तपनाह और मददगार हैं। यह दरहक़ीक़त एक पेशनगोई थी जो इस दौर में आकर पूरी हुई है। जब क़ुरान नाज़िल हुआ तो सूरते हाल वह थी जो हम क़ब्ल अज़ (इस सूरत की आयत 14 में) पढ़ आये हैं: {فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ؕ} "पस हमने उनके माबैन अदावत और बुग्ज़ की आग भड़का दी रोज़े क़यामत तक के लिये।" चुनाँचे ईसाईयों और यहूदियों के माबैन हमेशा शदीद दुश्मनी रही है और आपस में कश्त व खून होता रहा है, लेकिन ज़ेरे नज़र अल्फ़ाज़ {بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ؕ} में जो पेशनगोई थी वह बीसवीं सदी में आकर पूरी हुई है। बाल्फोर्ड डिक्लेरेशन (1917 ई०) के बाद की सूरते हाल में उनका बाहमी गठजोड़ शुरू हुआ, जिसके नतीजे में ब्रितानिया और अमेरिका के ज़ेरे असर इसराइल की हुकूमत क़ायम हुई, और अब भी अगर वह क़ायम है तो असल में उन्हीं ईसाई मुल्कों की पुश्तपनाही की वजह से क़ायम है। ईसाई अब यहूदियों की इसलिये पुश्तपनाही कर रहे हैं कि उनकी सारी मईशत यहूदी बैंकारों के ज़ेरे तसल्लुत है। ईसाईयों की मईशत पर यहूदियों के क़ब्ज़े की वजह से यहूद व नसारा का यह गठजोड़ इस दर्जा मुस्तहकम हो चुका है कि आज ईसाईयों की पूरी अस्करी (Military) ताक़त यहूदियों की पुश्त पर है।

وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ؕ

"और तुम में से जो कोई उनसे दिली दोस्ती रखेगा तो वह उन्हीं में से होगा।"

यानि जो कोई उनसे दोस्ती के मुआहिदे करेगा, उनसे नुसरत व हिमायत का तलबगार होगा, हमारी निगाहों में वह यहूदी या नसरानी शुमार होगा।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿٥١﴾

"यक़ीनन अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को हिदायत नहीं देता।"

आज हमारे अक्सर मुस्लमान मुमालिक की पोलिसियाँ क्या हैं और इस सिलसिले में क़ुरान का फ़तवा क्या है, वह आपके सामने है।

आयत 52

فَتَرَى الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ

"तो तुम देखते हो उन लोगों को जिनके दिलों में रोग है"

يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ

"वह उन्हीं के अन्दर घुसने की कोशिश करते रहते हैं"

फलाँ मुल्क से दोस्ती का मुआहिदा, फलाँ से मदद की दरख्वास्त, फलाँ से हिमायत की तवक्क़ो, उनकी सारी भाग-दौड़, तगो दो (कोशिशें), खारजा पालिसी "يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ" की अमली तस्वीर है। इसलिये कि उनके दिलों में रोग यानि निफ़ाक़ है। अगर अल्लाह पर ईमान हो, ऐतमाद और यक़ीन हो, उससे ख़ुलूस और इख्लास का रिश्ता हो तो फिर उसी से नुसरत व हिमायत की उम्मीद हो और {اِنْ تَنْصُرُوا اللّٰهَ يَنْصُرْكُمْ} (सूरह मुहम्मद:7) के वादे पर यक़ीन हो!

يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا دَاۗىِٕرَةٌ ۭ

"वह कहते हैं हमें अन्देशा है कि हम गर्दिशे ज़माना (और किसी मुसीबत के चक्कर) में ना फँस जायें।"

यानि हम यहूद व नसारा से इसलिये ताल्लुक़ात अस्तवार (मज़बूत) कर रहे हैं कि कल फ़लां किसी नागहानी आफ़त से बच सकें।

فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ

"तो बहुत मुमकिन है अल्लाह तआला जल्द ही फ़तह ले आये या अपने पास से कोई और फ़ैसला सादिर फ़रमा दे"

فَيُصْبِحُوْا عَلٰي مَآ اَسَرُّوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ۝52

"तो फिर जो कुछ वह अपने दिलों में छुपाये हुए हैं उस पर उन्हें नादिम होना पड़े।"

उन्हें मालूम हो जायेगा कि जिनकी दोस्ती का सहारा उन्होंने अपने ज़अम (दावे) में ले रखा था वही उन्हें धोखा दे रहे हैं, *जिन पर तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे!*

आयत 53

وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَهٰٓؤُلَاۗءِ الَّذِيْنَ اَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ
جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ ۙ اِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ ۭ

"और (उस वक़्त) अहले ईमान कहेंगे क्या यह वही लोग हैं जो अल्लाह की क़समें खा-खा कर कहते थे कि वह तो तुम्हारे साथ हैं।"

حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فَاَصْبَحُوْا خٰسِرِيْنَ ۝53

"उनके तमाम आमाल अकारत (waste) हो जाएँगे और वह ख़सारे वाले बन कर रह जाएँगे।"

अब जो तीन आयतें आ रही हैं इनमें उन अहले ईमान का ज़िक्र है जो पूरे ख़ुलूस व इख्लास के साथ अल्लाह के रास्ते में जद्दो-जहद कर रहे हैं। अल्लाह तआला हम सबको भी तौफ़ीक़ दे कि कमर हिम्मते कस कर अल्लाह के दीन को ग़ालिब करने के लिये उठ खड़े हों। और अल्लाह तआला हमारे दिलों में यह अहसास पैदा फ़रमा दे कि उसकी शरीअत को नाफ़िज़ करना है और अल् काफ़िरून, अज्ज़ालिमून और अल् फ़ासिक़ून (अल् मायदा:44, 45 और 47) की सफ़ों से बाहर निकलना हैं। इस तरह की जद्दो-जहद में मेहनत करना पड़ती है, मुश्किलात बर्दाश्त करना पड़ती हैं, तकालीफ़ सहना पड़ती हैं। ऐसे हालात में बाज़ अवक़ात इन्सान के क़दम लड़खड़ाने लगते हैं और अज़्म (वादे) व हिम्मत में कुछ कमज़ोरी आने लगती है। ऐसे मौक़े पर इस राह के मुसाफ़िरों की एक ख़ास ज़हनी और नफ्सियाती कैफ़ियत होती है। इस हवाले से यह तीन आयात निहायत अहम और जामेअ हैं।

आयत 54

يَاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا مَنۡ يَّرۡتَدَّ مِنۡكُمۡ عَنۡ دِيۡنِهٖ

"ऐ ईमान वालो! जो कोई भी फिर गया तुम में से अपने दीन से"

فَسَوۡفَ يَاۡتِى اللّٰهُ بِقَوۡمٍ

"तो अल्लाह (को कोई परवाह नहीं, वह) अनक़रीब (तुम्हें हटा कर) एक ऐसी क़ौम को ले आयेगा"

يُّحِبُّهُمۡ وَيُحِبُّوۡنَهٗۤ

"जिन्हें अल्लाह महबूब रखेगा और वह उसे महबूब रखेंगे"

اَذِلَّةٍ عَلَى الۡمُؤۡمِنِيۡنَ

"वह अहले ईमान के हक़ में बहुत नरम होंगे"

اَعِزَّةٍ عَلَى الۡكٰفِرِيۡنَ

"काफ़िरों पर बहुत भारी होंगे"

يُجَاهِدُوۡنَ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ

"अल्लाह की राह में जिहाद करेंगे"

وَلَا يَخَافُوۡنَ لَوۡمَةَ لَاۤئِمٍ‌

"और किसी मलामत करने वाले की मलामत का कोई खौफ़ नहीं करेंगे।"

यहाँ पर जो लफ्ज़ "يَّرۡتَدَّ" आया है उसके मफ़हूम में एक तो क़ानूनी और ज़ाहिरी इरतदाद (apostasy) है। जैसे एक शख्स इस्लाम को छोड़ कर काफ़िर हो जाये, यहूदी या नसरानी हो जाये। यह तो बहुत वाज़ेह क़ानूनी इरतदाद है, लेकिन एक बातिनी इरतदाद भी है, यानि उलटे पाँव फिरने लगना, पसपाई इख़्तियार कर लेना। ऊपर इस्लाम का लिबादा तो ज्यों का त्यों है, लेकिन फ़र्क़ यह वाक़ेअ हो गया है कि पहले गलबा-ए-दीन की जद्दो-जहद में लगे हुए थे, मेहनतें कर रहे थे, वक़्त लगा रहे थे, ईसार (त्याग) कर रहे थे, इन्फ़ाक़ कर रहे थे, भाग-दौड़ कर रहे थे, और अब कोई आज़माइश आयी है तो ठिठक कर खड़े रह गये हैं। जैसे सूरतुल बक़रह (आयत:20) में इरशाद है: {كُلَّمَاۤ اَضَاۤءَ لَهُمۡ مَّشَوۡا فِيۡهِ ۙ وَاِذَاۤ اَظۡلَمَ عَلَيۡهِمۡ قَامُوۡا} "जब ज़रा सी रोशनी होती है उन पर तो उसमें कुछ चल लेते हैं और जब उन पर अँधेरा छा जाता है तो खड़े हो जाते हैं।" अब कैफ़ियत यह है कि ना सिर्फ़ खड़े रह गये हैं बल्कि कुछ पीछे हट रहे हैं। ऐसी कैफ़ियत के बारे में फ़रमाया गया कि तुम यह ना समझो कि अल्लाह तुम्हारा मोहताज है, बल्कि तुम अल्लाह के मोहताज हो। तुम्हें अपनी निजात के लिये अपने इस फ़र्ज़ को अदा करना है। अगर तुमने पसपाई इख़्तियार की तो अल्लाह तआला तुम्हें हटायेगा और किसी दूसरी क़ौम को ले आयेगा, किसी और के हाथ में अपने दीन का झंडा थमा देगा।

यहाँ पर मोमिनीन सादिक़ीन के औसाफ़ के ज़िमन में जो तीन जोड़े आये हैं उन पर ज़रा दोबारा गौर करें:

يُّحِبُّهُمۡ وَيُحِبُّوۡنَهٗۤ

(1) "अल्लाह उनसे मोहब्बत करेगा और वह अल्लाह से मोहब्बत करेंगे।(اللھم اجعلنا منھم)"

اَذِلَّةٍ عَلَى الۡمُؤۡمِنِيۡنَ اَعِزَّةٍ عَلَى الۡكٰفِرِيۡنَ

(2)काफ़िरों पर बहुत ,वह अहले ईमान के हक़ में बहुत नरम होंगे" "सख्त होंगे।

यही मज़मून सूरह फ़तह में दूसरे अंदाज़ से आया है: {اَشِدَّآءُ عَلَى الۡكُفَّارِ رُحَمَآءُ بَيۡنَهُمۡ} (आयत:29) "आपस में बहुत रहीम व शफ़ीक़, कुफ्फ़ार पर बहुत सख्त।" बक़ौले इक़बाल:

हो हल्क़ा-ए-याराँ तो बा-रेशम की तरह नर्म
रज़्मे हक़-ओ-बातिल हो तो फ़ौलाद है मोमिन!

(3) "अल्लाह की राह में जिहाद करेंगे और किसी मलामत करने वाले की मलामत का कोई खौफ़ नहीं करेंगे।"

يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ ۭ

उनके रिश्तेदार उनको समझाएँगे, दोस्त अहबाब नसीहतें करेंगे कि क्या हो गया है तुम्हें? दिमाग ख़राब हो गया है तुम्हारा? तुम fanatic हो गये हो? तुम्हें औलाद का ख्याल नहीं, अपने मुस्तक़बिल की फ़िक्र नहीं! मगर यह लोग किसी की कोई परवाह नहीं करेंगे, बस अपनी ही धुन में मगन होंगे। और उनकी कैफ़ियत यह होगी:

वापस नहीं फेरा कोई फ़रमान जूनून का
तन्हा नहीं लौटी कभी आवाज़ जर्स की
खैरियते जाँ, राहते तन, सेहते दामां
सब भूल गयीं मसलहतें अहले हवस की
इस राह में जो सब पे गुज़रती है सो गुज़री
तन्हा पसे ज़िन्दां, कभी रुसवा सरे बाज़ार
कड़के हैं बहुत शेख़ सरगोशा-ए-मिम्बर
गरजे हैं बहुत अहले हुक्म बर सरे दरबार
छोड़ा नहीं गैरों ने कोई नावके दशनाम
छूटी नहीं अपनों से कोई तर्ज़े मलामत
इस इश्क़, ना उस इश्क़ पे नादिम है मगर दिल
हर दाग है इस दिल में बजुज़ दागे नदामत!

यह एक किरदार है जिसको वाज़ेह करने के लिये दो-दो औसाफ़ के यह तीन जोड़े आये हैं। इनको अच्छी तरह ज़हननशीन कर लें और अल्लाह तआला से दुआ माँगे कि वह हमें इस किरदार को अमलन इख़्तियार करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये।

"यह अल्लाह का फ़ज़ल है, जिसको चाहे अता करता है, और अल्लाह बहुत वुसअत रखने वाला, सब कुछ जानने वाला है।"

ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝٥٤

अल्लाह के खज़ानों में कमी नहीं है। अगर तुम अपने भाइयों, अज़ीज़ों, दोस्तों, साथियों और रफ़ीक़ों को देखते हो कि उन पर अल्लाह का बड़ा फ़ज़ल हुआ है, उन्होंने कैसे-कैसे मरहले सर कर लिये हैं, कैसी-कैसी बाज़ियाँ जीत लीं हैं, तो तुम भी अल्लाह से उसका फ़ज़ल तलब करो। अल्लाह तुम्हें भी हिम्मत देगा। इसलिये कि इस दीन के काम में इस क़िस्म का रश्क़ बहुत पसंदीदा है। जैसे हज़रत उमर रज़ि० को रश्क़ आया हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० पर। जब ग़ज़वा-ए-तबूक के लिये रसूल अल्लाह ﷺ ने अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने का हुक्म दिया तो आप (रज़ि०) ने सोचा कि आज तो मैं अबु बक्र रज़ि० से बाज़ी ले जाऊँगा, क्योंकि इत्तेफ़ाक़ से इस वक़्त मेरे पास खासा माल है। चुनाँचे उन्हों (रज़ि०) ने अपने पूरे माल के दो बराबर हिस्से किये, और पूरा एक हिस्सा यानि आधा माल लाकर हुज़ूर ﷺ के क़दमों में डाल दिया। लेकिन हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० के घर में जो कुछ था वह सब ले आये। यह देख कर हज़रत उमर रज़ि० ने कहा मैंने जान लिया कि अबु बक्र रज़ि० से आगे कोई नहीं बढ़ सकता। तो दीन के मामले में अल्लाह का हुक्म है: {فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ۭ} (अल् मायदा:48) यानि नेकियों में, खैर में, भलाई में एक-दूसरे से आगे निकलने की कोशिश में रहो!

अब फिर अहले ईमान को दोस्ताना ताल्लुक़ात के मैयार के बारे में ख़बरदार किया जा रहा है। अहले ईमान की दिली दोस्ती कुफ्फ़ार से, यहूद हनूद और नसारा से मुमकिन ही नहीं, इसलिये कि यह ईमान के मनाफ़ी है। अगर दीन की गैरत व हमियत होगी, अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की मोहब्बत दिल में होगी तो उनके दुश्मनों से दिली दोस्ती हो ही नहीं सकती।

आयत 55

اِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوا

"तुम्हारे वली तो असल में बस अल्लाह, उसका रसूल (ﷺ) और अहले ईमान हैं"

तुम्हारे दोस्त, पुश्तपनाह, हिमायती, मौतमद (secretary) और राज़दार तो बस अल्लाह, उसका रसूल ﷺ और अहले ईमान हैं। और यह अहले ईमान भी पैदाइशी और क़ानूनी मुस्लमान नहीं, बल्कि:

الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رٰكِعُوْنَ ۝۵۵

"जो नमाज़ क़ायम रखते हैं और ज़कात देते हैं झुक कर।"

यहाँ "وَهُمْ رٰكِعُوْنَ" का मतलब "वह रुकूअ करते हैं" सही नहीं है। यह दरहक़ीक़त ज़कात देने की कैफ़ियत है कि वह ज़कात अदा करते हैं फ़रवतनी (विनम्रता) करते हुए। हम सूरतुल बक़रह में पढ़ आये हैं कि सबसे बढ़ कर इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह के मुस्तहिक़ कौन लोग हैं: {لِلْفُقَرَاۗءِ الَّذِيْنَ اُحْصِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ....} (आयत:273) जो अल्लाह के दीन के लिये हमावक़्त और हमातन मसरूफ़ हैं और उनके पास अब अपनी मआशी जद्दो-जहद के लिये वक़्त नहीं है। लेकिन वह फ़क़ीर तो नहीं कि आपसे झुक कर माँगे, यह तो आपको झुक कर, फ़रवतनी करते हुए उनकी मदद करना होगी। आप उन्हें दें और वह क़ुबूल कर लें तो आपको उनका ममनूने अहसान होना चाहिये।

आयत 56

وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا

"और जो कोई दोस्ती क़ायम करेगा अल्लाह, उसके रसूल (ﷺ) और ईमान वालों के साथ"

यूँ समझ लें कि यहाँ यह फ़िक़रा महज़ूफ़ है: "तो वह शामिल हो जायेगा हिज़बुल्लाह (अल्लाह की पार्टी) में।"

فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ ۝۵۶

"पस सुन लो कि हिज़बुल्लाह ही ग़ालिब रहने वाली है।"

यह शराइत पहले पूरी की जायें, इन तमाम मैयारात पर पूरा उतरा जाये, अल्लाह तआला के वादे पर ईमान रखा जाये, तो फिर यक़ीनन हिज़बुल्लाह ही ग़ालिब रहेगी।

आयात 57 से 66 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَكُمْ هُزُوًا وَّلَعِبًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَالْكُفَّارَ
اَوْلِيَاۗءَ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝۵۷ وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوْهَا هُزُوًا وَّلَعِبًا ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا
يَعْقِلُوْنَ ۝۵۸ قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ هَلْ تَنْقِمُوْنَ مِنَّآ اِلَّآ اَنْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ ۙ وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ
فٰسِقُوْنَ ۝۵۹ قُلْ هَلْ اُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكَ مَثُوْبَةً عِنْدَ اللّٰهِ ۭ مَنْ لَّعَنَهُ اللّٰهُ وَغَضِبَ عَلَيْهِ وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ
وَالْخَنَازِيْرَ وَعَبَدَ الطَّاغُوْتَ ۭ اُولٰۗىِٕكَ شَرٌّ مَّكَانًا وَّاَضَلُّ عَنْ سَوَاۗءِ السَّبِيْلِ ۝۶۰ وَاِذَا جَاۗءُوْكُمْ قَالُوْٓا اٰمَنَّا وَقَدْ دَّخَلُوْا
بِالْكُفْرِ وَهُمْ قَدْ خَرَجُوْا بِهٖ ۭ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا كَانُوْا يَكْتُمُوْنَ ۝۶۱ وَتَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يُسَارِعُوْنَ فِي الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ
وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝۶۲ لَوْلَا يَنْهٰىهُمُ الرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ

السُّحۡتَ ؕ لَبِئۡسَ مَا كَانُوۡا يَصۡنَعُوۡنَ ﴿۶۳﴾ وَقَالَتِ الۡيَهُوۡدُ يَدُ اللّٰهِ مَغۡلُوۡلَةٌ ؕ غُلَّتۡ اَيۡدِيۡهِمۡ وَلُعِنُوۡا بِمَا قَالُوۡا ۘ بَلۡ يَدٰهُ
مَبۡسُوۡطَتٰنِ ۙ يُنۡفِقُ كَيۡفَ يَشَآءُ ؕ وَلَيَزِيۡدَنَّ كَثِيۡرًا مِّنۡهُمۡ مَّاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡكَ مِنۡ رَّبِّكَ طُغۡيَانًا وَّكُفۡرًا ؕ وَاَلۡقَيۡنَا بَيۡنَهُمُ
الۡعَدَاوَةَ وَالۡبَغۡضَآءَ اِلٰى يَوۡمِ الۡقِيٰمَةِ ؕ كُلَّمَاۤ اَوۡقَدُوۡا نَارًا لِّلۡحَرۡبِ اَطۡفَاَهَا اللّٰهُ ۙ وَيَسۡعَوۡنَ فِى الۡاَرۡضِ فَسَادًا ؕ وَاللّٰهُ لَا
يُحِبُّ الۡمُفۡسِدِيۡنَ ﴿۶۴﴾ وَلَوۡ اَنَّ اَهۡلَ الۡكِتٰبِ اٰمَنُوۡا وَاتَّقَوۡا لَـكَفَّرۡنَا عَنۡهُمۡ سَيِّاٰتِهِمۡ وَلَاَدۡخَلۡنٰهُمۡ جَنّٰتِ النَّعِيۡمِ ﴿۶۵﴾
وَلَوۡ اَنَّهُمۡ اَقَامُوا التَّوۡرٰىةَ وَالۡاِنۡجِيۡلَ وَمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡهِمۡ مِّنۡ رَّبِّهِمۡ لَاَكَلُوۡا مِنۡ فَوۡقِهِمۡ وَمِنۡ تَحۡتِ اَرۡجُلِهِمۡ ؕ مِنۡهُمۡ اُمَّةٌ
مُّقۡتَصِدَةٌ ؕ وَكَثِيۡرٌ مِّنۡهُمۡ سَآءَ مَا يَعۡمَلُوۡنَ ﴿۶۶﴾

आयत 57

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَتَّخِذُوا الَّذِيۡنَ اتَّخَذُوۡا دِيۡنَكُمۡ هُزُوًا وَّلَعِبًا مِّنَ الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡكِتٰبَ مِنۡ قَبۡلِكُمۡ وَالۡكُفَّارَ اَوۡلِيَآءَ ۚ

"ऐ अहले ईमान, उन लोगों को अपना दोस्त ना बनाओ जिन्होंने तुम्हारे दीन को हँसी-मज़ाक और खेल बना रखा है उन लोगों में से जिन्हें किताब दी गयी थी तुमसे पहले और दूसरे काफ़िरों में से भी।"

फिर वही बात फ़रमायी गयी कि मुशरिकीन और अहले किताब में से किसी को अपना वली और दोस्त ना बनाओ।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنۡ كُنۡتُمۡ مُّؤۡمِنِيۡنَ ﴿۵۷﴾

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो अगर तुम मोमिन हो।"

आयत 58

وَاِذَا نَادَيۡتُمۡ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوۡهَا هُزُوًا وَّلَعِبًا ؕ

"और जब तुम नमाज़ के लिये पुकारते हो तो यह लोग उसको मज़ाक और खेल बना लेते हैं।"

यानि अज़ान की आवाज़ सुन कर उसकी नक़लें उतारते हैं और तमस्खुर करते हैं।

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمۡ قَوۡمٌ لَّا يَعۡقِلُوۡنَ ﴿۵۸﴾

"यह इस वजह से कि यह लोग अक़्ल से आरी (खाली) हैं।"

आयत 59

قُلۡ يٰۤاَهۡلَ الۡكِتٰبِ

"(ऐ नबी ﷺ) इनसे कहिये कि ऐ किताब वालो"

هَلۡ تَنۡقِمُوۡنَ مِنَّاۤ

"तुम किस बात का इन्तेक़ाम ले रहे हो हमसे?"

اِلَّاۤ اَنۡ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ

"सिवाय इसके कि हम ईमान लाये हैं अल्लाह पर"

وَمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡنَا

"और (उस पर) जो हम पर नाज़िल किया गया"

وَمَآ اُنۡزِلَ مِنۡ قَبۡلُ ۙ

"और (उस पर भी) जो पहले नाज़िल किया गया"

وَاَنَّ اَكۡثَرَكُمۡ فٰسِقُوۡنَ ۝٥٩

"और हक़ीक़त यह है कि तुम्हारी अक्सरियत नाफ़रमानों पर मुश्तमिल है।"

आयत 60

قُلۡ هَلۡ اُنَبِّئُكُمۡ بِشَرٍّ مِّنۡ ذٰلِكَ مَثُوۡبَةً عِنۡدَ اللّٰهِ ؕ

"आप (ﷺ) कहिये क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि अल्लाह यहाँ इससे भी बदतर सज़ा पाने वाले कौन हैं?"

مَنۡ لَّعَنَهُ اللّٰهُ

"(वह लोग हैं) जिन पर अल्लाह ने लानत की"

وَغَضِبَ عَلَيۡهِ

"और जिन पर वह ग़ज़बनाक हुआ"

وَجَعَلَ مِنۡهُمُ الۡقِرَدَةَ وَالۡخَنَازِيۡرَ

"और जिनमें से उसने बन्दर और खंज़ीर बना दिये"

وَعَبَدَ الطَّاغُوۡتَ ؕ

"और जिन्होंने शैतान की बन्दगी की।"

اُولٰٓـئِكَ شَرٌّ مَّكَانًا وَّاَضَلُّ عَنۡ سَوَآءِ السَّبِيۡلِ ۝٦٠

"यह सबके सब बहुत बुरे मुक़ाम में हैं और बहुत ज़्यादा भटके हुए हैं सीधे रास्ते से।"

आयत 61

وَاِذَا جَآءُوۡكُمۡ قَالُوۡۤا اٰمَنَّا

"और जब वह तुम्हारे पास आते हैं तो कहते हैं हम ईमान ले आये"

وَقَدۡ دَّخَلُوۡا بِالۡكُفۡرِ وَهُمۡ قَدۡ خَرَجُوۡا بِهٖ ؕ

"हालाँकि वह दाख़िल भी हुए थे कुफ़्र के साथ और निकले भी हैं कुफ़्र के साथ।"

मेरे नज़दीक यह उन लोगों की तरफ़ इशारा है जिनका ज़िक्र सूरह आले इमरान (आयत 72) में आया है, जिन्होंने फ़ैसला किया था कि सुबह को ईमान लाओ और शाम को काफ़िर हो जाओ। उनके बारे में यहाँ फ़रमाया जा रहा है कि वह कुफ़्र के साथ दाख़िल हुए थे और कुफ़्र के साथ ही निकले हैं, एक लम्हे के लिये भी उन्हें ईमान की हलावत नसीब नहीं हुई। वह शऊरी तौर पर फ़ैसला कर चुके थे कि रहना तो हमें अपने दीन पर है, लेकिन इस्लाम की जो साख बन गयी है उसको नुक़सान पहुँचाने की खातिर हम यह धोखा और साज़िश कर रहे हैं।

وَاللّٰهُ اَعۡلَمُ بِمَا كَانُوۡا يَكۡتُمُوۡنَ ۝٦١

"और अल्लाह खूब जानता है जो वह छुपाये हुए थे।"

आयत 62

وَتَرٰى كَثِيۡرًا مِّنۡهُمۡ يُسَارِعُوۡنَ فِى الۡاِثۡمِ وَالۡعُدۡوَانِ

"और तुम देखोगे उनमें से अक्सर को कि बहुत भाग-दौड़ करते हैं गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती (के कामों) में"

وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ؕ

"और हराम के माल खाने में।"

لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۶۲﴾

"बहुत ही बुरा अमल है जो वह कर रहे हैं!"

आयत 63

لَوْلَا يَنْهٰىهُمُ الرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ؕ

"क्यों नहीं मना करते उन्हें उनके दरवेश (सूफ़ी और पीरो मुरशिद) और उलमा व फ़ुक़हा गुनाह की बात कहने से और हरामखोरी से?"

आज हमारे यहाँ भी अक्सर व बेशतर पीर अपने मुरीदों को हरामखोरी से मना नहीं करते। उन्हें उसमें से नज़राने मिल जाने चाहियें, अल्लाह-अल्लाह खैर सल्ला। कहाँ से खाया? कैसे खाया? इससे कोई बहस नहीं। हालाँकि अल्लाह वालों का काम तो बुराई से रोकना है, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर का फ़रीज़ा सरअंजाम देना है।

لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ﴿۶۳﴾

"बहुत बुरा है वह काम जो वह कर रहे हैं।"

आयत 64

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ يَدُ اللّٰهِ مَغْلُوْلَةٌ ؕ

"और यहूद ने कहा कि अल्लाह का हाथ बंद हो गया।"

उनके इस क़ौल का मतलब यह था कि अल्लाह की रहमत जो हमारे लिये थी वह बंद हो गयी है, नबुवत की रहमत हमारे लिये मुख्तस (allocated) थी और अब यह दस्ते रहमत हमारी तरफ़ से बंद हो गया है। या इसका मफ़हूम यह भी हो सकता है जो मुनाफ़िक़ीन कहा करते थे कि अल्लाह हमसे क़र्ज़े हसना माँगता है तो गोया अल्लाह फ़क़ीर हो गया है (नाउज़ु बिल्लाह) और हम अग़निया (धनी) हैं। जवाब में फ़रमाया गया:

غُلَّتْ اَيْدِيْهِمْ

"उनके हाथ बंध गये हैं" या "बंध जायें उनके हाथ"

وَلُعِنُوْا بِمَا قَالُوْا ۘ

"और उन पर लानत है उसके सबब जो उन्होंने कहा"

بَلْ يَدٰهُ مَبْسُوْطَتٰنِ ۙ

"बल्कि अल्लाह के दोनों हाथ तो खुले हुए हैं"

يُنْفِقُ كَيْفَ يَشَآءُ ؕ

"वह जैसे चाहे खर्च करता है।"

وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ؕ

"और यक़ीनन इज़ाफ़ा करेगा उनमें से अक्सर को सरकशी और कुफ़्र में जो कुछ (ऐ नबी ﷺ) नाज़िल किया गया है आप ﷺ पर आप ﷺ के रब की तरफ़ से।"

यानि ज़िद में आकर उन्होंने हक़ व सदाक़त पर मब्नी इस कलाम की मुखालफ़त शुरू कर दी है। मज़ीद बराँ अल्लाह तआला की तरफ़ से जैसे-जैसे जो-जो अहसानात भी आप ﷺ पर और आप ﷺ के साथियों पर हो रहे हैं, अल्लाह तआला मुसलमानों को जो ग़नीमतें दे रहा है, दीन को रफ़्ता-रफ़्ता जो गलबा हासिल हो रहा है, उसके हसद के नतीजे में उनकी

ज़िद और हठधर्मी बढ़ती जा रही है। सुलह हुदैबिया के बाद तो ख़ास तौर पर अरब के अन्दर बहुत तेज़ी के साथ सूरते हाल बदलनी शुरू हो गयी थी। इसके नतीजे में बजाये इसके कि यह लोग समझ जाते कि वाक़ई यह अल्लाह की तरफ़ से हक़ है और यकसू होकर इसका साथ देते, उनके अन्दर की जलन और हसद की आग मज़ीद भड़क उठी।

وَاَلْقَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ

"और हमने उनके माबैन क़यामत तक के लिये दुश्मनी और बुग्ज़ डाल दिया है।"

كُلَّمَآ اَوْقَدُوْا نَارًا لِّلْحَرْبِ اَطْفَاَهَا اللّٰهُ

"जब कभी यह आग भड़काते हैं जंग के लिये अल्लाह उसको बुझा देता है"

जंग की आग भड़काने के लिये यहूदी अक्सर साज़िशें करते रहते थे। ख़ास तौर पर ग़ज़वा-ए-अहज़ाब तो उन्हीं की साज़िशों के नतीजे में बरपा हुआ था। मदीने के यहूदी क़बाइले अरब के पास जा-जाकर, इधर-उधर वफ़द भेज कर लोगों को जमा करते थे कि आओ तुम बाहर से हमला करो, हम अन्दर से तुम्हारी मदद करेंगे। उनकी इन्हीं साज़िशों के बारे में फ़रमाया जा रहा है कि जब भी वह जंग की आग भड़काते हैं अल्लाह तआला उसे बुझा देता है।

وَيَسْعَوْنَ فِى الْاَرْضِ فَسَادًا

"और (फिर भी) यह ज़मीन में फ़साद मचाने के लिये भाग-दौड़ करते रहते हैं।"

وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ ﴿٦٤﴾

"और अल्लाह ऐसे मुफ़सिदों को पसंद नहीं करता।"

आयत 65

وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْكِتٰبِ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا

"अगर अहले किताब ईमान ले आते और तक़वा की रविश इख़्तियार करते"

لَكَفَّرْنَا عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ

"तो हम उनसे उनकी बुराईयों को दूर कर देते"

وَلَاَدْخَلْنٰهُمْ جَنّٰتِ النَّعِيْمِ ﴿٦٥﴾

"और हम लाज़िमन उन्हें दाख़िल करते नेअमतों वाले बागों में।"

जो आयत आगे आ रही है उस पर गौर कीजिये और उसे ख़ुद पर भी मुन्तबिक़ करके ज़रा सोचिये।

आयत 66

وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ مِّنْ رَّبِّهِمْ

"और अगर इन्होंने क़ायम किया होता तौरात को और इन्जील को और उसको जो कुछ नाज़िल किया गया था इन पर इनके रब की तरफ़ से"

لَاَكَلُوْا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ

"तो यह खाते अपने ऊपर से भी और अपने क़दमों के नीचे से भी।"

यानि हमने इन्हें तौरात इसलिये दी थी कि उसके अहकामात को नाफ़िज़ किया जाये। इसी सूरत के सातवें रुकूअ (आयत 44 से 50) में इसका मुफ़स्सल ज़िक्र हम पढ़ आये हैं कि किस तरह उन्हें हुक्म दिया गया था कि अपने फ़ैसले तौरात के अहकामात के मुताबिक़ करो। उससे अगला मरहला उस पूरे निज़ाम के निफ़ाज़ का था जो तौरात ने दिया था। इसी तरह हम पर भी फ़र्ज़ है कि हमने क़ुरान के निज़ाम को क़ायम करना है। उसके बारे में फ़रमाया जा रहा है, कि अगर उन्होंने

अल्लाह का वह निज़ाम क़ायम किया होता तो उनके ऊपर से भी उनके रब की तरफ़ से नेअमतों की बारिश होती, और उनके क़दमों के नीचे से भी अल्लाह तआला की नेअमतों के धारे फूटते।

مِنْهُمْ اُمَّةٌ مُّقْتَصِدَةٌ

"उनमें कुछ लोग हैं जो दरमियानी (यानि सीधी) राह पर हैं।"

وَكَثِيْرٌ مِّنْهُمْ سَاۗءَ مَا يَعْمَلُوْنَ ﴿۶۶﴾

"लेकिन उनमें अक्सरियत उन लोगों की है जो बहुत बुरी हरकतें कर रहे हैं।"

उनका अमल और रवैय्या निहायत गलत है।

आयात 67 से 77 तक

يٰٓاَيُّهَا الرَّسُوْلُ بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۭ وَاِنْ لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهٗ ۭ وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا
يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۶۷﴾ قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَسْتُمْ عَلٰي شَيْءٍ حَتّٰي تُقِيْمُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ
رَّبِّكُمْ ۭ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۚ فَلَا تَاْسَ عَلَي الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۶۸﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـُٔوْنَ وَالنَّصٰرٰى مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ
يَحْزَنُوْنَ ﴿۶۹﴾ لَقَدْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ وَاَرْسَلْنَآ اِلَيْهِمْ رُسُلًا ۭ كُلَّمَا جَاۗءَهُمْ رَسُوْلٌۢ بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُهُمْ ۙ
فَرِيْقًا كَذَّبُوْا وَفَرِيْقًا يَّقْتُلُوْنَ ﴿۷۰﴾ وَحَسِبُوْٓا اَلَّا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ فَعَمُوْا وَصَمُّوْا ثُمَّ تَابَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ ثُمَّ عَمُوْا وَصَمُّوْا كَثِيْرٌ
مِّنْهُمْ ۭ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ﴿۷۱﴾ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۭ وَقَالَ الْمَسِيْحُ يٰبَنِيْٓ
اِسْرَاۗءِيْلَ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ ۭ اِنَّهٗ مَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ وَمَاْوٰىهُ النَّارُ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ
اَنْصَارٍ ﴿۷۲﴾ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلٰثَةٍ ۘ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّآ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۭ وَاِنْ لَّمْ يَنْتَهُوْا عَمَّا يَقُوْلُوْنَ لَيَمَسَّنَّ
الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿۷۳﴾ اَفَلَا يَتُوْبُوْنَ اِلَى اللّٰهِ وَيَسْتَغْفِرُوْنَهٗ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿۷۴﴾ مَا الْمَسِيْحُ ابْنُ
مَرْيَمَ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ وَاُمُّهٗ صِدِّيْقَةٌ ۭ كَانَا يَاْكُلٰنِ الطَّعَامَ ۭ اُنْظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ الْاٰيٰتِ ثُمَّ
انْظُرْ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ﴿۷۵﴾ قُلْ اَتَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَّلَا نَفْعًا ۭ وَاللّٰهُ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ﴿۷۶﴾ قُلْ
يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ وَلَا تَتَّبِعُوْٓا اَهْوَاۗءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوْا مِنْ قَبْلُ وَاَضَلُّوْا كَثِيْرًا وَّضَلُّوْا عَنْ
سَوَاۗءِ السَّبِيْلِ ﴿۷۷﴾

आयत 67

يٰٓاَيُّهَا الرَّسُوْلُ بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۭ

"ऐ रसूल (ﷺ) पहुँचा दीजिये जो कुछ नाज़िल किया गया है आप ﷺ की तरफ़ आप ﷺ के रब की जानिब से।"

وَاِنْ لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهٗ ۭ

"और अगर (बिलफ़र्ज़) आप ﷺ ने ऐसा ना किया तो गोया आप ﷺ ने उसकी रिसालत का हक़ अदा नहीं किया।"

अपने मज़मून के ऐतबार से यह बहुत सख्त आयत है। इससे यह भी पता चलता है कि अगर वही में कहीं रसूल अल्लाह ﷺ पर तनक़ीद नाज़िल हुई है तो वह भी क़ुरान में ज्यों की त्यों मौजूद है। ऐसा हरगिज़ नहीं कि ऐसी चीज़ों को छुपा लिया गया हो। तीसवें पारे में सूरतुल अबस की इब्तदाई आयात {عَبَسَ وَتَوَلّٰٓى} {اَنۡ جَآءَهُ الۡاَعۡمٰى} भी वैसे ही मौजूद हैं जैसे नाज़िल हुई थीं। सूरह आले इमरान में भी हम पढ़ कर आये हैं कि हुज़ूर ﷺ को मुख़ातिब करके फ़रमाया गया: {لَيۡسَ لَكَ مِنَ الۡاَمۡرِ شَىۡءٌ....} (आयत:128)। इस तरह की आयात अपनी जगह पर मन व अन मौजूद हैं, और यह क़ुरान के महफ़ूज़ मिनल्लाह होने पर हुज्जत हैं। आयत ज़ेरे नज़र में तम्बीह की जा रही है कि वही-ए-इलाही में से कोई चीज़ किसी वजह से पहुँचने से रह ना जाये। लोगों के खौफ़ से या अपनी किसी मसलहत की वजह से बिलफ़र्ज़ अगर ऐसा हुआ तो गोया आप ﷺ फ़रीज़ा-ए-रिसालत की अदायगी में कोताही का सबूत देंगे। "اَلۡعَبۡدُ عَبۡدٌ وَاِنۡ تَرَقّٰى، وَالرَّبُّ رَبٌّ وَاِنۡ تَنَزَّلَ!"

وَاللّٰهُ يَعۡصِمُكَ مِنَ النَّاسِ

"और अल्लाह आप ﷺ की हिफ़ाज़त करेगा लोगों से।"

आपको लोगों से डरने की कोई ज़रूरत नहीं।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهۡدِى الۡقَوۡمَ الۡكٰفِرِيۡنَ ﴿٦٧﴾

"यक़ीनन अल्लाह काफ़िरों को राहयाब नहीं करता।"

आयत 68

قُلۡ يٰۤاَهۡلَ الۡكِتٰبِ لَسۡتُمۡ عَلٰى شَىۡءٍ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये: ऐ किताब वालों तुम किसी चीज़ पर नहीं हो"

तुम्हारी कोई हैसियत नहीं है, कोई मक़ाम नहीं है, कोई जड़ बुनियाद नहीं है, तुम हमसे हमकलाम होने के मुस्तहिक़ (हक़दार) नहीं हो।

حَتّٰى تُقِيۡمُوا التَّوۡرٰىةَ وَالۡاِنۡجِيۡلَ وَمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡكُمۡ مِّنۡ رَّبِّكُمۡ

"जब तक तुम क़ायम ना करो तौरात और इन्जील को और जो कुछ नाज़िल किया गया है तुम पर तुम्हारे रब की तरफ़ से।"

अब अपने लिये इस आयत को आप इस तरह पढ़ लीजिये: {يٰۤاَهۡلَ الۡقُرۡاٰنِ لَسۡتُمۡ عَلٰى شَىۡءٍ حَتّٰى تُقِيۡمُوا الۡقُرۡاٰنَ وَمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡكُمۡ مِّنۡ رَّبِّكُمۡ} "ऐ क़ुरान के मानने वालो! तुम्हारी कोई हैसियत नहीं..... तुम समझते हो कि हम उम्मते मुस्लिमा हैं, अल्लाह वाले हैं, अल्लाह के लाड़ले और प्यारे हैं, अल्लाह के रसूल ﷺ के उम्मती हैं। लेकिन तुम देख रहे हो कि ज़िल्लत व ख्वारी तुम्हारा मुक़द्दर बनी हुई है, हर तरफ़ से तुम पर यलगार है, इज़्ज़त व वक़ार नाम की कोई शय (चीज़) तुम्हारे पास नहीं रही। तुम कितनी ही तादाद में क्यों ना हो, दुनिया में तुम्हारी कोई हैसियत नहीं, और इससे भी ज़्यादा बेतौक़ीरी (बेईज्ज़त होने) के लिये भी तैयार रहो। "तुम्हारी कोई असल नहीं जब तक तुम क़ायम ना करो क़ुरान को और उसके साथ जो कुछ मज़ीद तुम पर तुम्हारे रब की तरफ़ से नाज़िल हुआ है।" क़ुरान वही-ए-जली है। इसके अलावा हुज़ूर ﷺ को वही-ए-ख़फ़ी के ज़रिये से भी तो अहकामात मिलते थे और सुन्नते रसूल ﷺ वही-ए-ख़फ़ी का ज़हूर ही तो है। तो जब तक तुम किताब व सुन्नत का निज़ाम क़ायम नहीं करते, तुम्हारी कोई हैसियत नहीं। यह भी याद रहे कि "या अहलल क़ुरान" का ख़िताब ख़ुद हुज़ूर ﷺ ने हमें दिया है। मेरे किताबचे "मुसलमानों पर क़ुरान मजीद के हुक़ूक़" में यह हदीस मौजूद है जिसमें हुज़ूर ﷺ से यह अल्फ़ाज़ नक़ल हुए हैं:

يَا اَهۡلَ الۡقُرۡاٰنِ لَا تَتَوَسَّدُوا الۡقُرۡاٰنَ، وَاتۡلُوۡهُ حَقَّ تِلَاوَتِهٖ مِنۡ اٰنَاءِ اللَّيۡلِ وَالنَّهَارِ، وَاَفۡشُوۡهُ وَتَغَنَّوۡهُ وَتَدَبَّرُوۡا مَا فِيۡهِ لَعَلَّكُمۡ تُفۡلِحُوۡنَ

"ऐ अहले क़ुरान, क़ुरान को अपना तकिया ना बना लेना, बल्कि इसे पढ़ा करो रात के अवक़ात में भी और दिन के अवक़ात में भी, जैसा कि इसके पढ़ने का हक़ है, और इसे आम करो और ख़ुश अलहानी से पढ़ो और इसमें तदब्बुर करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّ كُفْرًا ۚ

"लेकिन (ऐ नबी ﷺ) जो कुछ आप ﷺ पर नाज़िल किया गया है आप ﷺ के रब की तरफ़ से यह उनके अक्सर लोगों की सरकशी और कुफ़्र में यक़ीनन इज़ाफ़ा करेगा।"

उनकी सरकशी और तुग्यानी में और इज़ाफ़ा होगा, उनकी मुखालफ़त और बढ़ती चली जायेगी, हसद की आग में वह मज़ीद जलते चले जाएँगे।

فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٦٨﴾

"तो आप ﷺ उन काफ़िरों के बारे में अफ़सोस ना करें।"

नबी चूँकि अपनी उम्मत के हक़ में निहायत रहीम व शफ़ीक़ होता है लिहाज़ा वह लोगों पर अज़ाब को पसंद नहीं करता और क़ौम पर अज़ाब के तसव्वुर से उसे सदमा होता है। फिर ख़ुसूसन जब वह अपनी बिरादरी भी हो, जैसा कि बनी इस्माइल अलै० थे, तो यह रन्ज व सदमा दो चंद हो जाता है। चुनाँचे जब उनके बारे में सूरह युनुस और सूरह हूद में अज़ाब की ख़बरें आ रही थीं तो आप ﷺ बहुत फ़िक्रमन्द और ग़मगीन हुए और आप ﷺ के बालों में एकदम सफ़ेदी आ गयी। इस पर हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने पूछा, हुज़ूर ﷺ क्या हुआ? आप ﷺ पर बुढ़ापा तारी हो गया? तो आप ﷺ ने फ़रमाया: ((شَيَّبَتْنِيْ هُوْدٌ وَاَخَوَاتُهَا)) "मुझे सूरह हूद और उसकी बहनों (हम मज़मून सूरतों) ने बूढ़ा कर दिया है।" क्योंकि इन सूरतों का अंदाज़ ऐसा है कि जैसे अब मोहलत ख़त्म हुई चाहती है और अज़ाब का धारा फूटने ही वाला है।

आयत 69

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـُٔوْنَ وَالنَّصٰرٰى

"बेशक वह लोग जो ईमान लाये, और वह लोग जो यहूदी, साबी और नसारा (ईसाई) हुए"

इस आयत में तक़रीबन वही मज़मून है जो इससे पहले सूरतुल बक़रह के आठवें रुकूअ (आयत 62) में आ चुका है, जिससे बाज़ लोगों को धोखा होता है कि शायद निजात के लिये ईमान बिल रिसालत की ज़रूरत नहीं है, हालाँकि सूरतुन्निसा (आयत 150, 151 और 152) में अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के माबैन तफ़रीक़ करने वालों के लिये बहुत वाज़ेह अंदाज़ में फ़रमाया गया है: {اُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا ۚ} "वही लोग तो पक्के काफ़िर हैं।" दूसरी बात यहाँ ज़हन में यह रखिये कि इन तमाम सूरतों में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान लाने की दावत क़दम-क़दम पर है, बार-बार है, लिहाज़ा इससे इस्तगना (स्वतंत्रता) का कोई जवाज़ (कारण) रहता ही नहीं, सिवाय इसके कि किसी की नीयत में फ़साद हो और दिल में कजी पैदा हो चुकी हो।

مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿٦٩﴾

"(अपने-अपने ज़माने में जिस क़ौम और जिस गिरोह से) जो कोई ईमान लाया अल्लाह पर और यौमे आख़िरत पर और उसने अच्छे अमल किये तो उन पर ना कोई खौफ़ होगा और ना वह ग़म से दो-चार होंगे।"

यहाँ वह तमाम लोग मुराद हैं जो अपने-अपने दौर में अल्लाह और आख़िरत पर ईमान व यक़ीन रखते थे और अपने वक़्त के नबी और गुज़िश्ता अम्बिया पर ईमान रखते थे। जैसे हज़रत मसीह अलै० से माक़ब्ल ज़माने में यहूदी थे, जो किताबुल्लाह तौरात पर यक़ीन रखते थे, हज़रत मूसा अलै० को मानते थे, दूसरे नबियों को मानते थे और नेक अमल करते थे। लेकिन अमल के मामले में असल चीज़ और असल बुनियाद अल्लाह की रज़ाजोई और आख़िरत की जज़ा तलबी है, जिससे कोई अमल, अमले सालेह बनता है।

आयत 70

لَقَدۡ اَخَذۡنَا مِیۡثَاقَ بَنِیۡۤ اِسۡرَآءِیۡلَ وَ اَرۡسَلۡنَاۤ اِلَیۡہِمۡ رُسُلًا ؕ

"हमने बनी इसराइल से अहद लिया और उनकी तरफ़ बहुत से रसूल भेजे।"

यहाँ बहुत से रसूल भेजने से मुराद है बहुत से अम्बिया भेजे। जैसा कि मैं पहले अर्ज़ कर चुका हूँ, क़ुरान मजीद में रसूल का लफ्ज़ नबी की जगह इस्तेमाल हुआ है, अलबत्ता जहाँ तक लफ्ज़ रसूल के इस्तलाही मफ़हूम का ताल्लुक़ है तो हज़रत मूसा अलै० के बाद बनी इसराइल में रसूल सिर्फ़ एक आये हैं यानि हज़रत ईसा अलै०, बाक़ी सब नबी थे।

كُلَّمَا جَآءَہُمۡ رَسُوۡلٌۢ بِمَا لَا تَہۡوٰۤی اَنۡفُسُہُمۡ ۙ

"(लेकिन) जब भी कभी उनके पास कोई रसूल लेकर आया वह चीज़ जो उनकी ख्वाहिशाते नफ्स के ख़िलाफ़ थी"

فَرِیۡقًا کَذَّبُوۡا وَ فَرِیۡقًا یَّقۡتُلُوۡنَ ﴿۷۰﴾

"तो एक गिरोह को उन्होंने झुठलाया और एक गिरोह को क़त्ल करते रहे।"

आयत 71

وَ حَسِبُوۡۤا اَلَّا تَکُوۡنَ فِتۡنَۃٌ

"और उन्होंने समझा कि उन पर कोई पकड़ नहीं आयेगी"

कोई अक़ूबत नहीं होगी, हम पर कोई सरज़निश नहीं होगी।

فَعَمُوۡا وَ صَمُّوۡا

"तो वह बहरे भी हो गये, अंधे भी हो गये"

ثُمَّ تَابَ اللّٰہُ عَلَیۡہِمۡ

"फिर अल्लाह ने उन्हें माफ़ कर दिया"

अल्लाह तआला ने भी उन्हें फ़ौरन नहीं पकड़ा। उन्हें तौबा की मोहलत दी, मौक़ा दिया।

ثُمَّ عَمُوۡا وَ صَمُّوۡا کَثِیۡرٌ مِّنۡہُمۡ ؕ

"(नतीजा यह हुआ कि) फिर उनमें से अक्सर लोग और ज़्यादा अंधे और बहरे हो गये।"

बजाये अल्लाह के दामने रहमत में आने के अपनी गुमराही में और बढ़ते चले गये।

وَ اللّٰہُ بَصِیۡرٌۢ بِمَا یَعۡمَلُوۡنَ ﴿۷۱﴾

"और जो कुछ वह कर रहे हैं अल्लाह उसे देख रहा है।"

आयत 72

لَقَدۡ کَفَرَ الَّذِیۡنَ قَالُوۡۤا اِنَّ اللّٰہَ ہُوَ الۡمَسِیۡحُ ابۡنُ مَرۡیَمَ ؕ

"यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि अल्लाह मसीह इब्ने मरयम ही है।"

यह वही बात है जो इससे पहले इसी सूरत की आयत 17 में आ चुकी है, यानि अल्लाह ही ने मसीह अलै० की शख्सियत का लिबादा ओढ़ लिया है।

وَ قَالَ الۡمَسِیۡحُ یٰبَنِیۡۤ اِسۡرَآءِیۡلَ اعۡبُدُوا اللّٰہَ رَبِّیۡ وَ رَبَّکُمۡ ؕ

"जबकि मसीह अलै० ने तो कहा था कि ऐ बनी इसराइल, बन्दगी और परस्तिश करो अल्लाह की जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी रब है।"

اِنَّہٗ مَنۡ یُّشۡرِکۡ بِاللّٰہِ فَقَدۡ حَرَّمَ اللّٰہُ عَلَیۡہِ الۡجَنَّۃَ

"यक़ीनन जो भी अल्लाह के साथ शिर्क करेगा तो अल्लाह ने उस पर जन्नत को हराम कर दिया है"

وَمَاْوٰىهُ النَّارُ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ۝

"और उसका ठिकाना आग है, और ऐसे ज़ालिमों के लिये कोई मददगार नहीं होगा।"

अब ईसाईयों के शिर्क की एक दूसरी शक्ल का ज़िक्र हो रहा है। उनका एक अक़ीदा तो God Incarnate का था। यह उनमें से एक फ़िरक़े Jacobites का अक़ीदा था कि ख़ुद अल्लाह तआला ही ने ईसा अलै० की शक्ल में इंसानी रूप धार लिया है। ऊपर इसी अक़ीदे का ज़िक्र हुआ है, लेकिन ईसाईयों के यहाँ एक अक़ीदा "तसलीस" का भी है, और इस अक़ीदे की भी उनके यहाँ दो शक्लें हैं। इब्तदा में जो तसलीस थी उसमें अल्लाह, हज़रत मरयम और हज़रत मसीह शामिल थे। यानि "God the Father, God the Mother and God the Son"। दरअसल यह तसलीस मिस्र में फ़राअना के ज़माने से चली आ रही थी। इसी के अन्दर उन्होंने ईसाईयत को ढाल दिया, ताकि मिस्र के लोग आसानी से ईसाईयत क़ुबूल कर लें। इसके बाद हज़रत मरयम को इस तसलीस में से निकाल दिया गया और Holy Ghost या Holy Spirit (रुहुल क़ुदुस) को उनकी जगह शामिल कर लिया गया और इस तरह "God the Father, God the Son and God the Holy Ghost" पर मुश्तमिल तसलीस वजूद में आयी।

आयत 73

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلٰثَةٍ

"यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि अल्लाह तीन में का तीसरा है।"

وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّآ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ

"जबकि हक़ीक़तन नहीं है कोई इलाह सिवाय एक ही इलाह के।"

وَاِنْ لَّمْ يَنْتَهُوْا عَمَّا يَقُوْلُوْنَ

"और अगर यह बाज़ ना आये उससे जो कुछ यह कह रहे हैं"

لَيَمَسَّنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝

"तो इनमें से जो काफ़िर हैं उन पर बहुत दर्दनाक अज़ाब आकर रहेगा।"

आयत 74

اَفَلَا يَتُوْبُوْنَ اِلَى اللّٰهِ وَيَسْتَغْفِرُوْنَهٗ

"तो क्या यह लोग अल्लाह की जनाब में तौबा और उससे इस्तग़फ़ार नहीं करते?"

وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

"और अल्लाह तो ग़फ़ूर और रहीम है।"

आयत 75

مَا الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ اِلَّا رَسُوْلٌ

"मसीह इब्ने मरयम और कुछ नहीं सिवाय इसके कि वह एक रसूल थे।"

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ

"उनसे पहले भी बहुत से रसूल गुज़र चुके थे।"

यह बिल्कुल वही अल्फ़ाज़ हैं जो सूरह आले इमरान (आयत 144) में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के बारे में आये हैं: { وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ } "मुहम्मद (ﷺ) इसके सिवा क्या हैं कि अल्लाह के रसूल हैं, और आप ﷺ से

पहले बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं।" तो इसी तरह फ़रमाया कि हज़रत ईसा अलै० की हैसियत अल्लाह के एक रसूल की है, जिस तरह उनसे पहले बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं।

وَاُمُّهٗ صِدِّيْقَةٌ ۭ

"और उनकी वालिदा सिद्दीक़ा थीं।"

क़ब्ल अज़ हम सूरतुन्निसा (आयत 69) में पढ़ चुके हैं कि नबियों के बाद सबसे ऊँचा दर्जा सिद्दीक़ीन का है। ख्वातीन को अगरचे नबुवत तो नहीं मिली है लेकिन अम्बिया के बाद जो दूसरा दर्जा है उसमें बहुत चोटी की हैसियतें उन्हें मिली हैं। हमारी उम्मत की सिद्दीक़तुल कुबरा यानि सबसे बड़ी सिद्दीक़ा हज़रत ख़दीजा रज़ि० हैं और सिद्दीक़े अकबर की हैसियत इस उम्मत में हज़रत अबु बक्र रज़ि० को मिली है। हज़रत आयशा रज़ि० भी सिद्दीक़ा हैं। इसी तरह हज़रत मरयम अलै० भी सिद्दीक़ा थीं।

كَانَا يَاْكُلٰنِ الطَّعَامَ ۭ

"वह दोनों खाना खाते थे।"

दोनों इन्सान थे, बशर थे और सारे बशरी तक़ाज़े उनके साथ थे।

اُنْظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ الْاٰيٰتِ ثُمَّ انْظُرْ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ؀

"देखो, किस तरह हम उनके लिये अपनी आयात वाज़ेह करते हैं, फिर देखो कि वह कहाँ से उल्टा दिये जाते हैं।"

आयत 76

قُلْ اَتَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَّلَا نَفْعًا ۭ

"आप ﷺ कहिये क्या तुम पूजते हो अल्लाह के सिवा उन्हें जो तुम्हारे लिये ना किसी नुक़सान का इख़्तियार रखते हैं और ना नफ़े का?"

وَاللّٰهُ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ؀

"जबकि अल्लाह ही सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।"

आयत 77

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ

"कह दीजिये, ऐ अहले किताब, अपने दीन में नाहक़ गुलू ना करो"

यह तुमने हज़रत ईसा अलै० को मोहब्बत और अक़ीदत की वजह से जो कुछ बना दिया है, वह सरासर मुबालगा है। हुज़ूर ﷺ की शान में भी मुबालगा आराई अगर लोग करते हैं तो मोहब्बत की वजह से करते हैं, इश्क़े रसूल ﷺ के नाम पर करते हैं, अक़ीदत के गुलू की वजह से करते हैं। तो गुलू (मुबालगा) दरहक़ीक़त इन्सान को गुमराही की तरफ़ ले जाता है। चुनाँचे इससे मना किया जा रहा है।

وَلَا تَتَّبِعُوْٓا اَهْوَاۗءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوْا مِنْ قَبْلُ

"और मत पैरवी करो उन लोगों की बिदआत की जो तुमसे पहले (ख़ुद भी) गुमराह हुए"

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया है, यह तसलीस मिस्र में ज़माना-ए-क़दीम से मौजूद थी, उसी को उन्होंने इख़्तियार किया।

وَاَضَلُّوْا كَثِيْرًا وَّضَلُّوْا عَنْ سَوَاۗءِ السَّبِيْلِ ؀

"और उन्होंने बहुत से दूसरे लोगों को भी गुमराह किया और सीधे रास्ते से भटक गये।"

आयात 78 से 86 तक

لُعِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْۢ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ عَلٰي لِسَانِ دَاوٗدَ وَعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ ۭذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ۝ كَانُوْا
لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُّنْكَرٍ فَعَلُوْهُ ۭلَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ۝ تَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يَتَوَلَّوْنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭلَبِئْسَ مَا
قَدَّمَتْ لَهُمْ اَنْفُسُهُمْ اَنْ سَخِطَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَفِي الْعَذَابِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝ وَلَوْ كَانُوْا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالنَّبِيِّ وَمَآ اُنْزِلَ
اِلَيْهِ مَا اتَّخَذُوْهُمْ اَوْلِيَاۗءَ وَلٰكِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ فٰسِقُوْنَ ۝ لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الْيَهُوْدَ
وَالَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا ۚ وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَّوَدَّةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰى ۭذٰلِكَ بِاَنَّ مِنْهُمْ قِسِّيْسِيْنَ وَرُهْبَانًا
وَّاَنَّهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ ۝ وَاِذَا سَمِعُوْا مَآ اُنْزِلَ اِلَى الرَّسُوْلِ تَرٰٓي اَعْيُنَهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوْا مِنَ الْحَقِّ ۚ
يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اٰمَنَّا فَاكْتُبْنَا مَعَ الشّٰهِدِيْنَ ۝ وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَاۗءَنَا مِنَ الْحَقِّ ۙ وَنَطْمَعُ اَنْ يُّدْخِلَنَا رَبُّنَا
مَعَ الْقَوْمِ الصّٰلِحِيْنَ ۝ فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوْا جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭوَذٰلِكَ جَزَاۗءُ الْمُحْسِنِيْنَ
۝ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝

आयत 78

لُعِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْۢ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ عَلٰي لِسَانِ دَاوٗدَ وَعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ ۭ

"लानत की गयी उन लोगों पर जिन्होंने कुफ़्र किया बनी इसराइल में से, दाऊद अलै० की ज़बान से और ईसा अलै० इब्ने मरयम की ज़बान से भी।"

बनी इसराइल का जो किरदार रहा है उस पर उनके अम्बिया उनको मुसलसल लअन-तअन करते रहे हैं। Old Testament में हज़रत दाऊद अलै० के हवाले से इसकी बहुत सी मिसालें मौजूद हैं। New Testament (गोस्पल्ज़) में हज़रत मसीह अलै० के तनक़ीदी फ़रमूदात (आलोचनात्मक कथन) बार-बार मिलते हैं, जिनमें अक्सर उनके उलमा, अहबार और सूफ़िया मुख़ातिब हैं कि तुम साँपों के संपोलिये हो। तुम्हारा हाल उन क़ब्रों जैसा है जिनके ऊपर तो सफ़ेदी फिरी हुई है, मगर अन्दर गली-सड़ी हड्डियों के सिवा कुछ भी नहीं है। तुमने अपने ऊपर सिर्फ़ मज़हबी लिबादे ओढ़े हुए हैं, लेकिन तुम्हारे अन्दर ख्यानत भरी हुई है। तुम मच्छर छानते हो और समूचे ऊँट निगल जाते हो, यानि छोटी-छोटी चीज़ों पर तो ज़ोरदार बहसें होती हैं जबकि बड़े-बड़े गुनाह खुले बन्दों करते हो। यह तो यहूदी क़ौम और उनके उलमा के किरदार की झलक है उनके अपने नबी की ज़बान से, मगर दूसरी तरफ़ यही नक़्शा बैन ही आज हमें अपने उलमा-ए-सू में भी नज़र आता है।

ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ۝

"यह इसलिये हुआ कि उन्होंने नाफ़रमानी की, और वह हुदूद से तजावुज़ कर जाते थे।"

आयत 79

كَانُوْا لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُّنْكَرٍ فَعَلُوْهُ ۭ

"यह लोग एक-दूसरे को नहीं रोकते थे उन मुन्किरात से जो वह करते थे।"

जिस मआशरे से नही अनिल मुन्कर (बुराई से रोकना) ख़त्म हो जायेगा, वह पूरा मआशरा संडास बन जायेगा। यह तो गोया इंतेज़ामे सफ़ाई है। हर शख्स का फ़र्ज़ है कि वह अपने इर्द-गिर्द निगाह रखे, एक-दूसरे को रोकता रहे कि यह काम ग़लत है, यह मत करो! जिस मआशरे से यह तनक़ीद और अहतसाब ख़त्म हो जायेगा, उसके अन्दर लाज़िमन ख़राबी पैदा हो जायेगी।

لَبِئۡسَ مَا كَانُوۡا يَفۡعَلُوۡنَ ۝۷۹

"बहुत ही बुरा तर्ज़े अमल था जो उन्होंने इख़्तियार किया।"

आयत 80

تَرٰى كَثِيۡرًا مِّنۡهُمۡ يَتَوَلَّوۡنَ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا‌ ؕ

"तुम उनमें से अक्सर को देखोगे कि वह काफ़िरों से दोस्ती रखते हैं।"

ख़ुद काफ़िरों के हिमायती बनते हैं और अपने लिये उनकी हिमायत तलाश करते हैं।

لَبِئۡسَ مَا قَدَّمَتۡ لَهُمۡ اَنۡفُسُهُمۡ

"बहुत ही बुरी कमाई है जो उन्होंने अपने लिये आगे भेजी है"

यह उनके जो करतूत हैं वह सब आगे अल्लाह के यहाँ जमा हो रहे हैं और उनका वबाल उन पर आयेगा।

اَنۡ سَخِطَ اللّٰهُ عَلَيۡهِمۡ

"यह कि अल्लाह तआला का ग़ज़ब होगा उन पर"

وَفِى الۡعَذَابِ هُمۡ خٰلِدُوۡنَ ۝۸۰

"और वह अज़ाब में हमेशा-हमेश रहेंगे।"

आयत 81

وَلَوۡ كَانُوۡا يُؤۡمِنُوۡنَ بِاللّٰهِ وَالنَّبِىِّ وَمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡهِ

"और अगर यह ईमान लाते अल्लाह पर और नबी ﷺ पर और उस पर जो नबी ﷺ पर नाज़िल किया गया (यानि क़ुरान हकीम)"

مَا اتَّخَذُوۡهُمۡ اَوۡلِيَآءَ

"तो फिर इन्होंने इन (काफ़िरों) को अपना वली ना बनाया होता"

وَلٰـكِنَّ كَثِيۡرًا مِّنۡهُمۡ فٰسِقُوۡنَ ۝۸۱

"लेकिन इनकी अक्सरियत नाफ़रमानों पर मुश्तमिल है।

आयत 82

لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِّلَّذِيۡنَ اٰمَنُوا الۡيَهُوۡدَ وَالَّذِيۡنَ اَشۡرَكُوۡا‌ ۚ

"तुम लाज़िमन पाओगे अहले ईमान के हक़ में शदीद-तरीन दुश्मन यहूद को और उनको जो मुशरिक हैं।"

यह बहुत अहम बात है। मक्का के मुशरिकीन भी मुसलमानों के दुश्मन थे, लेकिन उनकी दुश्मनी कमसे कम खुली दुश्मनी थी, उनका दुश्मन होना बिल्कुल ज़ाहिर व बाहर था, वह सामने से हमला करते थे। लेकिन मुसलमानों से बदतरीन दुश्मनी यहूद की थी, वह आस्तीन के साँप थे और साज़िशी अंदाज़ में मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने में मुशरिकीने मक्का से कहीं आगे थे। आज भी यहूद और हिन्दू मुसलमानों की दुश्मनी में सबसे आगे हैं, क्योंकि इस क़िस्म (बुत परस्ती) का शिर्क तो अब सिर्फ़ हिन्दुस्तान में रह गया है, और कहीं नहीं रहा। हिन्दुस्तान के भी अब यह सिर्फ़ निचले तबक़े में है जबकि आम तौर पर ऊपर के तबक़े में नहीं है। लेकिन बहरहाल अब भी मुसलमानों के ख़िलाफ़ यहूद और हिन्दू का गठजोड़ है।

وَلَتَجِدَنَّ اَقۡرَبَهُمۡ مَّوَدَّةً لِّلَّذِيۡنَ اٰمَنُوا الَّذِيۡنَ قَالُوۡۤا اِنَّا نَصٰرٰى‌ ؕ

"और तुम लाज़िमन पाओगे मवद्दत (दोस्ती) के ऐतबार से क़रीब-तरीन अहले ईमान के हक़ में उन लोगों को जिन्होंने कहा कि हम नसारा हैं।"

यह तारीखी हक़ीक़त है और सीरते मुहम्मद ﷺ से साबित है कि जिस तरह की शदीद दुश्मनी उस वक़्त यहूद ने आप ﷺ से की वैसी नसारा ने नहीं की। हज़रत नजाशी रहि० (शाहे हबशा) ने उस वक़्त के मुस्लमान मुहाजिरों को पनाह दी, मक़ोक़स (शाहे मिस्र) ने भी हुज़ूर ﷺ की ख़िदमत में हदिये भेजे। हरक़ुल ने भी हुज़ूर ﷺ के नामाये मुबारक का

अहतराम किया। वह चाहता भी था कि अगर मेरी पूरी क़ौम मान ले तो हम इस्लाम क़ुबूल कर लें। नजरान के ईसाईयों का एक वफ़द आप ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, जिसका ज़िक्र सूरह आले इमरान (आयत 61) में हम पढ़ चुके हैं। वह लोग अगरचे मुस्लमान तो नहीं हुए मगर उनका रवैय्या इन्तहाई मोहतात रहा। बहरहाल यह हक़ीक़त है कि हुज़ूर ﷺ के ज़माने में मुसलमानों के ख़िलाफ़ ईसाईयों की मुखालफ़त में वह शिद्दत ना थी जो यहूदियों की मुखालफ़त में थी।

ذٰلِكَ بِاَنَّ مِنۡهُمۡ قِسِّيۡسِيۡنَ وَرُهۡبَانًا وَّاَنَّهُمۡ لَا يَسۡتَكۡبِرُوۡنَ ۝٨٢

"यह इसलिये कि उन (ईसाईयों) में आलिम भी मौजूद हैं और दरवेश भी और (इसलिये भी कि) वह तकब्बुर नहीं करते।"

यानि ईसाईयों में उस वक़्त तक उलमाये हक़ भी मौजूद थे और दरवेश राहिब भी जो वाक़ई अल्लाह वाले थे। बहीरा राहिब ईसाई था जिसने हुज़ूर ﷺ को बचपन में पहचाना था। इसी तरह वरक़ा बिन नौफ़ल ने हुज़ूर ﷺ किस सबसे पहले तस्दीक़ की थी और बताया था कि ऐ मुहम्मद (ﷺ) आप पर वही नामूस नाज़िल हुआ है जो इससे पहले हज़रत मूसा और हज़रत ईसा (अलै०) पर नाज़िल हुआ था। वरक़ा बिन नौफ़ल थे तो अरब के रहने वाले, लेकिन वह हक़ की तलाश में शाम गये और ईसाईयत इख़्तियार की। वह इब्रानी ज़बान में तौरात लिखा करते थे। यह उस दौर के चंद ईसाई उलमा और राहिबों की मिसालें हैं। लेकिन वह "قِسِّيۡسِيۡن" और "رُهۡبَان" अब आपको ईसाईयों में नहीं मिलेंगे, वह दौर ख़त्म हो चुका है। यह उस वक़्त की बात है जब क़ुरान नाज़िल हो रहा था। इसके बाद जो सूरते हाल बदली है और सलेबी जंगों के अन्दर ईसाईयत ने जो वहशत और बरबरियत दिखाई है, और ईसाई उलमा और मज़हबी पेशवाओं ने जिस तरह मुसलमानों के खून से होली खेली है और अपनी क़ौम से इस सिलसिले में जो कारनामे अंजाम दिलवाये हैं वह तारीख के चेहरे पर बहुत ही बदनुमा दाग़ है।

आयत 83

وَاِذَا سَمِعُوۡا مَاۤ اُنۡزِلَ اِلَى الرَّسُوۡلِ

"और जब इन्होंने सुनी वह चीज़ जो कि रसूल (ﷺ) पर नाज़िल की गयी थी"

تَرٰۤى اَعۡيُنَهُمۡ تَفِيۡضُ مِنَ الدَّمۡعِ مِمَّا عَرَفُوۡا مِنَ الۡحَـقِّ ۚ

"तो तुम देखते हो कि हक़ की जो पहचान उन्हें हासिल हुई उसके ज़ेरे असर उनकी आँखों से आँसू रवाँ हो गये।"

यह एक वाक़िये की तरफ़ इशारा है। मक्की दौर में जब सहाबा रज़ि० हिजरत करके हबशा गये थे तो उनके ज़रिये से वहाँ कुछ लोगों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया था। फिर जब मदीना मुनव्वरा में इस्लाम का गलबा हो गया और अरब में अमन क़ायम हो गया तो उनका एक वफ़द मदीना आया जो सत्तर (70) अफ़राद पर मुश्तमिल था और उसमें कुछ नव मुस्लिम भी शामिल थे। आयत ज़ेरे नज़र में उस वफ़द के अरकान का ज़िक्र है कि जब उन्होंने क़ुरान सुना तो हक़ को पहचान लेने की वजह से उनकी आँखों से आँसुओं की लड़ियाँ जारी हो गयीं।

يَقُوۡلُوۡنَ رَبَّنَاۤ اٰمَنَّا فَاكۡتُبۡنَا مَعَ الشّٰهِدِيۡنَ ۝٨٣

"(और) वह कह रहे हैं, ऐ हमारे रब हम ईमान ले आये, पस तू हमें लिख ले गवाही देने वालों में से।"

आयत 84

وَمَا لَنَا لَا نُؤۡمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَآءَنَا مِنَ الۡحَـقِّ ۙ

"और हमें क्या हुआ है कि हम ईमान ना लायें अल्लाह पर और उस हक़ पर जो हम तक पहुँच गया है"

وَنَطۡمَعُ اَنۡ يُّدۡخِلَنَا رَبُّنَا مَعَ الۡقَوۡمِ الصّٰلِحِيۡنَ ۝٨٤

"और हमें तो बड़ी ख्वाहिश है कि दाख़िल करे हमें हमारा रब नेकोकार लोगों के साथ।"

आयत 85

فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوْا جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ

"तो अल्लाह ने उनके इस क़ौल के बदले उन्हें वह बाग़ात अता किये जिनके दामन में नदियाँ बहती हैं, जिनमें वह हमेशा रहेंगे।"

وَذٰلِكَ جَزَاۗءُ الْمُحْسِنِيْنَ ۝٨٥

"और यही बदला है अहसान की रविश इख़्तियार करने वालों का।"

जो खुश किस्मत नफ़ूस इस्लाम क़ुबूल करें, और इस्लाम के बाद ईमान और फिर ईमान से आगे बढ़ कर अहसान के दर्जे तक पहुँच जायें उनका बदला यही है।

आयत 86

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝٨٦

"रहे वह लोग जिन्होंने इन्कार किया और झुठला दिया हमारी आयात को, तो वही लोग हैं जो जहन्नमी हैं।"

आयात 87 से 93 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحَرِّمُوْا طَيِّبٰتِ مَآ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝٨٧ وَكُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ
اللّٰهُ حَلٰلًا طَيِّبًا ۠ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْٓ اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُوْنَ ۝٨٨ لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِيْٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ بِمَا
عَقَّدْتُّمُ الْاَيْمَانَ ۚ فَكَفَّارَتُهٗٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ اَوْ كِسْوَتُهُمْ اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ ۭ
فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ ۭ ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْ ۭ وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ
لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝٨٩ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ
فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝٩٠ اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاۗءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ
وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ ۚ فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ ۝٩١ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاحْذَرُوْا ۚ فَاِنْ
تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰي رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ۝٩٢ لَيْسَ عَلَي الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جُنَاحٌ فِيْمَا طَعِمُوْٓا اِذَا
مَا اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاَحْسَنُوْا ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝٩٣

खाने-पीने की चीज़ों में हिल्लत व हुरमत और तहलील व तहरीम इल्हामी शरीअतों का एक अहम मौज़ू रहा है। क़ुरान हकीम में भी बार-बार इन मसाइल पर बहस की गयी है और यह मौज़ू सूरतुल बक़रह से मुसलसल चल रहा है। अरबों के यहाँ नस्ल दर नस्ल राइज मुशरिकाना अवाहम की वजह से बहुत सी चीज़ों के बारे में हिल्लत व हुरमत के ग़लत तसव्वुरात ज़हनों में पुख्ता हो चुके थे। इस क़िस्म के ख्यालात ज़हनों, दिलों और मिज़ाजों से निकलने में वक़्त लगता है। इसलिये बार-बार इन मसाइल की तरफ़ तवज्जो दिलाई जा रही है।

आयत 87

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحَرِّمُوْا طَيِّبٰتِ مَاۤ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمْ

"ऐ ईमान वालो, ना हराम ठहरा लो उन चीज़ों को जिनको अल्लाह ने तुम्हारे लिये हलाल किया है"

وَلَا تَعْتَدُوْا ؕ

"और हद से तजावुज़ ना करो।"

बाज़ अवक़ात ऐसा भी होता है कि कुछ लोग तक़वे के जोश में और बहुत ज़्यादा नेकी कमाने के जज़्बे में भी कई हलाल चीज़ों को अपने ऊपर हराम कर बैठते हैं, इसलिये फ़रमाया गया कि हद से तजावुज़ ना करो।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝۸۷

"यक़ीनन अल्लाह हद से तजावुज़ करने वालों को पसंद नहीं करता।"

आयत 88

وَكُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلٰلًا طَيِّبًا ۠

"और खाओ उन हलाल और पाकीज़ा चीज़ों में से जो अल्लाह ने तुम्हें दी हैं"

यानि वह चीज़ें जो क़ानूनी तौर पर हलाल हों और ज़ाहिरी तौर पर भी साफ़-सुथरी हों।

وَّاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْۤ اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُوْنَ ۝۸۸

"और उस अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रखो जिस पर तुम्हारा ईमान है।"

आयत 89

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِيْۤ اَيْمَانِكُمْ

"अल्लाह तआला मुआख़ज़ा नहीं करेगा तुमसे तुम्हारी उन क़समों में जो लग्व होती हैं"

क़समों के सिलसिले में सूरतुल बक़रह (आयत 225) में हिदायात गुज़र चुकी हैं, अब यहाँ इस ज़िमन में आखरी हुक्म आ रहा है। यानि ऐसी क़समें जो बगैर किसी इरादे के खाई जाती हैं, उन पर कोई गिरफ़्त नहीं है। जैसे वल्लाह, बिल्लाह वगैरह का तकिया कलाम के तौर पर इस्तेमाल अरबों की ख़ास आदत थी और आज भी है। ज़ाहिर है इसको सुन कर कोई भी यह नहीं समझता कि यह शख्स बाक़ायदा क़सम खा रहा है। तो ऐसी सूरत में कोई मुआख़ज़ा नहीं है।

وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ بِمَا عَقَّدْتُّمُ الْاَيْمَانَ ۚ

"लेकिन वह (ज़रूर) मुआख़ज़ा करेगा तुमसे उन क़समों पर जिनको तुमने पुख़्ता किया है।"

عَقَّدْتُّمْ عقد से बाबे तफ़ईल है। यानि पूरे अहतमाम के साथ एक बात तय की गयी और उस पर किसी ने क़सम खाई। अब अगर ऐसी क़सम टूट जाये या उसको तोड़ना मक़सूद हो तो उसका कफ्फ़ारा अदा करना होगा।

فَكَفَّارَتُهٗۤ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ

"सो उसका कफ्फ़ारा है खाना खिलाना दस मसाकीन को, औसत दर्जे का खाना जैसा तुम अपने घर वालों को खिलाते हो"

اَوْ كِسْوَتُهُمْ

"या उनको कपड़े पहनाना"

اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ ۭ

"या किसी गुलाम को आज़ाद करना।"

فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ ۭ

"फिर जो कोई इसकी इस्तताअत ना रखता हो वह तीन दिन के रोज़े रखे।"

यानि अगर किसी के पास इन तीनों में से कोई सूरत भी मौजूद ना हो, कोई शख्स ख़ुद फ़क़ीर और मुफ़लिस हो, उसके पास कुछ ना हो तो वह तीन दिन के रोज़े रख ले।

ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْ ۭ

"यह कफ्फ़ारा है तुम्हारी क़समों का जब तुम क़सम खा (कर तोड़) बैठो।"

وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ ۭ

"और अपनी क़समों की हिफ़ाज़त किया करो।"

यानि जब किसी सही मामले में बिल इरादा क़सम खाई जाये तो उसे पूरा किया जाये, और अगर किसी वजह से क़सम तोड़ने की नौबत आ जाये तो उसे तोड़ने का बाक़ायदा कफ्फ़ारा दिया जायेगा।

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝89

"इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिये अपनी आयात को वाज़ेह फ़रमा रहा है ताकि तुम शुक्र करो।"

अब शराब और जुए के बारे में भी आखरी हुक्म आ रहा है।

आयत 90

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝90

"ऐ अहले ईमान, यक़ीनन शराब और जुआ, बुत और पांसे, यह सब गंदे काम हैं शैतान के अमल में से, तो इनसे बच कर रहो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

शराब और जुए के बारे में तो पहले भी हुक्म आ चुका है, लेकिन "اَنْصَاب" और "اَزْلَام" का यहाँ इज़ाफ़ा किया गया है। अन्साब से मुराद बुतों के स्थान हैं और अज़्लाम जुए ही की एक क़िस्म थी जिसमें अहले अरब तीरों के ज़रिये पांसे डालते थे, क़ुर्रा अंदाज़ी करते थे। इन तमाम कामों को "رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ" क़रार दे दिया गया।

आयत 91

اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاۗءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ

"शैतान तो यह चाहता है कि तुम्हारे दरमियान दुश्मनी दुश्मनी और बुग्ज़ पैदा कर दे शराब और जुए के ज़रिये से"

यह बहुत अहम बात है, क्योंकि शराब के नशे में इन्सान अपना होश और शऊर खो बैठता है। ऐसी हालत में उसको कुछ ख़बर नहीं रहती कि वह मुँह से क्या बकवास कर रहा है और उसके आज़ा व जवारह (अंगों) से क्या अफ़आल सरज़द हो रहे हैं, लिहाज़ा कुछ नहीं कहा जा सकता कि ऐसी हालत में किसी बात या किसी हरकत से क्या-क्या गुल खिलेंगे, कैसे-कैसे झगड़े और फ़सादात जन्म लेंगे। बाज़ अवक़ात ऐसा भी होता है कि हुकूमती और रियासती सतह के बड़े-बड़े राज़ शराब के नशे में चुरा लिये जाते हैं। तो अल्लाह तआला तुम्हें इन चीज़ों से बचाना चाहता है, जबकि शैतान चाहता है कि तुम्हारे माबैन अदावत और बुग्ज़ पैदा करे। इसी तरह जुए से भी बुग्ज़ व अदावत की कोंपलें फूटती हैं। मसलन एक आदमी

जुए में हार जाता है, फिर पे-दर-पे हारता चला जाता है। एक वक़्त आता है कि वह फट पड़ता है और गुस्से में आग बबूला होकर आपे से बहार हो जाता है। इसलिये कि उसे नज़र आ रहा है कि मेरा जो हरीफ़ मुझसे जीत रहा है वह किसी मेहनत की वजह से नहीं जीत रहा। किसी ने मेहनत और कोशिश से कुछ कमाया हो तो उससे दूसरे को जलन महसूस नहीं होती, लेकिन जुए में बेमेहनत की कमाई होती है जिसे मुखालिफ़ फ़रीक़ बर्दाश्त नहीं कर सकता, और इस तरह इंसानी ताल्लुक़ात में कई मनफ़ी पेचीदगियाँ जन्म लेती हैं।

وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ

"और (शैतान यह भी चाहता है कि) तुम्हें रोके अल्लाह की याद से और नमाज़ से।"

अल्लाह के ज़िक्र और नमाज़ से रोकने वाला मामला भी शराब का तो बिल्कुल वाज़ेह है, लेकिन जुए में भी यूँ ही होता है कि आदमी एक बार इसमें लग जाये तो फिर वहाँ से निकलना मुश्किल हो जाता है। जैसा कि ताश और शतरंज वगैरह भी ऐसे खेल हैं कि इनमें मशगूल होकर इन्सान ज़िक्र और नमाज़ जैसी चीज़ों से बिल्कुल ग़ाफ़िल हो जाता है।

فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ ۝

"तो अब बाज़ आते हो या नहीं?"

यह अंदाज़ बड़ा सख्त है और इसका एक ख़ास पसमंज़र है। शराब और जुए के बारे में एक वाज़ेह हिदायत क़ब्ल अज़ (सूरतुल बक़रह, आयत:219 में) आ चुकी थी: {فِيْهِمَآ اِثْمٌ كَبِيْرٌ وَّمَنَافِعُ لِلنَّاسِ وَاِثْمُهُمَآ اَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا} "इन दोनों के अन्दर बहुत बड़े गुनाह के पहलु हैं, और लोगों के लिये कुछ फ़ायदे भी हैं, अलबत्ता इनका गुनाह का पहलु नफ़े के पहलु से बड़ा है।" तो उसी वक़्त तुम्हें समझ लेना चाहिये था और बाज़ आ जना चाहिये था। उस पहले हुक्म में अल्लाह तआला की मसलहत, मशीयत और शरीअत का रुख तो वाज़ेह हो गया था। फिर अगला क़दम उठाया गया और हुक्म दिया गया: "जब तुम लोग शराब के नशे में हो तो नमाज़ के क़रीब मत जाओ...." (अन्निसा:43)। इससे तो पूरे तौर से वाज़ेह हो जना चाहिये था कि दीन का अहमतरीन सुतून नमाज़ है: ((اَلصَّلٰوةُ عِمَادُ الدِّيْنِ)) और यह शराब नमाज़ से रोक रही है, तो तुम्हें यह छोड़ देनी चाहिये थी। बहरहाल अब आखरी बात अल्लाह तआला की तरफ़ से आ गयी है, तो इसे सुन कर क्या अब भी बाज़ नहीं आओगे?

आयत 92

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاحْذَرُوْا

"और इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल (ﷺ) की और (उनकी नाफ़रमानी से) बचते रहो।"

فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰى رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ۝

"फिर अगर तुम पीठ मोड़ लोगे तो जान लो कि हमारे रसूल (ﷺ) पर तो ज़िम्मेदारी है बस साफ़-साफ़ पहुँचा देने की।"

यह अल्लाह का हुक्म है। अल्लाह का हुक्म पहुँचाना रसूल ﷺ के ज़िम्मे था, तो रसूल ﷺ ने पहुँचा कर अपनी ज़िम्मेदारी अदा कर दी, अब मामला अल्लाह का और तुम्हारा होगा। अल्लाह तुमसे निमट लेगा, तुमसे हिसाब ले लेगा।

अब जो अगली आयत आ रही है यह भी क़ुरान मजीद के फ़लसफ़े और हिकमत के ज़िमन में बहुत बुनियादी आयत है। इसका पसमंज़र यह है कि जब शराब के बारे में इतना सख्त अंदाज़ आया कि शराब और जुआ गंदे शैतानी काम हैं, इनसे बाज़ आते हो या नहीं? तो बहुत से मुसलमानों को तशवीश (चिंता) लाहक़ हो गई कि हम जो इतने अरसे तक शराब पीते रहे तो यह गन्दगी तो हमारी हड्डियों में बैठ गयी होगी। आज साइंस की ज़बान में जैसे कोई शख्स कहे कि मेरे जिस्म का तो कोई एक खला (cell) भी ऐसा नहीं होगा जिसमें शराब के असरात ना पहुँचे हों। तो अब हम कैसे पाक होंगे? अब किस तरीक़े से यह गन्दगी हमारे जिस्मों से धुलेगी? उनकी यह तशवीश (चिंता) बजा (ठीक) थी। जैसे तहवीले क़िब्ला के वक़्त तशवीश पैदा हो गई थी कि अगर असल क़िब्ला बैतुल्लाह था और हम बैतुल मक़दस की तरफ़ रुख करके नमाज़ें पढ़ते रहे तो वह नमाज़ें तो ज़ाया हो गईं, और नमाज़ ही तो ईमान है। तो इस पर मोमिनीन की तसल्ली के लिये (सूरतुल बक़रह:143

में) फ़रमाया गया था: {وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيْعَ اِيْمَانَكُمْ} "अल्लाह तुम्हारे ईमान को ज़ाया करने वाला नहीं है।" ऐसे ही यहाँ उनकी दिलजोई के लिये फ़रमाया:

आयत 93

لَيْسَ عَلَى الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جُنَاحٌ فِيْمَا طَعِمُوْٓا

"उन लोगों पर जो ईमान लाये और नेक अमल किये कोई गुनाह नहीं है उसमें जो वह (पहले) खा-पी चुके"

किसी शय की हुरमत के क़तई हुक्म आने से पहले जो कुछ खाया-पिया गया, उसका कोई गुनाह उन पर नहीं रहेगा। यह कोई हड्डियों में बैठ जाने वाली शय नहीं है, यह तो शरई और अख्लाक़ी क़ानून (Moral Law) का मामला है, तबई क़ानून (Physical Law) का नहीं है। तबई (Physical) तौर पर तो कुछ चीज़ों के असरात वाक़ई दाइमी हो जाते हैं, लेकिन Moral Law का मामला यक्सर मुख्तलिफ़ है। गुनाह तो ओहद पहाड़ के बराबर भी हो तो सच्ची तौबा से बिल्कुल साफ़ हो जाते हैं। अज़रुए हदीस नबवी ﷺ: ((اَلتَّائِبُ مِنَ الذَّنْبِ كَمَنْ لَا ذَنْبَ لَهٗ)) "गुनाह से हक़ीक़ी तौबा करने वाला बिल्कुल ऐसे है जैसे उसने कभी वह गुनाह किया ही नहीं था।" सिदक़े दिल से तौबा की जाये तो नामाये आमाल बिल्कुल धुल जाता है। लिहाज़ा ऐसी किसी तशवीश को बिल्कुल अपने क़रीब मत आने दो।

اِذَا مَا اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاَحْسَنُوْا ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿٩٣﴾

"जब तक वह तक़वा की रविश इख़्तियार किये रखें और ईमान लायें और नेक अमल करें, फिर मज़ीद तक़वा इख़्तियार करें और ईमान लायें, फिर और तक़वा में बढ़ें और दर्जा-ए-अहसान पर फ़ाइज़ हो जायें। और अल्लाह तआला मोहसिनों से मोहब्बत करता है।"

यह दरअसल तीन दर्जे हैं। पहला दर्जा 'इस्लाम' है। यानि अल्लाह को मान लिया, रसूल ﷺ को मान लिया और उसके अहकाम पर चल पड़े। इससे ऊपर का दर्जा 'ईमान' है, यानि दिल का कामिल यक़ीन, जो ईमान के दिल में उतर जाने से हासिल होता है। {وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيْكُمُ الْاِيْمَانَ وَزَيَّنَهٗ فِيْ قُلُوْبِكُمْ} (अल् हुजरात:7) के मिस्दाक़ ईमान क़ल्ब में उतर जायेगा तो आमाल की कैफ़ियत बदल जायेगी, आमाल में एक नयी शान पैदा हो जायेगी, ज़िन्दगी के अन्दर एक नया रंग आ जायेगा जोकि ख़ालिस अल्लाह का रंग होगा। अज़रुए अल्फ़ाज़े क़ुरानी: {صِبْغَةَ اللّٰهِ ۚ وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ صِبْغَةً} (सूरह बक़रह:138)। और इससे भी आगे जब ईमान "अय्नुल यक़ीन" का दर्जा हासिल कर ले तो यही दर्जा अहसान है। हदीसे नबवी ﷺ में इसकी कैफ़ियत यह बयान हुई है: ((اَنْ تَعْبُدَ اللّٰهَ كَاَنَّكَ تَرَاهُ فَاِنْ لَمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَاِنَّهٗ يَرَاكَ)) "यह कि तू अल्लाह की इबादत इस तरह करे गोया कि तू उसे देख रहा है, और अगर तू उसे नहीं देख रहा (यह कैफ़ियत पैदा नहीं हो रही) तो फिर (यह कैफ़ियत तो पैदा होनी चाहिये कि) वह तुझे देखता है।" यानि तुम अल्लाह की बन्दगी करो, अल्लाह के लिये जिहाद करो, उसकी राह में भाग-दौड़ करो, और इसमें तक़वा की कैफ़ियत ऐसी हो जाये कि जैसे तुम अल्लाह को अपनी आँखों से देख रहे हो।

अहसान की यह तारीफ़ "हदीसे जिब्राइल" में मौजूद है। इस हदीस को उम्मुस सुन्नत कहा गया है, जैसे सूरतुल फ़ातिहा को उम्मुल क़ुरान का नाम दिया गया है। जिस तरह सूरतुल फ़ातिहा असासुल क़ुरान है, इसी तरह हदीसे जिब्राइल (अलै०) सुन्नत की असास है। इस हदीस में हमें यह तफ़सील मिलती है कि हज़रत जिब्राइल अलै० इंसानी शक्ल में हुज़ूर ﷺ के पास आये। सहाबा रज़ि० का मजमा था, वहाँ उन्होंने कुछ सवालात किये। हज़रत जिब्राइल अ० ने पहला सवाल इस्लाम के बारे में किया: يَا مُحَمَّدُ اَخْبِرْنِيْ عَنِ الْاِسْلَامِ! इसके जवाब में आप ﷺ ने फ़रमाया: "इस्लाम यह है कि तुम इस बात की गवाही दो कि अल्लाह के सिवा कोई मअबूद नहीं और मुहम्मद (ﷺ) अल्लाह के रसूल हैं, नमाज़ क़ायम करो, ज़कात अदा करो, रमज़ान के रोज़े रखो और बैतुल्लाह का हज करो अगर तुम्हें इसके लिये सफ़र की इस्तताअत हो।" यानि इस्लाम के ज़िमन में आमाल का ज़िक्र आ गया। फिर जिब्राइल अलै० ने कहा कि मुझे ईमान के बारे में बतलाइये! इस पर आप

ﷺ ने फ़रमाया: "यह कि तुम ईमान लाओ अल्लाह पर, उसके फ़रिश्तों पर, उसकी किताबों पर, उसके रसूलों पर, यौमे आख़िरत पर और तक़दीर की अच्छाई और बुराई पर।" अब यहाँ यह नुक्ता गौरतलब है कि ईमान तो इस्लाम में भी मौजूद है, यानि ज़बानी और क़ानूनी ईमान, लेकिन दूसरे दर्जे में ईमान को इस्लाम से अलैहदा किया गया है और आमाले सालेहा का ताल्लुक़ ईमान के बजाये इस्लाम से बताया गया है। इसलिये कि जब ईमान दिल में उतर कर यक़ीन की सूरत इख़्तियार कर जाये तो फिर आमाल का ज़िक्र अलग से करने की ज़रूरत नहीं रहती। ईमान के इस मरहले पर आमाल लाज़िमन दुरुस्त हो जायेंगे। फिर ईमान जब दिल में मज़ीद गहरा और पुख़्ता होता है तो आमाल भी मज़ीद दुरुस्त होंगे। यूँ समझिये कि जितना-जितना दरख़्त ऊपर जा रहा है उसी निस्बत से जड़ नीचे गहराई में उतर रही है। ईमान की जड़ ने दिल की ज़मीन में क़रार पकड़ा तो इस्लाम से ईमान बन गया। जब यह जड़ मज़ीद गहरी हुई तो तीसरी मंज़िल यानि अहसान तक रसाई हो गयी और यहाँ आमाल में मज़ीद निखार पैदा हुआ। चुनाँचे जब हज़रत जिब्राइल अलै० ने अहसान के बारे में पूछा तो आप ﷺ ने फ़रमाया: "अहसान यह है कि तुम अल्लाह की इबादत इस तरह करो गोया कि तुम उसे देख रहे हो...." आप ﷺ का जवाब तीन रिवायतों में तीन मुख्तलिफ़ अल्फ़ाज़ में नक़ल हुआ है: (1) اَنْ تَعْبُدَ اللّٰهَ كَاَنَّكَ تَرَاهُ... (2) اَنْ تَخْشَى اللّٰهَ تَعَالٰى كَاَنَّكَ تَرَاهُ... (3) اَنْ تَعْمَلَ لِلّٰهِ كَاَنَّكَ تَرَاهُ अगले अल्फ़ाज़ ((فَاِنْ لَمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَاِنَّهٗ يَرَاكَ)) तीनों रिवायतों में यक्सां हैं। यानि एक बंदा-ए-मोमिन अल्लाह की बन्दगी, अल्लाह की परस्तिश, अल्लाह के लिये भाग-दौड़, अल्लाह के लिये अमल, अल्लाह के लिये जिहाद ऐसी कैफ़ियत से सरशार (समर्पित) होकर कर रहा हो गोया वह अपनी आँखों से अल्लाह को देख रहा है। तो जब अल्लाह सामने होगा, तो फिर कैसे कुछ हमारे जज़्बाते अबदियत होंगे, कैसी-कैसी हमारी क़ल्बी कैफ़ियात होंगी। इस दुनिया में भी यह कैफ़ियत हासिल हो सकती है, लेकिन यह कैफ़ियत बहुत कम लोगों को हासिल होती है। चुनाँचे अगर यह कैफ़ियत हासिल ना हो सके तो अहसान का एक इससे निचला दर्जा भी है। यानि कम से कम यह बात हर वक़्त मुस्तहज़र रहे कि अल्लाह मुझे देख रहा है। तो यह हैं वह तीन दर्जे जिनका ज़िक्र इस आयत में है।

"तहरीके इस्लामी की अख्लाक़ी बुनियादें" मौलाना मौदूदी मरहूम की एक क़ाबिले क़द्र किताब है। इसमें मौलाना ने इस्लाम, ईमान, अहसान और तक़वा चार मरातिब बयान किये हैं। लेकिन मेरे नज़दीक तक़वा अलैहदा से कोई मरतबा व मक़ाम नहीं है। तक़वा वह रूह (Spirit) और वह क़ुव्वते मोहरका (driving force) है जो इन्सान को नेकी की तरफ़ धकेलती और उभारती है। चुनाँचे आयत ज़ेरे नज़र में तक़वा की तकरार का मफ़हूम यूँ है कि तक़वा ने आपको baseline से ऊपर उठाया और अब आपके ईमान और अमले सालेह में और रंग पैदा हो गया {اِذَا مَا اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ}। फिर तक़वा में मजीद इज़ाफ़ा हुआ और तक़वा ने आपको मज़ीद ऊपर उठाया तो अब वह यक़ीन वाला ईमान पैदा हो गया {ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا}। अब यहाँ अमले सालेह के अलैहदा ज़िक्र की ज़रूरत ही नहीं। जब दिल में ईमान उतर गया तो आमाल ख़ुद-ब-ख़ुद दुरुस्त हो गये। फिर तक़वा अगर मज़ीद रूबा तरक्क़ी है {ثُمَّ اتَّقَوْا} तो उसके नतीजे में {وَّاَحْسَنُوْا} का दर्जा आ जायेगा, यानि इन्सान दर्जा-ए-अहसान पर फ़ाइज़ हो जायेगा। (اللھم ربنا اجعلنا منھم۔ आमीन!)

ईमान और तक़वा से आमाल की दुरुस्ती के ज़िमन में नबी अकरम ﷺ का यह फ़रमान पेशे नज़र रहना चाहिये:

اَلَا وَاِنَّ فِي الْجَسَدِ مُضْغَةً، اِذَا صَلَحَتْ صَلَحَ الْجَسَدُ كُلُّهٗ، وَاِذَا فَسَدَتْ فَسَدَ الْجَسَدُ كُلُّهٗ، اَلَا وَهِيَ الْقَلْبُ

"आगाह रहो, यक़ीनन जिस्म के अन्दर एक गोश्त का लोथड़ा है, जब वह दुरुस्त हो तो सारा जिस्म दुरुस्त होता है और जब वह बिगड़ जाये तो सारा जिस्म बिगड़ जाता है। आगाह रहो कि वह दिल है।"

وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝۹۳

"और अल्लाह ऐसे मोहसिन बन्दों को महबूब रखता है।"

अल्लाह के जो बन्दे दर्जा-ए-अहसान तक पहुँच जाते हैं वह उसके महबूब बन जाते हैं।

इस सूरह मुबारका (आयत 71) में पहले एक ग़लत रास्ते की निशानदेही की गयी थी: {فَعَمُوْا.... ثُمَّ عَمُوْا وَصَمُّوْا....} {وَصَمُّوْا} यह गुमराही व ज़लालत के मुख्तलिफ़ मराहिल का ज़िक्र है कि वह अंधे और बहरे हो गये, अल्लाह ने फिर ढील दी तो उस पर वह और भी अंधे और बहरे हो गये, अल्लाह ने मज़ीद ढील दी तो वह और ज़्यादा अंधे और बहरे हो गये।

उस रास्ते पर इन्सान क़दम-ब-क़दम गुमराही की दलदल में धँसता चला जाता है। मगर एक रास्ता यह है, हिदायत का रास्ता, इस्लाम, ईमान, अहसान और तक़वा का रास्ता। यहाँ इन्सान को दर्जा-ब-दर्जा तरक्क़ी मिलती चली जाती है।

आयात 94 से 100 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَيَبۡلُوَنَّكُمُ اللّٰهُ بِشَىۡءٍ مِّنَ الصَّيۡدِ تَنَالُهٗۤ اَيۡدِيۡكُمۡ وَرِمَاحُكُمۡ لِيَعۡلَمَ اللّٰهُ مَنۡ يَّخَافُهٗ بِالۡغَيۡبِ‌ۚ فَمَنِ
اعۡتَدٰى بَعۡدَ ذٰلِكَ فَلَهٗ عَذَابٌ اَلِيۡمٌ ﴿۹۴﴾ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَقۡتُلُوا الصَّيۡدَ وَاَنۡتُمۡ حُرُمٌ‌ ؕ وَمَنۡ قَتَلَهٗ مِنۡكُمۡ مُّتَعَمِّدًا
فَجَزَآءٌ مِّثۡلُ مَا قَتَلَ مِنَ النَّعَمِ يَحۡكُمُ بِهٖ ذَوَا عَدۡلٍ مِّنۡكُمۡ هَدۡيًاۢ بٰلِغَ الۡكَعۡبَةِ اَوۡ كَفَّارَةٌ طَعَامُ مَسٰكِيۡنَ اَوۡ عَدۡلُ ذٰلِكَ
صِيَامًا لِّيَذُوۡقَ وَبَالَ اَمۡرِهٖ‌ ؕ عَفَا اللّٰهُ عَمَّا سَلَفَ‌ ؕ وَمَنۡ عَادَ فَيَنۡتَقِمُ اللّٰهُ مِنۡهُ‌ ؕ وَاللّٰهُ عَزِيۡزٌ ذُو انۡتِقَامٍ ﴿۹۵﴾ اُحِلَّ لَـكُمۡ
صَيۡدُ الۡبَحۡرِ وَطَعَامُهٗ مَتَاعًا لَّـكُمۡ وَلِلسَّيَّارَةِ‌ ۚ وَحُرِّمَ عَلَيۡكُمۡ صَيۡدُ الۡبَـرِّ مَا دُمۡتُمۡ حُرُمًا‌ ؕ وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِىۡۤ اِلَيۡهِ
تُحۡشَرُوۡنَ ﴿۹۶﴾ جَعَلَ اللّٰهُ الۡـكَعۡبَةَ الۡبَيۡتَ الۡحَـرَامَ قِيٰمًا لِّلنَّاسِ وَالشَّهۡرَ الۡحَـرَامَ وَالۡهَدۡىَ وَالۡقَلَاۤئِدَ‌ ؕ ذٰلِكَ لِتَعۡلَمُوۡۤا اَنَّ
اللّٰهَ يَعۡلَمُ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمٌ ﴿۹۷﴾ اِعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيۡدُ الۡعِقَابِ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ
رَّحِيۡمٌ ﴿۹۸﴾ مَا عَلَى الرَّسُوۡلِ اِلَّا الۡبَلٰغُ‌ ؕ وَاللّٰهُ يَعۡلَمُ مَا تُبۡدُوۡنَ وَمَا تَكۡتُمُوۡنَ ﴿۹۹﴾ قُلْ لَّا يَسۡتَوِى الۡخَبِيۡثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوۡ
اَعۡجَبَكَ كَثۡرَةُ الۡخَبِيۡثِ‌ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ يٰۤاُولِى الۡاَلۡبَابِ لَعَلَّكُمۡ تُفۡلِحُوۡنَ ﴿۱۰۰﴾

इस सूरह मुबारका के शुरू में हालते अहराम में शिकार करने की मुमानियत (prohibition) आ चुकी है। अब अल्लाह की उस सुन्नत का ज़िक्र है कि अल्लाह अपने मानने वालों को आज़माता है, सख्त तरीन इम्तिहान लेता है। फ़र्ज़ कीजिये कि हाजियों का एक क़ाफ़िला जा रहा है, सबने अहराम बाँधा हुआ है, इत्तेफ़ाक़ से उनके पास खाने को कुछ भी नहीं। अब एक हिरन अठखेलियाँ करते हुए क़रीब आ रहा है, भूख भी सता रही है, ज़रूरत भी है, चाहे तो ज़रा सा नेज़ा मारें और शिकार कर लें या वैसे ही भाग कर पकड़ लें, लेकिन पकड़ नहीं सकते, शिकार नहीं कर सकते, क्योंकि अहराम में हैं और इस हालत में इजाज़त नहीं है। तो अल्लाह तआला अपने बन्दों को इस तरह आज़माता है।

आयत 94

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَيَبۡلُوَنَّكُمُ اللّٰهُ بِشَىۡءٍ مِّنَ الصَّيۡدِ

"ऐ अहले ईमान! अल्लाह तुम्हें लाज़िमन आज़माएगा किसी ऐसे शिकार के ज़रिये"

تَنَالُهٗۤ اَيۡدِيۡكُمۡ وَرِمَاحُكُمۡ

"जिसको पहुँचते होंगे (आसानी से) तुम्हारे हाथ और नेज़े"

لِيَعۡلَمَ اللّٰهُ مَنۡ يَّخَافُهٗ بِالۡغَيۡبِ‌ۚ

"ताकि अल्लाह देख ले उन लोगों को जो गैब में होते हुए भी उससे डरते रहते हैं।"

शिकार पहुँच में भी है, उनके हाथों और नेज़ों की ज़द में है, ज़रूरत भी है, चाहे तो शिकार कर लें, लेकिन मजबूर हैं, क्योंकि अहराम बाँधा हुआ है। तो जिसके दिल में ईमान होगा तो वह अपनी भूख को बर्दाश्त करेगा, अल्लाह के हुक्म को नहीं तोड़ेगा।

فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَلَهٗ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٩٤

"अब इसके बाद जिसने ज़्यादती की तो उसके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 95

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقْتُلُوا الصَّيْدَ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۭ

"ऐ ईमान वालो! जब तुम अहराम की हालत में हो तो किसी शिकार को क़त्ल मत करो।"

وَمَنْ قَتَلَهٗ مِنْكُمْ مُّتَعَمِّدًا فَجَزَاۗءٌ مِّثْلُ مَا قَتَلَ مِنَ النَّعَمِ

"तो जो कोई तुम में से उसे क़त्ल (शिकार) कर बैठे जान-बूझ कर, तो फिर उसका कफ्फ़ारा होगा उसी तरह का एक चौपाया जैसा कि उसने क़त्ल किया"

कफ्फ़ारे के तौर पर अल्लाह की राह में वैसा ही एक चौपाया सदक़ा किया जायेगा। यानि अगर आपने हिरन मारा तो बकरी या भेड़ दी जायेगी और अगर नील गाय मार दी तो फिर गाय बतौर कफ्फ़ारा देना होगी। इस तरह जिस क़िस्म और जिस जसामत का हैवान शिकार किया गया है, उसके बराबर का चौपाया सदक़ा करना होगा।

يَحْكُمُ بِهٖ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ

"जिसका फ़ैसला तुम में से दो आदिल आदमी करेंगे"

यानि दो मुत्तक़ी और मोअतबर अश्खास इसकी गवाही देंगे कि यह जानवर उस शिकार किये जाने वाले जानवर के बराबर है।

هَدْيًۢا بٰلِغَ الْكَعْبَةِ

"यह नज़र की हैसियत से खाना काबा तक पहुँचाया जाये"

यह जानवर हदी के तौर पर खाना काबा की नज़र किया जायेगा।

اَوْ كَفَّارَةٌ طَعَامُ مَسٰكِيْنَ

"या फिर उसका कफ्फ़ारा है कुछ मसाकीन को खाना खिलाना"

इसमें फ़ुक़हा ने लिखा है कि अगर अनाज या रक़म देना हो तो वह सदक़ाये फ़ितर के हिसाब से होगी।

اَوْ عَدْلُ ذٰلِكَ صِيَامًا

"या उतने ही रोज़े रखना"

यह देखना होगा कि जो जानवर शिकार हुआ है उसे कितने आदमी खा सकते थे। उतने आदमियों को खाना खिलाया जाये या उतने दिन के रोज़े रखे जायें।

لِّيَذُوْقَ وَبَالَ اَمْرِهٖ ۭ

"ताकि वह अपने किये की सज़ा चखे।"

عَفَا اللّٰهُ عَمَّا سَلَفَ ۭ

"अल्लाह माफ़ कर चुका है जो पहले हो चुका है।"

وَمَنْ عَادَ فَيَنْتَقِمُ اللّٰهُ مِنْهُ ۭ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ ذُو انْتِقَامٍ ۝٩٥

"लेकिन जो कोई फिर ऐसा करेगा तो अल्लाह उससे इन्तेक़ाम लेगा, और यक़ीनन अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, इन्तेक़ाम लेने वाला।"

आयत 96

أُحِلَّ لَكُمۡ صَيۡدُ الۡبَحۡرِ وَطَعَامُهٗ

"(अलबत्ता) तुम्हारे लिये हलाल कर दिया गया है समुन्दर का शिकार और उसका खाना"

समुन्दर और दरिया का शिकार हालते अहराम में भी हलाल है। हाजी लोग अगर कश्तियों और बहरी जहाज़ों के ज़रिये से सफ़र कर रहे हों तो वह अहराम की हालत में भी मछली वगैरह का शिकार कर सकते हैं।

مَتَاعًا لَّكُمۡ وَلِلسَّيَّارَةِ

"तुम्हारे लिये और मुसाफ़िरों के लिये ज़ादे राह के तौर पर।"

समुन्दर की ख़ुराक (sea food) तो यूँ समझ लीजिये कि पूरी दुनिया के इंसानों के लिये गिज़ा का एक नया ख़ज़ाना है जो सामने आया है। यह बहुत सी खराबियों और बीमारियों से बचाने वाली भी है। यही वजह है कि दुनिया में यह आज-कल बहुत मक़बूल हो रही है।

وَحُرِّمَ عَلَيۡكُمۡ صَيۡدُ الۡبَرِّ مَا دُمۡتُمۡ حُرُمًا

"लेकिन खुश्की पर शिकार करना तुम्हारे लिये हराम कर दिया गया है जब तक कि तुम अहराम में हो।"

وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيۡۤ اِلَيۡهِ تُحۡشَرُوۡنَ ۝٩٦

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रखो जिसकी तरफ़ तुम्हें जमा कर दिया जायेगा।"

तुम सब उसकी तरफ़ घेराव करके ले जाये जाओगे।

आयत 97

جَعَلَ اللّٰهُ الۡكَعۡبَةَ الۡبَيۡتَ الۡحَرَامَ قِيٰمًا لِّلنَّاسِ

"अल्लाह ने काबे को, जो कि बैतुल हराम है, लोगों के लिये क़ियाम का बाइस बना दिया है"

وَالشَّهۡرَ الۡحَرَامَ وَالۡهَدۡىَ وَالۡقَلَاۤئِدَ

"और हुरमत वाला महीना, क़ुर्बानी के जानवर और वह जानवर भी जिनके गलों में पट्टे डाल दिये गये हों"

यह सब अल्लाह तआला के शआइर (संस्कार) हैं और उसी के मुअय्यन करदा हैं। सूरत के शुरू में भी इनका ज़िक्र आ चुका है। यहाँ दरअसल तौसीक़ (confirmation) हो रही है कि यह सब चीज़ें ज़माना-ए-जाहिलियत की रिवायात नहीं हैं बल्कि खाना काबा की हुरमत और अज़मत की अलामत हैं।

ذٰلِكَ لِتَعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ يَعۡلَمُ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ

"यह इसलिये कि तुम अच्छी तरह जान लो कि अल्लाह तआला को आसमानों और ज़मीन की हर शय का इल्म है"

وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمٌ ۝٩٧

"और यह कि अल्लाह हर शय का इल्म रखता है।"

आगे चल कर इन चीज़ों के मुक़ाबले में उन चार चीज़ों का ज़िक्र आयेगा जो अहले अरब के यहाँ बगैर किसी सनद के हराम कर ली गयी थीं।

आयत 98

اِعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيۡدُ الۡعِقَابِ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝٩٨

"जान लो कि अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख्त है और यह कि अल्लाह ग़फ़ूर और रहीम भी है।"

यानि उसकी तो दोनों शानें एक साथ जलवागर हैं। अब देखो कि तुम अपने आपको किस शान के साथ मुताल्लिक़ कर रहे हो और ख़ुद को कैसे सुलूक का मुस्तहिक़ बना रहे हो? उसकी अक़ूबत का या उसकी रहमत और मग़फ़िरत का?

आयत 99

مَا عَلَى الرَّسُوْلِ اِلَّا الْبَلٰغُ ؕ

"रसूल (ﷺ) पर सिवाय पहुँचा देने के और कोई ज़िम्मेदारी नहीं है।"

وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ وَمَا تَكْتُمُوْنَ ﴿۹۹﴾

"और अल्लाह जानता है जो कुछ तुम ज़ाहिर करते हो और जो कुछ तुम छुपाते हो।"

जब रसूल अल्लाह ﷺ ने पैग़ाम पहुँचा दिया तो बाक़ी सारी ज़िम्मेदारी तुम्हारी है।

आयत 100

قُلْ لَّا يَسْتَوِى الْخَبِيْثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوْ اَعْجَبَكَ كَثْرَةُ الْخَبِيْثِ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये कि नापाक और पाक बराबर नहीं हो सकते, चाहे नापाक शय की कसरत तुम्हें अच्छी लगे।"

इन्सान तो चाहता है कि उसके पास हर शय की बहुतात हो, लेकिन नाजायज़ और हराम तरीक़े से कमाया हुआ माल अगरचे कसरत से जमा हो गया हो मगर है तो खबीस और नापाक ही। बेशक उसकी चकाचौंध तुम्हारी आँखों को खीराह (प्रभावित) कर रही हो मगर उसमें तुम्हारे लिये कोई भलाई नहीं है। बक़ौल अल्लामा इक़बाल:

नज़र को खैर करती है चमक तहज़ीबे हाज़िर की
यह सन्नाई मगर झूठे नगों की रेज़ा कारी है!

فَاتَّقُوا اللّٰهَ يٰۤاُولِى الْاَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ﴿۱۰۰﴾

"तो अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो ऐ होशमंदो, ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

आयात 101 से 108 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَسْـَٔلُوْا عَنْ اَشْيَآءَ اِنْ تُبْدَ لَكُمْ تَسُؤْكُمْ ۚ وَاِنْ تَسْـَٔلُوْا عَنْهَا حِيْنَ يُنَزَّلُ الْقُرْاٰنُ تُبْدَ لَكُمْ ؕ عَفَا
اللّٰهُ عَنْهَا ؕ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ﴿۱۰۱﴾ قَدْ سَاَلَهَا قَوْمٌ مِّنْ قَبْلِكُمْ ثُمَّ اَصْبَحُوْا بِهَا كٰفِرِيْنَ ﴿۱۰۲﴾ مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنْۢ بَحِيْرَةٍ وَّلَا
سَآئِبَةٍ وَّلَا وَصِيْلَةٍ وَّلَا حَامٍ ۙ وَّلٰكِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يَفْتَرُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ ؕ وَاَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُوْنَ ﴿۱۰۳﴾ وَاِذَا قِيْلَ
لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَاۤ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ قَالُوْا حَسْبُنَا مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ اٰبَآءَنَا ؕ اَوَلَوْ كَانَ اٰبَآؤُهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ شَيْـًٔا
وَّلَا يَهْتَدُوْنَ ﴿۱۰۴﴾ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا عَلَيْكُمْ اَنْفُسَكُمْ ۚ لَا يَضُرُّكُمْ مَّنْ ضَلَّ اِذَا اهْتَدَيْتُمْ ؕ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا
فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ﴿۱۰۵﴾ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ حِيْنَ الْوَصِيَّةِ اثْنٰنِ
ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ اَوْ اٰخَرٰنِ مِنْ غَيْرِكُمْ اِنْ اَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِى الْاَرْضِ فَاَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةُ الْمَوْتِ ؕ تَحْبِسُوْنَهُمَا مِنْۢ بَعْدِ
الصَّلٰوةِ فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ اِنِ ارْتَبْتُمْ لَا نَشْتَرِىْ بِهٖ ثَمَنًا وَّلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى ۙ وَلَا نَكْتُمُ شَهَادَةَ ۙ اللّٰهِ اِنَّاۤ اِذًا لَّمِنَ الْاٰثِمِيْنَ ﴿۱۰۶﴾
فَاِنْ عُثِرَ عَلٰۤى اَنَّهُمَا اسْتَحَقَّاۤ اِثْمًا فَاٰخَرٰنِ يَقُوْمٰنِ مَقَامَهُمَا مِنَ الَّذِيْنَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْاَوْلَيٰنِ فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ

لَشَهَادَتُنَا أَحَقُّ مِنْ شَهَادَتِهِمَا وَمَا اعْتَدَيْنَا ۖ إِنَّا إِذًا لَمِنَ الظَّالِمِينَ ﴿١٠٧﴾ ذَٰلِكَ أَدْنَىٰ أَنْ يَأْتُوا بِالشَّهَادَةِ عَلَىٰ وَجْهِهَا أَوْ
يَخَافُوا أَنْ تُرَدَّ أَيْمَانٌ بَعْدَ أَيْمَانِهِمْ ۗ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاسْمَعُوا ۗ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقِينَ ﴿١٠٨﴾

आयत 101

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَسْأَلُوا عَنْ أَشْيَاءَ إِنْ تُبْدَ لَكُمْ تَسُؤْكُمْ

"ऐ अहले ईमान! उन चीज़ों के मुताल्लिक़ सवाल ना किया करो जो अगर तुम पर ज़ाहिर कर दी जायें तो तुम्हें बुरी लगें।"

यह एक ख़ास क़िस्म की मज़हबी ज़हनियत का तज़किरा है। बाज़ लोग बिला ज़रूरत हर बात को खोदने, कुरेदने और बाल की खाल उतारने के आदी होते हैं। अगर किसी चीज़ के बारे में अल्लाह तआला ने ख़ुद ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमायी है तो उस बारे में ख्वाह मा ख्वाह सवाल करना अपनी ज़िम्मेदारी को बढ़ाने वाली बात है। चुनाँचे हज के बारे में जब सूरह आले इमरान (आयत 97) में हुक्म नाज़िल हुआ तो एक साहब ने सवाल किया कि हुज़ूर क्या हर साल हज फ़र्ज़ है? आप ﷺ ने सवाल सुन लिया लेकिन रुखे मुबारक दूसरी तरफ़ कर लिया। अब वह साहब उधर तशरीफ़ ले आये और फिर अर्ज़ किया, हुज़ूर क्या हज हर साल फ़र्ज़ है? हुज़ूर ﷺ ने फिर ऐराज़ फ़रमाया। जब उन्होंने यही सवाल तीसरी मरतबा किया तो फिर आप ﷺ नाराज़ हुए और फ़रमाया कि देखो अगर मैं हाँ कह दूँ तो तुम लोगों पर क़यामत तक के लिये हर साल हज फ़र्ज़ हो जायेगा। जिस चीज़ में अल्लाह तआला ने अहतमाल (संभावना) रखा है उसमें तुम्हारी बेहतरी है। जो शख्स हर साल कर सकता हो वह हर साल कर ले, लेकिन फ़र्ज़ियत के साथ हर साल की क़ैद अल्लाह ने नहीं लगायी है। बेजा सवाल करके तुम अपने लिये तंगी पैदा ना करो। जैसे गाय के मामले में बनी इसराइल ने किया था कि उसका रंग कैसा हो? उसकी उम्र क्या हो? और कैसी गाय हो? वगैरह-वगैरह, जितने सवालात करते गये उतनी ही शराइत लागू होती गयीं। इस नौइयत के सारे सवाल इसी ज़िमन में आते हैं।

وَإِنْ تَسْأَلُوا عَنْهَا حِينَ يُنَزَّلُ الْقُرْآنُ تُبْدَ لَكُمْ

"और अगर तुम सवाल करोगे, ऐसी चीज़ों के बारे में जबकि अभी क़ुरान का नुज़ूल जारी है तो तुम्हारे लिये वह ज़ाहिर कर दी जायेंगी।"

अल्लाह तआला ने अपनी हिकमत के तहत कई चीज़ों को परदे में रखा है, क्योंकि वह समझता है कि इनको ज़ाहिर करने में तुम्हारे लिये तंगी हो जायेगी, बोझ ज़्यादा हो जायेगा, यह तुम पर गिराँ गुज़रेंगी। लेकिन अगर सवाल करोगे तो फिर उनको ज़ाहिर कर दिया जायेगा।

عَفَا اللَّهُ عَنْهَا ۗ وَاللَّهُ غَفُورٌ حَلِيمٌ ﴿١٠١﴾

"अल्लाह तआला ने इसमें दरगुज़र से काम लिया है, अल्लाह बख्शने वाला और बुर्दबार है।"

बाज़ चीज़ों के बारे में जो अल्लाह ने तुम पर नरमी की है और तुम्हें तंगी से बचाया है, वह इसलिये है कि वह ग़फ़ूर और हलीम है। यह किसी निस्यान, भूल या ग़लती की वजह से नहीं हुआ (माज़ अल्लाह!)

आयत 102

قَدْ سَأَلَهَا قَوْمٌ مِنْ قَبْلِكُمْ ثُمَّ أَصْبَحُوا بِهَا كَافِرِينَ ﴿١٠٢﴾

"तुमसे पहले एक क़ौम (अहले किताब) ने इस क़िस्म के सवालात किये थे और फिर वह उनका इन्कार करने वाले बन गये थे।"

अब यहाँ उन चीज़ों का ज़िक्र आ रहा है जो उनके यहाँ ख्वाह मा ख्वाह बहुत ज़्यादा मुक़द्दस हो गयी थीं। यह गोया अल्लाह तआला के उन चार शआइर के मुक़ाबले की चार चीज़ें हैं जिनका ज़िक्र पीछे आयत 97 में हुआ है: { جَعَلَ اللَّهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيَامًا لِلنَّاسِ وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ وَالْهَدْيَ وَالْقَلَائِدَ ۚ } वहाँ इन चार चीज़ों की तौसीक़ की गयी थी कि वह वाक़िअतन

अल्लाह की शरीअत के अजज़ा हैं, उनका अहतराम और उनकी हुरमत को मल्हूज़ रखना अहले ईमान पर लाज़िम है। लेकिन यहाँ तवज्जो दिलाई जा रही है कि कुछ चीज़ें तुम्हारे यहाँ ऐसी राइज हैं जो दौरे जाहिलियत के मुशरिकाना अवहाम (अंधविश्वास) की यादगारें हैं। चुनाँचे फ़रमाया:

आयत 103

مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنۡۢ بَحِيۡرَةٍ وَّلَا سَآٮِٕبَةٍ وَّلَا وَصِيۡلَةٍ وَّلَا حَامٍ‌ ۙ

"अल्लाह ने ना तो बहीरा को कुछ चीज़ बनाया है, ना सायबा, ना वसीला और ना हाम को"

इन चीज़ों के तक़द्दुस की अल्लाह की तरफ़ से कोई सनद नहीं। बहीरा, सायबा, वसीला और हाम के बारे में बहुत से अक़वाल हैं, लेकिन जलीलुल क़द्र ताबई हज़रत सईद बिन मुसैब रहि० ने इन अल्फ़ाज़ की जो तफ़सील बयान की है, वह सही बुखारी (किताब तफ़सीरुल क़ुरान) में वारिद हुई है। मौलाना तक़ी उस्मानी साहब ने भी उसे अपने हवाशी में नक़ल किया है। बहीरा: ऐसा जानवर जिसका दूध बुतों के नाम कर दिया जाता था और कोई उसे अपने काम में ना लाता था। सायबा: वह जानवर जो बुतों के नाम पर, हमारे ज़माने के सांड की तरह, छोड़ दिया जाता था। वसीला: जो ऊँटनी मुसलसल मादा बच्चों को जन्म देती और दरमियान में कोई नर बच्चा पैदा ना होता, उसे भी बुतों के नाम पर छोड़ दिया जाता था। हाम: नर ऊँट जो एक ख़ास तादाद में जफ्ती (संभोग) कर चुका होता, उसे भी बुतों के नाम पर छोड़ दिया जाता था। इस तरह के जानवरों को बुतों के नाम मंसूब करके आज़ाद छोड़ दिया जाता था कि अब उन्हें कोई हाथ ना लगाये, कोई उनसे इस्तफ़ादा ना करे, कोई उनका गोश्त ना खाये ना सदक़ा दे, ना उनसे कोई ख़िदमत ले, बस उनका अहतराम किया जाये। लिहाज़ा वाज़ेह कर दिया गया कि अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसे कोई अहकाम नहीं दिये गये, बल्कि फ़रमाया:

وَّلٰـكِنَّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا يَفۡتَرُوۡنَ عَلَى اللّٰهِ الۡكَذِبَ‌ؕ وَاَكۡثَرُهُمۡ لَا يَعۡقِلُوۡنَ ﴿۱۰۳﴾

"लेकिन यह काफ़िर अल्लाह पर इफ़तरा करते (झूठ गढ़ते) हैं, और उनकी अक्सरियत अक़्ल से आरी है।"

यह लोग बगैर सोचे समझे अल्लाह के ज़िम्मे झूठी बातें लगाते रहते हैं।

आयत 104

وَاِذَا قِيۡلَ لَهُمۡ تَعَالَوۡا اِلٰى مَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوۡلِ

"और जब उन्हें कहा जाता है कि आओ उस चीज़ की तरफ़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमायी है और आओ अल्लाह के रसूल की तरफ़"

इस हुक्म (कि आओ अल्लाह के रसूल की तरफ़) की तर्जुमानी अल्लामा इक़बाल ने क्या ख़ूबसूरत अल्फ़ाज़ में की है:

ब मुस्तफ़ा ﷺ ब रसां ख्वीश रा कि दीं हमा ऊस्त
अगर बाव नरसीदी तमाम बू लहबीस्त

قَالُوۡا حَسۡبُنَا مَا وَجَدۡنَا عَلَيۡهِ اٰبَآءَنَا‌ ؕ

"वह कहते हैं हमारे लिये वही काफ़ी है जिस पर हमने अपने आबा व अजदाद को पाया।"

यानि हमारे आबा व अजदाद जो इतने अरसे से इन चीज़ों पर अमल करते चले आ रहे थे तो क्या वह जाहिल थे? यही बातें आज भी सुनने को मिलती हैं। किसी रस्म के बारे में आप किसी को बतायें कि इसकी दीन में कोई सनद नहीं है और सहाबा रज़ि० के यहाँ इसका कोई वजूद ना था तो उसका जवाब होगा कि हमने तो अपने बाप-दादा को यूँ ही करते देखा है।

اَوَلَوْ كَانَ اٰبَآؤُهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ شَيْـًٔا وَّلَا يَهْتَدُوْنَ ۝١٠٤

"ख्वाह उनके आबा व अजदाद ऐसे रहे हों कि ना उन्हें कोई इल्म हासिल हुआ हो ना ही वह हिदायत पर हों (फिर भी)?"

जैसे तुम अल्लाह की मख्लूक़ हो वैसे ही वह भी मख्लूक़ थे। जैसे तुम ग़लत काम कर सकते हो और ग़लत आरा (राय) क़ायम कर सकते हो, वैसे ही वह भी ग़लतकार हो सकते थे।

आयत 105

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا عَلَيْكُمْ اَنْفُسَكُمْ ۚ

"ऐ लोगो जो ईमान लाये हो, तुम पर ज़िम्मेदारी है सिर्फ़ अपनी जानों की।"

لَا يَضُرُّكُمْ مَّنْ ضَلَّ اِذَا اهْتَدَيْتُمْ ۭ

"जो कोई गुमराह हो जाये वह तुम्हें नुक़सान नहीं पहुँचा सकता, जबकि तुम हिदायत पर हो।"

اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝١٠٥

"अल्लाह ही की तरफ़ तुम सबको लौट कर जाना है, और वह तुम्हें बता देगा जो कुछ तुम करते रहे थे।"

यह आयत इस लिहाज़ से बहुत अहम है कि इसका एक ग़लत मतलब और मफ़हूम दौरे सहाबा रज़ि० में ही बाज़ लोगों ने निकाल लिया था। वह यह कि दावत व तब्लीग की कोई ज़िम्मेदारी हम पर नहीं है, हर एक पर अपनी ज़ात की ज़िम्मेदारी है, कोई क्या करता है इससे किसी दूसरे को कुछ गर्ज़ नहीं होनी चाहिये। क़ुरान जो कह रहा है कि "तुम पर ज़िम्मेदारी सिर्फ़ अपनी जानों की है। अगर तुम हिदायत पर हो तो जो गुमराह हुआ वह तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ेगा।" लिहाज़ा हर किसी को बस अपना अमल दुरुस्त रखना चाहिये, कोई दूसरा शख्स अगर ग़लत काम करता है तो उसे ख्वाह मा ख्वाह रोकने-टोकने, उसकी नाराज़गी मोल लेने, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की कोई ज़रूरत नहीं है। इस तरह की बातें जब हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० के इल्म में आईं तो आप रज़ि० ने बाक़ायदा एक खुत्बा दिया कि लोगों मैं देख रहा हूँ कि तुम इस आयत का मतलब ग़लत समझ रहे हो। इसका मतलब तो यह है कि तुम्हारी सारी तब्लीग, कोशिश, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर के बावजूद अगर कोई शख्स गुमराह रहता है तो उसका तुम पर कोई वबाल नहीं। सूरतुल बक़रह (आयत:119) में हम पढ़ चुके हैं: {وَّلَا تُسْـَٔلُ عَنْ اَصْحٰبِ الْجَحِيْمِ} "(ऐ नबी ﷺ) आपसे कोई बाज़ पुर्स नहीं होगी जहन्नमियों के बारे में।" यानि हम यह नहीं पूछेंगे कि हमने आप ﷺ को बशीर व नज़ीर बना कर भेजा था और फिर भी यह लोग जहन्नम में क्यों चले गये? लेकिन जहाँ तक दावत व तब्लीग, नसीहत व मौअज़त (उपदेश), अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर का ताल्लुक़ है, यह तो फ़राइज़ में से हैं। इस आयत की रू से यह फ़राइज़ साक़ित (माफ़) नहीं होते। बल्कि इसका दुरुस्त मफ़हूम यह है कि तुम्हारी सारी कोशिश के बावजूद अगर कोई शख्स नहीं मानता तो अब तुम्हारी ज़िम्मेदारी पूरी हो गयी। फ़र्ज़ कीजिये कि किसी का बच्चा आवारा हो गया है, वालिद अपनी इम्कानी हद तक कोशिश किये जा रहा है मगर बच्चा राहे रास्त पर नहीं आ रहा, तो ज़ाहिर बात है कि अगर उसने बच्चे की तरबियत और इस्लाह में कोई कोताही नहीं छोड़ी तो अल्लाह की तरफ़ से उसकी गुमराही का वबाल वालिद पर नहीं आयेगा। लेकिन अपना फ़र्ज़ अदा करना बहरहाल लाज़िम है।

आयत 106

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ حِيْنَ الْوَصِيَّةِ اثْنٰنِ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ

"ऐ अहले ईमान, तुम्हारे दरमियान शहादत (का निसाब) है जबकि तुम में से किसी को मौत आ जाये और वह वसीयत कर रहा हो, तो तुम में से दो मोअतबर अश्खास (बतौर गवाह) मौजूद हों"

यानि मौत से क़ब्ल वसीयत के वक़्त अपने लोगों में से दो गवाह (मर्द) मुक़र्रर कर लो। वाज़ेह रहे कि वसीयत कुल तरके के एक तिहाई हिस्से से ज़्यादा की नहीं हो सकती। अगर ज़ायदाद ज़्यादा है तो उसका एक तिहाई हिस्सा भी ख़ासा ज़्यादा हो सकता है।

أَوْ آخَرَانِ مِنْ غَيْرِكُمْ إِنْ أَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِي الْأَرْضِ فَأَصَابَتْكُمْ مُصِيبَةُ الْمَوْتِ

"या दूसरे दो आदमी तुम्हारे ग़ैरों में से अगर तुम ज़मीन में सफ़र पर (निकले हुए) हो और (हालते सफ़र में) तुम्हें मौत की मुसीबत पेश आ जाये।"

यानि हालते सफ़र में अगर किसी की मौत का वक़्त आ पहुँचे और वह वसीयत करना चाहता हो तो ऐसी सूरत में गवाहान ग़ैर क़ौम, किसी दूसरी बस्ती, किसी दूसरी बिरादरी और दूसरे क़बीले से भी मुक़र्रर किये जा सकते हैं, मगर आम हालात में अपनी बस्ती, अपने खानदान में रहते हुए कोई शख्स इन्तेक़ाल कर रहा है तो उसे वसीयत के वक़्त अपने लोगों, रिश्तेदारों और क़राबतदारों में से ही दो मोअतबर आदमियों को गवाह बनाना चाहिये।

تَحْبِسُونَهُمَا مِنْ بَعْدِ الصَّلَاةِ

"तुम उन दोनों गवाहों को नमाज़ के बाद (मस्जिद में) रोक लो"

यानि जब वसीयत के बारे में मुतालक़ा लोग पूछें और उसमें कुछ शक का अहतमाल हो तो नमाज़ के बाद उन दोनों गवाहों को मस्जिद में रोक लिया जाये।

فَيُقْسِمَانِ بِاللَّهِ إِنِ ارْتَبْتُمْ

"फिर वह दोनों अल्लाह की क़सम खायें, अगर तुम्हें शक हो"

अगर तुम्हें उनके बारे में कोई शक हो कि कहीं यह वसीयत को बदल ना दें, कहीं उनसे गलती ना हो जाये तो उनसे क़सम उठवा लो। वह नमाज़ के बाद मस्जिद में हलफ़ की बुनियाद पर शहादत दें, और इस तरह कहें:

لَا نَشْتَرِي بِهِ ثَمَنًا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبَىٰ

"हम इसकी कोई क़ीमत वसूल नहीं करेंगे, अगरचे कोई क़राबतदार ही क्यों ना हो"

यानि हम इस शहादत से ना तो ख़ुद कोई नाजायज़ फ़ायदा उठाएँगे, ना किसी के हक़ में कोई नाइंसाफ़ी करेंगे और ना ही किसी रिश्तेदार अज़ीज़ को कोई नाजायज़ फ़ायदा पहुँचाएँगे।

وَلَا نَكْتُمُ شَهَادَةَ اللَّهِ

"और ना हम छुपाएँगे अल्लाह की गवाही को"

गौर करें गवाही इतनी अज़ीम शय है कि इसे "شَهَادَةَ اللَّهِ" कहा गया है, यानि अल्लाह की गवाही, अल्लाह की तरफ़ से अमानत।

إِنَّا إِذًا لَمِنَ الْآثِمِينَ ﴿١٠٦﴾

"अगर हम ऐसा करें तो यक़ीनन हम गुनाहगारों में शुमार होंगे।"

आयत 107

فَإِنْ عُثِرَ عَلَىٰ أَنَّهُمَا اسْتَحَقَّا إِثْمًا

"फिर अगर मालूम हो जाये कि इन दोनों ने (झूठ बोल कर) गुनाह कमाया है"

हल्फ़िया बयान भी ग़लत दिया है और वसीयत में तरमीम (बदलाव) की है, इसके बावजूद कि नमाज़ के बाद मस्जिद के अन्दर हलफ़ उठा कर बात कर रहे हैं। आख़िर इन्सान हैं और हर मआशरे में हर तरह के इन्सान हर वक़्त मौजूद रहते हैं।

فَآخَرَانِ يَقُومَانِ مَقَامَهُمَا

"तो अब दो और लोग उनकी जगह पर खड़े हों"

مِنَ الَّذِيْنَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْاَوْلَيٰنِ
"उन लोगों में से जिनकी हक़ तल्फ़ी की है इन पहले दो लोगों ने"

अब वह खड़े होकर कहेंगे कि यह लोग हमारा हक़ तल्फ़ कर रहे हैं, इन्होंने वसीयत के अन्दर ख्यानत की है।

فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ لَشَهَادَتُنَآ اَحَقُّ مِنْ شَهَادَتِهِمَا
"पस वह दोनों अल्लाह की क़सम खायें कि हमारी गवाही ज़्यादा बरहक़ है इन दोनों की गवाही से"

وَمَا اعْتَدَيْنَآ ۖ اِنَّآ اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٠٧﴾
"और हमने कोई ज़्यादती नहीं की है, अगर ऐसा हो तो यक़ीनन हम ज़ालिमों में से होंगे।"

आयत 108

ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَنْ يَّاْتُوْا بِالشَّهَادَةِ عَلٰى وَجْهِهَآ
"यह तरीक़ेकार क़रीबतर है कि इससे लोग ठीक-ठीक शहादत पेश करें"

اَوْ يَخَافُوْٓا اَنْ تُرَدَّ اَيْمَانٌۢ بَعْدَ اَيْمَانِهِمْ ۭ
"या (कमसे कम) उन्हें खौफ़ रहे कि हमारी क़समें उनकी क़समों के बाद रद्द कर दी जायेंगी।"

क्योंकि उन्हें मालूम होगा कि अगर हमने झूठी क़सम खा भी ली, और फिर अगर दूसरा फ़रीक़ भी क़सम खा गया, तो हमारा मंसूबा कामयाब नहीं होगा। लिहाज़ा वाह इसकी हिम्मत नहीं करेंगे।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاسْمَعُوْا ۭ
"और अल्लाह का तक़्वा इख़्तियार करो और सुन रखो।"

وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ﴿١٠٨﴾
"अल्लाह ऐसे नाफ़रमानों को हिदायत नहीं देता।"

इस तरह का मामला सूरह अल नूर (आयात 6 से 9) में भी मज़कूर हुआ है कि अगर कोई शख्स अपनी बीवी को बदकारी करते हुए देखे और उसके पास कोई और गवाह ना हो तो वह चार मरतबा क़सम खा कर कहे कि मैं जो कह रहा हूँ सच कह रहा हूँ। तो उस एक शख्स की गवाही चार गवाहों के बराबर हो जायेगी। लेकिन फिर अल्लाह तआला ने इसका जवाब भी बताया है, कि अगर बीवी भी चार मरतबा क़सम खा कर कह दे कि यह झूठ बोल रहा है, मुझ पर तोहमत लगा रहा है और पाँचवी मरतबा यह कहे कि मुझ पर अल्लाह का ग़ज़ब टूटे अगर इसका इल्ज़ाम दुरुस्त हो, तो शौहर की गवाही साक़ित हो जायेगी। इस तरह दोनों तरफ़ से अल्लाह तआला ने मामले को मुतवाज़िन किया है।

अब आखरी दो रुकूअ इस लिहाज़ से अहम हैं कि इनमें अल्लाह तआला के साथ हज़रत मसीह अलै० के मकालमे (बात-चीत) का नक़्शा खींचा गया है, जो क़यामत के दिन होगा। और इसके पसमंज़र में गोया एक पूरी दास्तान है, जो एक नयी शान से सामने सामने आयी है।

आयात 109 से 115 तक

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ فَيَقُوْلُ مَاذَآ اُجِبْتُمْ ۭ قَالُوْا لَا عِلْمَ لَنَا ۭ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ﴿١٠٩﴾ اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ
مَرْيَمَ اذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَعَلٰي وَالِدَتِكَ ۘ اِذْ اَيَّدْتُّكَ بِرُوْحِ الْقُدُسِ ۣ تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا ۚ وَاِذْ عَلَّمْتُكَ
الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ۚ وَاِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْــــَٔــةِ الطَّيْرِ بِاِذْنِيْ فَتَنْفُخُ فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًۢا بِاِذْنِيْ
وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِيْ ۚ وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِاِذْنِيْ ۚ وَاِذْ كَفَفْتُ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ عَنْكَ اِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ

فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ اِنْ هٰذَآ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ ﴿١١٠﴾ وَاِذْ اَوْحَيْتُ اِلَى الْحَوَارِيّٖنَ اَنْ اٰمِنُوْا بِيْ وَبِرَسُوْلِيْ ۚ قَالُوْٓا اٰمَنَّا
وَاشْهَدْ بِاَنَّنَا مُسْلِمُوْنَ ﴿١١١﴾ اِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ هَلْ يَسْتَطِيْعُ رَبُّكَ اَنْ يُّنَزِّلَ عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ
السَّمَآءِ ۭ قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿١١٢﴾ قَالُوْا نُرِيْدُ اَنْ نَّاْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَىِٕنَّ قُلُوْبُنَا وَنَعْلَمَ اَنْ قَدْ صَدَقْتَنَا
وَنَكُوْنَ عَلَيْهَا مِنَ الشّٰهِدِيْنَ ﴿١١٣﴾ قَالَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَآ اَنْزِلْ عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ تَكُوْنُ لَنَا عِيْدًا
لِّاَوَّلِنَا وَاٰخِرِنَا وَاٰيَةً مِّنْكَ ۚ وَارْزُقْنَا وَاَنْتَ خَيْرُ الرّٰزِقِيْنَ ﴿١١٤﴾ قَالَ اللّٰهُ اِنِّيْ مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ ۚ فَمَنْ يَّكْفُرْ بَعْدُ مِنْكُمْ
فَاِنِّيْٓ اُعَذِّبُهٗ عَذَابًا لَّآ اُعَذِّبُهٗٓ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ﴿١١٥﴾

आयत 109

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ فَيَقُوْلُ مَاذَآ اُجِبْتُمْ ۭ

"(उस दिन का तसव्वुर करो) जिस दिन अल्लाह तआला तमाम रसूलों को जमा करेगा और पूछेगा आप लोगों को क्या जवाब मिला था?"

आप लोगों की दावत के जवाब में आपकी क़ौमों ने आपके साथ क्या मामला किया था?

قَالُوْا لَا عِلْمَ لَنَا ۭ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ﴿١٠٩﴾

"वह कहेंगे कि हमें कुछ मालूम नहीं, तू ही बेहतर जानने वाला है गैब की बातों का।"

वह अल्लाह तआला के जनाब में ज़बान खोलने से गुरेज़ करेंगे और कहेंगे कि तू तमाम पोशीदा बातों को जानने वाला है, हर हक़ीक़त तुझ पर मुन्कशिफ़ है।

आयत 110

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ

"जब कहेगा अल्लाह तआला ऐ ईसा अलै० इब्ने मरयम"

अब रोज़े क़यामत हज़रत ईसा अलै० की ख़ास पेशी का मंज़र है। दुनिया में उनकी परस्तिश की गयी, उनको अल्लाह का बेटा बनाया गया, सालिसु सलासा क़रार दिया गया। लिहाज़ा अब आँजनाब अलै० को अल्लाह तआला के सामने जो शर्मिंदगी उठानी पड़ेगी, उसका नक़्शा खींचा जा रहा है जब अल्लाह उनको मुख़ातिब करके फ़रमायेगा कि ऐ ईसा अलै० इब्ने मरयम:

اذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَعَلٰي وَالِدَتِكَ ۘ

"ज़रा मेरे उन ईनामात को याद करो जो तुम पर और तुम्हारी वालिदा पर हुए।"

اِذْ اَيَّدْتُّكَ بِرُوْحِ الْقُدُسِ ۣ

"जबकि मैंने तुम्हारी मदद की रूहुल क़ुदुस से"

जिब्राइल अलै० के ज़रिये से तुम्हारी ताइद की।

تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا ۚ

"तुम गुफ्तुगू करते थे लोगों के साथ पिन्घोड़े में भी और बड़ी उम्र को पहुँच कर भी।"

तुम शीर ख्वारगी (शिशु) की उम्र में भी लोगों से गुफ्तुगू करते थे और अधेड़ उम्र को पहुँच कर भी। आगे वही सूरह आले इमरान (आयत 48) वाले अल्फ़ाज़ दोहराये जा रहे हैं।

وَاِذْ عَلَّمْتُكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ۚ

"और (याद करो मेरे उस अहसान को) जबकि मैंने तुम्हें सिखाई किताब और हिकमत, यानि तौरात और इन्जील।"

दरमियान का वाव तफ़सीरिया है, लिहाज़ा "यानि" के मफ़हूम में आयेगा।

وَاِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ بِاِذْنِيْ

"और (याद करो) जब तुम बनाते थे गारे से परिन्दे की एक शक्ल, मेरे हुक्म से"

فَتَنْفُخُ فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًۢا بِاِذْنِيْ

"फिर तुम उसमें फूँक मारते थे तो वह एक उड़ने वाला परिंदा बन जाता था मेरे हुक्म से"

وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِيْ

"और तुम अच्छा कर देते थे मादरज़ाद अंधे को और कोढ़ी को मेरे हुक्म से।"

وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِاِذْنِيْ

"और जब तुम मुर्दों को निकाल खड़ा करते थे मेरे हुक्म से।"

وَاِذْ كَفَفْتُ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ عَنْكَ

"और (याद करो मेरे उस अहसान को भी) जब मैंने बनी इसराइल के हाथ रोक दिये तुमसे"

उनके हाथ तुम तक नहीं पहुँचने दिये और तुम्हें उनके शर से महफ़ूज़ रखा। यह उसी वाक़िये की तरफ़ इशारा है कि हज़रत मसीह अलै० गिरफ़्तार नहीं हुए, और ऐन उस वक़्त जब पुलिस वाले आप अलै० को गिरफ़्तार करने के लिये बाग़ में दाख़िल हुए तो चार फ़रिश्ते उतरे, जो आप अलै० को लेकर आसमान पर चले गये।

اِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ اِنْ هٰذَآ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ ۝١١٠

"जबकि तुम आये उनके पास खुले मौज्ज़ात के साथ तो कहा उन लोगों ने जो उनमें से काफ़िर थे कि यह तो सरीह जादू के सिवा कुछ नहीं है।"

आयत 111

وَاِذْ اَوْحَيْتُ اِلَى الْحَوَارِيّٖنَ

"और (याद करो मेरे अहसान को) जब मैंने इशारा किया हवारियों को"

اَنْ اٰمِنُوْا بِيْ وَبِرَسُوْلِيْ

"कि ईमान लाओ मुझ पर और मेरे रसूल पर।"

उनके दिल में डाल दिया, इल्हाम कर दिया, उनकी तरफ़ वही कर दी। यह वहिये ख़फ़ी है। ज़ाहिर है हवारियों की तरफ़ वहिये जली तो नहीं आ सकती थी जो खास्सा-ए-नबुवत है। लेकिन जैसा कि शहद की मक्खी के लिये वही का लफ़्ज़ आया है (अल् नहल:68) या जैसे अल्लाह तआला ने आसमानों को वही की (फ़ुसिलत:12) यह वहिये ख़फ़ी की मिसालें हैं।

قَالُوْٓا اٰمَنَّا وَاشْهَدْ بِاَنَّنَا مُسْلِمُوْنَ ۝١١١

"तो उन्होंने कहा हम ईमान लाये और (ऐ ईसा अलै० आप भी) गवाह रहिये कि हम अल्लाह के फ़रमाबरदार हैं।"

आयत 112

اِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ

"और (ज़रा याद करो उस वाक़िये को) जब हवारियों ने कहा कि ऐ ईसा इब्ने मरयम"

هَلْ يَسْتَطِيْعُ رَبُّكَ اَنْ يُّنَزِّلَ عَلَيْنَا مَاۗىِٕدَةً مِّنَ السَّمَاۗءِ

"क्या आपके रब को यह क़ुदरत हासिल है कि हम पर आसमान से एक दस्तरख्वान उतारे?"

قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝١١٢

"(जवाब में ईसा अलै० ने) कहा अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो अगर तुम ईमान रखते हो।"

मोमिनीन को ऐसी दुआएँ नहीं करनी चाहिये। ऐसे मुतालबात आप लोगों को ज़ेब नहीं देते।

आयत 113

قَالُوْا نُرِيْدُ اَنْ نَّاْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَىِٕنَّ قُلُوْبُنَا

"उन्होंने कहा कि हम चाहते हैं कि हम उस (ख्वान) में से खायें और हमारे दिल बिल्कुल मुत्मईन हो जायें"

यह इस तरह की बात है जैसी हज़रत इब्राहीम अलै० ने कही थी (अल् बक़रह:260): {رَبِّ اَرِنِيْ كَيْفَ تُحْيِ الْمَوْتٰى}। इसी तरह का मुशाहिदा वह भी तलब कर रहे थे।

وَنَعْلَمَ اَنْ قَدْ صَدَقْتَنَا وَنَكُوْنَ عَلَيْهَا مِنَ الشّٰهِدِيْنَ ۝١١٣

"और हमें मालूम हो जाये कि आप अलै० ने जो कुछ हमसे कहा वह सच है और हम उस पर गवाह बन जायें।"

ताकि हमें आप अलै० की किसी बात में शक व शुबह की कोई गुंज़ाइश ना रहे और ऐसा यक़ीने कामिल हो जाये कि फिर हम जब आप अलै० की जानिब से लोगों को तब्लीग करें तो हमारे अपने दिलों में कहीं शक व शुबह का कोई काँटा चुभा हुआ ना रह जाये।

आयत 114

قَالَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَآ اَنْزِلْ عَلَيْنَا مَآىِٕدَةً مِّنَ السَّمَآءِ

"इस पर ईसा अलै० इब्ने मरयम ने दुआ की: ऐ अल्लाह, ऐ हमारे रब, उतार दे हम पर एक दस्तरख्वान आसमान से"

تَكُوْنُ لَنَا عِيْدًا لِّاَوَّلِنَا وَاٰخِرِنَا وَاٰيَةً مِّنْكَ ۚ

"जो ईद बन जाये हमारे लिये और हमारे अगलों और पिछलों के लिये, और एक निशानी हो तेरी तरफ़ से।"

आसमान से, ख़ास तेरे यहाँ से खाने से भरे हुए दस्तरख्वान का नाज़िल होना यक़ीनन हमारे लिये जश्न का मौक़ा होगा, हमारे अगलों-पिछलों के लिये एक यादगार वाक़िया और तेरी तरफ़ से एक ख़ास निशानी होगा।

وَارْزُقْنَا وَاَنْتَ خَيْرُ الرّٰزِقِيْنَ ۝١١٤

"और हमें रिज़्क़ अता फ़रमा और यक़ीनन तू बेहतरीन रिज़्क़ देने वाला है।"

आयत 115

قَالَ اللّٰهُ اِنِّيْ مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ ۚ

"अल्लाह ने इरशाद फ़रमाया (ठीक है) मैं नाज़िल कर दूँगा उसको तुम पर।"

فَمَنْ يَّكْفُرْ بَعْدُ مِنْكُمْ فَاِنِّيْٓ اُعَذِّبُهٗ عَذَابًا لَّآ اُعَذِّبُهٗٓ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ۝١١٥

"लेकिन फिर उसके बाद तुम में से जो कोई कुफ़्र की रविश इख़्तियार करेगा तो फिर उसको मैं अज़ाब भी वह दूँगा जो तमाम जहानों में से किसी और को नहीं दूँगा।"

यानि जब इस तरह की कोई खर्क़े आदत चीज़ दिखा दी जायेगी, खुला मौज्ज़ा सामने आ जायेगा तो फिर रिआयत नहीं होगी। गुज़िश्ता क़ौमों के साथ ऐसे ही हुआ था। क़ौमे समूद ने हज़रत सालेह अलै० से मुतालबा किया कि अभी इस चट्टान

में से एक हामिला ऊँटनी बरामद हो जानी चाहिये। वह ऊँटनी बरामद हो गयी, लेकिन साथ ही रिआयत भी ख़त्म हो गयी। उनसे वाज़ेह तौर पर कह दिया गया कि अब तुम्हारे लिये मोहलत के सिर्फ़ चंद दिन हैं, अगर इन दिनों में ईमान नहीं लाओगे तो नेस्तो नाबूद कर दिये जाओगे। यह बात सूरह शौअरा में बहुत तफ़सील से आयेगी कि ऐ नबी ﷺ यह लोग अब जो निशानियाँ माँग रहे हैं तो हम यह इनकी खैर-ख्वाही में इन्हें नहीं दिखा रहे हैं। अगर इनके कहने पर ऐसी निशानियाँ हम दिखा दें तो फिर इनको मज़ीद रिआयत नहीं दी जायेगी और इनकी मोहलत अभी ख़त्म हो जायेगी। इस क़िस्म के मौज्ज़े देख कर ना कोई पहले ईमान लाया, ना अब यह लोग लायेंगे। इनके अन्दर जो नीयत का फ़साद है वह कहाँ इन्हें मानने देगा? जैसे क़ौमे सालेह अलै० ने नहीं माना, हालाँकि अपनी निगाहों के सामने उन्होंने ऐसा खुला मौज्ज़ा देख लिया था। हज़रत ईसा अलै० के मौज्ज़ों को यहूदियों ने नहीं माना, उल्टा उन्हें जादू क़रार दे दिया। तो इस क़दर वाज़ेह मौज्ज़ात देख कर भी लोग ईमान नहीं लाये। सिवाय उन जादूगरों के जिनका फिरऔन के दरबार में हज़रत मूसा अलै० से मुक़ाबला हुआ था। ना तो ख़ुद फिरऔन ईमान लाया था ना फिरऔन के दरबारी और ना ही अवामुन्नास। चुनाँचे मौज्ज़े का ज़हूर दरअसल मुतल्लक़ा क़ौम के ख़िलाफ़ जाता है। मौज्ज़े के ज़हूर से पहले तो उम्मीद होती है कि अल्लाह तआला शायद इस क़ौम को कुछ ढील दे दे, शायद कुछ और लोगों को ईमान की तौफ़ीक़ मिल जाये, लेकिन मौज्ज़े के ज़हूर से मोहलत का वह सिलसिला ख़त्म हो जाता है।

आयात 116 से 120 तक

وَاِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ ءَاَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوْنِيْ وَاُمِّيَ اِلٰهَيْنِ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ۭ قَالَ سُبْحٰنَكَ مَا يَكُوْنُ لِيْٓ اَنْ
اَقُوْلَ مَا لَيْسَ لِيْ ۤ بِحَقٍّ ڲ اِنْ كُنْتُ قُلْتُهٗ فَقَدْ عَلِمْتَهٗ ۭ تَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِيْ وَلَآ اَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِكَ ۭ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ
الْغُيُوْبِ ۝۱۱۶ مَا قُلْتُ لَهُمْ اِلَّا مَآ اَمَرْتَنِيْ بِهٖٓ اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ ۚ وَكُنْتُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا مَّا دُمْتُ فِيْهِمْ ۚ فَلَمَّا
تَوَفَّيْتَنِيْ كُنْتَ اَنْتَ الرَّقِيْبَ عَلَيْهِمْ ۭ وَاَنْتَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدٌ ۝۱۱۷ اِنْ تُعَذِّبْهُمْ فَاِنَّهُمْ عِبَادُكَ ۚ وَاِنْ تَغْفِرْ لَهُمْ
فَاِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝۱۱۸ قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصّٰدِقِيْنَ صِدْقُهُمْ ۭ لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ
خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ ۭ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝۱۱۹ لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا فِيْهِنَّ ۭ وَهُوَ
عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝۱۲۰

अब इस पेशी का आखरी मंज़र है और इसका अंदाज़ बहुत सख्त है।

आयत 116

وَاِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ ءَاَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوْنِيْ وَاُمِّيَ اِلٰهَيْنِ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ۭ

"और जब अल्लाह कहेगा कि ऐ मरयम के बेटे ईसा! क्या तुमने कहा था लोगों से कि मुझे और मेरी माँ दोनों को मअबूद बना लेना, अल्लाह के सिवा?"

قَالَ سُبْحٰنَكَ مَا يَكُوْنُ لِيْٓ اَنْ اَقُوْلَ مَا لَيْسَ لِيْ ۤ بِحَقٍّ ڲ

"वह (जवाब में) अर्ज़ करेंगे (ऐ अल्लाह) तू पाक है, मेरे लिये कैसे रवा था कि मैं वह बात कहता जिसके कहने का मुझे कोई हक़ नहीं।"

اِنْ كُنْتُ قُلْتُهٗ فَقَدْ عَلِمْتَهٗ ۭ

"अगर मैंने वह बात कही होती तो वह तेरे इल्म में होती।"

تَعۡلَمُ مَا فِیۡ نَفۡسِیۡ وَلَاۤ اَعۡلَمُ مَا فِیۡ نَفۡسِکَ ؕ اِنَّکَ اَنۡتَ عَلَّامُ الۡغُیُوۡبِ ﴿۱۱۶﴾

"तू तो जनता है जो कुछ मेरे जी में है और मैं नहीं जनता जो तेरे जी में है। यक़ीनन तमाम पोशीदा हक़ीक़तों का जानने वाला तो बस तू ही है।"

आयत 117

مَا قُلۡتُ لَهُمۡ اِلَّا مَاۤ اَمَرۡتَنِیۡ بِهٖۤ

"मैंने उनसे कुछ नहीं कहा मगर वही कुछ जिसका तूने मुझे हुक्म दिया था"

اَنِ اعۡبُدُوا اللّٰهَ رَبِّیۡ وَرَبَّکُمۡ ۚ

"(और वह यही बात थी) कि बंदगी करो अल्लाह की जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी रब है।"

وَ کُنۡتُ عَلَیۡهِمۡ شَهِیۡدًا مَّا دُمۡتُ فِیۡهِمۡ ۚ

"और मैं उन पर निगरान रहा जब तक उनमें मौजूद रहा।"

उनकी देखभाल करता रहा, निगरानी करता रहा। यहाँ लफ्ज "शहीद" निगरान के मायनों में आया है।

فَلَمَّا تَوَفَّیۡتَنِیۡ کُنۡتَ اَنۡتَ الرَّقِیۡبَ عَلَیۡهِمۡ ؕ

"फिर जब तूने मुझे उठा लिया तो (इसके बाद) तू ही निगरान था उन पर"

वाज़ेह रहे कि यहाँ भी تَوَفَّیۡتَنِیۡ मौत के मायनों में नहीं है। इस सिलसिले में सूरह आले इमरान आयत 55 {اِنِّیۡ مُتَوَفِّیۡكَ} की तशरीह मद्देनज़र रहे।

وَاَنۡتَ عَلٰی کُلِّ شَیۡءٍ شَهِیۡدٌ ﴿۱۱۷﴾

"और यक़ीनन तू हर चीज़ पर गवाह है।"

तू हर चीज़ पर निगरान है, हर चीज़ से बाखबर है।

आयत 118

اِنۡ تُعَذِّبۡهُمۡ فَاِنَّهُمۡ عِبَادُكَ ۚ

"अब अगर तू इन्हें अज़ाब दे तो यह तेरे ही बन्दे हैं।"

तुझे इन पर पूरा इख़्तियार हासिल है, तेरी मख्लूक़ हैं।

وَاِنۡ تَغۡفِرۡ لَهُمۡ فَاِنَّكَ اَنۡتَ الۡعَزِیۡزُ الۡحَکِیۡمُ ﴿۱۱۸﴾

"और अगर तू इन्हें बख्श दे तो तू ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

यह बेहतरीन अंदाज़ है। माफ़ी की दरख्वास्त भी है, जिसमें बहुत ख़ूबसूरत अंदाज़ में शफक्क़त व राफ़त का इज़हार है, जो नौए इंसानी के लिये अम्बिया की शख्सियत का खास्सा है। लेकिन इससे आगे बढ़ कर कुछ नहीं कह सकते कि मक़ामे अबदियत यही है। तो ऐ अल्लाह! तेरा ही इख़्तियार है और तू अज़ीज़ भी है और हकीम भी। अगर तू इन्हें माफ़ फ़रमाना चाहे तो तुझसे कोई बाज़पुर्स नहीं कर सकता, कोई जवाब तलबी नहीं कर सकता कि तूने कैसे माफ़ कर दिया! अब आ रहा है कि इस पूरी पेशी का ड्राप सीन और आखरी नक़्शा क्या होगा।

आयत 119

قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوۡمُ يَنۡفَعُ الصّٰدِقِيۡنَ صِدۡقُهُمۡ ؕ

"अल्लाह फ़रमायेगा यह आज का दिन वह है जिस दिन सच्चों को उनकी सच्चाई फायदा पहुँचायेगी।"

उनका सच और सिद्क़ उनके हक़ में मुफ़ीद होगा।

لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ

"उनके लिये बाग़ात हैं जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी, वह उनमे हमेशा-हमेशा रहेंगे।"

رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ ۭ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ١١٩

"अल्लाह उनसे राज़ी हो गया और वह अल्लाह से राज़ी हो गये। यही है बड़ी कमयाबी।"

यह है बाहमी रज़ामंदी का आखरी मक़ाम, अल्लाह उनसे राज़ी और वह अल्लाह से राज़ी।

आयत 120

لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا فِيْهِنَّ ۭ

"अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन और जो कुछ इनमें है, सबकी बादशाही।"

وَهُوَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ١٢٠ۧ

"और वह हर चीज पर क़ादिर है।"

यहाँ पर अल्लाह तआला के फ़ज़ल से सूरतुल मायदा के इख्तताम के साथ ही मक्की और मदनी सूरतों के ग्रूप्स (groups) में से पहला ग्रुप ख़त्म हो गया है, जिसमें एक मक्की सूरत यानि सूरतुल फ़ातिहा और चार मदनी सूरतें हैं। सूरतुल फ़ातिहा अगरचे हुज्म में बहुत छोटी है लेकिन यह अपनी मायनवी अज़मत के लिहाज़ से पूरे क़ुरान के हमवज़न है। सूरतुल हिज्र की आयत 87: {وَلَقَدْ اٰتَيْنٰكَ سَبْعًا مِّنَ الْمَثَانِيْ وَالْقُرْاٰنَ الْعَظِيْمَ} मुफ़स्सिरीन की राय के मुताबिक़ सूरतुल फ़ातिहा ही के बारे में है। इस ग्रुप की चार मदनी सूरतें अल बक़रह, आले इमरान, अन्निसा और अल मायदा दो-दो के जोड़ों की शक्ल में हैं। इन तमाम सूरतों के मज़ामीन का उमूद एक दफ़ा फिर ज़हन में ताज़ा कर लें। मुकम्मल शरीअते आसमानी, अहले किताब से ख़िताब और रद्दो-कदा, उन पर इल्ज़ामात का तज़किरा, उनके ग़लत अक़ाइद की नफ़ी, उन्हें ईमान की दावत, उनकी तारीख के अहम वाक़िआत की तफ़सीलात, उनका उम्मते मुस्लिमा के मंसब से माज़ूल किया जाना, जिस पर वह दो हज़ार बरस से फ़ाइज़ थे और उम्मते मुहम्मद ﷺ का इस मंसब पर फ़ाइज़ किया जाना। यह मौज़ूआत आखरी दर्जे में इस ग्रुप की सूरतों में मुकम्मल हो गये हैं।

بارک اللہ لی ولکم فی القرآن العظیم ونفعنی وایاکم بالآیات والذکر الحکیم۔